॥ श्री जिनाय नमः ॥

पं. श्रीकल्याणविजयगणि-विरचिता स्वोपज्ञ-
गुजराती भाषा टीका सहित

❀ श्री कल्याण-कलिका. ❀

—ः प्रथमो भागः ः—

(प्रथम खण्डात्मकः)

गोदण (मारवाड) श्रीजैनसंघकी आर्थिक सहायतासे
प्रकाशकः-

शा मीठामल भूरमल, शा. मुनीलाल थानमल

व्यवस्थापकः-

श्री० क० वि० शास्त्रसंग्रहसमिति
जालोर-मारवाड (राजस्थान)

वीर सं० ।	विक्रम सं० ।	शकाब्द	ई० सन
२४८२ ।	२०१२ ।	१८७७ ।	१९५६

प्रथमावृत्ति] मूल्य : ६-०-० [प्रति १०००



મુદ્રક : પંડિત મફતલાલ ઝવેરચંદ ગાંધી.
મુદ્રણ સ્થાન: નયનપ્રિન્ટિંગ પ્રેસ, ટીંકવાવાડી. કર્નાન્ડીઝ પુલ પાસે, અમદાવાદ.



प्रसिद्ध इतिहासवक्ता पं० श्री कल्याणविजय जी महाराज।

कल्याण कलिकानी

प्रस्तावना

नामप्रदान.

लगभग २५ वर्षथी शिल्प, ज्योतिष अने प्रतिष्ठाविधिनु मार्गदर्शक पुस्तक लखवानी मित्रो तथा भाविकोनी प्रेरणा हती, पण अन्यान्य कार्योने लीधे ए विषयोमा बहु लक्ष जतुं न हतु. चालु कार्योनो भार ओछो थता थोडा वर्षो उपर ध्यान खेंचीने थोडुं थोडु लखवा माडयु ज्योतिष तथा शिल्पना केटलांक प्रकरणो हिन्दीमा लख्या पण खरा, परन्तु ए बने विषयो एटला विस्तृत अने साहित्यसपन्न छे के तेमा शु लेवु अने शु छोडवु ए एक समस्या थइ पडी, शारीरिक प्रकृति प्राय अस्वस्थ, आखोमा मोतीयानी शरुआत अने अन्यान्य प्रवृत्तिओना कारणे अवकाशनी अल्पता, वळी निजस्वभावनी विस्तारुचिता इत्यादि वातोनो विचार करता शिल्प अने ज्योतिषना स्वतन्त्र ग्रन्थोना निर्माणनी भावना कुठित थइ गइ, छता ए विषयोमा अत्यावश्यक विषयो उपर मुद्दासर लखवानो निर्णय अफर रह्यो ए विषयमा टाचणो करवानुं चालु कर्युं अने प्रथम शिल्पना केटलाक आवश्यकीय प्रकरणो लखी नाख्या अने शिल्पस हिताओमा ज्योतिषनो विषय पण अवश्य होय ज छे एटले शिल्पना ज अनुसंधान रुपे धारणागति अने मुहूर्तलक्षण नामना बे परिच्छेदो लखीने तेनी साथे जोडी दीधा. हवे मुद्रा विषयक एक ज एवो परिच्छेद रह्यो हतो के जेनो उपयोग विधिविधानोमा थतो होवा छता विधिरूपे तेनुं विधिखडमा स्थान न हतु, तेथी मुद्रा परिच्छेदने ज्योतिषना अतमां आपीने एकदर १७ परिच्छेदोनो

प्रथम भाग पूरो कर्यो, पण आ संदर्भनुं नाम शुं आपवुं एनो कोइ मार्ग जडयो नहि. शिल्प विषयक नाम करण करवामां आवे तो ज्योतिषनो विषय अलक्षित रही जाय जे विस्तारमां शिल्पनी अपेक्षाए कंइक ज उतरतो छे, बंने विषयने स्पर्शतुं नाम आपवामां पण कंइक ग्राम्यता जेवुं लाग्युं एटले आ ग्रन्थने निर्नामक ज राखीने विधिविषयक ग्रन्थने पूर्ण करवानो निर्णय कर्यो अने एभाग पण बनते प्रयासे पूरो करी दीधो. त्रीजो भाग बीजा भागना एक परिच्छेद जेवो ज छे पण अधिक विस्तृत भिन्न भिन्न विषयात्मक होवाथी पांच परिच्छेदमां वहेंची एनो एक स्वतंत्र खंड बनाव्यो छे.

बीजा त्रीजा खंडनी योजना अने काचो खरडो तैयार थइ गया पछी पाछी एना नामनी विचारणा उभी थइ, बीजा भागना नामने अंगे तो बहु विचारवानुं न हतुं, प्रतिष्ठाकल्प अथवा एने मलतुं बीजुं कोइ नाम आपवाथी समस्या पती जाय तेम हतुं, पण खास मुंजवण प्रथम खंडने अंगे हती, अमारे आ पहेलो भाग स्वतंत्र ग्रन्थरूपे नहि पण कोइ ग्रन्थना एक विभाग रूपे गोठववो हतो, जो विधिखंडनी प्रधानता गणी तेने अनुसरतुं कोइ नाम आपीये तो प्रथम खंड तद्दन ज अनिर्दिष्ट रही जाय तेम हतुं एटले अमुक विषय सूचक नामने पडतुं मूकी फलसूचक नामनी तरफ लक्ष्य दोर्युं अने तरत ज " कल्याणकलिका " नाम उपस्थित थयुं अने ए ज नाम-करण नियत थयुं.

साइजने अंगे-आखो ग्रन्थ एकलो छपाववानो निश्चय हतो पण साइजनी बाबतमां विचार करतां जणायुं के कोइ पण एक साइजमां छपाववतां बधाने अनुकूल नहिं पडे, बुक साइजमां होय तो विधि करावनारने अगवडता जनक थाय अने पोथी साइजमां होय तो शिल्प तथा ज्योतिषना अभ्यासीओने अनुकूल पडे नहि, ए कारणे

प्रथम खंड शुरू अने बीजो, त्रीजो खंड भेगा पोथी रूपे छपाववानुं निश्चित करायुं.

मुद्रण कामनी व्यवस्था—

मुद्रण कार्य जल्दी थइने पुस्तक वहेलु बहार पडे एवी अमारी इच्छा होय ए तो स्वाभाविक गणाय, पण द्रव्य सहायकोनी उतावल अमारा करतांये अधिक हती, पण आटलुं दलदार पुस्तक भावनगर के अमदावाद प्रेसमा छपाय अने अमे मारवाडमा प्रुफ मंगावीने सुधारीये तो पुस्तक क्यारे छपाइने बहार पडे? लेखक अने आर्थिक सहायको केटली धीरज राखे? अने एकला प्रेसवाला अने प्रुफरीडर पंडितने भरोंसे पण काम केम छोडाय?, भावनगर वा अमदावादमा एवा कोइ विद्वान् साधुनुं चोमासु होय के जे आ काम करवामा योग्य अने करवानी भावनावाला होय तो पुस्तक अमदावाद छपाववु ए विचारणा चालती हती एटलामा तपस्वी प० श्रीकान्तिविजयजी गणिनो पत्र मल्यो, तेमणे जणाव्युं के "अम्हारु चोमासु बीजे नक्की थइ गयुं हतु पण शारीरिक कारणे डाक्टरनी सलाहथी अमदावाद आव्या छीये." अमने प्रसन्नता थइ अने पूछ्युं के "जो शारीरिक अडचण न होय अने कलिकानु मुद्रण कार्य संभाली शकाय तेम होय तो ए कार्य हु तमने सोंपवा इच्छु छु" अमारा आ पत्रनो उत्तर प० कान्तिविजयजीए स्वीकृतिना रूपमा आप्यो एटले प्रथम खंडना केटलाक परिच्छेदो तेमने मोकली आप्या अने आर्थिक सहायकोने सूचना पहोंचता खर्च माटे रकम पण अमदावाद श्रीविद्याशालानी पेढीमा पहोंची गइ. कार्य चालु थयु अने गत वर्षना कार्तिक उतरता १० फर्मा छपाया, पण एटलामां प० श्रीकांतिविजयजीने विहार करवानो प्रसंग आव्यो एटले अमारी सूचना प्रमाणे संपादननु कार्य तपस्वीप्रवर मुनि श्रीभद्रंकरविजयजीने सोंपायुं अने ते पछी आनु बधुं ज संपादकीय कार्य उक्त मुनिराजे ज कर्युं छे. आ॰नने विद्वान् मुनिवरोए

कलिका प्रति श्रद्धा अने संतोष बताव्यो छे तेथी अमने पूर्ण संतोष छे.

अगत्यसूचना—

'कलिका'नुं कार्य हजी पूरुं नहोतुं थयुं ने पहेलांथी केटलाक एना मुद्रणमां सहायक थवा माटे अमुक नकलोनी लागत किम्मत आपी ग्राहक रूपे पोतानां नामो लखाववा मांगता हता, परन्तु ए काम ग्रन्थनुं मेटर पूरुं थया पहेलां थइ शके तेम न हतुं. ज्यारे बंने भागोनी प्रेसकोपी थवा मांडी. प्रेसथी मुद्रण विषयमां पूछपरछ करी लीधी, ने पछी अनुमानथी जणायुं के प्रथम तथा द्वितीय भागनी पांच पांचसो कोपीओ कढाववां अनुक्रमे एक पुस्तकनी रु० ५) तथा रु० १०) नी लागत किम्मत आवशे, प्रथम भागनो पूरो खर्च श्रीगोढ़ण (मारवाड)ना जैन संघे आपवानी इच्छा व्यक्त करेल होवाथी आ भागमां बीजा कोइनी सहायता स्वीकारी नथी, ज्यारे बीजा भाग माटे दशथी ओछी नकलोनी सहायता स्वीकारवामां आवी नथी, मात्र पांच पांचसो कोपीथी लोक मांगणीने पहोंचाशे नहि एम जणातां प्रकाशक समितिए वधारानी पांच पांचसो नकलो कढावी छे, जे अधिकारिओने लागत किम्मते ज अपाशे एवो निर्धार करेल छे. जेटली नकलोनी किम्मत संघो तथा सद्गृहस्थो तरफथी मळेली छे तेटली नकलो एना अधिकारिओने विना मूल्ये आपवानो निर्णय थयो छे पण अधिकारी-अनधिकारीनो निर्णय ए माटे नियुक्त थयेल समिति द्वारा थशे अने ए निर्णय प्रकाशक समिति उपर जतां पुस्तको मार्गखर्च लेइने तेमने मोकलाशे.

पुस्तकना संपादनमां उपर्युक्त विद्वान मुनिवरोए यथाशक्य परिश्रम कर्यो छे, छतां शरतचूक, दृष्टिदोष के प्रेसकर्मचारीओनी बेदरकारीथी जे कोइ अशुद्धिओ रही जवा पामी छे तेनुं शुद्धिपत्रक आपेल छे, जे जोइने वाचकगण रहेल अशुद्धिओने सुधारी लेशे.

प्रथम खंडनो उपोद्घात

कलिकाने अगेनी प्रास्ताविक वातो प्रस्तावनामा कहेवाइ गइ छे हवे उपोद्घातरूपे प्रथम खंडना विषयोने स्पर्शता केटलाक सिद्धान्तोनी अहिया चर्चा करीशुं.

१–भारतीय प्रासादशिल्प

कलिकाना प्रथम खंडनो प्रमुख विषय 'प्रासादशिल्प' छे, शिल्प शब्द नीचे गमे तेटला विषयो आवता होय पण 'प्रासादशिल्प'ने अंगे भारतीय विद्वानोए जे विषय जेटलो खेडयो छे तेटलो बीजो कोइ नहिं, भारतना जे जे विभागोमां आर्य लोको पहोच्या छे ते प्रत्येक देश खंडमा पोतानुं प्रासादशिल्प निश्चित करी ते पद्धतिए पोताना पूज्य देवोनां धामो निर्मित कर्यां छे. प्रासादोनी पौराणिक जातिओ तथा कुलो गमे तेटला होय पण वास्तुशिल्प मुख्य त्रण भागोमा वहेचायेलुं छे नागर १ वेसर २ अने द्राविड ३. नागर शिल्प उत्तर भारतव्यापक शिल्पनु नाम छे, गोदावरीना दक्षिण तट बाजुनु द्राविड शिल्प कहेवाय छे त्यारे जे नागरी तथा द्राविडी पद्धतियोना संमिश्रणथी उत्पन्न थयेल शिल्प पद्धतिने 'वेसरपद्धति' ए नाम अपायेल छे अने एनो प्रचार विन्ध्याचलथी दक्षिणे अने गोदावरीथी उत्तरे आ वचला प्रदेशमा थयो, आ त्रण शिल्पपद्धतियो उपरथी प्रासादोनी मुख्य नीचे प्रमाणेनी छ जातियो उत्पन्न थई—

" कालिंगा नागरा लाटा, वाराटा द्राविडास्तथा ।
गौडा इति च षड्भेदे, प्रासादाश्च सरेखकाः ॥ "

अर्थ—कालिंगो (कलिंग देशभवो), नागरो, लाटो (लाटदेश जात-उत्तर गुजरात देशीय), वाराटो (वराट-जयपुरथी उत्तर प्रदेशोत्पन्न), द्राविडो (द्रविड-मदुरा कांजीवरंतरना देशना) अने गोडदेशीय (पूर्व-उत्तर बंगाल, आसाम देशना) आ प्रमाणे शिखरबद्ध प्रासादो ६ नामोथी ओलखाय छे, रेखा विनानां व्यंतरभूतादिनां चैत्योनो आमां समावेश थतो नथी.

उक्त षड्विध प्रासादोना छंद भेदे तेमज रेखा भेदे हजारो प्रकार निष्पन्न थाय छे जे नीचेना उल्लेखथी ज्ञात थशे—

"द्वात्रिंशच्च सहस्राणि, चतुःशतयुतानि च।
उक्तानि भेदभिन्नानि, धाम्नां वै (परमेश्वरैः) पारामप्यरे ?॥"

अर्थ—एकंदर ३२४०० बत्रीश हजार अने चारसो देवमंदिरोना निश्चित भेदो समर्थ ज्ञानीओए कह्या छे अने कलाभेदे तो बीजा पण उपजे छे.

(१) देवभेदे प्रासादच्छंद भेद—

"चतुर्वक्त्रस्य देवस्य, चतुरस्रश्चतुर्मुखः।
प्रासादो ब्रह्मणा प्युक्तो, नत्वन्येषां कदाचन॥
सर्वेषां विबुधानां च, लिंगस्य च (भवस्य हि)
एकद्वारो युगास्रश्च, प्रासादः परिकीर्त्तितः॥
एकवक्त्रस्य लिंगस्य, प्रतिमाया भवस्य च।
वृत्तो महेश्वरस्योक्त, प्रासादो यन्न कस्यचित्॥
चतुर्मुखस्य लिंगस्य, चतुर्द्वारस्तथाऽपरः।
प्रासादो वर्तुलः प्रोक्तो, हीश्वरस्य न कस्यचित्॥
एकवक्त्रस्तथाऽष्टास्रो, विष्णोश्चैव भवस्य च।
चतुर्द्वारः पुनरयं, भवस्य ब्रह्मणस्तथा॥

चतुरस्त्रायता ये च, तथा वृत्तायतास्तु ये ।
एकद्वारा• स्मृताः सर्वे, प्रासादा लक्षणान्विताः ॥
मुक्त्वा लिंग महेशस्य, तथा च कमलासनम् ।
सर्वासां प्रतिमाना तु, प्रासादा समुदाहृताः ॥"

अर्थ—ब्रह्माजीए चतुरस्र अने चतुर्द्वार प्रासाद ब्रह्माजीने माटे कह्यो छे, बीजा कोइने माटे नहिं.

चतुरस्र अने एकद्वार प्रासाद सर्व देवो तथा शिवलिंगने माटे कहेल छे. एक मुखलिंग, शिवनी प्रतिमा तथा शिवने माटे वृत्तच्छंद-नो प्रासाद कहेलो छे बीजा कोइ देवने माटे नहि. चतुर्मुख लिंगने माटे वृत्त चतुर्मुख प्रासाद कह्यो छे, आ प्रासाद पण शिवने माटे ज बने छे बीजा कोइने माटे नहिं, एकद्वार अष्टास्र प्रासाद विष्णु तथा शिवने होय छे अने चतुर्मुख अष्टास्र प्रासाद शिवने तथा ब्रह्माजीने करी शकाय छे. तेम चतुरस्र प्रासादो तथा वृत्तायत छंदना एकद्वारना लक्षणयुक्त प्रासादो शिवलिंग तथा ब्रह्मानी प्रतिमाने छोडीने सर्व-देव प्रतिमाओने माटे शुभदायक कहेल छे.

(२) देशदेशनी वर्तनाओ—

आजकालना आ तरफना शिल्पिओ दक्षिण, पूर्व आदि दरेक देशमा जइने जिन प्रासादो बनावी आवे छे, पण तेओ वर्तना एक ज नागरी जाणे छे अने तेज वर्तना प्रमाणे प्रासादोनुं शिल्पकाम करे छे जे बराबर नथी, जे देशमा जे वर्तना चालती होय ते देशमा तेज वर्तना प्रमाणे काम करवु जोइये, शिल्पनी कुल छ वर्तनाओ छे कई वर्तना कया देशमां वर्तवी जोइये ए विषयमा लक्षणसमुच्चय कार कहे छे—

" मेर्वादिगरूटान्तेषु, नागरी वर्तनोदिता ।
नागरी सदृशी लाटी, किन्तु सा दारुनिर्मिता ॥

अधिकैः कर्मभिर्ज्ञेया, चन्द्रशाला धरा शुभा ॥
प्रमाणं नागरीं कृत्वा, वराटी कीर्तिता बुधैः ॥
सपत्रवल्लिकास्तंभ—पंक्तिर्ह्यत्र जंघिका ॥
मेखलान्तरपात्राणि, द्राविडी सा निगद्यते ॥
कालिंगी गौडिका तुल्या, मञ्चिकापादचन्द्रिका ॥
इत्युक्ता किञ्चिदुद्देशात, स्थूलरूपेण शास्त्रतः ॥
नागरी मध्यदेशे तु, सौख्यदा वर्तना मता ।
वाराट्याद्याः, स्वदेशेषु, अन्येष्वन्याश्च दूषिताः ॥"

अर्थ—मेरुथी गरुडपर्यन्तना प्रासादोमां नागरी वर्तना कहेली छे, लाटी वर्तना नागरी सरखी ज होय छे, पण लाटी वर्तना लाकडाना काममां वर्ताय छे. नागरी करतांये आ वर्तनाथी काष्ठनां चैत्योमां बहु ज जीणुं कोतर काम कराय छे अने आ वर्तना प्रमाणे बनावाता काष्ठनिर्मित चैत्योनी आगल चंद्रशाला मूकाय छे. नागरीने ज प्रमाण करीने विद्वानोए वाराटी वर्तना कही छे, अर्थात् वाराटी पण नागरीथी बहु जुदी नथी पण आटली विशेषता होय छे के-आमां स्तंभो उपर तथा जांघमां पल्लव युक्त वेलडीओ खोदाय छे, अने ज्यां मेखलाओमां अंतर पत्रो होय ते वर्त्तना द्राविडी कहेवाय छे, कालिंगी तथा गौडी ए बंने वर्तनाओ मलती ज होय छे, फरक मात्र ए छे के कालिंगीना मंची थरमां एक चतुर्थांश भागे चंद्रिका होय छे, आम संक्षेपमां स्थूलरुपे वर्तनाओनुं शास्त्र थकी निरूपण कर्युं, नागरी वर्तना मध्यदेशमां हिमालय विन्ध्याचल वच्चेनो प्रदेशमां वर्ताय छे, अने उक्त देशमां ते सुखदायक मनाय छे वाराटी आदि पोतपोताना देशमां शुभ गणाय छे ज्यारे बीजा देशोमां ते दूषित गणाय छे.

आ उपरथी शिल्पकारोए समजी लेवुं घटे के नागरी वर्तना ज

सर्वत्र चालती नथी पण तेनो प्रदेश उत्तरभारत छे, लाटी वर्तना नागरी जेवी ज हती, पण ते पूर्वे (लाट गुजरात-काठियावाड-कोंकण आदि) देशोमा लाकडाना प्रासादोमा चालती हती. आजे उक्त देशो-मा पाषाणना प्रासादोमा ए वर्ताय तो वांधो नथी. वाराटी उत्तर तथा पूर्व राजस्थानना प्रदेशोमा चालती हती, आजे पण ए देशोमा वाराटी प्रमाणे ज शिल्पकाम वर्तवुं जोइये, द्राविडी मद्रास तरफ पाड्य अने आन्ध्र प्रदेशोमा, कालिंगी दक्षिण वंगाल, उडीशा, दक्षिण विहार तथा दक्षिण कोशल अने गौडी उत्तर वंगाल, आसाम, उत्तर विहार, पश्चिम वगाल तथा उत्तर कोशल इत्यादि देशोमां वर्तवी जोइये एवो शास्त्रादेश छे.

(३) वेधदोषो—

" अग्रतः पृष्टतश्चैव, वामदक्षिणतोऽपि वा ।
प्रासाद कारयेदन्यं, नाभिवेधविवर्जितम् ॥"

अर्थ—प्रासादनी सामे, पूठे, डावे वा जमणे भागे त्रीजो प्रासाद करावो, पण नवा प्रासादनो नाभिवेध टालवो जोइये

" शिवस्याग्रे शिव कुर्याद्, ब्रह्माण ब्रह्मणस्तथा ।
विष्णोरग्रे भवेद्विष्णु, र्जैने जिन रवे रविम् ॥"

अर्थ—शिवने आगे शिव, ब्रह्माने आगे ब्रह्मा विष्णुने आगे विष्णु जिननी आगे जिन अने सूर्यनी आगे सूर्यनी प्रतिमा प्रतिष्ठित करवी जोइये, पण एकनी आगे बीजा देवनी प्रतिमा वेसाडवी नहिं, भिन्ननाभिक देवो एक बीजाने सामे वेसाडवाथी परस्पर नाभि-वेध दोष उपजे छे

" चण्डिकाग्रे भवेन्माता, यक्षः क्षेत्रादिभैरवः ।
लिंगास्तेषामभिमुखे, ये येषां च हितैषिणः ॥"

अर्थ—चंडिकादेवीने सामे माता यक्ष के क्षेत्रपाल भैरवने बेसाडवा. तात्पर्यार्थ ए छे के जे जे देवो जेना हितैषिओ होय ते तेनी सामे वेसाडवा सारा छे.

" जिनेन्द्रस्य तथा यक्ष-देवाश्च जिनमातृकाः ।
आश्रयंति जिनं सर्वे, ये चोक्ता जिनशासने ॥"

अर्थ—जिनेन्द्रना यक्षदेवो, जिनमाताओ अने बीजा जे कोइ जिनशासनमां जैन देवो कहेला छे ते सर्वे जिनना आश्रयमां रही शके छे.

" वर्जयेदर्हतः पृष्ठ-मग्रं तु शिवसूर्ययोः ।
पार्श्वं तु ब्रह्म-विष्णवोश्च, चण्डयाः सर्वत्र वर्जयेत् ॥"

अर्थ—जिननो पृष्ठ वेध, शिव सूर्यनो अग्रवेध, ब्रह्मा विष्णुनो पार्श्व वेध अने चंडीनो सर्व वेध वर्जवो.

" प्रसिद्धराजमार्गस्य, प्राकारस्यान्तरे पि वा ।
स्थापयेदन्यदेवांश्च, बहिर्वास्तुकवर्जितम् ॥ "

अर्थ—जो बे प्रासादो वच्चे प्रसिद्ध राजमार्ग पडतो होय अथवा तो एक वास्तुना कोटने आंतरे बाह्य भागमां बीजुं वास्तु होय तो त्यां बीजा देवनी प्रतिमा स्थापन करी शकाय छे.

" वेध्यवेधकयोर्वास्त्वोस्त्यक्त्वा द्विगुणमन्तरम् ।
यथेष्टं सकलं कार्यं, कृतं तच्छुभशान्तिकृत् ॥"

अर्थ—वेध्य अने वेधक वास्तुओनी वच्चे वास्तुथी बमणी भूमिनु अंतर होय तो त्यां वेध उपजतो नथी, त्यां इच्छानुसार सर्व कार्य थइ शके छे अने त्यां करेल कार्य शुभ अने शांतिदायक थाय छे.

(४) भिन्न दोषो—

" मंडलं जालकं चैव, कीलकं शुषिरं तथा ।
छिद्रं संधिश्च काराश्च (कारस्य), महादोषा इति स्मृताः ॥"

" अर्थ—मंडल (हवा तथा प्रकाश माटे गभारामा गोल चक्राकं राखवु, जालियु राखवुं, लोहनो खीलो दीवारमा देवो, भित्तिओमा पोलाण राखवुं, छिद्र राखवा. चणतरमा प्रत्येक थरनी सधि उपरा उपरि राखवी ए प्रासाद निर्माणना महादोषो कह्या छे

" ब्रह्मविष्णुरवीनां च, शम्भोः कार्या यदृच्छया ।
गिरिजायाजिनादीना, मन्वतरभुवा तथा ।
एतेषा च सुराणां च, प्रासादा भिन्नवर्जिताः ।
प्रासादमठवेश्मानि ह्यभिन्नानि शुभानि हि ॥"

अर्थ—ब्रह्मा विष्णु सूर्य अने शिवना प्रासादो इच्छानुसार करवा आ देवोना प्रासादोमा भिन्न दोष गणातो नथी, पण पार्वती, जिन, गणेशादि देवो तथा मन्वंतरमा थयेला अवतारादीना प्रासादोमा 'भिन्न' दोष वर्ज्यो छे, प्रासाद मठ तथा घरो अभिन्न होय ते ज शुभ गणाय छे.

भिन्न दोषनुं स्पष्टीकरण—

" सूर्याभिर्जालकैर्द्वारै-र्गर्भो यत्र न भेदितः ।
अभिन्न कथ्यते तच्च, प्रासादो वेश्म वा मठः ॥
कुक्षिद्वारैस्तथाजालै-सूर्याभी रश्मिभेदिताः ।
भिन्नस्तत्र स विज्ञेय, आलयः सिद्धिकामदः ॥
पुरतः पृष्ठतो द्वाराच्चुभौ कुक्ष्योः प्रभेदितम ।
मार्त्तः स्पृश्यते यत्र, भिन्नं नाम तदुच्यते ॥"

अर्थ—जालिओ, जालियाओ अने द्वारो वडे जेनो गर्भ-भेदायेलो नथी होतो एवो प्रासाद घर वा मठ 'अभिन्न' कहेवाय छे, एथी विपरीत कुक्षि भागमा खोलेल द्वारो, जालको अने जालिओ द्वारा अंदर प्रवेशता सूर्य किरणो वडे जेनो गर्भ भेदायो छे एवो सिद्धिओ

तथा कामनाओने आपनारो प्रासाद भिन्न गणाय छे. आगल पाछल बे द्वारो होय अथवा बंने कुक्षिओमां बे द्वारो वडे गर्भ भेदायेल होय अने ते द्वारोथी अंदर आवता पवनो वडे देव प्रतिमानो स्पर्श थतो होय ते वास्तु भिन्न दोषदूषित कहेवाय छे.

(५) दिग्मूढतादि महादोषो—

" दिग्मूढो नष्टछन्दश्च, ह्यायहीनं शिरोगुरुः ।
ज्ञेया दोषास्तु चत्वारः प्रासादे कर्मदारुणाः ॥ "

अर्थ—दिग्मूढ, नष्टछंद, आयहीन, शिरोगुरु, आ चार दोषो प्रासादकर्ममां महाभयंकर जाणवा.

विवरण—दिग्मूढ एटले दिशाचूक, दिशाने बदले कोणमां द्वार आवे ते दिग्मूढ १, नष्टछंद एटले तल छंद होय ते प्रमाणे शिखर पर्यन्त काम न करतां शिखरमां छंद बदलवो ते नष्टछंद २, शुभ आय न उपजतो होय ते आयहीन ३, शिरोगुरु—एटले नीचे करतां उपरना भागे दीवालो जाडी करवी अथवा भौमज प्रासादोमां नीचे करतां उपरि भूमिओनी दीवालो जाडी अथवा उंची करवी ते शिरोगुरु ४, आ चार वास्तुगत दोषो भयंकर मानेला छे.

" स्तंभवेधे यथा वास्तुः, वास्तुवेधे तथा सुरः ।
देववेधे भवेन्मृत्युः, शिल्पिकारापकादिषु ॥ "

अर्थ—जेम स्तंभवेधे वास्तुवेध थाय छे तेम वास्तुवेधथी पदगत देवनो वेध थाय छे अने देवनो वेध थवाथी शिल्पी करावनार आदिमांथी कोइनुं मरण थाय छे.

(६) जातिभेद दोष—

" तलछन्दानुसारेण, तदङ्गं शिखरं भवेत् ।
ऊर्ध्वं तु फांसनाकारं, जातिभेदोऽत्र जायते ॥ "

अर्थ—प्रासादनुं तल आठ-दश आदि जेवा भागनुं होय तेवाज अंगोवालुं तेना उपर शिखर होय छे, छतां न्यूनाधिक अंगोवालुं अथवा कामाना आकारे शिखर करे त्यां 'जातिभेद' दोष उत्पन्न थाय छे.

(७) हीनतादोषफल—

" हीनमाने तु ये दोषाः, कथये तान् समासतः ।
आयुर्हानिर्द्वारहीने, नालिहीने धनक्षयः ॥
अपदस्थापितैः स्तम्भैर्महारोगं विनिर्दिशेत् ।
स्तंभव्यासोदये हीने, कान्ता तत्र विनश्यति ॥
प्रासादे पीठहीने तु, नश्यन्ति गजवाजिनः ।
रथोपरथहीने तु, प्रजापीडां विनिर्दिशेत् ॥
कर्णहीनो यदा वास्तुर-युक्तफलमादिशेत् ।
क्रीडन्तिराक्षसास्तत्र, फलं क्वापि न विद्यते ॥
जघाहीने भवेद् बन्धु-कर्तृकावरनाशनम् ।
शिखरे हीनमाने तु, नश्यन्ति पुत्रपौत्रकाः ॥
अतिदीर्घे कुलोच्छेदो-ह्रस्वे व्याधिसमुद्भवः ।
रथपुटस्थापने पीडा, कर्ता तत्र विनश्यति ॥
स्कन्धहीनः कबन्धश्च, समसंधिः शिरोगुरुः ।
अप्रसारितपादश्च, पञ्चैते धननाशकाः ॥ "

अर्थ—प्रासादना अंगोपांगोनी हीनतामां जे दोषो होय छे ते संक्षेपथी कहु छुं, द्वारनी हीनता आयुष्यनी हानि करे छे, नालनी हीनताथी धननो नाश थाय छे अपदमां स्तंभो स्थापवाथी (श्रेणिभंगथी) महारोगनी उत्पत्ति कहेवी, स्तंभोनो व्यास अथवा उदय हीन होय तो स्त्रीनो नाश थाय प्रासादनी पीठ हीनतामां हाथी घोडाओ नाश पामे अने रथ उपरथनी हीनतावाला प्रासादथी प्रजाने पीडा

उपजे छे. जो कर्णहीन वास्तु होय तो अयोग्य फल कहेवुं, तेवा वास्तुमां राक्षसो क्रीडा करे छे, तेवा वास्तुथी शुभ फल कांइ पण होतुं नथी, जंघाहीन प्रासादथी बन्धुनो तथा कर्तानो करावनारनो नाश थाय छे, शिखरहीन होतां पुत्रपौत्रोनो नाश थाय छे, प्रासाद शिखरनो उदय तेना मान करतां अतिशय वधारे करे तो कुल नाश थाय तेम प्रमाण करतां पण घणुं हीन (ठींगणुं) करे तो रोगनी उत्पत्ति थाय, ढावानी माफक शिखरने चोडुं अने खडकेला देखावनुं करे तो पीडा उपजावे अने कर्तानो नाश थाय. स्कंध वगरनुं १ आंवल सारा वगरनुं २ समान सांधावालुं ३ उपर वधारे बोजवालुं ४ अने पग भागे सांकडुं ५ आ पांच जातना शिखरो धननो नाश करनारा थाय छे.

(८) सत्वरविनाशी वास्तु—

" अल्पलेपं बहुलेपं, समसन्धि शिरोगुरु।
अप्रतिष्ठं पादहीनं, तच्च वास्तु विनश्यति ॥"

अर्थ—थोडा लेपवालुं घणा लेपवालुं, सम सांधावालुं उपर अधिक भारवालुं पीठ विनानुं, पाया विनानुं वास्तु जल्दी नाश पामे छे.

(९) जीर्णोद्धारविषये विशेषः—

" अधिकं वा समं हीनं, पूर्वधामादि बाधकम्।
प्रासादादि न कर्त्तव्यं, कुर्याच्चेन्मृत्युमाप्नुयात् ॥
अभिन्नानां विधिश्चायं, दोषो भिन्ने न विद्यते ॥"

अर्थ—प्रथमना बनेल अने प्रतिष्ठित थयेल प्रासाद आदिने पाडीने ते स्थाने नवीन प्रासादादि न बनाववुं. प्रथम करतां हीन ज नहि समान अथवा तेना करतां अधिक पण बनाववुं होय छतां

अखंड प्रासादादिने ताडीने नवुं बनाववामा दोष छे. एम छता जो शिल्पी बनावशे तो ते मृत्यु पामशे, आ विधि अभिन्न (जिन गौरी गणेशादिना) प्रासादोने विषे छे भिन्न (जेने विषे भिन्न दोष गणातो नथी आवा शिव सूर्यादिना) प्रासादोने विषे उक्त दोष होतो नथी

(१०) दण्ड-ध्वजविषये मतान्तरो—

" जीवर्द्धर्धसमोदण्डः, स्थौल्यं तद्वर्जिताशतः ।
चूलकान्तरदेवानां, स्थापनीयः प्रमाणतः ॥ "

अर्थ—प्रासाद पुरुषना हृदय भाग जेटलो लंबो अने ते उपर छूटेला आवलसारा नीचेना भाग जेटलो जाडो आंवलसारानी बहारनी फरके देवमंदिरो उपर प्रमाणोपेत दंड स्थापवो—

विवरण—तात्पर्यार्थ ए छे के मडोवरना प्रहार थर उपरथी बाधणीना तलाचा सुधीनु शिखरनु जे प्रमाण होय ते प्रमाणनो ते प्रासादनो दंड करवो अने तेनी जाडाई शिखरनो जेटलो भाग ग्रीवा स्थाने छोड्यो छे तेटली करवी दंड जेना आधारे राखवो छे ते स्थान आवलसाराथी सहेज बहारना भागे होय.

ध्वजाधारनो स्पष्ट स्थाननिर्देश—

" शिखरस्य शरांशेन, चतुर्थेन गुणेन वा ।
उत्तमादिध्वजाधार, मस्तकार्धेन वा क्वचित् ॥ "

अर्थ—आवलसारा नीचेना शिखरनो उचाइना एकपचमांश एक चतुर्थांश अने एक तृतीयांश नीचे ध्वजदंड रोपवानु स्थान करवुं कनिष्ठ दंडनु स्थान पंचमांशे मध्यदडनु स्थान चतुर्थांशे अने जेष्ठ दडनुं स्थान एक तृतीयांश नीचे करवु, कोइना मतमा मस्तक सुधीना शिखरना अर्ध भागे, एक तृतीयांशे तथा एक चतुर्थांशे

पण ध्वजदंडनु स्थान उत्तमादि दंडोने माटे करवानुं विधान मानेलुं छे.

(११) शिल्पविषयक केटलाक अप्रसिद्ध नियमो-

आजना समयमां मारवाड गुजरात देशीय प्रासाद शिल्पियोमां प्रचलित नियमो तो प्रासाद लक्षणमां आवी ज गया छे, पण केटलाक अप्रसिद्ध नियमो जे लक्षणसमुच्चादि ग्रन्थोमां प्रतिपादन करेला छे तेमांथी केटलाक अहींयां आपीये छीये ए वांचीने शिल्पी गण जाणी शकशे के तेओ जे कंइ जाणे छे एटलुं ज शिल्प नथी पण घणुं छे, अमारो आशय ए नथी के बधाये आ नवा नियमोने अनुसरे, पण आ नियमो उपरथी शिल्पीगणे एटलो तो धडो लेवो ज जोइये के प्राचीन प्रासादोमां ज्यां क्यांइ पण आ नियमो प्रमाणे कार्य थयेलुं होय तेने अशुद्ध कहीने पोतानी विद्वत्तानुं प्रदर्शन न करावे पण " बहुरत्ना वसुन्धरा " ए वचनने प्रमाण मानीने नवुं नवुं जाणवा अने शीखवानो उद्यम करे.

कूर्मं शिलामान-लक्षणसमुच्चये—

" गर्भकर्णायतं सूत्रं, कृत्वा भागचतुष्टयम् ।
तदेकांशप्रमाणेन, मध्ये कूर्मशिलास्थितिः ॥
तन्मध्ये स्थापयेल्लिंगं, मध्यं नैव परित्यजेत् ।
मध्यस्थं हन्ति कर्तारं, ब्रह्मवेधान्न संशयः ॥
तस्मादीशं समाश्रित्य तत्स्थितिः सूत्रमानतः ।"

अर्थात्—गभारामां बे कोणो वच्चे सूत्र लंबावीने तेना ४ भाग करवा तेवा १ भाग मानती कूर्मशिला मध्यभागमां स्थापवी अने बराबर कूर्मशिलाना मध्यभागे शिवलिंग स्थापवुं पण शिला मध्यनो त्याग करवो नहिं गर्भ मध्यमां स्थित लिंग ब्रह्मवेध थवाथी

तेना करनारनो नाश करे छे माटे कूर्मशिलाने एक सूत्रप्रमाण ईशान दिशानी तरफ स्थापवी.

उक्त विधान शिवालयने आश्रित छे, प्रचलित कूर्मशिलाना मान करता आमा जणावेल शिलामान घणु अधिक छे ए वात ध्यानमा लेवा जेवी छे

लिंगमाने प्रासादमान–

" अब्धीश्चतुर्गुणाश्च स्युः, प्रासादा लिंगमानतः ।
अर्धेन लिंगदैर्घ्येण, भित्तयो विस्तृताः क्रमात् ॥"

अर्थात्—शिव प्रासादो लिंगना उदयमानथी चतुर्गुणा, पांच गुणा अने छ गुणा माननां होय छे. अने लिंगनी लंबाईना अर्धा भागनी विस्तारमां भींतो करवी.

द्वारमानना विशेषप्रकारो—

आज काल प्रासादनुं द्वारमान शिल्पीओ प्रासादमंडन, क्षीरार्णव, अपराजित वगेरेमां लख्या प्रमाणे—

" एकहस्ते तु प्रासादे, द्वार स्यात षोडशांगुलम् ।"

इत्यादिना क्रम प्रमाणे करे छे, पण आमा ज्येष्ठ कनिष्ठादिनो विचार करातो नथी, उक्त द्वारोदयना मानमा एक बे आंगल न्यूनाधिक करी आय मेलवी द्वारमान निश्चित करी ले छे, कया देवना प्रासादना द्वारनो उदय-विस्तार केटलो होवो जोइये ए प्रायः जोवातुं नथी अने शिवद्वारनी जेम ज कोइ पण देवना प्रासादनो द्वारोदय बनावी दे छे. खरी रीते जिनद्वार उदयार्ध प्रमाणे नहि पण विस्तारमा ते अधिक होवुं जोइये, कमके शिवद्वार उदयार्ध विस्तृत होवामां कशी हरकत नथी. शिवलिंग अथवा शिवमूर्तिने माटे शिवद्वारनो ते विस्तार ओछो नथी पण जिनप्रतिमा तो मूलनायक रूपे बेठी ज होय, वली तेने परिकर पण साथे होय तेथी जिनप्रतिमा माटे उदयार्ध ः

विस्तार पर्याप्त थइ शकतो नथी. क्षीरार्णवमां जिनद्वार कनिष्ठ बताबेल छे पण क्षीरार्णवनो ज्येष्ठ-कनिष्ठ विषयक लेख कंइक अशुद्ध थइ गयो लागे छे, गमे तेम होय पण जिनद्वार विस्तारमां अधिक होवुं जोइये एम अमारुं मानवुं छे, प्रचलित रीति प्रमाणे ४'-१३" (च्यार गज तेर इंच)ना प्रासादनुं मध्यम द्वारमान २'-१९" (बे गज ओगणीश इंच) आवे छे, एनुं मध्यमान २'-१३" उदयमां अने १'-९" विस्तारमां थाय पण आज काल आवां कनिष्ठ माननां जिनद्वारो बनतां नथी.

प्राचीन जिनचैत्योनां प्रायः जिनद्वारो कनिष्ठमाननां विस्ताराधिक दृष्टिगोचर थाय छे ए निराधार तो न ज होवां जोइये, अमारी पासे लगभग त्रणसो वर्षनी जुनी एक हाथपोथीनो उतारो छे तेमां द्वारमानना प्रकारो नीचे प्रमाणे लख्या छे—

१- "अथ द्वारलक्षणं प्रासादचतुर्थांशद्वारविस्तारविस्ताराद द्विगुणोदयं द्वारमान।

२-पुनर्भेदं द्वारमानमिह-प्रासाद पंचमांश द्वार विस्तार.

३-प्रासाद तृतीयांश द्वारविस्तारप्रमाण तद्द्विगुणोदयद्वार।" (पत्र ५-६)

उपरना नियम प्रमाणे ४'-१३" ना प्रासादनुं द्वार विस्तारे १'-१२" अने उदये ३'-१"नुं थइ शके छे. आ विषयमां लक्षणसमुच्चयकार वैरोचनि कहे छे.

" धाममानात्त्रिधाद्वारं, जंघाविस्तरभागतः ।
तुर्यरसादिभागेन, ज्येष्ठमध्याऽधमं क्रमात् ॥ "

अर्थात्—वास्तुना मानने आसरीने द्वार त्रण प्रकारनुं होय छे, जे प्रासादनी जंघाना अर्धमां तेनो चतुर्थांश षडंश, सप्तमांश उमेरतां

जे मान थाय ते माननुं ते प्रासादनुं अनुक्रमे ज्येष्ठ मध्यम कनिष्ठ द्वार थाय छे.

कन्यस चोत्तमे धाम्नि, मध्यमे मध्यमं सदा ।
उत्तमं कन्यसे द्वारं, गर्भमानादथोच्यते ॥
त्रि-चतुर्भूतभागेन, ज्येष्ठ-मध्यम-कन्यसम् ।
ह्रानाद् ह्रानं भवेद्द्वारं, गर्भे कर्णविराजिते ॥ "

अर्थ—कनिष्ठ प्रासादने द्वार उत्तम, मध्यमने मध्यम अने उत्तमने कनिष्ठ माननुं करवु, हवे गर्भमाने द्वारमान कहेवाय छे, गर्भगृहना विस्तारमां तेनो एक तृतीयांश एक चतुर्थांश एक पचमांश उमेरता जे मान थाय ते मानना अनुक्रमे ज्येष्ठ मध्यम कनिष्ठ द्वारो जाणवा अने हीनमा पण द्वारमानगर्भगृहना विस्तार तुल्य होय छे.

उपरना विधान प्रमाणे ४'–१३" ना दशायतलना प्रासादना द्वारनो उदय ३'–५" नो आवे छे.

वळी लक्षण समुच्चयकार कहे छे—

" पिण्डिका कोणविस्तारं, क्षुरि(शौरि)धाम्नि क्वचिन्मतम्
उच्छ्रयो द्विगुणो द्वारा—दन्यथा वा स उच्यते ॥ "

अर्थ—क्वचित् विष्णुना मंदिरमा तेनी पिंडिका (आसन) ना कोण विस्तार समान द्वार विस्तार मानेल छे अने विस्तारथी तेनी उंचाइ बमणी कही छे अथवा द्वारोदय बीजी रीते कहे छे—

" कराङ्गुलैः शतष्टयया(?)र्धदशाहानिक्रमेण तु ।
द्वाराणि दश सिद्धानि, चत्वार्यग्राणि तेषु च ॥
त्रीणि तन्मध्यशस्तान्येवं त्रीणि कन्यसान्यनु ।
उच्छ्रयो वा त्रिधाधिको (नव) दिग्नाडयगुलैः ।
उक्त ज्येष्ठ कनिष्ठादि, द्वार शुभकरं क्रमात् ।
उच्छ्रयार्धेन विस्तीर्ण, शास्त्रविषमसंख्यया ॥ "

अर्थ-१६०आंगल१, १५० आंगल२, १४० आंगल ३, १३५ आंगलना उदयवालां ४ द्वारो ज्येष्ठ. १३० आंगल, १२० आंगल अने ११० आंगलना उदयनां ३ द्वारो मध्यम अने १०० आंगल ९० आंगल तथा ८० आंगलना उदयनां त्रण द्वारो कनिष्ठ कहेवाय छे, आ ज्येष्ठ मध्यम कनिष्ठ द्वारोना उदयमां अनुक्रमे ९-१०-१० आंगलो उमेरतां द्वार विशेष शुभकारक बने छे, उदयथी अर्धमाने द्वारविस्तार करवो अने शाखाओ संख्यामां विषम करवी. एकंदर ४ ज्येष्ठ, ३ मध्यम, ३ कनिष्ठ आम १० द्वारो निष्पन्न थाय छे. (लक्षणसमुच्चये २९ मो विधिः)

उपर्युक्त द्वारना अनेक भेदभेदान्तरोनो विचार करी द्वार विषयक भूलो काढनार शिल्पिओ अने स्वयंभू निरीक्षकोए हीनाधिक्यनी अशुद्धिओ बतावतां पहेलां पोतानी योग्यता उपर लक्ष्य आपवुं.

उत्तमादिदंडोनुं परिमाण—

इन्द्र १४ ग्रह ९ तुद्दहस्तो वा, क्रमाज्ज्येष्ठादिको भवेत्।
वंशवृद्धिकरो वांश्यो, धर्माथौं शालपोंदरौ ॥"

अर्थ—चौद हाथनो दंड ज्येष्ठ, नव हाथनो मध्यम अने छ हाथ सुधीनो होय ते कनिष्ठ दंड कहेवाय छे, अर्थात् १ थी ६ हाथ सुधीनो होय ते कनिष्ठ, ७ थी ९ हाथ सुधीनो मध्यम अने १० थी १४ सुधीनो ज्येष्ठ दंड होय छे. एथी फलित थयुं के १४ हाथथी वधारे कोइ दंड होतो नथी. वांसनो दंड वंशनी वृधि करनार अने शाल तथा पोंदर वृक्षना दंडो ए धर्म अर्थने आपनार थाय छे.

ध्वजाद्वारनो दिशा विषे मतो—

"प्रासादपृष्ठदेशे च, ऊचुः केचिद् ध्वजालयम्।
ऐशाने वा प्रदेशे च, मारुते च तथापरे ॥"

अर्थ—केटलाको प्रासादना पृष्ठ भागमां ध्वजदंडनो आधार

करवानुं कहे छे, कोई इशानकोणमां, ज्यारे बीजानो वायव्यकोणमां ध्वज घर करवानो मत प्रदर्शित करे छे.

ध्वजदैर्घ्य-विस्तार—

प्रासादपादविस्तार-स्तदर्धोर्ध्वंशितः क्वचित् ।
धाम्नो द्विगुणदीर्घः स्यात्, सार्धो वा तत्समो ध्वजः ॥
द्विहस्तविस्तरो वा स्व--भूमिं माष्टि यथापि वा ।
क्वचिन् मते नदर्थो वा, यथा प्राप्त्याऽथवोदितः ॥
स्वदैर्घ्यषोडशांशेन, क्वचिदुक्तः स विस्तरात् ।
सर्वार्थशान्तये शुक्लः, काम्यार्थे दिक्पतिप्रभः ।
स्ववाहनांकितश्चो, ध्वं किंकणीचामरैर्युतः ।
स्वदेवरूपकैश्चित्रः स्वशक्त्या शोभितः क्वचित् ॥"

अर्थ—ध्वजानो विस्तार प्रासादमानना चतुर्थांशे मानेलो छे, ज्यारे कोइ मतमा तेनो अर्ध अर्थात् प्रासादना अष्टमांश प्रमाणे ध्वजानो विस्तार कह्यो छे, ध्वजनी लंबाई प्रासादथी बमणी, दोढी अथवा प्रासाद समान पण कोइना मतमा मानेली छे वली बीजी रीते ध्वजनो विस्तार बे हाथनो अने लंबाई दडने नीचे पहोंचे एवडी करवी कोइनो मत छे के लंबाई पहोलाई उक्त लंबाईपहोलाईथी अडधी करवी. अथवा तो जेवो मले एवो ज ध्वज चढाववो ज्यारे कोइना मते ध्वज विस्तार पोतानी लंबाइना सोलमा भागनो पण कहेल छे

सर्व कामसाधक तथा शांतिकारक श्वेत ध्वज कहेल छे, अमुक कामनी सिद्धिने माटे ते दिशाना दिग्पालना वर्णनो ध्वज चढाववो, ध्वजना उपरना भागमा ते देवना वाहन वडे लांछित करवो के जे देवना प्रासाद उपर ते चढवानो होय, वली तेना छेडाने घूघरीओथी

युक्त करवो, ते उपर देवनां रूपको चित्राववां अने पोतानी शक्ति प्रमाणे तेने सुशोभित करवो.

(१२) दंड अने दंडनुं साल—

आजकाल दंडना विषयमां गुजराती तथा मारवाडी शिल्पिओमां मतभेद चाले छे, मारवाडी शिल्पिओ दंडनुं मान शिलाशास्त्रोक्त करे छे, ज्यारे गुजराती शिल्पियो दंडना नीचला भागने तेना साल रूपे मानीने दंडमानमां सामेल गणता नथी, पण उपरनी नरजुना उपरना भागने ज दंड माने छे अने नरजु ध्वजाधार (कोलाबा) वच्चेना सालने मानमांथी बाद करे छे एटले दंड बहुज लंबो-मानाधिक थइ जाय छे, अमारी मान्यतानुसार आमां गुजराती शिल्पियो भूलमां छे, दंड अने दंडनुं साल क्यांइ पण जुदां बताव्यां नथी नरजुमां थई दंडनो जे भाग ध्वजालयमां जाय छे ते वास्तवमां जुदो होतो नथी पण दंडनो ज निम्न भाग होय छे अने एनुं मान दंडमानथी भिन्न होवुं जोइये नहिं, पूर्व कालमां वांसना दंडो हता अने ते ध्वजाद्वारमां रोपाता त्यांथी ज एना माननी अने ग्रंथीपर्वनी गणना थती हती ते निकली न जाय एटला माटे तेनी जोडे बीजा वांसडाओने अंदर फसावी ध्वजदंडने सज्जन करवामां आवतो हतो अने वांसनी लीली चीपटीओथी वांधीने मजबूत करवामां आंवतो, ज्यारथी वांसना दंडनी परम्परा उठीने लाकडाना दंडो बनवा मांडया त्यारथी दंडोने विषम पर्व अने समगांठो देखाडवामाटे लोहनी अगर पीतलनी बंगडीओ (चूडीओ) चढाववानी आवश्यकता पडी, शिल्पिओए जोयुं के दंडना नीचेना छेडामां बंगडी लगाडतां ते नरजुमां तेम ज ध्वजाधारना खाडामां दंडनो छेडो आवशे नहि अने ते भाग गांठवालो न बनावीने त्यांथी दंडनुं मान गणशुं तो दंड 'समग्रंथि अने विषमपर्व' बनशे नहिं, ए

आपत्तिमाथी उगरवा माटे गूर्जर शिल्पिओए सालने जुदुं पाडी उपरना दडने ' समग्रंथि विषमपर्व ' बनाव्यो पण आम करता दड प्रमाणमा घणो लाबो थइने शास्त्रविरुद्ध बनी जशे एनो विचार न कर्यो, आ देशना विद्वान शिल्पिओने मारी सलाह छे के तमारी आ पद्धति बदलवी जोइये, आम करवाथी दण्ड लाक्षणिक नहिं बने एवी चिन्ता करवानी कंइ ज जरूर नथी, आजे जेवा प्रकारनी दडने बगडीओ जडाय छे एवी ज होवी जोइये एवो कंइ शास्त्रलेख नथी, दंडना विषम पर्वो स्पष्ट देखाय एटलु ज मात्र गाठोनुं कर्तव्य छे अने ए काम दडना सालने नीचे चूडीना आकारे ने आनी जाडी पातळी जडवाथी पण थइ शके छे, नवजुनु छेद तथा ध्वजाधारनो खाडो एवी रीते तैयार करो के तेमा दडनु साल आवी जाय अने दड पण ' समग्रंथि विषमपर्वा ' बनी रहे अने दडनुं प्रमाण पण न वधे.

(१६) देवासन विषे भ्रमणा—

आजकालना केटलाक स्वयभू शिल्पिओ जिनदेवना आसन स्थान विषे भ्रमणामा पडया छे, छता तेओ ए विषयमा पोताने निर्भ्रान्त गणीने पोतानी ते मान्यतानी पुष्टि करे छे अने पोताना हस्तकना चैत्योमा शिल्पिओ उपर दबाण करीने ते प्रकारे भूलभरेल' आमनो' तैयार करावी तेना मध्यभागे जिनप्रतिमाने बेसाडावे छे ए प्रमाणे करावरामा तेओ आचार दिनकरना नीचेना श्लोको प्रमाण रूपे बतावे छे.

" प्रासादगर्भगेहार्धे, भित्तितः पंचधा कृते ।
यक्षाद्याः प्रथमे भागे, देव्य' सर्वा द्वितीयके ॥
जिनार्कस्कन्दकृष्णानां, प्रतिमाः स्युस्तृतीयके ।
ब्रह्मा तु तुर्यभागेऽस्य, लिङ्गमीशस्य पञ्चमे ॥"

अर्थ—प्रासादगर्भना बे भाग करी द्वार तरफनुं गर्भार्ध छोडी सामेनी भीत तरफना गर्भार्धना ५ भाग करवा, भीत तरफथी गणतां गर्भार्धरेखानी पासेनो पांचमो भाग गणाशे, आ पांच भागो पैकीना १ लामां यक्षादि, २ जामां सर्व देवीओ ३ जामां जिन सूर्य स्कंद कृष्णनी प्रतिमाओ, ४ था भागे ब्रह्मा अने ५ मा भागमां शिवलिंगनी स्थापना करवी, श्लोकोनो आ सामान्य अर्थ मानीने त्रीजा भागना मध्यमां जिनप्रतिमा मध्य आवे एवी रीते प्रतिमा बेसाडे छे अने प्रतिमा मध्य पण पलांठीनो नहि पण मस्तकनी शिखानो अर्धभाग माने छे एनुं परिणाम ए आवे छे के पलांठी ४ भागमां पहोंचे छे अने आसन (पद्मासन) नीचे आखो पांचमो भाग लेवो पडे छे आम आवो अर्थ लगाडतां जिनासन नीचे अर्ध गभारो पहोंची जाय छे.

त्रीजा मध्यना हिमायती महानुभावोने हुं पूछवा इच्छुं छुं के आम त्रीजा भागना गर्भे प्रतिमानी शिखानुं मध्य राखशो त्यारे सपरिकर प्रतिमानुं परिकर शा आधारे राखशो ? त्रीजा भाग सुधी जिनासननो कोण राखतां तो परिकरनी स्थिति पाछली भीतने आधारे रही शके छे पण तमारी कल्पना प्रमाणे तो लगभग गभारानो एक चतुर्थांश पाछल खाली रहे छे शुं ए बधा भागमां नीमण देइने तेने आधारे परिकर उभुं राखशो ? अने ए केवुं सुंदर लागशे ? भाइओ शिल्पशास्त्रनो मर्म समज्या विना ए शास्त्रनी मश्करी न करो, अपराजित पृच्छामां ए वस्तु सारी रीते स्पष्ट करीने समजावी छे जेने समजो अने पकडेल भ्रमणात्मक मार्गथी दूर थाओ, तमारी भ्रमणामां वास्तुसारनुं भाषान्तर पण होइ शके पण आवां अशुद्धि पूर्ण भाषान्तरो उपरथी कोइ निश्चित धारणा न बांधो !

(१४) शिल्पिओए सामान्य-विशेष नियमो समजीने चालवुं जोइये—

अन्यान्य शास्त्रोमा जेम सामान्य-विशेष नियमो होय छे तेम शिल्पशास्त्रमा पण आवा नियमो होय छे सामान्य नियम त्यां सुधी ज लागु पडे छे ज्या सुधी विशेष नियम न आवे, पण ज्या विशेष नियमनुं विधान आवे छे त्या सामान्य नियम उभो रहेतो नथी आ वातने अमो दृष्टान्तथी समजावीशु

" कुम्भकेन समा कुम्भी, स्तम्भप्रान्तेन तद्गमः। "

इत्यादि श्लोकोमा बतावेल वाडसंबन्धी सामान्य नियम छे अने सामान्य रीते लघु प्रासादोमा चाल्या करे छे पण ज्यां ज्येष्ठ प्रासादोमा उदुम्बर गालवानो नियम लागु कराय छे त्यां " कुंभकेन समा कुंभी " इत्यादि नियम रद थाय छे अने ए माटे नवो नियम घडाय छे जे आ प्रमाणे—

" उदुम्बरोन्निता कुम्भीं, कुर्यात् स्तम्भ च पूर्वकम् ।
निरन्धारे च सान्धारे, कुम्भिकान्तमुदुम्बरम् ॥ "

अर्थात्—कुंभीने उंबरा जेटली ओछी करवी अने स्तमनु मथाळुं पूर्ववत् दोढीया बरोबर ज करवुं, निरधार तेमज सांधार प्रासादमां कुंभी-उंबरानुं मथाळु बरोबर करवु "

क्षीरार्णवना उपरोक्त नवा विशेष नियमथी ' कुम्भकेन समा-कुम्भी ' वाळो सामान्य नियम लोपाय छे

वृक्षार्णव पण प्रचलित नियमने जणे कहे छे—

" उदुम्बरसमा कार्या, कुम्भिका सर्वतो बुधैः "

अर्थात्—' विद्वान् शिल्पिओए मंदिर कुंभी उंबरा जेटली ज उंची करवी जोइए;

क्षीरार्णव तथा वृक्षार्णवना उक्त लेखोथी उंबरो गाळवा छतां " कुंभकेन समा कुंभी " ए प्राचीन नियमानुसार जेओ कुंभीने उंबराथी उंची करे छे तेमने दोष लेवो पडे छे.

(१५) धातु प्रतिमा निर्माणविधि--

कलिकाना प्रथम खंडना १२ मा परिच्छेदमां मूर्तिनिर्माणना विषयमां अमोए विस्तारपूर्वक लखेल छे जे धातु पाषाण-रत्नादि-निर्मित सर्व जातनी प्रतिमाओने लागु पडे छे, पण धातु प्रतिमाओ केवी रीते बनाववी ए संबन्धमां अमने कोइ शिल्पग्रन्थमां मार्गदर्शन न मल्युं, पण " अभिलषितार्थचिन्तामणि " नामक एक सार्व विषयिक उपयोगी ग्रन्थमां ए विषयनुं निरुपण दृष्टिगोचर थयुं जे मूर्तिकारोना उपयोगनी चीज जाणी अत्र लखीये छीये.

" नवताल प्रमाणेन, लक्षणेन समन्विताम् ।
प्रतिमां कारयेत् पूर्वं, मदनेन विचक्षणः ॥
सर्वावयवसंपूर्णां, किंचित् प्रीतां दृशोः प्रियाम ।
यथोक्तैरायुधैर्युक्तां, बाहुभिश्च यथोदितैः ॥ "

अर्थ--प्रथम चतुर मूर्तिकारे शास्त्रोक्त लक्षणयुक्त नवतालना प्रमाणवाली, सर्वावयव संपूर्ण, कंइक प्रसन्न मुखवाली आंखोने गमती शास्त्रोक्त आयुधो तथा हाथोवाली एवी मीणनी प्रतिमा बनाववी.

" तत्पृष्टस्कन्धदेशे च, कृकाटयां मुकुटेऽथवा ।
हेमपुष्पनिभं दीर्घं, नालकं मदनोद्भवम् ।
स्थापयित्वा ततश्चार्चां,लिम्पेत्संस्कृतया मृदा ।
मषीं तुषमयीं कृत्वा, कार्पासं शतशः क्षतम् ।
लवणं चूर्णितं श्लक्ष्णं, तथा संयोजयेद् मृदा ।
पेषयेत्सर्वमेकत्र, सुश्लक्ष्णे तु शिलातले ॥
वारत्रयं तदावर्त्य, तेन लिम्पेत् समन्ततः ।
स्वच्छः स्यात् प्रथमो लेपः छायायां कृतशोषणः ॥ "

अर्थ--ते मेणनी प्रतिमाना पाछलना स्कंध भागमां हडपचीना

स्थानमां अथवा मस्तक उपर मुकुटना स्थाने धतूराना फूलना आकी स्वालुं एक लाबुं मेणनुं नाल लगाडवुं अने ते पछी प्रतिमाने संस्कृत माटीना लेपो करवा, फोतरांनी मेष बनाववी, कपासने सेंकडोवार कतरीने झीणो करवो. लवण (खाराना मीठा) ने झीणुं वाटीने मेदा जेवुं करवुं पछी ए त्रणे चीजो माटीमा मेलववी अने ए सर्वने चीकणी शिलाडी उपर पाणी नाखीने लसोटवा एक रस थइने लेप योग्य बने त्यारे त्रणवार एना पिंडने उपर नीचे करी प्रतिमाना सर्व भागोमां तेनो पातलो लेप करवो अने छायामा मुकवो.

" दिनद्वये व्यतीते तु, द्वितीयः स्यात्ततः पुनः ।
तस्मिन् शुष्के तृतीयस्तु, निबिडो लेप इष्यते ॥
नालकस्य मुखं त्यक्त्वा, सर्वमालेपयेत् मृदा ।
शोषयेत्तत्प्रयत्नेन, युक्तिभिर्बुद्धिमान्नरः ॥

अर्थ—बे दिवस वीत्या पछी बली बीजो लेप करवो, अने सुक्या पछी त्रीजो जाडो लेप करवो, मात्र नालीनुं मुख छोडीने उपर नीचे च्यारे बाजु प्रतिमाने माटीना जाडा लेप वडे ढाकी देवी चतुर शिल्पिए वायु वगेरेना प्रयोगथी लिप्त प्रतिमाने बिलकुल सुकावी देवी

"सिक्थक तोलयेदादावचीलग्न विचक्षणः ।
रीत्या ताम्रेण रौप्येण, हेम्ना वा कारयेत्ततः ॥
सिक्थाद्दशगुण ताम्रं, रीतिद्रव्यं च कल्पयेत् ।
रजतं द्वादशगुण, हेम स्यात्षोडशोत्तरम् ॥"

अर्थ—मेणनी बनेली प्रतिमामां लागेल मेण पहेलां तोलीने तेनुं वजन नकी करी लेवु ते पछी ते उपर पूर्वोक्त प्रकारे माटीनुं पलास्तर करवुं अने प्रतिमा त्रांबानी अगर पित्तलनी बनाववी होय तो मेण थकी त्रांबु पीतल दशगणुं लेवु, रुपानी बनाववी होय तो

रूपुं बारगणुं अने सोनानी होय तो सोनुं सोलगणुं लेवुं कारण के मेणना वजन करतां त्रांबो पित्तलनुं दशगणुं रूपानुं बारगणुं अने सोनानुं सोलगणुं वजन होवाथी आटला गुणी ए धातु गालीने मांहि भळे तो ज मेणे रोकेली खाली जगा भराइने पूर्ण मूर्ति बनी शके (एटले के जो सोल तोला सोनानी प्रतिमा बनाववी होय तो १ तोला मीणनी प्रतिमा बनावीने ते उपरथी संचो तैयार करवो, एवी ज रीते दश सेर पीतलनी प्रतिमा बनाववी होय तो एक सेर मेणनी प्रतिमा उपर माटीनो संचो तैयार करवो.)

"मृदा संवेष्टयेद्द्रव्यं, यदिष्टं कनकादिकम् ।
नालिकेराकृतिं मूषां, पूर्ववत् परिशोषयेत् ॥"

अर्थ—प्रतिमा माटे सुवर्णादि द्रव्य लेवुं इष्ट होय तेने पूर्वोक्त संस्कृत मृत्तिका वडे च्यारे बाजु लींपीने वींटी देवुं अने नालिएरना आकारनी धातुगर्भा मूषा तैयार करवी अने पहेलांनी जेम सूकावी देवी.

"वह्नौ प्रताप्य तामर्चां, सिक्थं निस्सारयेत्ततः ।
मूषां प्रतापयेत्पश्चात्, पावकोच्छिष्टवह्निना ॥
रीतिस्ताम्रं च रसतां, नवाङ्गारैर्व्रजेद्ध्रुवम् ।
सप्ताङ्गारैर्विनिक्षिप्तै, रजतं रसतां व्रजेत् ॥
सुवर्णं रसतां याति, पञ्चकृत्वः प्रदीपितैः ।
मूषामूर्धनि निर्माय रन्ध्रं लोहशलाकया ॥"

अर्थ—ते मृत्तिकालिप्त मेणनी प्रतिमाने अग्निमां तपावीने तेमांथी बधुं मेण काढी नाखवुं, ते पछी धातुगर्भा मूषाने कोलसानी अग्निमां तपाववी, त्रांबु तथा पीतल नववार कोलसा नाखीने प्रज्ज्वलित करवाथी अवश्य ओगलीने रस बने छे रूपुं सात वार कोलसा बालवाथी ओगले छे अने सोनुं कोलसानी पांच वार आंच लागवाथी ओगलीने रस बनी जाय छे, धातु रस रूप धारण करे ते पछी

लोहनी सलीनडे मूषाना उपरना भागमा छेद पाडी नाखवुं ते पछी–

" सदंशेन दृढं धृत्वा, तप्ता मूषा समुद्धरेत् ।
तप्तार्चानालकस्यास्ये, वर्ति प्रज्वालिता न्यसेत् ।
सदंशेन धृता मूषां, नामयित्वा प्रयत्नतः ।
रसं तु नालकस्यास्ये, क्षिपेदच्छिन्नधारया ।
नालकाननपर्यन्तं, संपूर्य विरमेत्ततः ।
स्फेटयेत्तु समीपस्थं, पावकं तापशान्तये ॥

शीतलत्वं च याताया, प्रतिमाया स्वभावतः ।
स्फेटयेन्मृत्तिका दग्धा, विदग्धो लघुहस्तकः ।
ततो द्रव्यमयी सार्चा, यथा मदननिर्मिता ।
जायते तादृशी साक्षादङ्गोपाङ्गोपशोभिता ॥

अर्थ—साडमीथी मजबूत पकडीने तपेल मूषाने अग्निमांथी उपाडवी अने तपेल प्रतिमाना नालना मुखमां प्रज्वलित करेली बत्ती राखवी ते पछी साडमीमां पकडेल मूषाने यतनापूर्वक नमावीने नालकना मुखमां अखंड धाराए रस नाखवो, मंचो भराइने नालाना मुख सुधी रस भराय त्यारे धारा बंध करवी. अने ते पछी पासेनी कोल्सानी आग वगेरेने दूर करी देवी के जेथी तापनी शांति थतां संचाण भरेल रस जल्दी ठरी जाय, ज्यारे प्रतिमा पोतानी मेले ठरी जाय त्यारे ते उपरनी माटी–मंचो फोडीने दूर करवी आ बधुं कार्य चतुर शिल्पीए घणी ज सावधेतीथी करवुं माटी दूर थतां जेवी मीणनी प्रतिमा हती तेवी अंगोपांग सहित धातु द्रव्यमयी प्रतिमा तैयार थशे,

यत्र क्वाप्यधिकं पश्येच्चारणैस्तत्प्रशान्तये ।
नाश्यक छेदयेच्चापि, पश्चादुज्ज्वलतां नयेत् ॥

अनेन विधिना सम्यग्, विधायार्चां शुभे तिथौ ।
विधिवत्तां प्रतिष्ठाप्य, पूजयेत् प्रत्यहं नृपः ॥"

अर्थ—ज्यां कहिं धातुरस अधिक देखाय ते कानस वडे बराबर करी नाखे, नालकने पण छीणी वडे कापीने ते स्थल कानसथी ठीक करीने पछी प्रतिमाने उजालवी आ विधिथी चन्द्रबल पहोचतुं होय तेवा शुभ समयमां प्रतिमा तैयार करावी तथा विधिपूर्वक प्रतिष्ठा करावी राजा पूजा करे.

(१६) जिनचैत्यनिर्माणविषयक धार्मिकमर्यादा—

कलिकाना प्रथम खंडमां जिनचैत्यनिर्माणने अंगे भूमि परीक्षाथी कलशलक्षण पर्यन्तनां सर्व आवश्यक अंगोनुं अने प्रतिमा निर्माणनुं निरूपण कर्युं छे पण ए बधुं शिल्पशास्त्रने अनुसरतुं छे, धर्मशास्त्रनी ए विषयमां शी मर्यादाओ छे ए पण जाणवुं आवश्यक तो छे ज, एटले ए विषयनुं शास्त्रीय निरूपण संक्षेपमां जणावीने ए विषयनो उपसंहार करीशुं.

छेल्ला श्रुतधर तरीके प्रसिद्धि पामेल आचार्य प्रवर श्रीहरिभद्रसूरिजीए पोताना षोडश ग्रन्थमां जिनभवन निर्माणविषयक मर्यादा नीचे प्रमाणे बांधेल छे जे एमना ज शब्दोमां नीचे उद्धृत करीये छीये—

"न्यायार्जितवित्तेशो, मतिमान् स्फीताशयः सदाचारः ।
गुर्वादिमतो जिनभवन-कारणस्याधिकारीति ॥"

अर्थात्—न्यायोपार्जित धननो स्वामी, बुद्धिमान्, उदाराशय, सदाचारी अने गुर्वादिसंमत होय ते जिनभवन कराववानो अधिकारी थाय छे.

"कारणविधानमेत-च्छुद्धाभूमिर्दलं च दार्वादि ।
भृतकानतिसंधानं, स्वाशयवृद्धिः समासेन ॥"

अर्थ—शुद्धभूमि, शुद्धदल, भृतकानतिसंधान अने शुभाशय-

नी शुद्धि ए चैत्य कराववानी संक्षेपमां विधि छे, हवे प्रत्येक विध्यंगोने समजावे छे.

" शुद्धा तु वास्तुविद्या–विहिता सन्न्यायतश्च योपात्ता ।
न परोपतापहेतुश्च, सा जिनेन्द्रैः समाख्याता ॥"

अर्थ—जे भूमि शिल्पशास्त्रे ग्राह्य कही होय, जे उत्तमन्यायथी मेळवेली होय, अने जे कोइने संताप कारणी न होय तेनी भूमिने जिनेश्वरोए शुद्ध कही छे.

" शास्त्रबहुमानतः खलु, सच्चेष्टातश्च धर्मनिष्पत्तिः ।
परपीडात्यागेन च, विपर्ययात् पापसिद्धिरिव ॥"

अर्थ—शास्त्रबहुमानथी, शुभ प्रवृत्तिथी अने परपीडाना परिहारथी ज धर्मनी सिद्धि थाय छे, जेम एथी विपरीत वर्तनाथी पापनी सिद्धि थाय छे

" तत्रासन्नोपि जनोऽसम्बन्ध्यपि दानमानसत्कारैः ।
कुशलाशयवान् कार्यो, नियमाद् बोध्यंगमयमस्य ॥"

अर्थ—जमीन साथे सबन्ध न होय एवा तेनी नजीकमां रहेनारा मनुष्यने पण दान मान सत्कारो वडे शुभ परिणामी बनाववो, आ निमित्ते शुभाशय उत्पन्न थवो ए ज तेनी धर्मप्राप्तिनुं अंग बने छे.

" दलमिष्टकादि तदपि च, शुद्ध तत्कारिवर्गतः क्रीतम् ।
उचितक्रयेण यत् स्या–दानीतं चैव विधिना तु ॥
दार्वपि च शुद्धमिह यत्नानीतं देवतान्युपवनादेः ।
प्रगुण सारवदभिनव–मुच्चैर्ग्रन्थ्यादिरहितं च ॥ "

" सर्वत्र शकुनपूर्वं, ग्रहणादावत्र वर्तितव्यमिति ।
पूर्णकलशादिरूप–श्चित्तोत्साहानुगः शकुनः ॥ "

अर्थ—'दल' एटले इंट. पत्थर वगेरे पण तेना मालेक, पासेथी योग्य मूल्य आपीने लीधेल अने विधि पूर्वक लावेल होय ते शुद्ध

गणाय छे. लाकडुं पण देवता आदिना उपवनथी जयणापूर्वक लावेल होय, सीधुं–सरल, नक्कर तथा गांठ–वेढादि रहित अने नवुं होय ते वास्तुमां वापरवा योग्य ' शुद्ध ' गणाय भूमी–दल–काष्ठादि ग्रहणमां सर्वत्र शुभ शकुनपूर्वक प्रवृत्ति करवी. कार्य निमित्ते जतां जल पूर्ण कलशादि संमुख मलवो जेथी के प्रारब्ध कार्यनी तरफ मानसोत्साह वधे ते शुभ शकुन कहेवाय छे.

" भृतका अपि कर्तव्या,
य इह विशिष्टाः स्वभावतः केचित् ।
यूयमपि गोष्ठिका इह, वचनेन सुखं तु ते स्थाप्याः ॥
अतिसंधानं चैषां, कर्तव्यं न खलु धर्ममित्राणाम् ।
न व्याजादिह धर्मो, भवति तु शुद्धाशयादेव ॥ "

अर्थ—जिनभवननिर्माण कार्यमां पगारदार नोकरो–कडिया मजूरो पण विशिष्ट स्वभावना जोइने ज नियत करवा अने ' तमे पण गौष्ठिको (चैत्य सभाना सभ्यो) छो ' आवा वचन द्वारा तेमने संतुष्ट करीने राखवा, वली तेमना उपर अधिक कामनो बोजो न मूकवो, केमके ते धर्म मित्रो छे; धर्म कपटथी सिद्ध थतो नथी पण शुद्ध अध्यवसायथी ज धर्म साध्य थइ शके छे.

" देवोद्देशेनैतद्, गृहिणां कर्तव्यमित्यलं शुद्धः ।
अनिदानः खलु भावः, स्वाशय इति गीयते तज्ज्ञैः ॥
प्रतिदिवसस्य वृद्धिः, कृताऽकृतप्रत्युपेक्षणविधानात् ।
एवमिदं क्रियमाणं, शस्तमिह निदर्शितं समये ॥
एतदिह भावयज्ञः, सद्गृहिणां जन्मफलमिदं परम् ।
अभ्युदयाऽव्युच्छित्त्या, नियमादपवर्गबीजमिदम् ॥"

अर्थ—देवने उद्देशीने आ सद्गृहस्थोनुं कर्तव्य छे आवा विचारथी करावनारनो आशय अति शुद्ध होय छे, कारण के 'अनिदान'

(निष्काम) भावने ज ज्ञानीओ, 'स्वाशय' कहे छे. थयेल-थता कार्यना निरीक्षणथी प्रतिदिन 'स्वाशय' नी वृद्धि थाय छे, आ प्रमाणे करातुं आ जिनभवन निर्माण शास्त्रमा शुद्ध कहेलुं छे. सद्गृहस्थोने माटे ए ज भावयज्ञ अने ए ज जन्मनुं श्रेष्ठ फल छे, आ चैत्यविधान ज अभ्युदयनी परम्परा द्वारा निश्चितपणे मोक्षनुं बीज बने छे.

" देयं तु न साधुभ्य-स्तिष्ठन्ति यथा च ते तथा कार्यम्।
अक्षयनीव्या ह्येवं, ज्ञेयमिदं वंशतरकाण्डम् ॥"

अर्थ—जिन चैत्य साधुओने न आपवु पण तेओ तेमां ठरे एवो प्रबन्ध करवो, आम मूलधन अक्षय थता ते चैत्य बनावनारना वंशजोने संसार समुद्र तरवानुं साधन बने छे.

" यतनातो न च हिंसा, यस्मादेषैव तन्निवृत्तिफला।
तदधिकनिवृत्तिभावाद्, विहितमिदमदुष्टमेवेति ॥"

अर्थ—जिनभवन करावबामा जयणा राखतां हिंसा नथी, जे कइ आमा हिंसा थाय छे ते हिंसानिवृत्ति करनारी छे जे परिमाणमां हिंसा थाय छे तेथी अधिक हिंसाने ते निवृत्त करे छे तेथी जिनचैत्यनु निर्माण गृहस्थ धर्मिने माटे निर्दोष ज छे,

(१७) जिनबिम्बनिर्माणनी धार्मिक विधि—

उक्त श्रुतधर आचार्य श्रीहरिभद्रसूरिजी जिन बिम्ब निर्माणनी विधि आ प्रमाणे लखे छे—

" जिनभवने तद्बिम्ब, कारयितव्य-द्रुतं तु बुद्धिमता।
साधिष्ठानं ह्येव, तद्भवनं वृद्धिमद् भवति ॥"

अर्थ—बुद्धिमाने जिनभवनमा स्थापवा माटे जल्दी जिनबिम्ब करावबुं के जेथी ते भवन साधिष्ठान थइ वृद्धिकारी थाय.

" जिनबिम्बकारणविधिः, काले पूजापुरस्सरं कर्तुः।
विभवोचितमूल्यार्पण-मनघस्य शुभेन भावेन ॥"

नार्पणमितरस्य तथा, युक्त्या वक्तव्यमेव मूल्यमिति।
काले च धनमुचितं शुभभावेनैव विधिपूर्वम् ॥
चित्तविनाशो नैवं, प्रायः संजायते द्वयोरपि हि।
अस्मिन् व्यतिकर एष, प्रतिषिद्धो धर्मतत्त्वज्ञैः ॥"

अर्थ—हवे जिनविम्ब करावबानी विधि कहे छे-शुभ समयमां सदाचारवान् विम्ब बनावनार शिल्पीनी पूजा-सत्कार करी शुभ परिणामे स्वविभवानुसार तेने मूल्य आपवुं, विम्बकार जो पापाचारवालो होय तो तेने बिंब निर्माण माटे मोल आपवुं नहिं, मूल्य पण बजारु चीजोनी जेम नहिं पण युक्तिपूर्वक कहेवुं, वली विम्ब लावती वेलाए पण यथाविधि शुभभावथी विम्ब बनावनारने उचितधन-पारितोषिक रुपे आपवुं जोइये, जेथी बिम्ब करनार करावनारमांथी कोइनुं मन खिन्न थाय नहिं, आ बाबतमां मनःखेद याने चित्तभंग धर्मशास्त्रकारोए निषेध्यो छे.

"एष द्वयोरपि महान्, विशिष्टकार्यप्रसाधकत्वेन।
संबन्धमिह क्षुण्णं, न मिथः सन्तः प्रशंसन्ति ॥
यावन्तः परितोषाः, कारयितुस्तत्समुद्भवाः केचित्।
तद्बिम्बकारणानीह, तस्य तावन्ति तत्त्वेन ॥
अप्रीतिरपि च तस्मिन्, भगवति परमार्थनीतितो ज्ञेया।
सर्वापायनिमित्तं, ह्येषा पापा न कर्तव्या ॥
अधिकगुणस्थानियमात् कारयितव्यं स्वदौहृदैर्युक्तम्।
न्यायार्जितवित्तेन तु, जिनबिम्बं भावशुद्धेन ॥"

अर्थ—ए मानसिक प्रसन्नता वालो संबन्ध विम्बकार-विम्बकारकने माटे महान् छे, एज विशिष्टकार्य साधक थाय छे तेथी बंन्ने वच्चेनो ए संबन्ध बगडवो एने सज्जनो सारू कहेता नथी, विम्बकारकने ए कार्यमां जेटला परितोषो (भावोल्लासो) थाय छे ते

परमार्थथी सर्व ते बिम्बनिर्माणना कारणो छे. बिम्बकार उपर अप्रीति ए परमार्थथी भगवद् उपरनी अप्रीति छे अने ए सर्व विघ्नोनुं मूल छे माटे पापी अप्रीति न करवी, वली, अधिक गुणवाला पोताना मनोरथो युक्त न्यायोपार्जित अने भावशुद्ध धन वडे जिन बिम्ब तैयार कराववु,

" अत्रावस्थात्रयगामिनो बुधैर्दोहृदाः समाख्याताः ॥
बाल्याद्याश्रेता यत् क्रीडनकादि देयमिति।।"

अर्थ—बिम्बनिर्माणमा विद्वानोए बाल्यादि अवस्थानुगामी त्रण मानसिक मनोरथो कह्या छे, अवस्थानुसारे मनोरथोभावी रमकडा आदि देवु (बाल्यावस्थाना मनोरथमां बालशिल्पीने बिम्बकार्यमां जोडीने रमकडा आदि भेट करे ए ज रीते कुमार तथा युवावस्थाना मनोरथोमा कुमार तथा युवा शिल्पीने निर्माणकाममा बेसाडी कुमारोचित-युवोचित पदार्थो अर्पण करवां ए 'दौहृद' चिन्तवन छे.)

" यद् यस्य सत्कमनुचित-मिह वित्ते तस्य तज्जमिह पुण्यम्।
भवतु शुभाशयकरणा-दित्येतद् भावशुद्धमिह ॥"

अर्थ—'आ म्हारा धनमा जेनो जेटलो द्रव्यांश अयोग्य रीते मलेलो होय तेनाथी उत्पन्न पुण्य तेना मूलधणीने थाओ' आवो शुभ परिणाम करवाथी ते धन 'भावशुद्ध' थाय छे

" मन्त्रन्यासश्च तथा, प्रणवनमः पूर्वकं च तन्नाम ।
मन्त्रः परमो ज्ञेयो, मननत्राणे ह्यतो नियमात् ॥

अर्थ—बिम्बनिर्माणना प्रारंभमां जे द्रव्यमाथी बिंब निपजाववु होय तेमां जिननाम मंत्रन्यास करवो, नामनी आदिमा 'ॐ नमो' जोडीने चतुर्थ्यन्त नाम बोलवु ते नाममंत्रनो न्यास कहेवाय छे केम के आथी निश्चितपणे मनन-त्राण थाय छे.

"बिम्बं महत् सुरूपं, कनकादिमयं यः खलु विशेषं।
नाऽस्मात् फलं विशिष्टं, भवति तु तदिहाशयविशेषात्॥
आगमतन्त्रः सततं, तद्वद् भक्त्यादिलिंगसंसिद्धः।
चेष्टायां तत्स्मृतिमान्, शस्तः खल्वाशयविशेषः॥
एवंविधेन यद्बिम्ब-कारणं, तद्वदन्ति समयविदः।
लोकोत्तरमन्यदतो, लौकिकमभ्युदयसारं च॥"

अर्थ—बिंब म्होटुं छे के न्हानुं, ते रूपवान छे के साधारण, ते सोनानुं छे के अन्य द्रव्यनिष्पन्न इत्यादि जे विशेषो होय छे तेथी फल विशिष्ट थतुं नथी परन्तु आशय विशेषथी फलमां विशिष्टता आवे छे, जे आगमनी आज्ञाने अनुसरनार होय, भक्त्यादि लक्षणो वडे सिद्ध थतो होय, प्रत्येक प्रवृत्तिमां तेना स्मरणवालो होय ते आशय विशेष गणाय छे के जेथी फलनी विशिष्टता सिद्ध करे छे. आवा आशयथी बिंब कराववुं ते लोकोत्तर बिम्ब होय छे अने आथी बीजी रीते बिंब बनावाय छे ते लौकिक होय छे लौकिक बिंब अभ्युदयसार एटले करावनारनी उन्नति करनारुं होय छे.

"कृषिकरण इव पलालं, नियमादत्रानुषङ्गिकोभ्युदयः।
फलमिह धान्यावाप्तिः, परमं निर्वाणमिव बिम्बात्॥"

अर्थ—कृषि करवामां चारानी जेम बिम्बनिर्माणमां अभ्युदय ए अवश्यभावी प्रासंगिक फल छे, अने कृषिनुं मुख्य फल धान्यनी प्राप्ति होय छे तेम बिम्ब कराववानुं उत्कृष्ट-मुख्य फल मोक्ष प्राप्ति छे.

ग्रन्थना संबन्धमां—

उपर शिल्पना संबन्धमां थोडीक चर्चा कर्या बाद हवे आ ग्रन्थने लगती बे वातो चर्चीने उपोद्घातनी समाप्ति करीशुं.

शिल्प शास्त्र जेटलुं उपयोगी छे तेटलुं ज दुर्बोध छे साथे ज ए विषयनुं उपलब्ध साहित्य एटलुं बधुं अशुद्ध छे के जेने लीधे विषय-

दुर्बोधनो अबोध बनी जाय छे, गवर्मेंटनी सिरीजोमा अने सारी संस्थाओ तरफथी बहार पडेला शिल्पग्रन्थो पण एटला बधा अशुद्ध होय के तेनी ज्ञात अशुद्धिओनु शुद्धिपत्रक बनावीये तोये हजारोथी गणाय एटली अशुद्धिओनी संख्या तो सहजे थइ ज जाय, प्रासादादिवास्तु शिल्पिओ परम्परा प्राप्त आम्नायथी भले काम करी ले छे पण तेमनी पासे ए विषयना जे ग्रन्थो होय छे अथवा तेमने ए विषयना जे कोइ संस्कृत श्लोको कठाग्र होय छे तेने तो अशुद्धिओना ढगला कहीये तोये कंइ अजुगतु नथी, जे विषयना साहित्यनी आवी दशा होय ते विषयमां कंइ पण लखवुं ए केटलुं मुश्केल होय छे एनो खरो अनुभव तो भुक्तभोगी ज जाणी शके.

प्रस्तुत खण्डान्तर्गत शिल्पना परिच्छेदो लखवामां अमे जे ग्रन्थोनो उपयोग कर्यो छे तेमा प्रमुख ग्रन्थो ए छे-अपराजितपृच्छा १, प्रासादमंडन २, वास्तुमंजरी ३, वास्तुसार ४, समरांगणसूत्रधार- ५, वास्तुविद्या ६, शिल्परत्न ७, काश्यपशिल्प ८, मयमत ९, रूपमंडन १०, देवतामूर्तिप्रकरण ११, राजवल्लभवास्तुक १२, शिल्परत्नाकार १३, विश्वकर्मविद्याप्रकाश १४, बृहत्संहिता १५, प्रतिमालक्षण १६, निर्वाणकलिका १७ इत्यादि.

१ पुनरुक्ति—

प्रासाद लक्षणमा अमने बे स्थले पुनरुक्ति करवी पडी छे, दंड लक्षण अने कलश लक्षण लखाइ गया पछी प्रासादलक्षण लखता जणायुं के प्रासाद लक्षणमा ज्यारे बधा अंगोनुं निरुपण थयुं छे तो दंड कलशोनु स्थान शून्य रहे ए ठीक नहिं, जो कलश लक्षण अने दंड लक्षण आमा आवी जाय तो 'प्रासाद लक्षण' एक स्वतंत्र ग्रन्थ बनी जाय, आ विचारणा युक्ति संगत जणाता अमोए उक्त बे विषयो प्रासादलक्षणमा दाखल कर्या छे आ एक प्रकारनी

पुनरुक्तियो छे ज पण स्वतंत्र परिच्छेदो सविस्तर होइ विशेष उपयोगी जाणी कायम राख्या छे,

२ ज्योतिष—

प्रथम खंडमां शिल्प पछी ज्योतिषनो विषय छे, शिल्पथी पण ज्योतिषनो विषय अधिक व्यापक छे एनुं साहित्य विशाल छे अने शुद्ध पण छे, ए विषयमां अनेक विद्वानोए ग्रन्थो अने निबन्धो लखी आ विषयनी मीमांसा करी छे एटले अमने ए विषयमां बहु लखवा जेवुं लागतुं नथी, वली अमे आमां ज्योतिषनो सर्वांग स्पर्श पण कर्यो नथी, केवल मुहूर्त जोवामां उपयोगी थतो वर्षशुद्धि, अयनशुद्धि मासशुद्धि, पक्षशुद्धि, अने दिनशुद्धिनो ज प्रधानपणे विचार कर्यो छे जे सर्व मुहूर्तोमां काम आवे एवो मौलिक विषय छे, बाकी विशेष मुहूर्तो मात्र जिनचैत्य संबन्धी ज आपेलां छे. खातमुहूर्तथी आरंभीने प्रतिष्ठा पर्यन्तमां जेटलां मुहूर्तो जिनचैत्यने अंगे आवे छे ते सर्व लग्नशुद्धिनी साथे आपेलां छे.

ज्योतिषने लगता मात्र बे ज परिच्छेदो छे-धारणागतिलक्षण अने मुहूर्त लक्षण, धारणागति पूर्वाचार्यरचित संस्कृत धारणागति यंत्रकनो गुजराती अनुवाद मात्र छे ज्यारे मुहूर्त लक्षण अनेक ज्योतिषग्रन्थोना आधारे तैयार करेल छे आमां सहायक बनेला ग्रन्थोमां प्रमुख ग्रन्थोनां नामो आ प्रमाणे छे— आरंभसिद्धिसवार्तिक १, नारचंद्र ज्योतिष सटिप्पणक २, मुहूर्तचिन्तामणिपीयूषधाराटीका-सहित ३, वसिष्ठसंहिता ४, नारदसंहिता ५, बृहद्दैवज्ञरञ्जन ६, ज्योतिर्निबन्ध ७, रत्नमालासभाष्या ८, दैवज्ञकामधेनु ९, मुहूर्तमार्तण्ड-१०, पाकश्रीसवृत्ति ११, इत्यादि ।

ज्योतिषना विषयने लगती एक वातनुं सूचन करवुं अत्र प्रासंगिक गणीये छीये अने ते रवियोग,-राजयोग,-कुमारयोग-स्थविर-

योग संबंधी आजनो प्रत्येक ज्योतिषी कोइ पण शुभ कार्यना मुहूर्तमां रवियोग राजयोग अथवा कुमारयोग जेवो कोइ बलवान् शुभ योग मुहूर्तना समयमां आवतो होय तो ते मुहूर्तने सारुं गणे छे. आ योगो प्राचीन ज्योतिष संहिताओमां नथी, त्यां कोइमां ९ मा अने कोइमां १० मा रवियोगने उपग्रहरूपे जणावेल छे. अमने ज्यां सुधी स्मरण छे सोलमा सैका पूर्वना कोइ ब्राह्मण विद्वाने रचेला ग्रन्थमां उक्त इत्यादि योगोना उल्लेख मलतो नथी, एथी विपरीत जैनाचार्ये रचेल जुनामां जुना ग्रन्थोमा उक्त ४ योगोनो निर्देश मले छे, मध्यकालीन ज नहि सातमा सैकानो पाकथी जेवा प्राचीन ग्रन्थमां पण उक्तर्षकीना केटलाक योगो मली आवे छे, आरंभसिद्धि, नार चन्द्रादि मध्यकालीन जैन ग्रन्थोमा तो उक्त योगो योगप्रकरणना प्रसिद्ध योगो थइ पड्या छे, कुमारयोगने अंगे तो एवो उल्लेख पण मले छे के आ योग बंगाल देशथी आवेल मुनिओ लेइ आव्या छे. ब्राह्मण ग्रंथो पैकीना मुहूर्तचिन्तामणिमां रवियोग तो नजरे पडे छे, पण तेमांये कुमारादियोगोनो उल्लेख सुधां नथी त्यारे शुं आ च्यारे योगो मूलमा ब्राह्मण सृष्ट नथी ? शु आ योगो जैन साधुओनी ज प्रचलित थया छे ? विद्वान् ज्योतिषीओए आ विषयमां ऊहापोह करवो घटे छे

३–मुद्रालक्षण—

प्रथमखडनो छेल्लो परिच्छेद ' मुद्रालक्षण ' विषयक छे, 'मुद्रा ए, वास्तवमा तान्त्रिकमतनी वस्तु छे पण तान्त्रिक कालमां थयेल प्रतिष्ठाकल्पोमा अमारा पूर्वाचार्योए ए वस्तुनो स्वीकार कर्यो छे. वर्ती निर्विमा प्रयुक्त थाती केटलीक मुद्राओ निर्वाणकलिका, पादलिप्तसूरीय प्रतिष्ठाकल्पने आधारे आ परिच्छेदमां आपेली छे. आ ... विष्णुसंहिता, ... पौराणिक ग्रन्थोने आधारे ...॥

जोइ छे अने आमां चालती भूलो सुधारी छे. तांत्रिकोनी मान्यता छे के जे देवताने जे मुद्रा प्रिय होय तेनी पूजा ते मुद्रादर्शनपूर्वक करवाथी ते प्रसन्न थाय छे. गमे तेम पण अमारा पूर्व प्रतिष्ठा कल्पकारोए विधिमां मुद्राओनो स्वीकार कर्यो छे तेथी आजना प्रतिष्ठाचार्योए तथा स्नात्रकारोए मुद्राओ शिखवी आवश्यक छे, आम आ प्रथमखंड शिल्पीओ ज्योतिषीओ अने प्रतिष्ठाकारोने उपयोगी थइ पडशे एवी आशा छे.

छेवटे आ खंडमां-खास करीने शिल्प परिच्छेदोमां आधार ग्रन्थोनी अचोक्कसताने लेइने कोइ समज फेरनी भूल दृष्टिगोचर थाय तो सुधारीने वांचवानी वांचकगणने प्रार्थना छे.

माधवपुरा-अमदावाद,

माघशुक्ल ५ गुरु, ता० १६-२-१९५६.

कल्याणविजय.

: विषयानुक्रम :

प्रस्तावना पृ. १ थी ४ सुधी

प्रस्तावनानो उपोद्घात पृष्ठ ५ थी ४० सुधी

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
कलशनी उंचाई	२४५
एना ६ अंगानुं विस्तारमान	२४६
११ ध्वजदण्ड लक्षण	२४८
दण्डनी लंबाईना प्रमाणो	,,
दण्डनां उपादान काष्ठो	२५०
दण्डनी जाडाई	२५१
दण्डनी पाटली	,,
ध्वजा परिमाण	२५२
१२ जिनप्रतिमा लक्षण	२५४
प्रतिमास्थानी दुर्लभता	,,
ऊर्ध्व स्थिर प्रतिमानुं स्वरूप	२५७
आसनस्थिर प्रतिमानी चतुरस्रता	२५८
जिनप्रतिमानी उंचाई नवतालनी	,,
ऊर्ध्वप्रतिमाओनां ११ अंगस्थानो	२५९
आसनस्थप्रतिमानी ऊंचाई तथा अंग	२६०
अंग प्रत्यंगना विभागे प्रतिमानो उदय	,,
आसनस्थप्रतिमानो विस्तार विवेक	२६१
आसनस्थ प्रतिमानी जाडाई	२६३
प्रतिमाओनां परिकर	२६४
परिकरोना गभारामां स्तर व्यवस्था	२७६
प्रतिमाओनी दृष्टि	२८०
गर्भागारस्थानोमां प्रतिमाना स्थानो	,,
अंगुली मानः	२८१
दोषयुक्त मापनी प्रतिमा न करवी	,,

ग्रन्थविषय	पृष्टाङ्क

ग्रन्थविषय	पृष्टाङ्क

पं०श्रीकल्याणविजयगणिविरचिता

कल्याण-कलिका

प्रथम-खण्डः

-: मङ्गलम् :-

वर्धमानं जिनं नत्वा, बुद्ध्वा विधिपरम्पराम् ।
प्रतिष्ठापद्धतिं वक्ष्ये, कल्याणकलिकाभिधाम् ॥१॥

भाषाटीका—श्रीवर्धमानजिनने नमन करीने अने विधि-परंपराने समजीने 'कल्याणकलिका' नामक प्रतिष्ठापद्धतिने हुं कहीश

उपोद्घातः—

प्रतिष्ठाविधयोऽनेके, प्राक्तना विस्तरोज्झिताः ।
केऽपि विस्तरबाहुल्या, न सर्वेषां समा गतिः ॥२॥
न विस्तरात् समासाद्वा, ये विधानं चिकीर्षवः ।
न तत्कृते हितार्थास्ते, सदाम्नायविवर्जिताः ॥३॥

भा०टी०—प्राचीन प्रतिष्ठा विधिओ अनेक विद्यमान छे, पण ते सर्वनो मार्ग एक सरखो नथी. केटलीक संक्षिप्त छे त्यारे केटलीक अति विस्तारवाली छे, आ कारणथी जेओ अति विस्तार अने संक्षेपने छोडीने मध्यम प्रकारनुं प्रतिष्ठाविधान करवानी रुचिवाला छे, तेमने अति संक्षिप्त अने अति विस्तृत ते विधिओ हितकारक नथी, कारण के ते प्रमाणे करवानो वर्तमानमा कोइ सारो आम्नाय प्रचलित नथी.

पादलिप्तप्रभोः प्रज्ञा-प्रकर्षपरिपाकजाम् ।
निर्वाणकलिकां दृष्ट्वा, मुह्यन्ति विधिकोविदाः ॥४॥

श्रीचन्द्रसूरिसंदृब्धां, प्रतिष्ठापद्धतिं लघुम् ।
अनुसृत्य विधानाय, कः क्षमश्चतुरोऽपि सन् ॥५॥
विधिमार्गप्रपायां या, प्रतिष्ठापद्धतिर्लघुः ।
साऽपि कार्यक्षमा नैवाऽतिसंक्षेपविधानतः ॥६॥
गुणरत्नमुनीन्द्रोक्ता, विशालराजशिष्यजा ।
प्रतिष्ठापद्धतिर्नैव, साम्प्रतं व्यवहारगा ॥७॥

भा०टी०—आचार्यश्रीपादलिप्तसूरिनी बुद्धिना प्रकर्षवडे उत्पन्न थयेली 'निर्वाणकलिका' नामक प्रतिष्ठापद्धतिने देखीने विधिज्ञ विद्वानो मुंझाइ जाय छे. श्रीचन्द्रसूरिविरचित अतिलघु प्रतिष्ठापद्धतिने अनुसारे कयो चतुर विधिकार पण आजे विधान कराववाने समर्थ थइ शके तेम छे? वली 'विधिमार्गप्रपा' नामक सामाचारीमां जे लघुप्रतिष्ठापद्धति कहेली छे, ते पण अति संक्षिप्त होवाना कारणे आ विषयमां बहु उपयोगी थइ पडे तेम नथी. श्रीगुणरत्नसूरिकथित प्रतिष्ठापद्धति तेमज श्रीविशालराजशिष्य प्रणीत प्रतिष्ठापद्धति पण आजकाल विधिकारोना व्यवहारमार्गमां प्रचलित नथी.

वाचकैः सकलाच्चन्द्रै-र्निर्मितो विस्तरोर्जितः ।
प्रतिष्ठाकल्प एषोऽपि, विधिसांकर्यदूषितः ॥८॥
अशुद्धिबहुलश्चापि, न तत्र विदुषां रतिः ।
प्रार्थयन्ते बुधास्तेन, स्पष्टां विधिपरम्पराम् ॥९॥
मत्वा कारणसद्भावं, ज्ञात्वा प्राचां परम्पराम् ।
कल्याणविजयेनेयं, क्रियते पद्धतिर्नवा ॥१०॥

भा०टी०—सकलचन्द्रोपाध्यायजीए रचेलो एक सविस्तर

प्रतिष्ठाकल्प आजे अवश्य उपलब्ध थाय छे. छता ए प्रतिष्ठाकल्पमा पण केटलाक विधिविधानो एक बीजामा प्रविष्ट थइने सम्बन्धविहीन थइ गयां छे. वळी आ 'प्रतिष्ठाकल्प' बीजी पण घणी अशुद्धिओवालो थइ जवाथी विधिज्ञ विद्वानोनु एमा मन लागतु नथी. तेथी तेओ आ विषयनी स्पष्ट विधिपरम्परानी मागणी करे छे. आ मागणीना कारणोनी वास्तविकतानुं मनन करीने प्रतिष्ठापद्धति-विषयक प्राचीन परम्पराना ज्ञानपूर्वक प. कल्याणविजय द्वारा आ नव्य प्रतिष्ठापद्धतिनुं निर्माण कराय छे

ग्रन्थस्वरूपनिर्देशः—

आद्यो लक्षणखण्डश्च, विधिखण्डो द्वितीयकः ।
साधनाऽऽख्यस्तृतीयश्च, कलिकायां प्रकल्पितः ॥११॥
आद्ये सप्तदशच्छेदा, द्वितीये चैकविंशतिः ।
अन्त्ये खण्डे परिच्छेदाः, पञ्चैव परिकीर्तिताः ॥१२॥

भा०टी०—कल्याणकलिकामा त्रण खंडोनी कल्पना करेली छे. पहेलो लक्षणखंड, बीजो विधिखंड अने त्रीजो साधनखंड पहेला लक्षणखंडमा १७ परिच्छेद, बीजा विधिखंडमां २१ परिच्छेद अने त्रीजा साधनखंडमा ५ परिच्छेदो पाडेला छे

प्रथमखण्डपरिच्छेदसूची—

भूमि-लक्षणमस्थ्यादि-लक्षणं दिग्विशोधनम् ।
चतुर्थं कीलिका-सूत्र-लक्षणं परिकीर्तितम् ॥१३॥
कूर्म-तच्छिलयोर्लक्ष्म, शिलानां लक्षणं तथा ।
वास्तुमर्मोपमर्मादि-लक्षणं वास्तुमण्डलम् ॥१४॥

प्रासाद-लक्षणं[9] कुम्भ-लक्षणं[10] दण्ड-लक्षणम्[11] ।
प्रतिमा-लक्षणं[12] परि,-कर-लक्षणमेव[13] च ॥१५॥
जैनशासनदेवानां, लक्षणं[14] धारणागतिः[15] ।
मुहूर्त-लक्षणं[16] मुद्रा-लक्षणं[17] परिकीर्तितम् ॥१६॥
आद्यखण्डपरिच्छेद-सूचिकेयं निदर्शिता ।
मध्यखण्डगता सूची, निम्नोक्ता परिगीयते ॥१७॥

भा०टी०—पहेला खंडनी विषयसूची नीचे प्रमाणे छे—भूमिलक्षण १ शल्योद्धारलक्षण २ दिक्साधन ३ चोथुं कीलिका-सूत्र-लक्षण ४ कूर्म तथा कूर्मशिलालक्षण ५ शिलालक्षण ६ वास्तुमर्मो-पमर्मलक्षण ७ वास्तुमण्डललक्षण ८ प्रासादलक्षण ९ कलशलक्षण १० ध्वजदण्डलक्षण ११ प्रतिमालक्षण १२ परिकरलक्षण १३ जैन-शासनदेवलक्षण १४ धारणागतिलक्षण १५ मुहूर्तलक्षण १६ मुद्रा-लक्षण १७ आ प्रमाणे पहेला खंडना परिच्छेदनी सूचीनो निर्देश कर्यो. हवे मध्यखंडनी विषयसूची नीचे तेना अधिकारमां कहेवाशे.

१. भूमि-लक्षण

भूमिं सुलक्षणां ज्ञात्वा, तत्र वास्तुं निवेशयेत् ।
येन कारक-कर्तॄणां, भवेदुदयसिद्धये ॥१८॥

भा०टी०—उत्तम सुलाक्षणिक भूमि जाणीने त्यां वास्तुनो विन्यास करवो के जेथी करनार अने करावनारने अभ्युदयजनक थाय. देवालय बनाववानी इच्छावाला गृहस्थे प्रथम तेने योग्य भूमिनी परीक्षापूर्वक प्राप्ति करवी जोइये. भूमिपरीक्षाना अनेक प्रकारो शास्त्र-कारोए वर्णव्या छे. जेमांथी केटलाक सर्वसाधारण उपायो अत्र आपीये छीये.

प्राथमिकदर्शने शुभभूमि—

शुभ–जे भूमि समतल होय अथवा तो दक्षिण पश्चिमनी तरफ ऊंची होय, जे मधुरस्वादवाली होय, वर्णमा जे सफेद अने एकवर्णवाली होय, सर्प, नोलियो अथवा उंदर विलाडी जेवा जातिवैरवाला जीवो ज्या स्नेहभावथी साथे रहेता होय, जे भूमि उपर प्रहार करवाथी हाथी, घोडा, वीणा, वासली, मृदुङ्ग अने नगाराना शब्द जेवो अवाज अंदरथी आवतो होय, ज्या सुगंधि पुष्पना वृक्षो ऊगेला होय, ज्या बिल्ली, निंब, निर्गुंडी, आंबो अने सेवन आदि शुभ वृक्षो ऊगेला होय, ज्यां जल घणुं ऊंचुं होय, फूटेल वर्तनोना ठीब, कांकला, हाडका, पथरा, उधेइना राफडा, कोलसा, सूकायेला वृक्षोना ठूंठा, भस्म, झीणी रेती के नदीनी वेलु जेवी वेलु ज्यां न होय ते भूमि सर्व वर्णना मनुष्योना घरो तथा देवमन्दिरोने माटे शुभ जाणवी.

अशुभभूमि—

राखोडी, कोलसा, फूटेल माटीना ठामना ककडा, हाडका, धानना फोतरा, केश, निंब, पथरा, उंदरना दरो, उधेइना राफडा, वेकराथी भरपूर होय, अथवा ज्या खोदवाथी पूर्वोक्त पदार्थो पैकी कोइ पदार्थ नीकळतो होय, जे भूमि खारी होय, बीज के घास ज्या न ऊगता होय, फाटनारी, रूखी, खरी अने नीचेथी पोकळ होय, कांटाला अने फलहीन झाडरोवाली, मासभक्षी पक्षिओना ग्हेठाण वाळी, कृमिकीटकाकुल, ज्या वादित्रादिना जेवा अव्यक्त शब्दो संभलाया करता होय अने जे भूमिमा सारी रीते पकावेल भोज्यान्न पाणी जल्दी बगडी जता होय, ते भूमि कोइने पण निवास योग्य होती नथी. त्यां कोइए घर के देवालयादि बनाववा जोइये नहि.

विशेषपरीक्षा—

उपर्युक्त दार्शनिक परीक्षा उपरान्त भूमिनी विशेष परीक्षा पण

होय छे. ब्राह्मणादि वर्णोंने अनुसारे केवा प्रकारनी भूमि ग्राह्य अने केवा प्रकारनी भूमि अग्राह्य होय छे, एनुं शास्त्रोमां विस्तृत वर्णन छे. जेनो सार आ प्रमाणे छे.

(१) श्वेत, घृतगंधी अने मधुररसवाली भूमि ब्राह्मण वर्णने निवास योग्य होय छे.

(२) राती, लोहितगंधी अने कषायरसवाली भूमि क्षत्रिय वर्णने निवास योग्य गणाय छे.

(३) पीळी, तीखा स्वादवाली अने अन्नगंधी भूमि वैश्यने निवास योग्य होय छे.

(४) काली, कडवी, निर्गन्धा, अथवा मत्स्यगन्धी भूमि शूद्र वर्णने निवास योग्य गणाय छे.

वर्णोचित भूमिपरीक्षाना अन्य प्रकारो—

परीक्षणीय भूमिमां एक हाथ समचोरस ऊंडो खाडो खोदी तेमां माटीनो काचो घडो मूकवो, घडामां चावलजव आदि धान्य भरवुं, ते उपर माटीनुं काचुं शरावलुं घृतथी भरीने मूकवुं, तेमां धोली, राती, पीली तथा काली ए ४ वाटो, उत्तर, पूर्व, दक्षिण अने पश्चिम संमुख मूकीने संध्या समयमां ते चेतावी दीपक प्रकटाववा, पवन वधारे ओछो न लागे ते माटे आडी त्राटी ऊभी करवी. दीपक बळे त्यां सुधी त्यां ऊभा रही जोवुं. घृत रहे त्यां सुधी चार वाटो बळती रहे तो ते भूमि चारे वर्णने योग्य छे एम जाणवुं अने घी होवा छतां उत्तरादि जे दिशानो दीपक बूझाय ते दिशानां वर्णवालाने ते भूमि योग्य नथी, एम जाणवुं. उत्तर दिशाथी ब्राह्मणादि वर्णो अनुक्रमे समजवाना छे.

२ परीक्षणीय भूमिमां उपर जणाव्यो तेवो खाडो खोदीने तेमां धोळां, रातां, पीळां अने श्यामरंगनां पुष्पो सांजे वेरवां अने सवारमां

जोता जे जे रगना पुष्पो सवार सुधी ताजां रहे ते ते वर्णना मनुष्योने माटे ते भूमि योग्य अने जे जे वर्णना पुष्पो करमाएला अथवा सूकायेला जणाय ते ते वर्ण माटे ते भूमि अयोग्य छे. एम समजवुं बधा पुष्पो ताजा रहे तो बधा वर्णने योग्य अने बधा पुष्पो सूकाय तो बधाने माटे ते भूमि अयोग्य समजवी.

वर्णोचित भूमिना उत्तम मध्यम अने कनिष्ठ प्रकारो—

(१) ते भूमिमा एक हाथ समचोरस ऊंडो खाडो खोदीने तेमाथी निकळेली माटी वडे पाछो भरवो. जो माटी वधे तो ते भूमि उत्तम, माटी बधी अदर समाई जाय तो मध्यम अने ते माटी वडे खाडो पूरो न भराय तो ते भूमि कनिष्ठ प्रकारनी जाणवी.

(२) उक्त प्रकारनो खाडो पाणी वडे भरीने त्याथी १०० पगला दूर जइने पाछा पासे आवीने जोवु, खाडो तेमो ज भर्यो जणाय तो उत्तम, एक आगळ पाणी नीचे उतरे तो मध्यम अने घणा आगळ पाणी ओछुं थइ जाय तो ते भूमि जघन्य प्रकारनी जाणवी.

बीज-वापथी भूमिपरिक्षा—

फालकृष्टेऽथवा देशे, सर्वबीजानि वापयेत् ।
त्रि-पञ्च-सप्त-रात्रेण, यत्र रोहन्ति तान्यपि ॥१॥
ज्येष्ठोत्तमकनिष्ठाभू-र्वर्जयेदितरा सदा ।
पञ्चगव्यौषधीजलैः, परीक्षित्वाऽथ सेचयेत् ॥२॥

भा०टी०—अथवा वास्तुभूमिना प्रदेशमा हलवडे खेडीने त्या बधी जातना बीजो वाववा, जो त्रण पाच अने सात दिवसमा बीज ऊगी नीकळे तो अनुक्रमे उत्तम मध्यम अने कनिष्ठ प्रकारनी भूमि जाणवी, एटला काळे पण जो तेमा बीजाकुर न नीकळे तो ते भूमिनो सदा त्याग करवो

जलप्लवथी भूमिपरीक्षा—

पूर्व, ईशान अने उत्तर दिशामां जे भूमिनुं जल जतुं होय ते भूमि सर्वजातिने माटे सुखदायक होय छे अने वर्ण परत्वे उत्तर, पूर्व, दक्षिण, पश्चिम-जलवाहिनी भूमि अनुक्रमे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अने शूद्रने माटे हितकारिणी होय छे. अग्निकोणप्लवाभूमिमां अग्निभय, दक्षिणप्लवामां वैश्य सिवायनानुं मरण, नैर्ऋत्यप्लवामां चोरभय, पश्चिमप्लवामां शूद्र सिवायनां वर्णोने शोक अने वायव्यप्लवामां धान्यनो नाश थाय छे.

आ विषयमां आचार्यवराहमिहिरनी व्यवस्था—

उदगादिप्लवमिष्टं, विप्रादीनां प्रदक्षिणेनैव ।
विप्रः सर्वत्र वसेद्-नुवर्णमथेष्टमन्येषाम् ॥३॥

भा०टी०—ब्राह्मणादिवर्णोने माटे अनुक्रमे उत्तर, पूर्व, दक्षिण-पश्चिमप्लवभूमि निवासने योग्य होय छे, छतां ब्राह्मण सर्व निवासयोग्य भूमिमां वास करी शके, क्षत्रिय क्षत्रियादि त्रिवर्णोचित भूमिमां, वैश्य वैश्यादि द्विवर्णोचितमां अने शूद्र केवल शूद्रोचित भूमिमां ज रही शके. वर्णोचित भूमि ज तेमना देवालयोने पण उचित होय छे.

आ विषयमां वराहमिहिरनुं मन्तव्य—

भूमयो ब्राह्मणादीनां, याः प्रोक्ता वास्तुकर्मणि ।
ता एव तेषां शस्यन्ते, देवतायतनेष्वपि ॥४॥

भा०टी०—ब्राह्मणादिवर्णोना घरो माटे जे प्रकारनी भूमिओ योग्य कही छे, तेज भूमिओ तेमना देवमन्दिरोने माटे पण प्रशस्त जाणवी.

योग्य भूमि ज अभ्युदयजनक थाय छे—

नगरनिवेश, गृहनिवेश के देवालयनिवेश करतां पहेलां तेना स्थान-भूमिनी परीक्षा अवश्य करवी जोइये.

जे भूमि समतल समचोरस, लम्बचोरस, खाडा खांचा विनानी, मजबूत, स्वच्छ अने निःशल्य होय, ज्या जेनु चित्त प्रसन्न थतुं होय तेज भूमि अभ्युदयकारिणी होय छे.

त्रिकोण, पंचकोण अने षट्कोणआदि आकारवाली, दिग्मूढ, पोची, उद्वसित अने उद्वेगकारिणीभूमिमा घर के देवमन्दिर बनाव-नारने शान्ति प्राप्त थती नथी

२ शल्योद्धार-लक्षण

सुलक्षणेऽपि भूभागे, शल्यादिदोपदूपिते ।
नोदयस्तत्र तेनादौ, शल्यमुद्धियते बुधैः ॥१९॥

भा०टी०—भूमिभाग सुलक्षणवान् होवा छतां ते शल्यादि-दोपयुक्त होय तो त्यां वसवाथी अभ्युदय थतो नथी, ते कारणथी विद्वानो प्रथम भूमिगत शल्यनो उद्धार करे छे.

विधिथी भूमिपरिग्रह अने खातविधि कर्या पछी ते वास्तुभूमि सशल्य छे के निःशल्य छे तेनी तपास करवी. शल्यज्ञानना अनेक प्रकारो छे, पण ते सर्वनी चर्चा करवा जता ए विषय जटिल बनवानो भय छे. एटले मात्र ६ प्रकारो वडे ज शल्यनो विचार करवो योग्य धारिये छीये.

(१) वास्तुभूमिमा ६४, ८१ के १०० पदोनी कल्पना करी ते ते पदस्थित चैत्यकारक गृहपतिनी शारीरिक चेष्टाद्वारा,

(२) परिगृहीत भूमिमा शियाल, कुतरा आदिना प्रवेश उपरथी,

(३) प्रश्नकालमां प्राणियोना शब्दश्रवणद्वारा,

(४) अ, क, च, ट, त, प्रमुख प्रश्नोत्तरवर्णोद्वारा,

(५) प्रश्नाकद्वारा अने (६) प्रश्नलग्नद्वारा.

१ चैत्यकरावनार गृहस्थ परिगृहीत भूमिमां वास्तुपूजन आदि कार्यो करतां शुं शुं शारीरिक प्रवृत्तियो—चेष्टाओ करे छे, तेनुं सूत्रधारे

खास ध्यान राखवुं अने ते उपरथी शल्यनो निर्णय करवो. ते आ रीते-

१-गृहपति खाज खणवा निमित्ते के स्वाभाविक रीते पोताना जे अंगनो स्पर्श करे वास्तुना ते स्थानमां ते अंगनी ऊंचाइ जेटलुं नीचे तेज अंगनुं शल्य छे एम समजवुं, जो ते पोताना मस्तकने खंजवालतो जणाय तो एक माथोड्डु नीचे वास्तुना ते पदमां मनुष्यना मस्तकनुं हाडकुं सूचित करे छे. बीजा अंगमां खाज आदि विकृति दृष्टिगोचर थाय तो तेटला ऊंडाणमां वास्तुना ते स्थानमां ते अंगनुं हाडकुं आदि शल्य होवानो संभव जाणवो. जो बे अंगोमां विकार जणाय तो बे अंगो अने सर्व अंगोनी विकृतिथी सर्व अंगोना अस्थि आदि शल्यो छे, एवो निर्णय करवो.

ए सम्बन्धमां गर्गाचार्यनुं निरूपण—

प्रश्नकाले गृहपतिः, कस्मिन्नङ्गे समास्थितः।
किमङ्गं संस्पृशेद्वाऽपि, व्याहरेद्वा शुभाशुभम् ॥१॥
विलोक्य स्थपतिः पूर्वं, पश्चाच्छल्यं विचारयेत्।
शङ्खभेरीमृदङ्गानां, पटहानां च निस्स्वनाः ॥२॥
दध्यक्षतानां पुष्पाणां, फलानां दर्शनानि च।
स्पृष्टाङ्गसदृशं शल्यं, तस्य स्थाने विनिर्दिशेत् ॥३॥
निखनेदवनिं तत्र, तदङ्गं ब्रुडते यथा।
गृहनाथस्य तत्राधः, शल्यं निःसंशयं वदेत् ॥४॥

भा०टी०—प्रश्न समये गृहस्वामी कया अंग उपर ऊभो छे, कया अंगनो स्पर्श करे छे, अथवा शुभाशुभ केवुं वचन बोले छे, ते सूत्रधार प्रथम जुए अने पछी शल्यनो विचार करे.

जो ते समयमां शंख, नगारा, मृदंग के ढोलनो शब्द कर्णगोचर थाय, अथवा दही, अक्षत, पुष्प के फल दृष्टिगोचर थाय तो शुभ-दायक छे. प्रायः ते वास्तुभूमिमां शल्यनो अभाव सूचवे छे, पण

शल्यविषयक प्रश्नकाले गृहस्वामी कोइ अंग विशेपने खंजवालतो के स्पर्श करतो जणाय तो स्पर्शेल अंग सम्बन्धी शल्य ते स्थानमां बतावबुं. त्या एटली भूमि खोदवी के जेमा गृहपतिनुं स्पृष्ट अंग डुबी जाय, तेटला नीचेना भूमिगर्भमा शल्य छे, एम निःसंशयपणे कहेवुं.

बृहत्संहितामां आचार्यवराहमिहिरनु प्रतिपादन—

कण्डूयते यदङ्गं, गृहपतिना यत्र वाऽमराहुत्या ।
अशुभं भवेन्निमित्त, विकृतिर्वाग्नेः सशल्य तत् ॥५॥

भा०टी०—वास्तुभूमिमा गृहस्वामी ज्या ऊभेलो पोताना अगने खणे, जे पदना देवने आहुति आपता अशुभ निमित्त दृष्टिगत थाय के अग्नि बुझाई जाय, ते स्थान सशल्य होय छे.

(२) खात करवाना पूर्व दिवसे वास्तुभूमिने ममार्जीने साफ करी राखवी अने खातना दिवसे जइने जोवी, जो तेमा शशला, शियाल अने कूतरा आदिनो पग पडेलो नजरे पडे तो समजवुं के तेमा ते प्राणीनुं हाडकुं छे.

(३) शल्यविषयक प्रश्नकालमा जो हाथी, घोडा, गाय के गधेडानो शब्द काने पडे तो बोलनार प्राणीनु शल्य त्या छे, एम कहेवुं अने तेना स्थान तथा ऊडाणनो निर्णय पूर्वोक्तविधि प्रमाणे गृहपतिनी अग विकृति उपरथी करवो

ए संबन्धमा गर्गाचार्य कहे छे—

प्रश्नकाले गजो गौर्वा, तुरगो गर्दभोऽपि वा ।
यः प्राणी व्याहरेत्तत्र, तद्भव शल्यमादिशेत् ॥
प्रमाण तत्र वक्तव्य, पूर्वोक्तविधिना ततः ॥ ६ ॥

(४) प्रश्नमा आवेल आदिवर्णो उपरथी शल्य जाणवानी पद्धति अधिक प्रसिद्ध छे, आ पद्धति जेम अधिक व्यापक छे तेम अधिक मतभेदवाली पण छे, आ मतोमाना वधा मतो सामान्य रीते वे भागमा वहेंचाय छे.

विवेकविलास, प्रश्नविद्या अने राजवल्लभ आदि ग्रन्थकारो वास्तु-भूमिना ९ भागो पाडीने पूर्वादि मध्यान्त कोठाओमां अनुक्रमे व. क. च. त. ए. ह. स. प. य. आ नव वर्णोनो न्यास बतावे छे. जो के एमनी वच्चे पण ट–त–अ–ए–व–च–इत्यादि साधारण मत-भेदो तो छे ज, छतां आ बधा ग्रन्थकारोनी मान्यतानुं उद्गम स्थान एक छे, एमां शंका नथी. आ मान्यता घणा खरा उत्तर भारतना ग्रन्थोमां प्रतिपादित थयेली छे.

निर्वाणकलिका, विश्वकर्मप्रकाश, मुहूर्तमार्तण्डज्योतिर्निबन्धादि कतिपय ग्रन्थोना मते ९ कोष्टकोमां लखवाना वर्णो 'अ–क–च–ट–त–प–य–श–ह–पया.' आ क्रमथी जणावेल छे. आ मतमां पूर्वादि ८ कोष्टकोमां अनुक्रमे ८ वर्गाक्षरो अने मध्य कोष्टकमां 'ह–प–य' आ त्रण अक्षरो होय छे. आ बन्ने मान्यताने आधारे नीचे एक नकशो आपीये छीये. १ मान्यता विवेकविलास आदिनी अने २ मान्यता निर्वाणकलिका अने ज्योतिर्निबन्धादिनी छे.

	ऐशानी	पौर्वी	आग्नेयी	
	(१) प (२) श	(१) बव (२) अ	(१) क (२) क	
उत्तरा	(१) स (२) य	(१) य (२) हपय	(१) व–च (२) च	दक्षिणा
	(१) ह (२) प	(१) ए–अ (२) त	(१) त–ट (२) ट	
	वायवी	पश्चिमा	नैर्ऋति	

उपर प्रमाणे वास्तुभूमिना ९ भाग पाडी ते प्रत्येकमां लखवाना वर्णो आलेखीने शल्याशल्यनो विचार करवो.

ए विषयमा राजवल्लभकार लखे छे—

"प्रश्नत्रयं चापि गृहाधिपेन,
देवस्य वृक्षस्य फलस्य चाऽपि।
वाच्यं हि कोष्ठेऽक्षरसंस्थिते च
शल्यं विलोक्यं भवनेषु सृष्टया ॥७॥

भा०टी०—शिल्पिए गृहस्वामीना मुखे कोइ पण देव, वृक्ष अने फलनुं नाम कहेवराववुं अने ते त्रणे नामोना आद्यअक्षरो ध्यानमां राखी, कोष्टकगत अक्षरोनी साथे मेलववा. वास्तुभूमिना जे कोष्टकमा बोलेल त्रण नामो पैकीना कोइ पण नामनो आद्यअक्षर मली आवे तो ते कोष्टकना भागमा शल्य जाणी तेने दूर करवु.

ज्योतिर्निबन्धमा प्रश्न करवानी रीति नीचे प्रमाणे छे—

स्मृत्वेष्टदेवता प्रष्टु-र्वचनस्याद्यमक्षरम्।
गृहीत्वा तु ततः शल्याऽशल्य सम्यग् विचार्यते ॥८॥

भा०टी०—पोताना इष्ट देवनुं स्मरण करी, 'गृहपतिए' शिल्पिने शल्यविषयक प्रश्न करवो अने शिल्पिए पण स्वेष्ट देवताना स्मरणपूर्वक प्रष्टाना मुखथी नीकळेल वचननो आद्यअक्षर ध्यानमा राखी, नव कोठाओमा लखेल अक्षरोनी साथे मेलवीने शल्य अशल्यनो विचार करवो प्रश्नननो आद्यअक्षर कोइ कोठामा मली आवे तो ते भूमिभागमा शल्य कहेवुं अने प्रश्नवर्ण कोष्टकोमा न मले तो भूमि शल्यरहित छे, एम कहेवुं.

प्रश्नवर्णद्वारा शल्यज्ञान अने फल—

वास्तुभूमिना ९ भाग करी पूछेल प्रश्नवर्ण जो कोष्टकमां मली आवे तो त्यां शल्य छे एम जाण्या पछी ते शल्य कोनु छे, केटलु

नीचे छे अने तेनुं फल शुं छे, ए वातोनुं निरूपण घणा ग्रंथोमां कहेलुं छे. बधानुं निरूपण घणे भागे सरखुंज होवाथी अमो प्रश्न-विद्यानुं निरूपण नीचे आपीये छीये—

(ब) विदूध्यैन्द्रयां 'वः' प्रश्ने, मानुषशल्यं हि सार्द्धकरमात्रे।
विदधाति मनुजमरणं, तद्भवनस्थं न सन्देहः ॥९॥

भा०टी०—प्रश्नमां 'व' अक्षर होय तो वास्तुभूमिना पूर्व-खंडमां दोढ हाथ नीचे मनुष्यनुं शल्य जाणवुं. घर अथवा प्रासादमां रहेल ते शल्य मनुष्यनुं (घर स्वामी अथवा प्रासाद करावनारनुं) मरण निपजावे छे.

(क) आग्नेय्यां 'कः' प्रश्ने, खरशल्यं तु करद्वये भवति।
कुरुते नृपदण्डभयं, भयमतुलं संस्थितं भवने ॥१०॥

भा०टी०—प्रश्नमां 'क' अक्षर होय तो अग्नि कोणना भागमां बे हाथना ऊंडाणमां गधेडानुं शल्य जाणवुं. मकानमां रहेलुं ए शल्य राजदण्डनो भय अने बीजो भय उत्पन्न करनार निवडे छे.

(च) दक्षिणदिशि 'चः' प्रश्ने, नरशल्यं जायते च कटिमात्रे।
जनयति तद् भवनस्थं, मृत्युं गृहनायकस्यैव ॥११॥

भा०टी०—प्रश्नमां 'च' अक्षर होय तो वास्तुभूमिना दक्षिण-खंडमां केड सुधी नीचे पुरुषनुं शल्य होय छे. घरमां रहेलुं ते शल्य गृहस्वामीनुं मरण निपजावे छे.

(त) राक्षसदिशि 'तः' प्रश्ने, खरशल्यं सार्द्धहस्तमात्रे तु।
तद् भवनगतं नित्यं, करोति डिम्भक्षयं नियतम् ॥१२॥

भा०टी०—प्रश्नमां 'त' अक्षर आवे तो नैर्ऋत्य कोणना भूमिभागमां दोढ हाथ नीचे गधेडानुं शल्य कहेवुं. घरमां रहेलुं ते शल्य त्यां रहेनारनां बालकोनो नाश करनारुं थाय छे.

(अ ए) वारुण्यां शिशुशल्यं 'अः' प्रश्ने भवति सार्द्धहस्तेन।
पत्यु: प्रवासमनिशं, शून्यं च करोति तद् गेहम् ॥१३॥

भा० टी०—प्रश्नमा 'अ' अक्षर होय तो पश्चिम तरफना भूमिखण्डमां दोढ हाथ नीचे बालकनुं शल्य होय छे. ते शल्य घरधणीने नित्य प्रवास करावनारुं अने घरने शून्य करनारुं थाय छे

(ह) वायव्या 'हः' प्रश्ने, तुषमङ्गारसहित चतुष्करे विद्धि।
दुःस्वप्नदर्शनं तद्, मित्रविनाशं च कुर्वीत ॥१४॥

भा० टी०—प्रश्नमा 'ह' अक्षर होय तो वायव्यकोणना भूमिखंडमां चार हाथ नीचे फोतरा अने कोलसा जाणवा आ शल्यो घरमा रहेनारने दुष्टस्वप्न देनारा अने मित्रोनो विनाश करनारा निवडे छे

(स) द्विजशल्यं कौबेर्यां, दिशि 'सः' प्रश्ने भवति कटिमात्रे।
धनदमपि तद् गृहस्थं, कुरुतेऽप्यथ निर्धनं शीघ्रम् ॥१५॥

भा० टी०—प्रश्नमा 'स' अक्षर आवे तो ते भूमिना उत्तर खडमां केड सुधी नीचे ब्राह्मणना शरीरनुं शल्य होय छे. ते शल्य घरमा रहेनार धनकुबेरने पण थोडा ज समयमा निर्धन बनावी दे छे.

(प) ऐशान्या 'पः' प्रश्ने गोशल्यं विद्धि सार्द्धहस्ते तु।
भवनगतं तत् कुरुते, गोधननाशं न सन्देहः ॥१६॥

भा०टी०—प्रश्नमां 'प' अक्षर होय तो ईशान दिशाना भागमा दोढ हाथ नीचे गायनुं शल्य होय छे मकानमां रहेलु ते शल्य घरधणीना गोधननो नाश करे छे एमा सदेह नथी.

(य) 'यः' प्रश्ने गृहमध्ये, शल्यं च नरकपालभस्मसमम्।
वक्षोमात्रं कुरुते, कुलक्षयं तद् गृहस्थस्य ॥१७॥

भा० टी०—प्रश्नमा 'य' अक्षर होय तो वास्तुभूमिना मध्य-

खण्डमां छाती सुधी नीचे माणसना माथानी खोपरी अने भस्मरूप शल्य होय छे. ते शल्य गृहस्वामीना कुलनो नाश करे छे.

नव पैकीनो कोइ अक्षर होय तो ज शल्य—

नवाक्षरस्य मध्ये चेत्, प्रश्नस्याद्याक्षरं भवेत् ।
तदा शल्यं वदेद्विद्वा–नन्यथा शून्यमादिशेत् ॥१८॥

भा० टी०—प्रश्नवचननो आद्यअक्षर पूर्वोक्त ९ अक्षरोमां होय तोज विद्वाने त्यां शल्य कहेवुं. अन्यथा ते भूमिने शल्यरहित कहेवी.

नवमा भागना नव भाग—

प्रश्न वचनथी जे नवमो भाग सशल्य जणाय ते भाग जो घणो म्होटो होय तो तेना फरी ९ भाग करीने पूर्वोक्त प्रकारे शल्यनी तपास करवी, एवुं पण विधान छे.

"नवभागविभक्तं यद्, गृहक्षेत्रं महद् यदा ।
पुनः प्रश्नस्तदा कार्यः, पूर्ववद् विभजेत्तदा ॥१९॥"

भा० टी०—नवभागे करेल ते (सशल्य) गृहक्षेत्र जो म्होटुं होय तो पूर्व रीतिए ते सशल्य भागना नव भाग करीने शल्यवाला स्थाननो पत्तो लगाडवो.

(५) प्रश्नवर्णांक अने प्रश्नमात्रांकद्वारा शल्यज्ञान—

प्रश्नविद्यामां प्रश्नाक्षर वर्णांक अने मात्रांकद्वारा शल्य जाणवानो एक बीजो प्रकार पण जणाव्यो छे, ते आ प्रमाणे—

अक्षरं द्विगुणं कार्यं, मात्रा कार्या चतुर्गुणा ।
ग्रहैर्भागः समाहृत्य, ओजे शल्यं समे नहि ॥२०॥

भा० टी०—प्रश्नाक्षरना वर्णांकने बमणो अने मात्रांकने चार गुणो करी बन्ने अंकोने एकत्र करी ते अंकराशिने ९ थी भांगवो, शेष विषमांक (१–३–५–७) रहे तो भूमि सशल्य अने समांक रहे तो

शल्यरहित जाणवी. आ वस्तु नीचेना उदाहरणथी समजाशे. शल्य प्रश्नमां कोइए 'सतरा' फलनुं नाम कह्युं, संतरानो 'स,' वर्गनो त्रीजो वर्ण अने एनी 'अ' मात्रा, वर्गनो १५ पदरमो स्वर होइ, वर्णांक ३ नो बमणो ६ अने मात्रांक १५ नो चार गुणो ६० थयो. बन्नेने जोडता थयेल अंक ६६ ने ९ नो भाग आपता शेष ३ ए विषमांक रह्यो. आथी जणायुं के भूमिमां शल्य छे अने उत्तर दिशाना खण्डमां छे, केमके 'स' नुं स्थान उत्तर खण्ड छे. एज प्रमाणे कोइ पण प्रश्नअक्षरनां वर्णांक अने मात्रांक उपरथी शल्य स्थाननो निर्देश करवो.

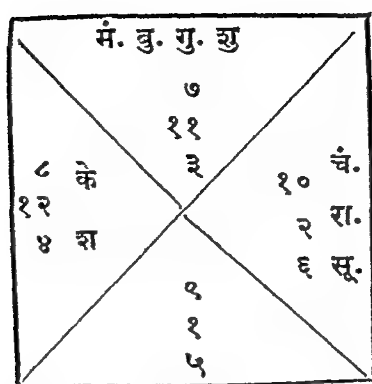
(६) प्रश्नलग्नद्वारा शल्यज्ञान—

प्रश्नविद्यामां लखे छे—

> चतुष्कोणं गृहं कल्प्यं, त्रिरावृत्त्या लिखेच्च भम् ।
> यत्र चन्द्रो निधिस्तत्र, शल्यं यत्र रविर्मतम् ॥२१॥
> शुभदृष्टियुतश्चन्द्रो, निधिः प्राप्यः पुरातनः ।
> सूर्येऽप्येवं सदा वाच्यं, चण्डेश्वरनृपोदितम् ॥२२॥

भा० टी०—चोरस घरने चार खूणामां कापी चार भाग करवा. लग्नराशिथी मांडीने त्रण आवृत्तिओथी १२ राशिओ ४ भागोमां लखवी अने जे ग्रह जे राशिमां होय ते ते राशिवाला कोठामां लखवा अने जोवुं. शुभयुक्त अने शुभदृष्ट चन्द्र जे कोठामां होय त्यां धन छे एम कहेवुं तथा अशुभयुत अने अशुभदृष्ट सूर्य ज्यां होय त्यां शल्य छे एम कहेवुं. ए विषय नीचेना उदाहरणथी समजी शकाशे—

सं २००३ ना आसो शुदि १० ना दिवसे कोइए पोतानी वास्तुभूमिमां धन अथवा शल्य होवा विषे प्रश्न कर्यो. सूर्योदयात् प्रश्नेष्टकाल ३ घडी ३३ पलनो हतो. एटले वर्तमान लग्न 'तुला' आव्युं, चोखंडा घरमां तुलाथी मांडी राशिओ अने ग्रहो लखता लग्नकुंडली अहारमां पृष्ठनी शरुआतमां आपी छे ते प्रमाणे बनी.



उपरना लग्ननी ग्रहव्यवस्था आ प्रमाणे छे—

मकरनो चन्द्र दक्षिणना भागमां पड्यो छे. ते उपर बुध, गुरु अने शुक्रनी त्रिपाद दृष्टि छे, पण साथे ज मंगल अने शनि एने पूर्णदृष्टिथी जुए छे एथी वास्तुभूमिमां धन निधान तो नथी. हवे ए वास्तुक्षेत्रमां शल्यनो विचार करीये. सूर्य राहुनी साथे छे अने मंगल शनिथी पूर्णदृष्ट छे. आ स्थिति शल्यनो संभव सूचवे छे अने ते पण दक्षिण दिशाना भागमां होवानो संभव छे. एम छतां सूर्य ए बुध, गुरु अने शुक्रवडे पण त्रिपाददृष्टिए दृष्ट छे, एथी आ भूमिमां शल्यनो निश्चित संभव तो नथी. छतां शंकितस्थानमां शल्यनी तपास करवी योग्य गणाय।

प्रश्नलग्नद्वारा धन अथवा शल्य जाणवानी रीति ज्योतिर्निबन्धकारे पण एज आपी छे, छतां एमां भूमिना ४ भाग पाडी राशिओ लखवानी वात नथी, पण प्रचलित लग्नकुंडलीने ग्रहो उपरथी जोवानुं विधान छे. ते आ प्रमाणे—

यस्मिन् भागे सौम्या, गृहस्य तद्द्रव्यमादिशेत् तत्र ।
पापा यस्मिन् भागे, तस्मिन् शल्यं विनिर्देश्यम् ॥२३॥

भा०टी०—कुंडलीना जे दिशाभागमां सौम्यग्रहो पड्या होय,

घरना ते दिशाभागमा ग्रहस्वामिक द्रव्य कहेवुं अने जे भागमा पाप-
ग्रहो पडया होय, घरना ते दिशाभागमा शल्य कहेवुं.

आ ग्रन्थना मते पूर्वोक्त लग्नकुंडली नीचे प्रमाणे बनावीने
परिणाम कही शकाय । प्र०नेष्ट ३-२३

लग्नचक्र



आ कुंडलीमा सौम्यग्रहनी स्थिति पूर्वदिशा तेमज उत्तरदिशामा
दृष्टिगोचर थाय छे. एटले ए दिशाओमा शल्य तो संभवतुं नथी छता
द्रव्यनु अस्तित्व पण संभवित नथी. केमके चन्द्र उपर शनि मंगलनी
पूर्ण अने सूर्य राहुनी द्विपाद दृष्टि छे. बुध, गुरु अने शुक्र पण मंगल-
युक्त छे अने शनि, राहुद्वारा द्विपाद दृष्टिए दृष्ट छे एथी जणायुं के
पूर्व उत्तर दिशाओमा शल्य नथी, तेम द्रव्य पण नथी हवे पश्चिम
दक्षिण दिशाओनो विचार करीये. सूर्य पूर्वाग्नेयकोणमां छे शनि
दक्षिणमा छे अने राहु पश्चिमनैर्ऋत्य भागमां छे. आ ग्रहस्थिति
दक्षिणभागमा शल्यनु सूचन करे छे. मध्यदक्षिणमां बेठेल शनिने
चन्द्र पूर्णदृष्टिथी देखे छे अने बुध गुरु शुक्रनी पण एना उपर एक-
पाद दृष्टि छे, एथी दक्षिणमा शल्यनो समव जणातो नथी राहु उपर
मंगलनी पूर्णदृष्टि छे खरी पण साथे ज बुध गुरु शुक्र अने त्रिपाद-

दृष्टिथी अने चन्द्रमा त्रिपाददृष्टिए देखतो होवाथी गर्भनी भूमिमां पण शल्य जणातुं नथी. सूर्य पूर्वभागनां आग्नेयकोणमां छे अने शनिनी पूर्णदृष्टिमां छे. चन्द्रनी त्रिपाद दृष्टि निर्बल थवाथी सौम्य ग्रहनी एना उपर दृष्टि पण नथी, एटले आग्नेयकोणमां शल्यनो निर्णय करवो जोइए, एम ए प्रश्नलग्ननी कुंडली उपरथी फलित थाय छे.

भूमिगत कोइ पण शल्य हानिकारक छे ए विषयमां बृहत्संहिताकारनी मान्यता—

धनहानिर्दारुमये, पशुपीडा रोगभयानि चास्थिकृते ।
लोहमये शस्त्रभयं, कपालकेशेषु मृत्युः स्यात् ॥२४॥
अङ्गारे स्तेनभयं, भस्मनि च विनिर्दिशेत् सदाग्निभयम् ।
शल्यं हि मर्मसंस्थं, सुवर्णरजतादृतेऽत्यशुभम् ॥२५॥
मर्मण्यमर्मगो वा, रुणद्ध्यर्थागमं तुषसमूहः ।
अपि नागदन्तको मर्म-संस्थितो दोषकृद् भवति ॥२६॥

भा० टी०—गृहगत शल्य काष्ठरूप होय तो धनहानि, हाडकारूप होय तो पशुपीडा, रोग अने भयजनक होय छे. लोहरूप शल्यमां शस्त्रभय अने माणसनी खोपरी के वालरूप शल्यमां मृत्यु थाय छे. शल्य कोलसारूप होय तो चोरभय अने भस्मरूप होय तो सदाने माटे अग्निभयजनक होय छे. मर्मस्थानोनी नीचे रहेल सोना रूपा सिवायनुं कोइ पण शल्य अत्यन्त अशुभ फलदायक होय छे.

तुषसमूह (धान्यना फोतरानो ढगलो) मर्मगत होय के अमर्मगत होय पण ते धनप्राप्तिने रोके छे अने मर्मस्थानमां रहेल तो एक खींटी पण दोषदायक निवडे छे.

शल्योद्धार निमित्ते केटलुं ऊंडुं खोदवुं जोइए ?—

जानुमात्रं खनेद् भूमि-मथवा पुरुषोन्मितनाम् ।
अधः पुरुषमात्रात्तु, न शल्यं दोषदं गृहे ॥२७॥

जलान्तकस्थितं शल्यं, प्रासादे दोषदं नृणाम् ।
तस्मात् प्रासादिकीं भूमिं, खनेद्यावज्जलान्तिकम् ॥२८॥

भा०टी०—गृहनिर्माण करता भूमिने ढींचण सुधी 'भूमि जो नव्य-पूर्वे नहि वसेली होय तो' अथवा तो पुरुष-परिमाण ऊंडी खोदवी, एथी नीचे शल्य होय तो गृहने विषे दोषरूप नथी.

प्रासाद 'देवालय'मा नीचे जलपर्यन्त ऊंडु शल्य होय तो पण बनावनार मनुष्य माटे दोषकारक होय छे. तेथी प्रासादनी भूमि जल नीकले त्या सुधी खोदीने शल्यने दूर करवुं जोइये.

माण्डव्यनुं कथन पण एने मलतु ज छे—

जलान्तं प्रस्तरान्तं वा, पुरुषान्तमथापि वा ।
क्षेत्रं संशोध्य चोद्धृत्य, शल्यं सदनमारभेत् ॥२९॥

भा०टी०—जलपर्यन्त, प्रस्तर (पत्थर) पर्यन्त अथवा पुरुष-परिमित वास्तुक्षेत्रनु संशोधन करी शल्य होय तो दूर करीने घरना कार्यनो आरम्भ करवो जोइये.

उपरना प्रमाणोथी सिद्ध थाय छे के ज्या घर अथवा देवमन्दिर बनाववुं होय ते भूमिनु प्रथम विधिपूर्वक शोधन करी तेमा हाडकुं, लोह, काष्ठ, तुषसमूह, राखोडी अथवा बीजी कोइ अपवित्र वस्तु होय तो ते दूर करावीने ते पछी वास्तुनो पायो भरवो. घर-मकाननी भूमि ४ हाथ सुधी खोदीने शल्य दूर करवुं जोइये अने देवालयनी भूमि जल नीकले त्या सुधीमां शल्य होय तो पण दूर करवु जो नीचे पत्थर अथवा काकरील भूमि आवी जाय तो ते उपरथी पायो नाखवो, कारणके त्या जलपर्यन्त खोदवानी आवश्यकता रहेती नथी.

३ दिक्साधन-लक्षण

शल्यादिरहिते वास्तौ, यदि दिग्मूढता भवेत् ।
वासे तत्र शुभं नैव, तस्माद् दिक्साधनं वरम् ॥३०॥

भा०टी०—शल्यादिरहित वास्तुभूमिमां पण जो दिग्मूढपणुं होय तो त्यां वसवुं शुभदायक नथी, माटे दिक्साधन करवुं जोइये.

प्रासाद, मठ, मन्दिर, घर, सभागृह अने कुण्ड आदिना निर्माणमां पूर्वादि दिशाशुद्धि अवश्य जोवी जोइए. कोइ पण दिग्मूढ (दिशाशून्य) वास्तु शुभ गणातुं नथी. तेमां रहेनारनो अभ्युदय थतो नथी.

ए संबन्धमां वृद्ध नारदजी कहे छे—

प्रासादे सदनेऽलिन्दे, द्वारे कुण्डे विशेषतः।
दिग्मूढे कुलनाशः स्यात्, तस्मात्संसाधयेद्दिशः ॥१॥

भा०टी०—देवालय, घर, ओसरी, द्वार अने कुंड जो दिग्मूढ होय तो कुलनो नाश थाय छे, माटे सारी रीते दिशासाधन करवुं.

दिशाज्ञानना उपायो—

प्राचीन ग्रन्थोमां पूर्वादि दिशाओने जाणवाना अनेक उपायोनुं वर्णन कर्युं छे, जे पैकीना केटलाक नीचे प्रमाणे छे.

राजवल्लभकार लखे छे—

प्राची मेषतुलारवावुदयति स्याद् वैष्णवे वह्निभे,
चित्रास्वातिभमध्यगा हि गदिता प्राची बुधैः पञ्चधा।
प्रासादं भवनं करोति नगरं दिग्मूढमर्थक्षयं,
हर्म्यं देवगृहे पुरे च नितरामायुर्धनं दिग्मुखे ॥ २ ॥

भा०टी०—१ मेषराशि उपर आवीने सूर्य पहेले दिवसे जे दिशाभागमां उदय थाय ते दिशा शुद्ध पूर्वा समजवी. एज प्रमाणे २ तुलाना सूर्यनुं उदयस्थान पण शुद्ध पूर्वा ज होय छे.[1]

---

१ अहीं सूर्य सायन मेष अने तुलानो समजवो. प्रायः अंग्रेजी ३ जा महिनानी २१ मी तारीखे सायन मेषनो अने ९ मा महिनानी २४ मी तारीखे सायन तुलानो सूर्य थाय छे. चंडूपंचांगोमां आनी सूचना 'मेषे भानुः' 'तुले भानुः' आवा शब्दोमां आपवामां आवे छे.

३ जे स्थानमां 'श्रवण' नक्षत्रनो उदय थाय अने ४ जे स्थाने 'कृत्तिका' नक्षत्र उदय पामे ते भागो पण शुद्ध पूर्वदिशा होय छे. ५ चित्रा ज्यां उदय पामे अने स्वाति ज्या उदय पामे ते बन्ने स्थानोमां निशान करी ते बेनो मध्यभाग नक्की करो. ए मध्यभाग ते शुद्ध पूर्वदिशा छे एम समजी लो.

उपर प्रमाणे जाणकारोए पाच प्रकारे पूर्वदिशा ओळखावी छे

दिग्मूढ देवालय, घर अने नगर धनहानि करे छे. शुद्धदिशा संमुख द्वारवाळा महेल देवमन्दिर अने नगर आयुष्य तथा धननी वृद्धि करनारा थाय छे

दिशाज्ञानना प्रकारान्तरो—

तारे मार्कटिके ध्रुवस्य समता नीतेऽवलम्बेन ते,
दीपाग्रेण तदैक्यतश्च कथिता सूत्रेण सौम्या दिशा ।
शङ्कोर्युग्मगुणे तु मण्डलवरे छायाऽत्र यामद्वयो-
र्जाता यत्र युतिस्तु शङ्कुतलतो याम्योत्तरे स्फुटे ॥३॥

भा०टी०—(१) ध्रुवमाकडीनो तारो (लघुसप्तर्षिनो ध्रुव तरफनो तारो) अने ध्रुवनो तारो, आ बन्नेने ओळंबे लइने वास्तुभूमिना दक्षिण काठे राखेल दीपकनी शिखानी साथे मेळवो. पछी ध्रुव अने दीपकशिखानी सीधमा वास्तुक्षेत्रमा दक्षिणोत्तर लांबु सूत्र खेंची रेखा दोरो सूत्रनो सामेनो छेडो उत्तर अने दीपक तरफनो छेडो दक्षिण दिशाने जणावशे

(२) वास्तुक्षेत्रना मध्यभागे समतल भूमिमा एक गजनुं गोळ मण्डल बनावी तेमा वच्चे एक फुट लांबो सीधो शङ्कु ऊभो करो अने तेनी छाया घटती घटती मण्डलनी पश्चिम रेखा उपर ज्या स्पर्श करे त्या निशान करो; शङ्कुने तेज स्थितिमा ऊभो रहेवा दो, ज्यारे त्रीजा पहोरना समये शङ्कुछाया मडलनी पूर्व रेखाने व्यापीने बहार

नीकळे त्यारे त्यां पण निशान करो अने पछी बन्ने निशानो वच्चे लीटी दोरी तेनी उपर दक्षिणोत्तर लंब रेखा दोरो, एटले उत्तर दक्षिण दिशा सिद्ध थशे.

स्फुटकरण ग्रन्थनुं दिशासाधन—

ध्रुवओळंबानी रेखामां उत्तर दक्षिण दिशा अने ते रेखाथी थता मत्स्यना मुख अने पुच्छना स्थाने अनुक्रमे पूर्व पश्चिम दिशा सिद्ध थशे.

आ विषयनुं नीचेना पद्यमां प्रतिपादन छे—

ध्रुवलम्बकरेखाया, रेखान्तः सौम्ययाम्यहरितौ स्तः ।
तन्मत्स्यपुच्छमुखतः, पश्चिमपूर्वाभिधे विद्यात् ॥४॥

४. कीलिकासूत्र-लक्षण

चतुर्वर्णविभागानां, यद् हितं कीलिकादिकम् ।
तदेव वेश्म-चैत्यादि-निवेशादौ नियोजयेत् ॥२१॥

भा०टी०—चार वर्णो पैकीना जे जे वर्णने जे जे प्रकारनी कीलिका (खीली-खूंटी) अने सूत्र हितकारक जणावेल छे, ते प्रकारनी कीलिका-सूत्रनो घर तथा चैत्य आदिना प्रारंभमां उपयोग करवो. भूमिना परिग्रह प्रसंगे ग्राह्यभूमिना चार खूणाओमां खीलियो ठोकी सूत्रो बांधीने भूमिनी चतुस्सीमा निश्चित करवा जणाव्युं छे. त्यां ए प्रश्न उपस्थित थवो संभवित छे के ते खीलियो शानी होवी जोइये ? ते लंबाईमां केटली अने आकारमां केवी होवी जोइये ? वळी तेमां बांधवानी दोरी केवा प्रकारनी होय तो सारी गणाय ? आ बधी वातोनो शास्त्रमां खुलासो करेल छे. जिज्ञासुगणनी जिज्ञासापूर्ति करवाना हेतुथी अमो तेनो सारांश नीचे आपीये छीये.

ए विषयमां सूत्रधारमंडन नीचे प्रमाणे प्रतिपादन करे छे.

अग्नौ राक्षसवायुशङ्करदिशि स्थाप्याः क्रमात्कीलिकाः,
अश्वत्थः खदिरः शिरीषककुभौ वृक्षाः क्रमेण द्विजात् ।
वर्णानां कुशमुञ्जकाशशणज सूत्रं क्रमात्सूत्रणे ॥

भा०टी०—अग्निकोण, नैर्ऋत्यकोण, वायव्यकोण अने ईशानकोण आ चार कोणोमा अनुक्रमे खीलियो ठोकवी. ते खीलियो ब्राह्मणादि ४ वर्णना लोकोने माटे अनुक्रमे पीपळो, खेर, शरेष अने अर्जुन वृक्षनी होय तो ते उत्तम कही छे अने खीलियोनी वच्चे बाधवानी दोरी डाभनी, मुंजनी, काशनी अने शणनी होय तो ब्राह्मणादि जातियोने माटे श्रेष्ठ गणाय छे.

ग्रन्थान्तरमा खेर, अर्जुन, शाल, पीपळ, रक्तचदन, पलाश, रक्तशाल, विशाल, नीप, करंज, कुटज, वास अने बिल्ववृक्ष, आ वृक्षो पैकीना कोइ पण एक वृक्षनो शकु (खीली) बनाववानुं विधान कर्युं छे.

ज्योतिर्निबन्धमा लखे छे—

चतुर्विंशत् त्रयोविंशत् षोडशद्वादशाङ्गुलैः ।
विप्रादीनां शङ्कुमानं, स्वर्णवस्त्राद्यलङ्कृतम् ॥ १ ॥

भा०टी०—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अने शूद्रवर्णोने योग्य खीलियो अनुक्रमे २४–२३–१६–१२ आगळ लाबी बनाववी अने सुवर्ण तथा वस्त्रादिवडे ते सुशोभित करवी.

खीलियोनो उपरनो एक तृतीयाश चोरस करवो मध्य तृतीयाश अष्टास्र अने नीचेनो एक तृतीयाश गोळ करी क्रमे पातळो करवो खीली नेढ के व्रण वगरनी शुभलक्षणयुक्त शुभदिवसे कराववी. सूत्रधारोना साम्प्रदायिक टिप्पणमा ब्राह्मणादियोग्य खीलियोनु मान अनुक्रमे ३२–२८–२४–२० आंगळनु बताव्यु छे.

ब्राह्मणनी चोखंडी, क्षत्रियनी अष्टास्र, वैश्यनी षोडशास्र अने

शूद्रनी गोळ खीली होवी जोइये. खीली उपर सर्व प्रथम सूत्रधारे घन प्रहार करवो. प्रथम प्रहारे खीली एक चतुर्थांश जेटली जमीनमां उतरे तो ते जमीन उत्तम जाणवी, एक तृतीयांश जेटली अंदर जाय तो मध्यम अने अडधी अंदर उतरी जाय तो वास्तुभूमि कनिष्ठ प्रकारनी जाणवी अने खीली अडधा उपरांत जमीनमां उतरी जाय तो ते भूमि वासने योग्य नथी एवो निर्णय करी लेवो. खीली उपर प्रहार करतां ते सीधी जमीनमां उतरे अथवा पूर्व उत्तर ईशानादि दिशा तरफ जराक नमे तो ते शुभसूचक गणाय छे.

खीली ठोकतां ते भागी जाय अथवा वांकी थइने दक्षिणादि अशुभ दिशामां नमी जाय तो अशुभ निमित्त जाणीने ते मुहूर्ते भूमिग्रहण करवानुं मांडी वाळवुं जोइये.

दोरडी वर्णानुसार कुशआदिनी बतावी छे, छतां सूतरनी दोरडी सर्ववर्णने माटे उत्तम छे, एवुं ग्रंथांतरमां विधान करेलुं छे अने खीलीनी जेम दोरी बांधती वखते पण शुभाशुभ निमित्त ध्यानमां राखवुं जोइये. दोरी बांधतां खीली न नमे, दोरी बराबर बंधाई जाय, बांधती वखते मंगलध्वनि अथवा मंगलशब्द काने पडे तो कार्यसिद्धिसूचक शुभनिमित्त समजवुं अने एथी उलटुं जो दोरी बांधतां खीली ऊखडी जाय के अशुभदिशामां नमी जाय, दोरी तूटी जाय अथवा तत्काल कोइ रुदन आदिनो अशुभ शब्द कर्णगोचर थाय तो निमित्त शुभ नथी, एम जाणी मुहूर्त आगळ उपर राखवुं.

५. कूर्मशिला-लक्षण (१)

यत्र संस्थाप्यते कूर्मः कूर्मरूपयुतापि वा ।
ब्रह्मस्थाने निवेश्याऽसौ, शिला कूर्मशिला हि सा ॥२२॥

भा०टी०—जे शिला उपर सोना, रूपा अथवा त्रांबानो कूर्म

स्थापन कराय अथवा जे शिला उपर कूर्मनुं रूपक करेल होय अने जे गर्भगृहना मध्यभागे स्थापवामां आवे छे ते शिलाने ' कूर्म-शिला ' मानेली छे.

कूर्मशिलानुं मान—

एक हाथना देवालयनी कूर्मशिला ४ आगळनी समचोरस करवी अने ते पछी १० हाथ सुधीना देवालयमा प्रतिहाथे २–२ आगळनी वृद्धि करवी.११ थी २० हाथ सुधी १–१ आगळ अने २१ थी ५० हाथ सुधी हाथ दीठ अर्धं आगळनी वृद्धि करवी, अर्थात् १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १० हाथना देवालयनी कूर्मशिलानुं मान ४, ६, ८, १०, १२, १४, १६, १८, २०, २२ आगळनु ११, १२, १३, १४, १५, १६, १७, १८, १९, २० हाथना देवालयनी धरणी-शिलानुं मान २३–२४–२५–२६–२७–२८–२९–३०–३१–३२ आगळनुं अने २१–२२–२३–२४–२५–२६–२७–२८–२९–३० –३१–३२–३३–३४–३५–३६–३७–३८–३९–४०–४१–४२–४३–४४–४५–४६–४७–४८–४९–५०–हाथना प्रासादनी कूर्म-शिलानुं मान अनुक्रमे ३२॥–३३–३३॥–३४–३४॥–३५–३५॥–३६–३६॥–३७–३७॥–३८–३८॥–३९–३९॥–४०–४०॥–४१–४१॥–४२–४२॥–४३–४३॥–४४–४४॥–४५–४५॥–४६–४६॥ –४७ आंगळनुं राखवु जोइये.

पत्थरनी कूर्मशिलानी जाडाइ तेनी लंबाई पहोळाइना त्रीजा भाग जेटली राखवी अने तेना उपर रूपकोनी खोदाइ शिलानी जाडाइथी अर्धी करवी. कूर्मशिला जो इंटनी होय तो तेनी जाडाइ पहोळाइथी अर्धी राखवी शिलानी निचली बाजुना मध्य भागमां कमलनुं रूपक शिलानी जाडाइना आठमा भाग जेटलु खोदवु.

प्रकारान्तरे कूर्मशिलाप्रमाण—

एकहस्ते तु प्रासादे, शिला वेदाङ्गुला भवेत् ।
षडङ्गुला द्विहस्ते च, त्रिहस्ते च ग्रहाङ्गुला ॥१॥
चतुर्हस्ते च प्रासादे, शिला स्याद् द्वादशाङ्गुला ।
तृतीयांशोदयः कार्यः, हस्ताद्ये च युगान्तके ॥२॥
वेदोपर्यष्टहस्तान्तं, वृद्धिस्त्र्यङ्गुलतो भवेत् ।
पुनर्द्व्यङ्गुलतो वृद्धिः, पञ्चाशद्धस्तकावधि ॥३॥
पादेन चोच्छ्रितां स्वस्थां, तां कुर्यात् पङ्कजान्विताम् ।
कर्तृकारापका राजा, प्रजाद्या नन्दते चिरम् ॥४॥
अष्टाङ्गुलोच्छ्रिता स्वस्था, चतुरस्रा करोन्मिता ।
शैलजा स्वस्थमानोक्ता, इष्टकानां तदर्धतः ॥५॥
शैलजे शैलजा कार्या, ऐष्टिके चेष्टिकामयी ।
तत्पिण्डाग्रे भवेत्पद्मं, शिलापिण्डाष्टमांशकम् ॥६॥
पद्मपत्रयुता चैव, नन्द्यावर्ता सस्वस्तिका ।
तद्देवायुधसंज्ञा च, पीठबन्धवशानुगा ॥७॥

भा०टी० १ हाथना प्रासादनी आधारशिला-(कूर्मशिला) ४ आंगळनी होय, २ हाथना प्रासादमां ६ आंगळनी, ३ हाथना प्रासादे ९ आंगळनी अने ४ हाथना प्रासादे पादशिला १२ आंगळनी होय छे. १ थी ४ हाथ सुधीना प्रासादनी शिला विस्तारना त्रीजा भागे जाडी करवी. चारथी ८ हाथ सुधीना प्रासादनी पादशिलामां प्रति हस्त ३ आंगळनी वृद्धि करवी अने ९ थी५० हाथ सुधीना प्रासादमां प्रति हाथे शिलाना विस्तारमां २-२ आंगळनी वृद्धि करवी.

४ हाथ उपरना प्रासादनी पादशिलानो उच्छ्रय (जाडाई) शिलाना १ चतुर्थांश जेटलो करवो. शिलाने कमलना चिन्हे चिन्हित करवी के जेथी करनार करावनार राजा प्रजा वगेरेने घणा कालपर्यन्त समृद्धिनुं कारण बने.

चोरस १ हाथ पादशिलानी ऊंचाइ ८ आगळनी करवी ते शैलज-शिलानुं स्वस्थमान छे अने इटनी शिलानी जाडाइ पोताना विस्तारथी अर्धा माननी करवी ए एनुं स्वस्थमान छे. पत्थरना प्रासादनी पादशिला पत्थरनी अने इटना प्रासादनी पादशिला इंटनी करवी. ते शिलानी जाडाइमा जाडाइना अष्टमांशे कमलनो आकार खोदवो, शिला उपर कमल, नन्द्यावर्त अने स्वस्तिक आदिना मांगलिक आकारो खोदवा अने ते ते दिशाभागनी शिलाओ उपर ते ते दिशाना देवोना आयुधोना चिन्हो पीठबंधने अनुरूप खोदाववा.

कूर्मनुं स्वरूप अने मान—

मध्यशिला उपर प्रतिष्ठाप्य कूर्म सोनानो अथवा रूपानो बनाववो अने तेने रत्नो तथा आभूषणोथी अलंकृत करवो प्रमाणमा कूर्म कूर्मशिलाना पंचमांश जेटलो करवो ए कूर्मनु उत्तम मान छे, एवु क्षीरार्णवग्रन्थनु विधान छे.

वास्तुमंजरी आदि अर्वाचीन ग्रन्थोमा कूर्मनु परिमाण १ थी १५ हाथ सुधीना प्रासादोमा प्रतिहस्त अर्ध अंगुल, १६ थी ३१ हाथना प्रासादोमा प्रतिहस्त पाव अंगुल अने ३२ हाथथी ५० हाथ सुधीना प्रासादोमा प्रतिहस्त बे आनी अंगुलना हिसाबे कूर्मना मानमा वृद्धि करी जे आवे तेटलु राखवानु विधान कर्युं छे अने म्होटामा म्होटो कूर्म १४ आगळनो बताव्यो छे अपराजितपृच्छामा आ विषयमा कंइक भूल थइ होय एम लागे छे, मुद्रित पुस्तकमां—

" एकहस्ते तु प्रासादे कूर्मः स्याच्चतुरङ्गुलः।" पाठ छे अने

" अनेन क्रमयोगेन मन्वङ्गुलः शतार्द्धके।"

आमा एक हाथना प्रासादमा ४ आगळना कूर्मनुं विधान भूल भरेलुं लागे छे. तेमज ५० हाथना प्रासादनो कूर्म १४ आगळनो होवानुं कथन पण अर्वाचीन ग्रन्थोनी साथे मेळ मेळववा खातर

संशोधके कर्युं लागे छे. अमारी पासेनी अपराजितपृच्छानी हस्त-लिखितप्रतिमां "—" एकहस्ते तु प्रासादे कूर्मश्चार्धाङ्गुलः स्मृतः।" एवो पाठ छे अने अन्तमां—" अनेन क्रमयोगेन ससाङ्गुलः शतार्धके।"

ए पाठ स्वीकारीने कूर्मनुं अन्तिम मान ७ आंगळनुं बताव्युं छे, ए मध्यमान छे, आ मानने चतुर्थांशहीन करवाथी कनिष्ठमान आवे छे अने चतुर्थांशाधिक करवाथी उत्तममान आवे छे.

क्षीरार्णवमां कूर्मनुं उत्तममान शिलाना पंचमांश जेटलुं बताव्युं छे, ५० हाथना प्रासादोनी कूर्मशिलानुं मान ४७ आंगळनुं छे, तो एनो पंचमांश ९।। कंइक न्यून साडानव आंगळ आवे छे, अपराजि-तना अमारा पाठ प्रमाणे कूर्मनुं चोकस मध्यमान ७।।। आवे छे, एने चतुर्थांश युक्त करी उत्तम बनावतां ९।।≈ नव आंगळ अग्यार आनी आवे छे, जे क्षीरार्णवना मानने लगभग मळतुं आवे छे. वास्तुमंजरी आदिमां कहेल कूर्ममान निश्चितरूपे १३।।। आंगळ आवे छे, आ साडात्रणथी पोणाचार आंगळनो फरक कोइ पण अशुद्ध पाठने आभारी छे.

कूर्मना उपादानो सोनुं रूपुं अने त्रांबुं आ त्रण धातुओ छे. आ त्रणमांथी शक्ति अनुसारे कोइ पण एक धातुनो कूर्म बनाववो.

कूर्मशिलालक्षण (२) (दाक्षिणात्यपद्धति)—

शिल्पशास्त्रोमां लखायेला देशपरक भेदो पण शिल्पिओए ध्यानमां राखवानी घणी आवश्यकता छे. एक देशमां चालति कोइ पण वास्तुकर्मविषयक प्रणाली बीजा देश माटे शास्त्रदृष्टिए ग्राह्य छे के नहि ए वातनो निर्णय कर्या पछी ज ते प्रणाली ग्रहण करवी जोइए.

आज काल घणा गुजराती शिल्पिओ अने तेमनी देखा देखीए

केटलाक मारवाडी मिस्त्रीओ पण प्रासादनी कूर्मशिला उपर योग-नाल मूकावे छे अने तेने देवनी बेठक उपर लावीने छोडे छे, आ पद्धति उत्तरभारतीयशिल्पनी नहि पण दाक्षिणात्य छे आ प्रणालिका मौलिक केवी छे अने एने अपनावनाराओए केवी विकृत करी नाखी छे, ए वस्तुने जणाववा माटे अमो अत्र ते मौलिक पद्धतिने तेना खरा रूपमा आपवी योग्य धारीये छीये, जे नीचे प्रमाणे छे—

युगास्रे वृत्तमान तु, मानसूत्र विधाय तु ।
तदन्याकृतिगेहानां, ततस्तत्सभवक्षयाम् ॥ ८ ॥

मात्वा विधाय सूत्राणि, वेदास्र खातमाचरेत् ।
अथाधारशिला न्यस्य, गर्तेऽस्मिन् कलश न्यसेत् ।
पद्मानि कूर्मयुक्तानि, योगनाल ततोपरि ॥ ९ ॥

भा०टी०—उक्त मानवाळा चोरस वास्तुक्षेत्रमां अने बीजा आकारवाळा गृहवास्तुओमा ते वास्तुभूमिना संभवित आकारने सूत्र-वडे मापीने तेमां चोरस खात करवुं ते खाडामा आधारशिला स्थापित करवी शिला उपर कलश, कलश उपर कमल अने कमल उपर योगनालनो न्यास करवो आधार शिलानु माप—

पीठस्य ताराधंततां तदर्ध-विस्तारयुक्ता प्रकरोतु मन्त्री ।
वा पादपद्मस्य ततां तदर्ध-तुङ्गामथाधारशिला सुलग्ने॥१०॥

भावि प्रासादपीठादि-मानेन परिकल्पयेत् ।
आधाराख्यशिलाकुम्भ-पद्मकूर्मादिमानकम् ॥ ११ ॥

भा०टी०—"सारा लग्नमा शिल्पिए आधारशिला तैयार करवी. आधारशिलानी लंबाइ, पीठनी ऊंचाइथी अडधी अने पहो-ळाइ तेथी अडधी राखवी अथवा आधारशिलानी लंबाइ पायाना विस्तार जेटली अने पहोळाइ तेनाथी अडधी राखवी अने तेनी

जाडाइ लंबाइना चतुर्थांश जेटली राखवी. वस्तुतः आधारशिला, कलश, कमल अने कूर्म आ सर्वनुं मान भाविप्रासादना पीठ आदिना मानने अनुसारे निश्चित करवुं जोइए.

कलश, कमल, कूर्म अने योगनालनुं मान—

स्तम्भोच्चस्य षडंशविस्तृतदष्टांशाधिकोच्छ्रो घटः,
पद्मोऽष्टांशसमुच्छ्रयोच्छ्रयनवांशोनप्रथोऽष्टच्छदः ।
अष्टांशायतदद्विपांशरहितव्यासायतार्धोच्छ्रयः,
कूर्मो नागयवाग्रतो द्विगुणमूला योगनालप्रथा ॥ १२ ॥

भा०टी०—प्रासादना स्तंभनी ऊंचाइना छट्ठा भाग जेटलो कलशनो विस्तार अने विस्तारथी एक अष्टमांश अधिक तेनी ऊंचाइ होय छे. कमलनी ऊंचाइ स्तंभनी ऊंचाइना एक अष्टमांश जेटली अने ऊंचाइथी एक नवमांशहीन तेनो विस्तार जाणवो. कमल आठ पत्र अने कर्णिकासहित बनाववुं. कूर्मने स्तंभनी ऊंचाइना आठमा भागे लांबो अने तेथी एक अष्टमांशहीन पहोळो अने पहोळाइथी अडधो ऊंचो करवो. योगनालनो विस्तार उपर आठ जवनो एटले एक आंगळनो अने मूलमां तेथी बमणा एटले बे आंगळनो होय छे.

आधारशिला उपर कलश आदिनो स्थापनाक्रम—

आधारस्य शिलामध्ये, निधिकुम्भं शिलाकृतम् ।
ताम्रजं वाऽथ विन्यस्य, नानारत्नादिपूरितम् ॥१३॥
तदूर्ध्वं दृषदम्भोजं, कर्णिकायां तदस्य तु ।
भाविदेवमुखं कूर्मं, विन्यसेद् विधिना निशि ॥१४॥
तदूर्ध्वं रजताम्भोज-गतं रजतकच्छपम् ।
तदूर्ध्वदेशे स्वर्णाब्जे, स्वर्णकूर्मं निधापयेत् ॥१५॥
तत्पाददृषदोर्मध्य-समायामं प्रणालकम् ।
कूर्मस्योपरि संस्थाप्य, कारयेत् गर्तपूरणम् ॥१६॥

सशर्करैर्वालुकैश्च, मृद्भिश्च दृषदादिभिः ।
दृढं प्रपूरयेच्छुद्धै-र्जलैराप्लाव्य मुद्गरैः ॥१७॥
मुसलैर्बृहच्छिरस्कैस्तु, निहत्य दृढतां नयेत् ।
गजसञ्चारणं तत्र, बहुशः कारयेत् पुनः ॥१८॥
एवं दृढतरं कृत्वा, समीकृत्य जलादिभिः ।
दिग्ज्ञानप्रक्रियादक्षः, स तत्कर्म समाचरेत् ॥१९॥

भा०टी०—आधारशिलाना मध्यभागमां पत्थरनो अथवा त्रांबानो कलश स्थापवो. कलशमां अनेक प्रकारना रत्नो मूकवा ते कलश उपर पत्थरनुं कमल स्थापवुं अने तेनी कर्णिकामां भावीदेवनुं मुख जे दिशामां आववानुं होय ते दिशामां मुख राखी पाषाणनो कूर्म विधिपूर्वक रात्रिना समये प्रतिष्ठित करवो. ते कूर्म उपर रूपानुं कमल स्थापी तेनां मध्यभागे रूपानो कूर्म स्थापवो. ते कूर्म उपर सुवर्णनुं कमल अने कमल उपर सुवर्णनो कच्छप प्रतिष्ठित करवो अने ते उपर योगनालनी स्थापना करवी. योगनालनी लंबाई प्रासादना पायामां स्थापेल बे शिलाओना अन्तर जेटली एटले प्रासादना गर्भना व्यास जेटली राखवी. आम १ कलश, ३ कमल, ३ कूर्म अने १ योग नाल स्थापीने ते खाडो शुद्ध रेती, वजरी, माटी अने पत्थर आदि नाखी उपरथी पाणी नाखी मोगरो अने मूसलो वडे कूटीने मजबूत करता भरवो. उपर अनेक वार हाथीओ चलावीने ते वास्तुतलने अति दृढ करवु. वास्तुभूमिने दृढ अने समतल कर्या पछी दिशाज्ञाननी प्रक्रिया जाणनार चतुर शिल्पिए वास्तुभूमिमां पूर्वादि दिशाओ निश्चित करवानुं काम शरु करवु.

उपर्युक्त कूर्मन्यासविधि दाक्षिणात्यपद्धतिना शिल्पशास्त्रोना आधारे लखेल छे आज काल ते प्रदेशना विद्वानो आ विधियो प्रमाणे ज करावे छे के बीजी रीते ते आपणे जाणता नथी, पण एक

वात तो निश्चित छे के गुजरात तरफना शिल्पिओ कूर्म उपर जे नाभि मूकावे छे ते उक्तविधिमांना योगनालनुं ज अनुकरण छे. उत्तरभारतनी शिल्पसंहिताओमां आ योगनालनुं विधान दृष्टिगोचर थतुं नथी. मारवाड तरफना शिल्पिओमां ए पद्धति प्रचलित पण नथी. अपवादरूपे गुजरातमां रही आवेला कोइ शिल्पिओ करावता होय तो ते वात जुदी छे. अमोए सेंकडो वर्षोना प्राचीन प्रासादोना जीर्णोद्धारोना प्रसंगोमां आ योगनालो क्हींथी नीकले छे के नहि एनी तपास करावी छतां कोइ पण प्राचीनदेवालयोना भूमिभागमां आ योगनाल अथवा एने मळती आवे एवी कोइ पण वस्तु नीकळी नथी. आ उपरथी निर्विवादपणे सिद्ध थाय छे के कूर्म उपर नाभि अथवा योगनाल मूकवानी पद्धति आ प्रदेश-गोदावरीथी उत्तर तरफना प्रदेश-माटे विहित न होवाथी चलाववी योग्य नथी एम अमो मानीये छीये।

कूर्म प्रमाण—

> एकहस्ते तु प्रासादे, कूर्मश्चार्धाङ्गुलः स्मृतः ।
> अर्धवृद्धिः प्रकर्तव्या, पञ्चदशहस्तावधि ॥२०॥
> द्वात्रिंशद्धस्तपर्यन्तं, पादवृद्धिः प्रकीर्तिता ।
> तदर्धेन पुनर्वृद्धि-र्द्विसप्ताङ्गुलः शतार्धके ॥२१॥
> एतन्मानं मध्यमुक्तं, कनिष्ठं पादवर्जितम् ।
> पादाधिकं भवेज्जेष्ठं, कूर्मे मानं त्रिधोदितम् ॥२२॥
> हैमो रौप्यश्च कर्तव्यः, सर्वपापप्रणाशनः ।
> करोति य इमं कूर्मं, स यज्ञफलमाप्नुयात् ॥२३॥
> स्नानं पञ्चामृतं कार्यं, कूर्मस्य तु यथाविधि ।
> अर्चयित्वा प्रयत्नेन, सुधूपामोदपुष्पकैः ॥२४॥
> तिलैर्यवैस्तथा होमं, पूर्णाहुतिं प्रदापयेत् ।
> निवेशयेत्ततः कूर्मं, वेदवादित्रमङ्गलैः ॥२५॥

भा०टी०—१ हाथना प्रासादे अर्धा आगळनो कूर्म कह्यो छे, १ थी १५ हाथ सुधी प्रति हाथ अर्धा आगळनी वृद्धि करवी. १६ थी ३२ हाथ सुधी प्रति हाथे पाव आगळनी अने ३३ थी ५० हाथ सुधी हाथ दीठ बे आनी ⅛ आगळनी वृद्धि करवी. आ प्रमाणे वृद्धि करता ५० हाथना प्रासादे १४ आगळनो कूर्म थशे. आ कूर्मनु मध्य-मान कह्युं छे. आमाथी चतुर्थांशहीन करता कनिष्ठ अने आमा चतुर्थांश वधारता कूर्मनुं ज्येष्ठमान थशे. आ प्रकारे कूर्मनु मान त्रण प्रकारनुं कह्युं छे. सोनानो अथवा रूपानो कूर्म सर्वपापोनो नाश करनारो छे. आवा उत्तम कूर्मने कराबीने प्रतिष्ठित करनार यज्ञना फलने प्राप्त करे छे कूर्मने प्रतिष्ठित करता पहेला विधिपूर्वक पञ्चामृतवडे तेने स्नान करावबुं, श्रेष्ठधूप अने सुगधीपुष्पोथी पूजवो तथा तल अने जवोना होमनी पूर्णाहुति देवरावनी शुभ मुहूर्ते वेदध्वनि तथा वादित्रोना मागलिक शब्दपूर्वक कूर्मने वास्तु नीचे स्थापन करवो.

६ शिला–लक्षण

चैत्यपादात्मिकाः प्रोक्ताः, शिलाः पञ्चाऽथवा नव ।
तासां लक्षण–मानादि, निरूप्य स्थापनं शुभम् ॥२३॥

भा०टी०—शिलाओ प्रासादना पगरूपे गणाय छे. सख्यामां ते ५ अथवा तो ९ कही छे. आ शिलाओनु लक्षण–प्रमाणआदि तपासीने शुभलक्षणान्वित अने मानोपेत शिलाओ स्थापवी शुभ छे.

'शिला' शब्दनो अर्थ कोट पण घर अथवा देवालयना पायामा चणातो प्रथम पत्थर एवो थाय छे. ए प्रथम पत्थरने विधिपूर्वक शुभ समये यथास्थान स्थापन करवो ते 'शिलान्यास' छे, 'दाक्षि-णात्य शिल्प–पद्धति'मां आ 'शिला'नु नाम 'प्रथमेष्टका' आपेलुं छे.

शिलाओनी संख्या—

आ शिलाओनी संख्याना विषयमा पूर्वग्रथकारोनी एकवाक्यता

नथी, कोइ ४, कोइ ५, कोइ ८ अने कोइ ९ शिलाओनी स्थापनानुं विधान करे छे. जेओ ४ अथवा ८ शिलाओनुं विधान करे छे, तेमनो आशय कूर्मने प्रथम नीचे स्थापी पछी वास्तुभूमिनो खाडो शुद्ध माटी अने अणघड पत्थराओ वडे पूरी लगभग एक चतुर्थांश जेटलो ते खाली रहे त्यां चार विदिशाओमां ४ अथवा चार दिशाओ अने चार विदिशाओमां मली ८ शिलाओ प्रतिष्ठित करवी एवो छे.

जेओ ५ अथवा ९ शिलाओ प्रतिष्ठित करवानो मत धरावे छे तेमनी मान्यता कूर्मशिलानी साथे ज ४ अथवा ८ शिलाओ पण प्रतिष्ठित करवानो छे. आम शिलासंख्यानी बाबतमां मुख्य पक्ष बे छे ५ शिलावादी अने ९ शिलावादी.

चार तथा ५ शिलाओनी बाबतमां विश्वकर्मप्रकाशकार नीचे प्रमाणे व्यवस्था आपे छे—

यो विधिर्गृहनिर्माणे, शिलान्यासस्य कर्मणि ।
प्रासादेषु स विज्ञेय-श्चतस्रस्तु शिलास्तथा ॥ १ ॥

भा०टी०—गृहनिर्माणमां शिलान्यासविषयक जे विधि छे, तेज विधि प्रासादो 'देवालयो' मां पण होय छे. मात्र भेद एटलो ज होय छे के प्रासादवास्तुमां शिलाओ ४ होय छे.

शिलाओनुं स्वरूप—

जे शिला विधिपूर्वक प्रतिष्ठित करवानी होय ते देखावडी, रंग-रूपमां आंखने सुन्दर लागे एवी, डाघ, अंग, पीलक के कालक विनानी अने जे जातिना पत्थरनुं घर अथवा देवालय बनाववानो निर्णय कर्यो होय तेज जातिनी अथवा तेथी उच्च जातिनी होवी जोइये. कदापि घर के देवालय ईंटोनुं बनाववुं होय तो 'इष्टकारूप-शिला स्थापन करी शकाय छे. छतां ते ईंट पण सारी पाकेली, राती प्रमाणयुक्त अने सुन्दर होवी जोइये. घणी जूनी, काळी, काळा डाघ-

वाळी, रेतीवाळी, भागेली, प्रमाणमा न्हानी के म्होटी ईंट शिलारूपे स्थापवाना काममा लेवी नहि.

शिलानी लंबाई-पहोळाई-जाडाई—

गृहवास्तुना निर्माणमां प्रतिष्ठित करावी शिलानुं परिमाण वर्ण-परत्वे भिन्न भिन्न छे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अने शूद्रना गृहवास्तुनी शिलानी लंबाई अनुक्रमे २१, १७, १३, ९ आगळनी होय छे, तेनी पहोळाई लंबाईथी अडधी अने जाडाई पहोळाईथी अडधी होवी जोइये देवालयनी शिला सामान्य रीते एक हाथनी लंबाई पहोळा-ईनी होवी जोइये.

देवालयनी नन्दादि ८ शिलाओ—

देवालयना मानानुसार तेनी शिलाओनु मान होय छे. देवाल-यनु मान १ हाथथी ५० हाथ सुधीनुं होय छे, तेथी शिलाओनुं मान पण तदनुसार भिन्न भिन्न होय छे तेमा पण नन्दादि ८ शिलाओनुं मान अने मध्यमां प्रतिष्ठाप्य 'धरणीशिला' नुं मान जुदुं पडे छे.

१-२-३-४-५ हाथना देवालयोनी नन्दादि ८ शिलाओ ७-९-११-१३-१५ आगळना माननी, ६-७-८-९-१० हाथना देवालयनी नन्दादि शिलाओ १६-१७-१८-१९-२० आगळनी, ११-१२-१३-१४-१५-१६-१७-१८-१९-२० हाथना देवाल-योनी शिलाओ २०॥-२१॥-२२।-२३-२३॥-२४॥-२५।-२६ -२६॥-२७॥-आगळनी अने २१-२२-२३-२४-२५-२६-२७ -२८-२९-३०-३१-३२-३३-३४-३५-३६-३७-३८-३९-४० -४१-४२-४३-४४-४५-४६-४७-४८-४९ अने ५० हाथना देवालयनी नन्दादिशिलाओ अनुक्रमे २८-२८॥-२९-२९॥-३० -३०॥-३१-३१॥-३२-३२॥-३३-३३॥-३४-३४॥-३५— ३५॥-३६-३६॥-३७-३७॥-३८-३८॥-३९-३९॥-४०-४०॥

-४१-४१॥-४२-४२॥-आंगळनी समचोरस बनाववी. आ शिला-ओनी जाडाई लंबाई-पहोळाईना एकचतुर्थांश जेटली राखवी जोइये.

शिलाओ उपरना चिन्हो—

नन्दादि ८ शिलाओ उपर अनुक्रमे शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, अंकुश, गदा, त्रिशूल अने वज्रना रूपको खोदवां अने कूर्मशिला उपर नीचे प्रमाणे ९ रूपको खोदवा. कूर्मशिलाना मध्यभागे कूर्म, अग्निकोणमां जलतरंग, दक्षिणमां मत्स्य, नैर्ऋत्यमां दर्दुर, पश्चिममां मकर, वायव्यमां ग्राह (ग्रासडो) उत्तरमां शंख, ईशानमां सर्प अने पूर्वदिशामां कलश. आप्रमाणे रूपको खोदीने शिलाने सुशोभित करवी. सामान्यरीते कलश, अंकुश, ध्वज, छत्र, चामर, मत्स्य, तोरण, दूर्वा, नाग, फल, मुकुट, पुष्प, स्वस्तिक, नंद्यावर्त, वेदिका, कूर्म, कमल, चन्द्र, वज्र अने प्राकार आदिना रूपको शिलाओ उपर होय तो हितकारक निवडे छे. ए उपरान्त मनुष्य, वृषभादि पशु अने अश्व आदिना पदो वडे चिह्नित शिलाओ पण कल्याणनी वृद्धि करनारी होय छे. राक्षस, हरिण अने पक्षी आदिना पदचिन्होवाली शिलाओ अशुभ छे अने वास्तुनी पादप्रतिष्ठामां ते वर्जवी जोइये.

शिलाओना नामोमां मतभेद—

प्रतिष्ठाप्य शिलाओना नामोमां पण थोडोक मतभेद छे. चार शिलावादियोना मतमां शिलाओना नन्दा, भद्रा, जया अने पूर्णा ए नामो छे अने वासिष्ठी, काश्यपी, भार्गवी तथा आंगिरसी ए एना गोत्रो छे. पांचशिलावादियोना मतमां शिलाओना नामो नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता अने पूर्णा ए प्रमाणे छे, पण प्रतिष्ठाकल्पोमां चोथुं नाम 'विजया' लखेलुं मले छे.

अष्ट शिलापक्षमां शिलाओना नामो क्यांइ उपलब्ध थयां नथी. छतां संभवतः नन्दा, भद्रा, जया, पूर्णा, अजिता, अपराजिता,

विजया अने मंगला ए प्रमाणे होवा जोइये

नवशिलापक्षमां आग्नेयपुराणोक्तशिलाओना नामो—नन्दा, भद्रा, जया, पूर्णा, अजिता, अपराजिता, विजया, मंगला अने धरणी ए प्रमाणे छे, ज्यारे शिल्पशास्त्रोक्त नामो आ प्रमाणे छे—

नन्दा भद्रा जया विजया, पूर्णा च पञ्चमी शिला ।
मङ्गला ह्यजिताऽपरा-जिता च धरणी भवा ॥ २ ॥
शिलां निवेशयेत् पूर्वं, पश्चात्पीठस्य बन्धनम् ।
जङ्घायां शिखरे चैव, वेदिका कलशान्तिके ॥ ३ ॥
शिलोपरि समस्तं तत , शिलाधश्चोपपीठकम् ।
इति युक्तिर्विधातव्या, शिलानां लक्षणं शुभम् ॥ ४ ॥

१ नन्दा, २ भद्रा, ३ जया, ४ विजया, ५ पूर्णा, ६ मंगला, ७ अजिता, ८ अपराजिता अने ९ धरणी ए प्रमाणे पादशिलाओनां आ ९ नामो छे

प्रथम शिलान्यास करवो अने पछी ते उपर पीठबंध करवो जंघा, शिखर, वेदी अने कलश आ बधे स्थले प्रथम शिला स्थापीने पछी उपर चणतर करवुं. कारण के उपरनुं बधुं मडाण शिला उपर ज होय छे. मात्र उपपीठ ज शिलानी नीचे होय छे माटे एवी युक्ति करवी के जेथी शिला शुभलक्षणवाली बने

उपशिलाओ—

उपशिला एटले 'शिलानी नीचे रखाती आधारशिला' जेमना मतमा जेटली शिलाओ तेटली ज उपशिलाओ पण होय छे.

शिलाओ करतां उपशिलाओ लंबाई पहोळाई अने जाडाईमां कंईक वधारे होवी जोइये. तेमना मध्यभागे निधिकलशो स्थापवा माटे खाडा करवा जोइये. खाडा निधिकलशोना प्रमाणानुसार ऊंडा अने लांबा-चोडा करवा. यद्यपि निधिकलशो उपशिला उपर न

थापीने शिलासंपुटो नीचे खाडाओमां स्थापवा होय तो उपशिलाओ उपर खाडा करवानी आवश्यकता रहेती नथी. शास्त्रमां निधिकलशो उपशिलाओ उपर खाडा करीने तेमां स्थापवानुं विधान छे अने उपशिलाओ शिलाना संपुटो नीचेना खाडाओमां स्थापवानुं पण विधान छे.

निधिकलशोनी संख्या अने परिमाण—

निधिकलशोनी संख्या पण उपशिलाओनी जेम शिलाओ जेटली ज छे. ४ शिलावादियोना मतमां निधिकलशो ४, पांचशिलावादियोना मतमां ५ अने नवशिलावादियोना मते निधिकलशो ९ होय छे. ८ शिलावादियोना पक्षमां कलशो केटला होय ए क्यांइ लख्युं नथी, छतां एमना मतमां कलशोनी संख्या ४ अथवा ८ नी होवी जोइये. जेओ वास्तुना आग्नेयादि ४ कोणोमां बे बे शिलाओ एक साथे स्थापवानुं विधान करे छे, तेमना मते निधिकलशो ४ अने जेओ पूर्वथी ईशानपर्यन्तनी दिशाविदिशाओमां ८ शिलाओनो न्यास करवानुं कहे छे, तेमना मतमां कलशो ८ ज होइ शके.

चारशिलापक्षमां १ पद्म, २ महापद्म, ३ शंख अने ४ सुभद्र आ नामना चार निधिकलशो मान्यां छे.

पांचशिलापक्षमां कलशोना नामो—१ पद्म, २ महापद्म, ३ शंख, ४ मकर अने ५ सुभद्र ए प्रमाणे छे, पण विश्वकर्मप्रकाशना कथनानुसार आ कलशोना नामो १ पद्म, २ महापद्म, ३ शंकु, ४ विजय अने ५ सर्वतोभद्र ए प्रमाणे छे.

आठशिलापक्षमां निधिकलशोनुं निरूपण जोवामां आवतुं नथी.

नवशिलावादियोना मतमां निधिकलशोनां पौराणिक नामो १ सुभद्र, २ विभद्र, ३ सुनन्द, ४ पुष्पनन्द, ५ जय, ६ विजय, ७ कुंभ, ८ पूर्ण अने ९ उत्तर ए प्रमाणे छे. ज्यारे शिल्पशास्त्रोक्त नामो

१ पद्म, २ महापद्म, ३ शख, ४ मकर, ५ कुन्द, ६ नील, ७ कच्छप, ८ मुकुन्द अने ९ खर्व ए प्रमाणे छे

ब्राह्मणादिवर्णपरक निधिकलशोनी ऊंचाई अनुक्रमे ५-७॥-१।-०॥ᕊ—आगळनी राखवी जोइए. आ कथन गृहविषयक छे. वास्तु राजमहेल होय अथवा देवालय होय तो निधिकलशो एथीये प्रमाणमा म्होटा होइ शके छे पंचरात्रना मते आवा कलशो विस्तारमां १२ आगळथी २४ आगळ सुधीना होइ शके छे.

कलश सोनानां, पत्थरनां अने तेना अभावे माटीना सारा आकारवाला अने पाकेला लाल होवा जोइये

कलशोमां घी, पंचरत्न अने अक्षत भरी तेओ उपर पोतानी नाममुद्रा देइ स्थापता पहेला बध करी देवा. कलश धातुना होय तो धातुना, पत्थरना होय तो पत्थरना अने माटीना होय तो माटीना ढांकणाथी ढाकीने बध करवा.

निधिकलशोने अगे शास्त्राधार—

अधःखाते सम्पुटेषु, निधिकुम्भांश्च योजयेत् ।
पद्मश्चाथ महापद्मः, शङ्खो मकर-कच्छपौ ॥ ५ ॥
मुकुन्द-कुन्द-नीलाश्च, खर्वश्च निधयो नव ।
सुभद्रश्च विभद्रश्च, सुनन्द पुष्पदन्तकः ॥ ६ ॥
जयोऽथ विजयश्चैव, कुम्भः पूर्णस्तथोत्तरः ।
इत्येव नव कुम्भाश्च, नियोज्यास्तत्र वै क्रमात् ॥ ७ ॥

भा०टी०—शिलाओ स्थापवा माटे करेल खाडाओमा बीजा खाडा करी संपुटोनी नीचे निधिकलशो स्थापवा. १ पद्म, २ महापद्म, ३ शंख, ४ मकर, ५ कच्छप, ६ मुकुन्द, ७ कुन्द, ८ नील अने ९ खर्व आ नव निधिओना नामो छे अने निधिकलशोना १ सुभद्र, २ विभद्र, ३ सुनन्द, ४ पुष्पदन्त, ५ जय, ६ विजय, ७ कुंभ, ८ पूर्ण अने ९ उत्तर ए नव कलशोना नामो जाणवा. आ नामना ९ कलशो निधिस्थापनना उपयोगमा लेवा.

७. वास्तुमर्मोपमर्मादि-लक्षण

वास्तुभूमिगता मर्मो,-पमर्म-सन्धि-रज्जवः ।
तासां निरूप्य पातादि, स्तम्भभित्त्यादिकं न्यसेत् ॥२४॥

भा०टी०—वास्तुभूमिमां उत्पन्न थता मर्मो, उपमर्मो, सन्धिओ अने रज्जुओ जोइने ज्यां ज्यां मर्मादि न होय त्यां त्यां स्तंभ भित्ति आदिनो न्यास करवो अर्थात् मर्मादि स्थानोमां स्तंभ-भित्ति आदि चणवां नहि.

निर्वाणकलिकामां कह्युं छे के—"**मर्माणि ज्ञात्वा × × मर्माणि परिहृत्य शिला-प्रतिष्ठादिकं विदध्यात् ।**" अर्थात्—" वास्तुनां मर्मस्थानो जाणीने ते ते टाळीने शिलान्यास आदि कार्यो करवां."

आ वचनो वडे देवालयो अने मनुष्योना 'घरो' बनावतां पहेलां ते भूमिमां ६४ अने ८१ पदो पाडी तेना मर्मो जाणीने टाळवानो उपदेश कर्यो छे. पण आजकाल मर्मो टाळवानी प्रवृत्ति सारामां सारा कारीगरोमां पण जोवाती नथी अने एनुं कारण मात्र ए विषयनुं तेमनुं अज्ञान छे. आ स्थिति सुधरे अने देवालयादिक शुद्ध बने ए भावनाथी अमोए ए विषयनुं विवेचन करवुं योग्य धार्युं छे.

शिल्पशास्त्रमां एने अंगे प्रत्येक ग्रन्थकारे थोडुं घणुं लख्युं ज छे.

ए विषयमां शास्त्र कहे छे—

शिरा वंशानुवंशाश्च, सन्धयः सानुसन्धयः ।
मर्माण्यथ महावंशा, लक्ष्या वास्तुशरीरगाः ॥१॥

भा०टी०—शिराओ, वंशो, अनुवंशो, सन्धिओ, अनुसन्धिओ मर्मो अने महावंशो वास्तुना शरीरमां क्यां क्यां छे, ते जाणी लेवां जोइये. आ श्लोकमां बतावेल ' शिरा ' आदिनुं स्वरूप अने परिमाण आदि आ प्रमाणे छे.

शिराओ—

शिराः कर्णगता याः स्यु-स्ता नाड्यः परिकीर्तिताः ।
पदस्य षोडशो भाग-स्तत्प्रमाणं प्रकीर्तितम् ॥२॥

भा०टी०—कोणगत जे रेखाओ छे ते 'शिरा' आ नामे ओळखाय छे. आ शिराओना व्यासनुं परिमाण 'पद'ना सोळमा भाग जेटलुं कह्युं छे

महावंशो—

महावंशौ प्राक्प्रतीच्यौ, याम्योदीच्यौ च मध्यमौ ।
प्रमाणं पञ्चमो भागः, पदस्योदाहृत तयोः ॥३॥

भा०टी०—मध्यनी पूर्व पश्चिम तथा दक्षिण उत्तर लंबी बे बे रेखाओनुं नाम 'महावंश' छे. आ महावंशोनो व्यास वास्तुना एक पदना पांचमा भाग जेटलो होय छे

वंशो अने अनुवंशो—

वंशास्तेऽस्मिन्समुद्दिष्टा, रेखा याः स्युर्मुखायताः ।
यास्तिर्यगायता रेखा-स्तेऽनुवंशाः प्रकीर्तिताः ॥४॥

भा०टी०—मुखनी दिशा तरफ लांबी रेखाओने अहीं 'वंश' कहे छे अने तिर्यक् लांबी रेखाओ 'अनुवंश' ए नामथी प्रसिद्ध छे.

मर्म अने उपमर्म—

सपाता ये स्युरेतेषां, मर्म तत्सम्प्रचक्षते ।
उपमर्माणि तान्याहुः, पदमध्यानि यानि च ॥५॥

भा०टी०—शिरा, महावंश, वंश अने अनुवंश ए पैकीना बेनो त्रणनो अथवा चारनो ज्यां सपात (संगम) थाय ते स्थानने 'मर्म' अने 'पद'ना जे मध्य भागो छे तेने 'उपमर्म' कहे छे.

वंश आदिनुं विस्तारमान—

भागोऽष्टमोऽथ दशमो, द्वादशः षोडशोऽपि च ।

पदतो मानमिष्टं स्या-द्वंशादीनामनुक्रमात् ॥६॥

भा०टी०—पदना आठमा, दशमा, बारमा अने सोलमा भाग जेटलुं वंश, अनुवंश, मर्म अने उपमर्मनुं अनुक्रमे व्यासमान होय छे.

बृहत्संहितोक्त वंश अने शिरानुं व्यासमान—

पदहस्तसंख्यया संमितानि वंशोऽङ्गुलानि विस्तीर्णः ।
वंशव्यासोऽध्यर्धः, शिराप्रमाणं विनिर्दिष्टम् ॥७॥

भा०टी०—जेटला हाथनुं पद होय तेटला आंगळनो वंशनो विस्तार होय अने वंशना विस्तारथी शिरानो विस्तार दोढो बताव्यो छे.

बृहत्संहिताकार मर्मना परिमाणमां पण प्रस्तुत ग्रंथथी मतभेद धरावे छे. ते आ प्रमाणे—

तत्संपाता नव ये, तान्यतिमर्माणि संप्रदिष्टानि ।
यश्च पदस्याष्टांशस्तत्प्रोक्तं मर्मपरिमाणम् ॥८॥

भा०टी०—ते वंश, अनुवंश, शिरा-रज्जुओना नव संपातो (संगमस्थानो) ने 'अतिमर्म' एटले 'महामर्म' कह्या छे अने पदना अष्टमांश जेटलुं ते 'अतिमर्म' नुं परिमाण कह्युं छे.

उपर्युक्त वराहमिहिरनुं कथन 'महामर्म' विषयक छे. ज्यारे पूर्वोक्त पदनो बारमो भाग 'मर्मपरिमाण' सामान्य मर्मने अंगे छे, एम समजवानुं छे.

वास्तुविद्यामां पण 'मर्म' अने 'महामर्म'मां भेद छे. जेम के—

अष्टाभिः संगतिर्यत्र, नाडीरज्जुविमिश्रितैः ।
सूत्रैस्तत्र महामर्म, ब्रह्मस्थानस्य कोणतः ॥९॥

भा०टी०—नाडीरज्जुविमिश्रित आठ सूत्रोनो ज्यां संगम थाय त्यां 'महामर्म' उत्पन्न थाय छे. आ महामर्मस्थान ब्रह्माना चारे कोणोमां होय छे. आ कथन ८१ पदना वास्तुपदने अनुसरीने छे.

६४ पदना वास्तुमंडलमा आ महामर्मस्थानो मध्यमा अने चारे दिशा-विदिशाओमा होय छे जुओ ६४ पदवास्तुमंडलनो नकशो. (पृ. ४९)

ए सिवाय वास्तुपुरुषना मस्तक, मुख, हृदय, बे स्तनो अने नाभि ए छ स्थानोने पण 'महामर्म' कह्या छे. जुओ नीचेनो श्लोक—

मुखे हृदि च नाभौ च, मूर्ध्नि च स्तनयोस्तथा ।
मर्माणि वास्तुपुंसोऽस्य, षण् महान्ति प्रचक्षते ॥१०॥

भा०टी०—वास्तुपुरुषना मुख, हृदय, नाभि, मस्तक अने बन्ने स्तनो आ ६ स्थानोमा 'महामर्म' कहे छे.

वास्तुविद्यामां वंश, अनुवंश, शिरा-रज्जुना सूत्रोनो विस्तार भिन्नभिन्न वास्तुपदोने अंगे भिन्नभिन्न प्रकारनो बताव्यो छे, जेनुं विधान नीचे प्रमाणे छे—

पदस्य गृहकृत्यंशः, सूत्रं स्याद् वेदषष्टिके ।
एकाशीतिपदेऽर्कांशो, वस्वंशः शतके पदे ॥११॥
सूत्रवेधं तु सर्वेषा, स्तम्भमध्यादिषु त्यजेत् ।
मर्मादीनि निषिद्धानि, वास्तुकर्मण्यनेकधा ॥१२॥

भा०टी०—६४ पदना वास्तुमा पदनो सोलमो भाग, ८१ पदना वास्तुमा पदनो १२ बारमो अने १०० पदना वास्तुमां पदनो आठमो भाग सूत्रवेध होय छे ते वेध सर्ववास्तुओमा टाळवो. एटले के सूत्रने थोडुं पूर्व अथवा उत्तरमां खसीने स्तंभ रोपवो, जेथी वेध न थाय. ए सिवाय वास्तुकर्ममां मर्म आदि अनेक वस्तुओ वर्जित छे.

महामर्मो—उपर कहेवायुं छे के दिशाविदिशामां आठ सूत्रो ज्यां मळे छे, त्या महामर्म उपजे छे. निर्वाणकलिकाकारना मते आ 'महामर्म' ६४ पदना वास्तुमा १३ अने ८१ पदना वास्तुमा ८ होय छे. ब्रह्माना पदमा १ ब्रह्मानी चार दिशाओमां ४ अने ब्रह्माना अभ्य-

न्तर अने कोणोना ४–४ मली ८ तथा सर्व मली १३ महामर्मो निर्वाण-कलिकोक्त ६४ पदना वास्तुमां उपजे छे. ब्रह्माना स्थानथी ईशानादि अभ्यन्तर अने बाह्य कोणोमांना ४–४ थइ ८ महामर्मो निर्वाण-कलिकाना मते ८१ पदना वास्तुपदमां उपजे छे.

मर्मो—षट्सूत्रो, पंचसूत्रो अने चारसूत्रोना समागम स्थान 'मर्म' नामथी ओळखाय छे.

निर्वाणकलिकाना ६४ पदना वास्तुमां षट्सूत्रसंपातो १२, पंचसूत्रसंपातो ८ अने चतुःसूत्रसंपातो २४ होय छे. आ मर्मोने शास्त्रमां षट्क, पंचक अने चतुष्कना नामोथी उल्लेख्या छे. त्रिसूत्र-संधियोने शिल्पशास्त्रो त्रिक कहे छे अने आनो उपमर्मोमां समावेश करे छे. निर्वाणकलिकाना ६४ पदवास्तुमां आवा उपमर्मो २० होय छे.

उपमर्मान्तको—वास्तुविद्यामां बाह्यकोणगत ४ त्रिकोने उप-मर्मान्तक ए नामथी उल्लेख्या छे. जे वास्तवमां उपमर्मो ज छे. निर्वाणकलिकाना ६४ पदना वास्तुमां आ उपमर्मान्तको ४ उपजे छे.

निर्वाणकलिकोक्त ८१ पदना वास्तुमां 'षट्कमर्मो' २४ छे. पंचकमर्मो आमां नथी. 'चतुष्कमर्मो' ३२, उपमर्म त्रिको १६ अने उपमर्मान्तक त्रिको २० होय छे. ए उपरान्त निर्वाण-कलिकाना ८१ पदना वास्तुमां ५ 'चतुष्कमर्मो' केवल रज्जु-जनित छे. जे अशुभ गणाता नथी. एवुं वास्तुविद्यामां कथन छे.

देवासनो, द्वारमध्यो अने पदमध्यो—

दरेक वास्तुपदना देवासनो तथा द्वारमध्योने मर्म अने पद-मध्योने उपमर्म गणवामां आवे छे. पण पदमध्यने षोडशपदवास्तुमां विशेष महत्त्व अपाय छे. कारणके ते वास्तुमां पदमध्यने 'देवासन' गण्युं छे. ए विषयमां नीचेना श्लोको प्रकाश पाडे छे.

वंशानुवंशसंपाताः, पदमध्यानि यानि च ।
देवस्थानानि तान्याये, पदषोडशकाङ्किते ॥१३॥

भा०टी०—वंशो, अनुवंशोना संपातो अने पदोना मध्यभागो षोडशपदवास्तुमां 'देवस्थानो' गणाय छे.

देवस्थानानि संपाता-श्चतुःषष्टिपदे पुनः ।
तथैकाशीतिपदके, पदान्तशतिकेऽपि च ॥१४॥

चतुर्ष्वपि विभागेषु, शिरायाः स्युश्चतुर्दिशम् ।
मर्माणि तानि प्रोक्तानि, द्वारमध्यानि यानि च ॥१५॥

भा०टी०—६४ पद ८१ पद अने १०० पदवास्तुमां वंशानुवंशोना संपातो 'देवस्थानो' गणाय छे. ज्यारे 'द्वारमध्यो' तथा चारे दिशानी शिराओ 'षोडशपद' 'चतुःषष्टिपद' 'एकाशीतिपद' अने 'शतपद' आ वास्तुपदोमां 'मर्म' कहेवाय छे.

सन्धिओ—"तिस्रो रेखाश्चतुर्दिक्षु, बाह्यस्थाः सन्धयः स्मृताः॥"

अर्थात्—" चारे दिशाओमां बाह्यभागमां मळेली त्रण रेखाओ 'संधि' कहेवाय छे वाचको ध्यानमां राखे के पूर्वे जे 'त्रिक' नामना 'उपमर्मो' बताव्या छे, तेज आ 'संधिओ' छे. वास्तुविद्याकारे 'एकाशीतिपदवास्तु 'मां आ त्रिकोने 'उपमर्म' अने 'चतुःषष्टिपद 'मां 'संधि' नाम आप्युं छे.

ग्रन्थान्तरमां सन्धि अने मर्म नीचे प्रमाणे वर्णवेल छे—

द्विरेखासंगमस्थान, सन्धिरित्यभिधीयते ।
त्रिरेखासंगमस्थानं, मर्म मर्मविदो विदुः ॥१६॥

भा०टी०—बे रेखाओना मीलनस्थानने 'सन्धि' अने त्रण रेखाओना मीलनस्थानने मर्मज्ञो 'मर्म' ए नामथी ओळखावे छे.

लांगलो—वास्तुविद्यामां लांगलनुं लक्षण नीचे प्रमाणे जणाव्युं छे-

"अनुवंशद्वयस्याऽपि सन्धिर्लाङ्गलमुच्यते।"

भा०टी०—'बे अनुवंशोनी संधि 'लांगल' कहेवाय छे. ग्रंथान्तरमां संधि अनुसंधिनुं लक्षण नीचे प्रमाणे आप्युं छे—

वंशाष्टकस्य यः सन्धिः, स सन्धिरिति कीर्तितः।
ये पुनः स्युस्तदङ्गानां, प्रोक्तास्ते चानुसन्धयः ॥१७॥

वालाग्रतुल्यं सन्धीनां, प्रमाणं समुदीरितम्।
यत्नेनैतानि संत्यज्य, वास्तुविद्याविशारदः।
द्रव्याणि प्रयतो नित्यं, स्थपतिर्विनिवेशयेत् ॥१८॥

भा०टी०—'आठ वंशोना समागमनुं नाम संधि कहेवाय छे अने तेना अंगोनो 'आठ पैकीना केटलाक वंशादिकनो' समागम ते 'अनुसंधि' होय छे. आ संधियोनुं परिमाण 'वालाग्र' जेटलुं सूक्ष्म कह्युं छे, माटे वास्तुविद्यामां प्रवीण स्थपति नित्य प्रयत्नवान् थइ ते टाळीने स्तंभादि द्रव्योनो न्यास करे.

आ स्थले केटलीक वस्तु खुलासो मांगे छे. पूर्वे 'त्रिको'ने संधि नाम आपी 'उपमर्म'मां गण्युं छे. ज्यारे अहीं समस्त सूत्र-संयोगात्मक महामर्मने संधि कही एनुं परिमाण वालाग्रमात्र कह्युं एनुं कारण ए छे के आ ग्रंथकार प्रत्येक वंशरज्जुओना संपातने संधि अने अनुसंधि माने छे. भले ते महामर्म मर्म के उपमर्मरूप होय. महामर्मादिनां परिमाणो जे कह्यां छे, तेनुं ज मध्यगत वालाग्रभाग जेटलुं सूक्ष्म परिमाण महामर्मरूप अति भयंकर गणीने जुदुं बताव्युं छे. केमके महामर्मनो वेध गृहस्वामीने अति घातक गण्यो छे.

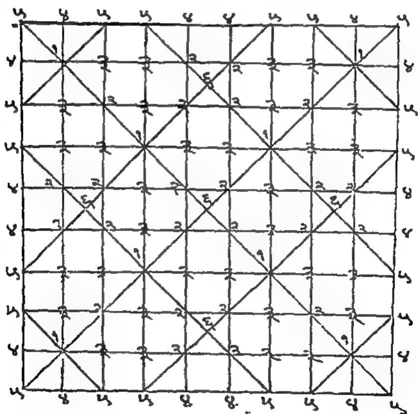
श्रीनिर्वाणकलिकोक्तं
चतु षष्ठिपदवास्तुमण्डले मर्मोपमर्मादिचक्रम्

निर्वाणकलिकोक्त ६४ पदवास्तुमंडलमां मर्मोपमर्मादिअंकविवरण

अंक	नाम	समजण	संख्या	वर्ज्यादि
१	कर्णसूत्ररज्जु	कर्णसूत्र	४	वर्ज्य
२	,,	,,	१६	,,
३	महामर्म	अग्रसूत्रसंपात	१३	,,
४	मर्म	पड्सूत्रसंपात	१२	,,
५	मर्म	पंचसूत्रसंपात	८	,,
६	मर्म	चतुःसूत्रसंपात	२४	,,
७	उपमर्म	त्रिसूत्रसंपात	२०	,,
८	उपमर्म	,,	४	,,

निर्वाणकलिकामां ७-८ आंकवाला त्रिसूत्रसंपातजनित उपमर्मोने उपमर्मसंज्ञक गणावी तेमनी संख्या २४ बतावी छे. वास्तुविद्यामां ८ नंबरवाला उपमर्मोने ते कोणगत होवाथी उपमर्मान्तक एवी संज्ञा आपी जूदा पाड्या छे. तेथी तेमां त्रिसूत्रसंपातजनित उपमर्मो २० कह्या छे.

श्रीनिर्वाणकलिकोक्त ८१ पदवास्तुमडलमर्मोपमर्मादि



निर्वाणकलिकोक्त ८१ पदवास्तुमंडलमां मर्मोपमर्मादिअंकविवरण

अंक	नाम	समजण	संख्या	वर्ज्यादि
१	महामर्म	अष्टसूत्रसंपात	८	वर्ज्य
२	मर्म	षट्सूत्रसंपात	२४	"
३	मर्म	चतुःसूत्रसंपात	३२	"
४	उपमर्म	त्रिसूत्रसंपात	१६	"
*५	उपमर्म	त्रिसूत्रसंपात	२०	"
६	उपमर्म	रज्जुजनितचतु-सूत्रसंपात	५	निर्दोष

*आ उपमर्मोमां वास्तुविद्यामां कोणोमां आवेला ४ ने उपमर्मान्तक कह्या छे.

नोटः—आमां पंचसूत्रजनित मर्म बनता नथी.

वास्तुपुरुषनां अंगप्रत्यंगो—

जेम वंशरज्जुना मर्मो अने सूत्रोनो वेध वर्जित छे तेज प्रमाणे वास्तुभूमिमां वास्तुपुरुषना अंगप्रत्यंगोनो वेध पण वर्जवो जोइये. वास्तुपुरुपनो शयनप्रकार जाणवाथी ज तेनां अंगप्रत्यंगो जाणी शकाय तेम होवाथी प्रथम तेने जणावीये.

वास्तुपुरुषना शयनप्रकारो—

वास्तुपदो ३२ होवा छतां तेनां मुख्य भेदो बे छे. एक विषमपद अने बीजो समपद. १-९-२५-४९-८१-१२१-१६९-२२५ २८९-३६१-४४१-५२९-६२५-७२९-८४१-अने ९६१ पदना आ १६ विषमपदवास्तुओमां ईशाने मस्तक अने नैर्ऋत्यमां बन्ने पग राखीने वास्तुपुरुषनुं शयन थयेलुं छे. वायव्यमां अने आग्नेयकोणमां अनुक्रमे एना वामदक्षिण हाथोनी कोणिओ आवेली

छे, एणे बन्ने हाथोनी हथेलिओ पोतानी छाती नीचे दबावेली छे. आम वास्तुपुरुष नीचे मुखे छातीना बळे सूतेलो छे. एना अंग अने प्रत्यंगो उपर नीचे प्रमाणे देवो रहेला छे—

वास्तुपुरुषना मस्तके 'ईश' जमणा कान उपर 'जय' डाबा कान उपर 'दिति' जमणा खांधा उपर 'जय' अने डाबा खांधा उपर 'अदिति' नी स्थिति छे

वास्तुपुरुषना गळामा 'आप' हृदयमा 'आपवत्स' जमणा स्तन उपर 'मरीचि' अने डाबा स्तन उपर 'धराधर' रहेल छे वास्तु-नाभिना मध्यभागे 'ब्रह्मा' जमणी कुक्षि उपर 'सावित्र' अने डाबी कुक्षि उपर 'रुद्रदास' आरूढ थयेल छे. वास्तुना श्रोणि-भाग (कटिमध्यभाग) उपर इन्द्र अने इन्द्रजय रहेला छे. वास्तु-पुरुषना पगोना अंगूठाओ उपर 'पितर' जमणा पगना गुल्फ उपर 'मृग' अने डाबा पगना गुल्फ उपर 'दौवारिक' बेठेल छे. वास्तु-पुरुषना जमणा हाथनी कोणिना अग्रभाग उपर 'व्योम' अने डाबी कोणिना अग्रभागे 'नाग' बेठेल छे. वास्तुपुरुषना जमणा ढींचण उपर 'पावक' अने डाबा ढीचण उपर 'रोग' रहेला छे वास्तु-पुरुषनी जमणी भुजा उपर 'माहेन्द्र, सूर्य, सत्य अने भृश' ए चार अने डाबी भुजा उपर 'मुख्य, भल्लाट, सोम अने शेष ए चार देवोनो वास छे. जमणा बाहु उपर 'सवित्ता' अने डाबा बाहु उपर 'रुद्र' वसे छे. जमणी साथळ उपर 'विवस्वान्' अने डाबी साथळ उपर 'मित्र' छे 'पूषा, वितथ, गृहक्षत, यम, गंधर्व अने भृंग ए ६ देवो जमणा पगनी पिंडी (जांघ) उपर अने 'सुग्रीव, पुष्पदन्त, वरुण, असुर, शोष अने रोग' ए ६ देवो डाबा पगनी पिंडी उपर रहेला छे.

शिल्पसंहिताओमा विषमपदवास्तुपदोमा वास्तुपुरुषनुं शयन अने तेना अंगो उपरना देवोना स्थानो उपर प्रमाणे बतावेल छे

दाक्षिणात्यपद्धतिनो 'वास्तुविद्या' शिल्पग्रन्थ ए विषयमा

करे छे. एना फलितार्थरूपे ज नीचे प्रमाणेना उल्लेखो दृष्टिगोचर थाय छे. जेमके—

एकाशीतिपदस्येश-दिग्विभागाश्रितं शिरः ।
माहेन्द्रीसंश्रितं विद्यात्, चतुःषष्टिपदस्य तु ॥१९॥

भा०टी०—एकाशीतिपदवास्तुमां ईशानमां वास्तुपुरुषनुं मस्तक रहे छे. ज्यारे चतुःषष्टिपदात्मकवास्तुमां पूर्वदिशामां वास्तुपुरुषनुं मस्तक रहे छे, एम जाणवुं.

उत्तरभारतीयशैलीना शिल्पग्रंथोमां आ मान्यतानुं निरूपण अमारी नजरे पड्युं नथी. तेम उपर जणावेल वास्तुपदोनी संख्या पण हजी उत्तरपद्धतिना ग्रंथोमां अमने उपलब्ध थइ नथी. अपराजितपृच्छामां मात्र १० वास्तुपदोनां नामोनो उल्लेख मळे छे. पाछळना ग्रंथो पैकी वास्तुमंडनआदिमां १ पद थी १००० पद सुधीना वास्तुपदो होवानो निर्देश छे, पण विशेष निरूपण नथी. एथी समपदवास्तुमां वास्तुपुरुषना मस्तकना स्थान विषे उत्तरभारतीयपद्धतिनी शी मान्यता छे, एनो खुलासो मळतो नथी. आवी स्थितिमां आ विषयमां अधिक लखवुं असामयिक गणाशे.

निर्वाणकलिकामां आदेशेल 'मर्मपरिज्ञान' ने अंगे अमारे महावंशो, वंशो, अनुवंशो, सिराओ, रज्जुओ, नाडिओ, मर्मो अने वास्तुपुरुषना अंगप्रत्यंगोनो परिचय आपवो पड्यो छे. निर्वाणकलिकामां जे तिर्यक्कोणरेखाओने 'ऊर्ध्ववंश' नाम आप्युं छे, तेने बीजा ग्रंथोमां 'सिरा' कहीने ओळखावी छे. निर्वाणकलिकानी रज्जुओने ग्रंथांतरोमां 'अनुवंश' ए नाम आप्युं छे. कोष्टको पाडवा माटे दोरायेली ऊभी आडी रेखाओने 'वंश' अने तिर्यक्रेखाओने 'नाडि' ए नामोए उल्लेखी छे. ऊभी आडी रेखाओ पैकीनी मध्यनी ३-३ रेखाओने ६४ पदवास्तुमां अने २-२ रेखाओने ८१ पदमां 'महावंशो' तरीके ओळखावेल छे.

वंश, रज्जु, सिरा अने मर्मआदिनी उपर स्तंभमध्य अने भित्ति-मध्य न आवतु जोइये. जो ते प्रमाणे स्तंभमध्यादि आवे तो वेध थयो गणाय छे अने तेनु फल अशुभ गणाय छे.

'वास्तुविद्या' मा आ वेधोना फल निम्न प्रकारे जणाव्या छे—

मूर्ध्नि वक्त्रे च कण्ठे च, हृदये मरण भवेत् ।
विद्धे चोरसि हृद्रोगः, पादयोः कलहो भवेत् ॥२०॥
ललाटे भ्रातृहानिः स्यात्, वित्तघ्नोऽङ्गुलिपृष्ठयोः ।
ऊर्वोर्मृत्युश्च बन्धूनां, पत्नीनाशश्च वा भवेत् ॥२१॥
गुह्यस्थे सुतनाशः स्यात् "—

भा०टी०—वास्तुपुरुषना मस्तक, मुख, कठ अने हृदय आ पैकी कोइनो वेध थता वास्तुस्वामीनुं मृत्यु थाय छे. उरस्थलना वेधथी हृदयनो रोग अने चरणोना वेधथी कलह-झगडो थाय छे ललाटना वेधमां भाइनी हानि, अंगुलि तथा पृष्ठना वेधमां धनहानि थाय छे. ऊरुवेधमा बधुओनुं मरण अथवा स्त्रीनुं मरण अने गुह्य-स्थानना वेधमा पुत्रनो नाश थाय छे.

अष्टके गर्भविच्युतिः ।
षट्के च वृद्धिः शत्रूणा, चतुष्के स्वजनक्षयः ॥२२॥
पञ्चके व्याधिसंदिष्ट-स्तस्करेभ्यस्त्रिके भयम् ।
वर्जयेत् कुड्यमध्ये च, नाडीरज्ज्वादिसगमम् ॥२३॥

भा०टी०—'अष्टकमहामर्म'ना वेधमा गर्भपात 'षट्कमर्म' वेधमा शत्रुवृद्धि 'चतुष्कमर्म' वेधमा स्वजनक्षय 'पचकमर्म' वेधमा रोगोत्पत्ति अने 'त्रिकउपमर्म' वेधमा चोरोनो भय उत्पन्न थाय छे माटे भींतना मध्यभागे नाडीरज्ज्वादिनो सगम टाळवो जोइये

गवां नाशः सिरावेधे, वंशवेधे मृतिर्भवेत् ।
प्रवास. सन्धिवेधे स्यात्, अनुवंशे भय भवेत् ॥२४॥

त्रिशूले गर्भनाशः स्यात्, लाङ्गले च शिरोरुजा।
चतुष्के वाहनोच्छित्तिः, षट्के तु बहुवैरिता ॥२५॥
स्वामिनो मरणं विद्धे, महामर्मणि जायते।
उपमर्मणि विद्धे तु, भ्रातृपुत्रक्षयो भवेत् ॥२६॥
कर्तुर्वंशस्य नाशश्च, मर्मवेधे ध्रुवं भवेत्।
शास्त्रान्तरनिषिद्धांश्च, दोषान् सर्वान् विवर्जयेत् ॥२७॥

भा०टी०—सिराना वेधथी गायोनो नाश, वंशवेधथी मृत्यु, संधिवेधथी प्रवास अने अनुवंशना वेधथी भय उपजे छे. त्रिशूल-वेधथी गर्भनाश, लांगलवेधथी मस्तकरोग, चतुष्कमर्मवेधथी वाहन-विच्छेद, षट्कमर्मवेधथी अतिशत्रुता, महामर्मना वेधथी स्वामीनुं मरण अने उपमर्मना वेधथी भाइपुत्रोनी हानि थाय छे अने मर्म-वेधथी करावनारना वंशनो विच्छेद थाय छे. ए सिवाय शास्त्रान्तरोक्त अनेक प्रकारना दोषो छे जे वास्तुनिर्माणमां वर्जवा जोइये.

८. वास्तुमण्डलविन्यास-लक्षण

वास्तुमण्डलविन्यास-लक्षणं लक्ष्मवेदिना।
विज्ञाय मण्डलाऽऽलेखः, कार्यो मर्माभिव्यक्तये ॥२८॥

भा०टी०—लक्षण जाणनार विद्वाने वास्तुमण्डलविन्यासनुं लक्षण जाणीने वास्तुभूमिमां वास्तुमंडलनो आलेख करवो के जेथी वास्तुना मर्मस्थानो स्पष्ट रीते जाणी शकाय.

वास्तुभूमि बनतां सुधी चोरस अथवा लंबचोरस लेवी, तेमां कोइ खूणो ओछो होय तो ते पूरो करवो, तेमज वत्तो होय तो काढी नांखवो अने भूमिने समचोरस या लंबचोरस बनावी लेवी जोइये के जेथी वास्तु निर्दोष बनी शके.

" क्षेत्राकृतिर्वास्तुरिहार्चनीयः "

शास्त्रना आ नियम प्रमाणे वास्तुभूमिनो जेवो आकार हशे तेवोज आकार वास्तुमण्डलनो थशे. वास्तुमण्डल आलेखता अनुक्रमे ६४ पदमा ९ अने ८१ पदमा १० ऊभी आडी समानान्तर रेखाओ खेंचवी. तेमा पूर्वपश्चिमायत रेखाओ पश्चिमथी पूर्व तरफ अने दक्षिणोत्तरायत रेखाओ दक्षिणथी उत्तर तरफ लइ जवी. जो के वास्तुमण्डल बीजा पण अनेक छे, पण निर्वाणकलिकाकारे प्रासादवास्तु ६४ पदनो अने गृहवास्तु ८१ पदनो पूजवानुं विधान कर्युं छे एटले अमो आ बे वास्तुमण्डलोनी ज विन्यासविधि अहींया जणावीशुं

(१) प्रासादवास्तुमण्डल—

प्रासादवास्तुनी भूमिमा पूर्वाग्र उत्तराग्र ९-९ रेखाओ खेंचीने तेना ६४ विभागो कोष्टकात्मक करवा.

तेना ईशानकोणथी नैऋत्य अने आग्नेयकोणथी वायव्य पर्यन्त बे तिरछी लीटियो खेंचवी आ तिर्यक् रेखाओ 'ऊर्ध्ववंश' कहेवाय छे

ए पछी ४ द्विपदगामी अने ४ षट्पदगामी एम ८ रज्जुओनो तेमां विन्यास करवो मर्मस्थानो जाणी बाह्य अभ्यन्तर कोष्टकोमा नीचे लख्या प्रमाणे देवताओनो विन्यास करवो.

ईशानकोणार्धमा 'ईश' लखीने पछीना ६ कोष्टको पैकीना प्रत्येकमा अनुक्रमे 'पर्जन्य, जय, माहेन्द्र, रवि, सत्य, अने भृश' ए ६ नामो आलेखवा.

अग्निकोणना बे कोष्टकार्धोमा क्रमशः 'व्योम' अने 'पावक' लखी ते पछीना ६ कोष्टकोमां अनुक्रमे 'पूषा, वितथ, गृहक्षत, यम, गन्धर्व अने भृंग' ए ६ देवोनो विन्यास करवो.

नैर्ऋत्यकोणमां कोष्टकना बे भागोमां अनुक्रमे 'मृग' तथा 'पितर' लखी ते पछीना ६ पदोमां क्रमशः 'दौवारिक, सुग्रीव, पुष्पदन्त, वरुण, असुर अने शोष' ए छ देवोनां नामो लखवां

वायव्यकोणना कोष्टकना बे विभागोमां 'रोग' अने 'वायु' आ बे नामो लखी ते पछीना ६ कोष्टकोमां 'नाग, मुख्य, भल्लाट, सोम, शेष अने अदिति ए छ नामो आलेखी ईशानकोणना अर्ध-कोष्टकमां 'दिति' ए प्रमाणे लखवुं.

मध्यना ४ पदोमां 'ब्रह्मा' ब्रह्माना ईशानकोणना बे कोष्टकोमां 'आप' अने 'आपवत्स' ब्रह्माथी पूर्वना ६ पदोमां 'मरीचि' ब्रह्माना आग्नेयकोणना बे कोष्टकोमां 'सविता' अने 'सावित्र' ब्रह्माथी दक्षिण तरफना ६ पदोमां 'विवस्वान्' ब्रह्माथी नैऋत्य-कोणना बे स्थानोमां 'इन्द्र' अने 'इन्द्रजय' ब्रह्माथी पश्चिमना ६ पदोमां 'मित्र' अने ब्रह्माथी वायव्यकोणना २ कोष्टकोमां अनुक्रमे 'रुद्र' तथा 'रुद्रदास' लखीने ब्रह्माथी उत्तर तरफना ६ पदोमां 'धराधर'नो विन्यास करवो.

मण्डलनी बहार ईशानकोणमां 'चरकी' पूर्वमां स्कन्दा, आग्नेयकोणमां 'विदारी' दक्षिणमां 'अर्यमा' नैऋत्यमां 'ललना' पश्चिममां 'जम्भा' वायव्यकोणमां 'पूतनापापराक्षसी' उत्तरमां 'पिलिपिच्छा' ए नामनी ८ अनुचरी देविओनां नामो लखीने ६४ पदना वास्तुमण्डलनी रचना करवी अने पूजा करवी.[1]

---

१ प्रासादवास्तुसंबन्धी पृष्ठ ६१ उपरनो चतुःषष्टिवास्तुमंडलमो नकशो जुओ.

[1] निर्वाणकलिकोक्त ६४ पद वास्तुमण्डलम्

स्कन्द

दिति / ईश	पर्जन्य	जय	माहेन्द्र	रवि	सत्य	भृश	व्योम / [illegible]
अदिति	आप	मरीचि	मरीचि	मरीचि	मरीचि	सविता	[illegible]
शेष	धराधर	आपवत्स	मरीचि	मरीचि	सावित्र	विवस्वान्	वितथ
सोम	धराधर	धराधर	ब्रह्मा	ब्रह्मा	विवस्वान्	विवस्वान्	गृहक्षत
भल्लाट	धराधर	धराधर	ब्रह्मा	ब्रह्मा	विवस्वान्	विवस्वान्	यम
मुख्य	धराधर	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	विवस्वान्	गन्धर्व
नाग	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	भृङ्ग
वायु / [illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	मृग / [illegible]

जम्भा

(२) गृह्वास्तुमण्डल—

गृहवास्तुमा ८१ पदना वास्तुमंडलनी रचना करवी तेमा मध्य भागना ९ पदोमा 'ब्रह्मा' पूर्व, दक्षिण, पश्चिम अने उत्तर तरफना ६–६ पदोमा अनुक्रमे 'मरीचि, विवस्वान्, मित्र अने धराधर' आ ४ देवोनो आलेख करवो ईशानादि ४ कोणगत १६ कोष्टकोमां आप अने आपवत्सादि ८ अभ्यन्तर देवो बे बे पदमा अने बाह्य-प्राकारगत ३२ देवो बाह्यप्राकारगत ३२ पदोमा आलेखवा.

वंश अने रज्जु आदि चतुःषष्टिपदमा जणाव्या प्रमाणे लखवा. मंडलबाह्यस्थ अनुचर देविओ पण पूर्वनी पेठेज [1]लखवी. आ ८१ पदमडलमा पूर्वाग्र उत्तराग्र १०–१० रेखाओ खेंचीने ८१ विभागो पाडवा अने पदगत देवोने [2]पूजवा

---

१ चतुःषष्टिपदवास्तुमडल जुओ २ पृष्ठ ६२ उपरनो एकाशीतिपदवास्तुमडळ जुओ

चतुःषष्टिपद के एकाशीतिपदनी रचना तो सर्व ग्रन्थकारोए एज प्रकारे ९ + ९ अने १० + १० ऊभी आडी रेखाओ खेंचीने बनाववानुं कथन कर्युं छे, छतां वंशो, उपवंशो, रज्जुओ, शिराओ, अने तज्जन्यवेधोने अंगे मतभेदो छे, पण ते सर्वनुं वर्णन करवानुं आ उपयुक्त स्थल नथी तेथी भिन्नभिन्न ग्रन्थोना अभिप्रायदर्शक बे चार अन्य नकशाओ आपीने ए परिच्छेदने समाप्त करीये छीये.

निर्वाणकलिकानुसारी ६४ पद तथा ८१ पदना नकशाओ पृष्ठ ६१ -६२ उपर आप्या छे, एज बन्ने नकशाओ बृहत्संहितानुसारे पृष्ठ ६३ अने ६४ उपर आप्या प्रमाणे बने छे. अपराजितपृच्छा अने समरांगणसूत्रधारमां एथीये भिन्नता छे, जे नकशाओ उपरथी स्पष्ट जणाशे.

॥ २ निर्वाणकलिकोक्त ८१ पद वास्तुमण्डल ॥

चरकी

स्कन्दा

ई	प	ज	मा	सू	स	भृ	व्यो	पा
दि	आ	आ	म	म	म	सा	सा	पू
अ	आव	आव	म	म	भ	स	स	वि
शे	ध	ध	ब्र	ब्र	ब्र	वि	वि	गृक्ष
सो	ध	ध	ब्र	ब्र	ब्र	वि	वि	य
भ	ध	ध	ब्र	ब्र	ब्र	वि	वि	गं
मु	रु	रु	मि	मि	मि	इ	इ	भृं
ना	रुदा	रुदा	मि	मि	मि	इज	इज	मृ
ना	रो	शो	असुर	व	पु·द	सु	दौ	पि

पिलिपिच्छ

अर्यमा

जम्भा

३ बृहत्संहितोक्त ६४ पदवास्तु

पूर्वा

शि / दि	प	ज	इ	सू	स	भृ	अ / वा
अदि	य / अदि	ज	इ	सू	स	भृ / पू	पू
भु	सु	आ व / आप	अ	अ	सविता / सावित्र	वि	वि
सो	सो	पृ ध	ब्र	ब्र	विव	बृ क्ष	बृ क्ष
भ	भ	पृ ध	ब्र	ब्र	विव	य	य
मु	मु	रुद्र / रा	मि	मि	इन्द्र / जय	गं	गं
अहि	अदि / शो	असुर	व	पु द	सु	दौ	भृ / भृ
य / पा	शो	असुर	व	पु द	सु	दौ	मृ / पि

उत्तरा — दक्षिणा

पश्चिमा

॥ ४ बृहत्संहितोक्त ८१ पद वास्तु ॥

पूर्वा

शि	प	ज	इ	सू	स	भृ	अं	वा
दिति	आ	ज	इ	सू	स	भृ	सा	पूषा
अदि·	अदि	आव	अ	अ	अ	स.	वि	वि
भुज	भुज	पृ·ध	ब्र	ब्र	ब्र	विव	बृक्ष	बृक्ष
सो	सो	पृ·ध	ब्र	ब्र	ब्र	विव	य	य
भ	भ	पृध	ब्र	ब्र	ब्र	विव	गंध	गंध·
मु	मु	राय	मि	मि	मि	इ	भृं	भृं
अहि	रुद्र	शो	असु	व	पुद	सु	ज	मृ
रो·	पाय	शो	असुर	व	पु·द	सु	दौ	पितृ

उत्तर (left) — दक्षिण (right)

पश्चिमा

८१ पदवास्तुमण्डल (शिल्पशास्त्रोक्तम्)

शिल्पशास्त्रोक्त-८१ पदवास्तुमडलनी समजुती—

उपरना चित्रमा लखेला अक्षरोनी व्याख्या नीचे प्रमाणे छे.

सि = सिरा — वास्तुक्षेत्रमा सिरा २ होय छे

नाव = नाडीवंश ,, नाडीवंश १६ ,,

मवं = महावंश ,, महावंश ४ ,,

अन = अनुवंश ,, अनुवंश ८ ,,

आ सिरा, नाडीवंश, महावंश अने अनुवंशना संपातोथी मर्म महामर्म अने उपमर्म आदि बने छे वचमा ई-प-ज आदि अक्षरो

ईश, पर्जन्य अने जय आदि देवताओना नामोना प्रथमाक्षरो छे. देवताओना संपूर्ण नाम माटे पृ. ६१ उपर आपेल निर्वाणकलिकोक्त ६४ पदवास्तुना नकशामां जोवुं.

९. प्रासाद-लक्षण

प्रासादलक्षणं साङ्गो-पाङ्गं, ज्ञात्वा सविस्तरम् ।
प्रासादं कारयेत् शिल्प-वेदिना मार्गवेदिना ॥२६॥
हस्त-लक्ष्मस्वस्तिकादि-वास्तुपदविवेचनम् ।
आयाद्यङ्गविचारं च, विधाय प्रथमं ततः ॥२७॥
प्रासादाङ्गकलापस्य, निरूपणपुरस्सरम् ।
प्रासादा मण्डपोपेता, निरूप्यन्ते सुलक्षणाः ॥२८॥

भा०टी०—विस्तारपूर्वक प्रासादनुं सांगोपांग लक्षण समजीने शिल्पशास्त्र तथा तेना मार्गना जाणकार शिल्पिना हाथे प्रासाद कराववो.

हस्तलक्षण, स्वस्तिकादिवास्तुपदोनुं विवरण अने आयव्ययादिअंगोनो विचार प्रथम कर्या पछी प्रासादना जगतीआदि अंग-समुदायना निरूपणपूर्वक उत्तमलक्षणोवाळा प्रासादो अने मण्डपोनुं आ परिच्छेदमां निरूपण कराय छे.

प्रासंगिक

शिल्पशास्त्रमां 'प्रासाद' शब्द राजाना महेलो अने देवोना मन्दिरोना अर्थमां प्रयुक्त थयो छे, छतां ए शब्द 'देवालय'ना अर्थमां विशेष प्रचलित छे. 'राजमहेल'ना अर्थमां एनो प्रयोग प्रायः 'राजप्रासाद' 'नृपतिप्रासाद' इत्यादि राजार्थकशब्दनी साथे ज थाय छे, एथी अमोए आ स्थले देवालयना अर्थमां 'प्रासाद' शब्दनो उपयोग कर्यो छे.

जो के जैनसूत्रोमा 'प्रासाद' करता 'चैत्य' शब्दनो ज विशेष प्रयोग थयेलो जोवाय छे. कोशकारोए पण "चैत्यं जिनौकस्तद्बिम्बं, चैत्यो जिनसभातरुः" इत्यादि रचनोद्वारा जिनगृह, जिनप्रतिमा अने जिननी धर्मसभाना वृक्षना अर्थनो वाचक चैत्य शब्द बताव्यो छे, एटलुज नहि पण शिल्पना ग्रन्थोमांये—

देवधिष्ण्य सुरस्थानं, चैत्यमर्चागृहं च तत् ।
देवतायतनं प्राहु-र्विबुधागारमित्यपि ॥१॥

इत्यादि देवालयना नामो गणावता 'चैत्य' शब्दनी तेमां परिगणना करी छे, छता अमोए 'चैत्य' शब्दनो प्रयोग न करता 'प्रासाद' शब्दनी पसदगी करी छे तेनुं मुख्य कारण एज छे के अमो जे ग्रन्थोना प्रमाणोथी आ विषयनुं निरूपण करवा मागीये छीये ते ग्रन्थोमा सर्वत्र 'प्रासाद' शब्दनो ज उल्लेख थयो छे

प्रासादोत्पत्तिनो इतिहास–

प्रासादोनी उत्पत्तिनो इतिहास घणो जूनो छे. जैन आगमो पैकीना व्याख्याप्रज्ञप्ति (भगवती) उपासकदशा, आचारांग-निर्युक्ति अने आवश्यक-निर्युक्ति आदि अनेक मौलिक आगमोमा अशाश्वत (कृत्रिम) जिन-चैत्योना उल्लेखो मले छे, एटलुज नहि पण मथुरानो देवनिर्मितस्तूप, तक्षशिलानो धर्मचक्रांकितस्तूप तथा अन्य जैन-पूजास्थानो अने विदिशा-भिलसानो रथावर्तगिरिनो स्तूप इत्यादि स्तूपोनु अस्तित्व अने त्यां मलता हजारो वर्षपूर्वे ब्राह्मी लिपिमा लखायेला अनेक शिलालेखो जैनसूत्रोक्त चैत्यविषयक उल्लेखोनी ऐतिहासिकता सिद्ध करे छे

शिल्पशास्त्रना मौलिक ग्रन्थोमा ते प्रासादोनी उत्पत्तिनो पौराणिक इतिहास पण लखी दीधो छे आ इतिहास भले आपणे खरो इतिहास न मानीये पण एथी एटलु तो सिद्ध थाय छे के भारतवर्षनुं

आ प्रासादशिल्प घणुं प्राचीन छे. प्रासादोना नागर, द्राविड अने वेसर ए त्रण कुलो, नागर-लतिनादि १४ जातियो, ए जातियोमांथी प्रारंभमां ५-५ अने २५-२५ उत्पन्न थयेल प्रासादो अने अन्ते घणी खरी जातियोना मूल प्रासादोना विकासरूपे तलभेदथी उत्पन्न थयेल चारलाखथी पण अधिक प्रासादोनी संख्या रेखाभेदे उत्पन्न थती एथीये अधिक प्रासाद संख्या बतावे छे के 'प्रासादशिल्प' ए कांइ बसो पांचसो वर्षोनी वस्तु नथी पण हजारो वर्षोथी चाली आवती ए लौकिक विद्या छे. रोमनशिल्प करतांये प्राचीन भारतवर्षनुं आ शिल्प भारतना प्राचीन तीर्थो तथा नगरोना खंडेरोमां दृष्टिगोचर थाय छे अने हजारो श्लोकोमां आनुं निरूपण करता संख्याबन्ध प्राचीन ग्रन्थो उपलब्ध थाय छे. मयमतं, काश्यपशिल्पम्, शिल्परत्नम्, अपराजितपृच्छा, प्रासादमण्डनम् आदि अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो छपाइ पण गया छे.

विषय घणो गहन अने विशाल छे एटले एने सांगोपांग समजाववा माटे एक 'प्रकरण' अथवा 'निबन्ध' कोइ रीते पर्याप्त नथी पण एक सारो जेवो ग्रन्थ ज आ विषयने समजावी शके. अमो प्रस्तुत 'प्रासादलक्षण'मां मात्र तेज वातोनी चर्चा करशुं के जे वातो कारीगरो उपरांत विधिकारो अने प्रतिष्ठाकारोने पण जाणवानी आवश्यकता होय छे. जगती १ शिला २ पीठ ३ मंडोवरो ४ प्रासादोदय ५ शिखर ६ द्वार ७ दृष्टिस्थान ८ स्तंभ ९ गर्भगृह १० आसन ११ शुकनास १२ आमलसारो १३ कलश १४ अने मंडप १५ आदि प्रसिद्ध अने उपयोगी प्रासादांगोनो परिचय करावी तेना अंगे थती भूलोनुं दिग्दर्शन करावशुं के जेथी निरीक्षको भूलोना संबन्धमां उत्तरदायित्वपूर्ण पोतानो अभिप्राय आपी शके. आजे प्रासादोमां भूलो काढनारा अधिकांश अजाण होय छे अने वास्तविक भूलो न होवा छतां ए विषयमां कंइ ने कंइ हांकी मारीने लोकोने

खोटी भ्रमणामा नांखे छे. आ स्थिति सुधारवाना उद्देशथी ज अमोए ' प्रासादलक्षण 'ना संबन्धमा काइक लखवुं आवश्यक मान्युं छे.

(१) हस्तलक्षण—

इदानीं तस्य हस्तस्य, सम्यङ्निश्चयसयुतम् ।
कथ्यते त्रिविधस्यापि, लक्षण शास्त्रदर्शितम् ॥१॥
रेण्वष्टकेन वालाग्र, लिक्षा स्यादष्टभिस्तु तैः ।
भवेद् यूकाष्टभिस्ताभि-र्यवमध्य तदष्टकात् ॥२॥
अष्टभिः सप्तभिः षड्भि,-रङ्गुलानि यवोदरैः ।
ज्येष्ठ-मध्य-कनिष्ठानि, तच्चतुर्विंशतिः करः ॥३॥

भा०टी०—हवे त्रणे प्रकारना हस्तनुं यथार्थ निश्चय सहित शास्त्रोमा बतावेल लक्षण कहेवाय छे

८ रेणुनुं १ वालाग्र, ८ वालाग्रनी १ लिक्षा (लीख) ८ लीखनी १ यूका (जू) ८ जूनुं १ यवमध्य, ८ यवमध्य ७ यवमध्य अने ६ यवमध्यनो अनुक्रमे ज्येष्ठ, मध्य अने कनिष्ठ १ आगळ अने ते २४-२४ आगळोनो अनुक्रमे ज्येष्ठ, मध्य अने कनिष्ठ १ हाथ थाय छे.

यच्च येन भवेद् द्रव्य, मेयं तदपि कीर्त्यते ।
यवाष्टकाङ्गुलैः क्लृप्तः, प्रकर्षेणायतः किल ॥४॥
ज्येष्ठो हस्तः स विज्ञेयः, प्रोक्तः प्राशयसंज्ञितः ।
यः पुनः कल्पितः सप्त,-यवक्लृप्तैरिहाङ्गुलैः ॥५॥
तज्ज्ञैः स मध्यमो हस्तः, साधारण इति स्मृतः ।
मात्रेत्यल्पं यतः प्रोक्त, हस्तश्च शय उच्यते ॥६॥
तेन मात्राशयः स स्यात्, हस्तो यः षड्यवाङ्गुलः ।

भा०टी०—जे हाथ वडे जे द्रव्य मपाय छे ते पण कहेवाय छे. ८ यवोवडे करेला आंगळोनो सद्रुपी लांबो जे ज्येष्ठ हस्त छे,

तेने विद्वानोए 'प्राशय' एवुं नाम आपेलुं छे. वली ७ यवो वडे कल्पेला आंगळोना मध्यम हस्तनी शिल्पशास्त्रज्ञोए 'साधारण' एवी संज्ञा पाडी छे 'मात्रा' शब्दनो अर्थ 'थोडुं' अने 'शय' शब्दनो अर्थ हस्त थाय छे आथी ६ यवना अंगुलोनो कनिष्ठ हस्त जे साधारण पण कहेवाय छे तेनुं नाम 'मात्राशय' पाडयुं छे.

विभागायामविस्ताराः, खेट-ग्राम-पुरादिषु ॥७॥
प्रासाद-वेश्म-परिखा,-द्वार-रथ्या-सभादिषु ।
मार्गाश्च निर्गमाश्चैषां, सीम-क्षेत्रान्तराणि च ॥८॥
वनोपवनभागाश्च, देशान्तरविभक्तयः ।
योजन-क्रोश-गव्यूति,-प्रमाणमपि चाध्वनः ।
प्राशयेन प्रमातव्याः, खातक्रकचराशयः ॥९॥

भा०टी०—ग्राम, नगर, खेडा आदिना विभागोनी लंबाइ पहोलाइ, प्रासाद, घर, खाइ, (परिखा) द्वार, शेरी, सभाभवनो, मार्गो अने निर्गमस्थानो आ बधानी सीमानां क्षेत्रान्तरो, वनो अने उपवनोना भागो, देशान्तरना विभागो, योजनो, कोशो, गाउओ अने मार्गोनुं प्रमाण, खात (खाडा) क्रकच (करवत) अने राशिओ आ बधा 'प्राशयहस्त' वडे मापवा.

तलोच्छ्रयान् मूलपादान्, जलोद्देशानधः क्षितेः ।
तथा दोलाम्बुशस्त्रादि-पातमानविनिर्णयम् ॥१०॥
शैल-खात-निकेतानि, सुरङ्गमानमान्तरम् ।
साधारणेन वाटयध्व-मानं च परिकल्पयेत् ॥११॥

भा०टी०—तलनी ऊंचाइओ, मूलपाया, भूमिनीचेनां जलस्थानो हिंडाला, (हिंचका) जल, शस्त्रपातना प्रमाणनो निर्णय, पर्वत तोडीने बनावेल गुफागृहो, सुरंगनी अंदरनुं माप, वाडीनुं अने मार्गनुं माप ए बधानुं माप साधारण (मध्यम) हस्तवडे करवुं.

आयुधानि धनुर्दण्डान्, यान शयन-मासनम्।
प्रमाण कूपवापीनां, गजानां वाजिनां नृणाम् ॥१२॥
अरघट्टेक्षुयन्त्राणि, युगयूपहलानि च।
शिल्प्युपस्करनौछत्र,-ध्वजातोद्यानि यानि च ॥१३॥
वृसी धर्मोपकरण-पटवानादिक च यत्।
नल्वदण्डास्तथा मात्रा-शयहस्तेन मापयेत् ॥१४॥

भा०टी०—आयुधो, धनुष्य, दण्ड, यान, शयन, (शय्या) आसन अर्थात् बेसवानुं उपकरण, कुवा तथा वावडी आदिनु प्रमाण, हाथी, घोडा अने मनुष्यना शरीरनुं प्रमाण, अरहटना उपकरणो, कोल्हू (शेलडी पीलवानी घाणी) धुंसरी. यूप (यज्ञस्तंभ) हल, शिल्पिना उपकरणो, नाव, छत्र, ध्वजा, वादित्रो, खुरसी-बाकडाओ, धार्मिकक्रियाना उपकरणो, वस्त्रना ताकाओ आदि अने नल्व तथा दण्ड आ बधाने 'मात्राशय' नामक हाथवडे मापवां.

भेदत्रयान्वितमपि, प्रोक्त हस्तस्य लक्षणम्।
सज्ञाभेदोऽथ सामान्य-मानानां प्रतिपाद्यते ॥१५॥

भा०टी०—३ भेदवाला हस्तनु लक्षण कह्युं. हवे सामान्य मानोनो संज्ञाभेद-परिभाषाओनो भेद कहेवाय छे

स्यादेकमङ्गुल मात्रा, कला प्रोक्ताङ्गुलद्वयम्।
पर्व त्रीण्यङ्गुलान्याहु-र्मुष्टि. स्याच्चतुरङ्गुला ॥१६॥
तल स्यात पञ्चभिः षड्भि , करे पादेऽङ्गुलैर्भवेत।
सप्तभिर्द्दष्टिरष्टाभिरङ्गुलैस्तूणिरिष्यते ॥१७॥
प्रादेशो नवभिर्नः स्यात्, शयताली दशाङ्गुलः।
गोकर्ण एकादशभि,-र्वितस्तिर्द्वादशाङ्गुला ॥१८॥
चतुर्दशभिरुद्दिष्ट', पादो नाम नखाङ्गुलैः।
रत्निः स्यादेकविंशत्या, स्यादरत्नि. करोऽस्मिनः ॥१९॥

द्वाचत्वारिंशता किष्कु-रङ्गुलैः परिकीर्तितः ।
चतुरुत्तरयाऽशीत्या, व्यामः स्यात्पुरुषस्तथा ॥२०॥
षण्णवत्यङ्गुलैश्चापं, भवेन्नाडी युगं तथा ।
शतं षडुत्तरं दण्डो, नल्वस्त्रिंशद्धनुर्मितः ॥२१॥
क्रोशो धनुःसहस्रं तु, गव्यूतं तद्द्वयं विदुः ।
चतुर्गव्यूतमिच्छन्ति, योजनं मानवेदिनः ॥२२॥

भा०टी०—१ आंगळनी १ मात्रा, २ आंगळनी १ कला, ३ आंगळनुं १ पर्व, ४ आंगळनी १ मुष्टि, ५ आंगळनुं १ करतल, ६ आंगळनुं १ पादतल, ७ आंगलनी १ दृष्टि, ८ आंगळनी १ तूणि, ९ आंगळनो १ प्रादेश, १० आंगळनो १ शयताल, ११ आंगळनो १ गोकर्ण, १२ आंगळनी १ वहेंत (वितस्ति) १४ आंगळनो १ पाद, २१ आंगळनी १ रत्नि, २४ आंगळनी १ अरत्नि, ४२ आंगळनो १ किष्कु, ८४ आंगळनो १ वाम अथवा पुरुष, ९६ आंग-ळनो १ धनुष्य, नाडी अथवा युग (धुंसरुं) १०६ आंगळनो १ दण्ड, ३० धनुष्यनो १ नल्व, १००० धनुष्यनो १ कोश, २ कोशनो १ गाउ अने ४ गाउनो १ योजन थाय एम मानना ज्ञाताओ माने छे.

मानपरिभाषा-कोष्टकम्

८ छाया (अणुछाया)=१ अणु,	६ यव=१ कनिष्ठांगुल,
८ अणु=१ रेणु,	१ अंगुल=१ मात्रा,
८ रेणु=१ केशाग्र,	२ अंगुल=१ कला,
८ केशाग्र=१ लिक्षा,	३ अंगुल=१ पर्व,
८ लिक्षा=१ यूका,	४ अंगुल=१ मुष्टि,
८ यूका=१ यव,	५ अंगुल=करतल,
८ यव=१ उत्तमांगुल,	६ अंगुल=१ पादतल
७ यव=१ मध्यमांगुल,	७ अंगुल=१ दृष्टि,

८ अंगुल=१ तूणि,
९ अगुल=१ प्रादेश,
१० अंगुल=१ शयताल,
११ अगुल=१ गोकर्ण,
१२ अंगुल=१ वितस्ति,
१४ अंगुल=१ अनाहपद,
२१ अगुल=१ रत्नि,
२४ अंगुल=१ अरत्नि,
४२ अंगुल=१ किष्कु,
८४ अगुल=१ पुरुष,
९६ अंगुल=१ धनुष्य,
१०६ अंगुल=१ दंड,
१००० धनुष्य=१ कोश,
२ कोश=१ गव्यूति,
२ गव्यूति=१ योजन।

(२) वास्तुक्षेत्रविचार

स्वस्तिकं पुष्पकं नन्दं, षोडशाख्यं चतुर्थकम् ।
पञ्चमं कुलतिलकं, सुभद्रं षष्ठमेव च ॥२३॥
सप्तमं मरीचिगणं, भद्रकं स्यात्तथाष्टकम् ।
नवमं कामदं प्रोक्तं, दशमं भद्रमुच्यते ॥२४॥
सर्वतोभद्रनामाख्य,-मत ऊर्ध्वं न विद्यते ।
वास्तन्येकादशैव स्युः, प्रोक्तानि परमेश्वरैः ॥२५॥

भा०टी०—परमेश्वरे वास्तुपद ११ प्रकारना ज कह्या छे ए उपरात कह्या नथी, ते वास्तुना नामो अनुक्रमे १ स्वस्तिक २ पुष्पक ३ नन्द ४ षोडश ५ कुलतिलक ६ सुभद्र ७ मरीचिगण ८ भद्रक ९ कामद १० भद्र अने ११ सर्वतोभद्र ए प्रमाणे छे

स्वस्तिक १ पद, पुष्पक ४ पद, नन्द ९ पद, षोडश १६ पद, कुलतिलक २५ पद, सुभद्र ३६ पद, मरीचिगण ४९ पद, भद्रक ६४ पद, कामद ८१ पद, भद्र १०० पद अने सर्वतोभद्र १००० पदवाळु वास्तु होय छे

आ ११ वास्तुओ पैकीनु भिन्न भिन्न वास्तु भिन्न भिन्न कार्यना प्रसंगे पूजाय छे

१ पदस्थापनामां, राजमहेलना प्रारंभमां, लक्ष्मीना भंडारना प्रारंभमां, देवनी आगे चोकी स्थापवामां अने विद्यारंभमां 'स्वस्तिक' नामक वास्तु पूजवुं.

२ दिक्षाना प्रसंगमां, यात्राना प्रारंभमां अने कन्याना लग्न प्रसंगे 'पुष्पक' वास्तुनी पूजा करवी.

३ वनयात्रामां (गृहनिमित्ते काष्ट लेवा जती वखते) 'नन्द' वास्तुनुं पूजन करवुं शुभदायक छे.

४ लतिन अने रुचकादि प्रासादोना मंडपोमां घरोमां अने जगतीनी भूमिना आरंभमां 'षोडशपद' वास्तुनुं पूजन करवुं.

५. सूर्यना दक्षिणायन अने उत्तरायण थवाना समये, इन्द्र-महोत्सवना प्रारंभे, लक्ष्मी अने श्रीमाता आदिना यात्रोत्सव प्रसंगे अने दिक्षाओमां 'कुलतिलक' वास्तुनी पूजा करवी.

६ कोइ पण शुभ कामना तथा प्रयाण करवाना प्रसंगे 'सुभद्र' वास्तु पूजवुं वखाणाय छे.

७ सर्व प्रकारना जीर्णोद्धारना समयमां 'मरीचिगण' नामनुं वास्तु पूजवुं.

८ ग्राम नगर के खेडुं नवुं वसावतां, कूओ खोदावतां अने राजाओना अभिषेक प्रसंगे 'भद्रक' वास्तुने पूजवुं.

९ सर्व प्रकारना घरोना आरंभ अने प्रवेशमां, गजशालाओमां अने अश्वशालाओमां 'कामद' वास्तु पूजवुं.

१० अनेकविध प्रासादो (देवमंदिरो) अनेकविध मंडपो अने जगती, लिंग, पीठ, अने राजप्रासादोनी प्रतिष्ठामां 'भद्र' नामना वास्तुनुं पूजन करवुं.

११ मेरुजातिना प्रासादो अने ६ हाथथी म्होटा लिंगोनी प्रतिष्ठाओमां अने म्होटो देश अने नवु राष्ट्र आबाद करवामा 'सर्वतोभद्र' वास्तुनुं पूजन करवुं.

अधस्तात् सर्वतोभद्रात्, भद्राख्योपरि वास्तुकम् ।
मध्ये च द्वाविंशतिभि-र्गुणिता पदकल्पना ॥२६॥

भा०टी०—सर्वतोभद्रथी नीचे अने भद्रवास्तुथी उपर आ २२ वास्तुपदोनी कल्पना पण करी लेवी.

षट् क्षेत्राणि प्रवक्ष्यामि, वास्तुपदनिवासिनाम् ।
सस्थानोन्मानसूत्रं च, वास्तुवेदसमुद्भवम् ॥२७॥

चतुरस्र-मायत च, वृत्त वृत्तायत तथा ।
अष्टास्र चार्धचन्द्रं च, वास्तुसूत्र च षड्विधम् ॥२८॥

भा०टी०—वास्तुभूमिना ६ क्षेत्रो तेना आकारो अने मानसूत्रो वास्तुशास्त्रमां जे वर्णित छे ते कहीश चोरस, लंबचोरस, गोळ, लंबगोळ, अष्टकोण अने अर्धचन्द्राकार आम वास्तुसूत्र छ प्रकारनुं छे.

प्रासादेषु गृहाग्रेषु, पुरग्रामनिवेशने ।
क्षेत्राणि चतुरस्राणि, चतुरस्र समर्चयेत् ॥२९॥

तथायताश्च प्रासादाः, पुष्पाख्यकुलसंभवाः ।
यथायतानिक्षेत्राणि, पूजयेच्च तथायतम् ॥३०॥

वापीकूपक्षेत्रकाणि, वृत्तानि प्रतिमास्तथा ।
कैलाशकुन्दोद्भवाश्च, सर्वे वृत्ताः प्रकीर्तिताः ।३१॥

वृत्तायताश्च मणिका, अष्टशाला अष्टास्रका ।
तडागेषु समस्तेषु, ह्यर्धचन्द्र प्रपूजयेत् ॥३२॥

क्षेत्रषट्कात्मके वास्तौ, प्राणवेदाश्च देवता ।
त्रयोदश स्थिता मध्ये, द्वात्रिंशद् बाह्यतस्तथा ॥३३॥

सूत्रबाह्येऽष्टदेव्याश्च, ईशादिषु प्रदक्षिणम् ।
तासां पदविधिर्नास्ति, केवलं पूजनं स्मृतम् ॥३४॥

भा०टी०—प्रासादोमां, घर आदिमां, पुर तथा ग्रामनी आबादी करवामां चोरस क्षेत्र होइ चोरस वास्तु पूजवुं. पुष्पकजातिना प्रासादो लंबचोरस होय छे, माटे जेवुं लंबचोरस प्रासादतल होय तेवुंज लंबचोरस वास्तु पूजवुं. वावडी, कूप, क्षेत्रो, प्रतिमाओ अने कैलास-जातिना सर्व प्रासादो ए गोळ क्षेत्रो छे, ए गोळ क्षेत्रोमां गोळ वास्तुनुं पूजन करवुं. मणिकजातिना प्रासादो लंबगोळ तलना होइ तेओमां लंबगोळ वास्तु पूजवुं. अष्टभद्री अने अष्टकोणी प्रासादोमां अष्टास्र अने सर्व तलावोमां अर्धचन्द्राकार वास्तु पूजवुं. उपर्युक्त छ प्रकारना वास्तुक्षेत्रोमां ४५ देवताओ होय छे. १३ देवता वास्तुपदनी अंदर अने ३२ देवताओ वास्तुसूत्रनी बहार ईशानकोणथी बाह्यभागमां मांडीने ८ दिशाओमां अनुक्रमे ८ देविओ होय छे. आ बाह्यस्थ देविओने माटे पदविधान नथी, पण केवल पूजाविधान ज कहेल छे.

वास्तुपददेवता—

वास्तुपदो सर्व मलीने ३२ प्रकारनां होय छे. १थी १० सुधीनां अनुक्रमे अने ३२ मुं सर्वतोभद्र आम ११ वास्तुओनो नामनिर्देश अने कया काममां कयुं वास्तु पूजवुं, ए बधुं उपर कहेवाइ गयुं छे, पण आ बधा वास्तुओमां देवतापद भोग अने तेमनी विन्यास–विधि लखवा जेटलो अवकाश लइ शकाय तेम नथी तेथी जीर्णोद्धार, नगरनिवेश, मंडपनिवेश अने प्रासादनिवेशमां जेमनी खास पूजा करवी आवश्यक होय छे एवा ७ थी १० पर्यन्तना ४ वास्तुओनी ज विशेष चर्चा करवी उपयोगी समजीये छीये.

४९ पदात्मक मरीचिगण वास्तु (जीर्णोद्धारे पूजनीय)

चतुष्पदो भवेद् ब्रह्मा, त्रिपदा अर्यमादयः ।

कर्णाः सपादाश्चैकोना, कर्णे बाह्येऽर्धपादकाः ॥३५॥
षडंशोनपदाः शेषा-श्चतुर्विंशतिसंख्यया ।
मरीचिगणमित्युक्तं, सप्तसप्तपदात्मकम् ॥३६॥

भा०टी०—ब्रह्मानो पदभोग ४ नो अर्यमादिनो ३-३ नो अभ्यन्तर कर्णदेवताभोग १।-१। पदनो, मध्यकर्णदेवतानो पदभोग १-१-नो बाह्यकोण देवताभोग ०॥-०॥ पदनो अने शेष बाह्य २४ देवताओनो भोग षडंशहीन पदनो जाणवो. आम ७ ७ पदोथी बनेल ४९ पदात्मक ' मरीचिगण ' नामक वास्तु कह्युं

६४ पद भद्रकवास्तु-(नगरनिवेशे पूजनीय)

चतुःषष्टिपदं वक्ष्ये, वास्तु पुरनिवेशने ।
विभक्तिपदसंस्थानं, देवतानामनुक्रमात् ॥३७॥
चतुष्पदो भवेद् ब्रह्मा, तत्समा अर्यमादयः ।
अर्यमार्धं कर्णगाश्च, कर्णार्धं चतुर्विंशतिः ॥३८॥
बाह्यकर्णे स्थिताश्चाष्टौ, लाङ्गले पदमर्धकम् ।
ईदृशं भद्रकं प्रोक्तं, चतुःषष्टिपदस्थितम् ॥३९॥

भा०टी०—नगरनिवेशनमां चोसठपदनुं वास्तु अने तेमां देवताओना पदविभागना संस्थानो अनुक्रमे कहुं छुं

ब्रह्माना ४ पद, ब्रह्मानी परिधिना अर्यमादि ४ देवोना ४-४ पदो, मध्यकोणस्थ आप आपवत्सादि ८ देवोना २-२ पदो, बाह्य २४ देवोनुं १-१ अने बाह्यकोणस्थ लागलना ८ देवोनुं ०॥-०॥ पदोनुं संस्थान गणता आ भद्रक नामनुं ६४ पदोनुं वास्तु तैयार थाय छे.

८१ पद-कामदवास्तु-(गृहादिनिवेशे)

ब्रह्मा नवपदो मध्ये, षट्पदा अर्यमादयः ।
द्विपदा मध्यकर्णाद्या, द्वात्रिंशदेकपादकाः ॥४०॥

भा०टी०—कामदवास्तुमां मध्ये ९ पदो ब्रह्मानां, पूर्वादि ६-६ पदो अर्यमादि चारनां, मध्यकर्णविभागस्थित आठ देवोनां २-२ पदो अने बाह्य बत्रीश देवोनुं १-१ पद राखवुं.

१०० पद-भद्रवास्तु (प्रासाद-मण्डपादिनिवेशे)

ततः शतपदं वक्ष्ये, पूज्यं प्रासाद-मण्डपे ।
ब्रह्माद्याः सकलाश्चैवा-ऽष्टपदाश्चार्यमादयः ॥४१॥
द्विपदा ब्रह्मकर्णेऽष्टौ, बाह्येऽष्टौ सार्धपादकाः ।
शेषाश्चैकपदाः ज्ञेया-श्चतुर्विंशतिसंख्यया ॥४२॥

भा०टी०—हवे प्रासादमंडपमां पूजवायोग्य शतपदवास्तु कहुं छुं. ब्रह्माने १६ पदनो, अर्यमादिने ८-८ पदोना, ब्रह्मानी पासेना कोणना आठ देवोने २-२ पदोना, बाह्यकोण निकटवर्ती आठ देवोने १॥-१॥ पदना अने बाकीना चोवीश बाह्य देवोने १-१ पदना अधिकारी बनाववा.

उक्त चार वास्तुओनुं निरूपण अपराजितमां उपर प्रमाणे छे. पण निर्वाणकलिका, वास्तुविद्या आदि ग्रन्थोमां आ विषयमां केटलोक मतभेद दृष्टिगोचर थाय छे. जे नकशाओ जोवाथी जणाइ आवशे.

वास्तु-मर्मोपमर्मनिर्णय—

चतुःषष्टिपदे क्षेत्रे, पुरवास्तुं प्रकल्पयेत् ।
मर्मोपमर्मसन्धींश्च, वास्तुवेदसमुद्भवान् ॥४३॥

भा०टी०—६४ पदना क्षेत्रमां पुरवास्तुनी कल्पना करवी अने वास्तुशास्त्रमां बतावेल मर्म, उपमर्म अने संधिस्थानोनो निर्णय करवो.

पूर्वापरायता वंशा, उपवंशाः प्रभिन्नगाः ।
मर्माणि वंशसंपाता, उपमर्माः पदमध्यगाः ॥४४॥
माहेन्द्रादित्यत्रिरेखा, वरुणपुष्पदन्तगाः ।
एते वंशा समाख्याता, उपवंशा यमोत्तराः ॥४५॥

गृहक्षतयमजोक्ताः, सोमभल्लाटादित्रये ।
पूर्वाऽपरायता रेखा', पुनर्भिन्नाश्च तिसृभिः ॥४६॥
ईशब्रह्मपितृतश्च, शिरा रोगाग्निमध्यतः ।
शिरास्त्वेव कर्णस्यान्ते, ईशाग्निपितृरोगतः ॥४७॥
जयगन्धर्वसुग्रीव-गिरौ चैव प्रभिन्नगाः ।
सत्य-मुख्यायता रेखा, वितथे चाऽसुरे तथा ॥४८॥

भा०टी०—पूर्व पश्चिम लांबी रेखाओ 'वंश' अने दक्षिणोत्तर लांबी रेखाओ 'उपवंश' कहेवाय छे, वंशोपवंशना संपातस्थानोने 'मर्म' अने पदमध्यने 'उपमर्म' कहे छे. वरुण तथा पुष्पदंतथी नीकळेली रेखाओ माहेन्द्र अने आदित्यनी पासे जाय छे ते 'वंश' कहेवाय छे अने एज प्रकारे गृहक्षत तथा यमपासेथी नीकळेली दक्षिणोत्तरायत सोम अने भल्लाट पासे जती ३ रेखाओ 'उपवंश' नामथी ओळखाय छे. वळी १ पितृपदथी नीकळी ब्रह्मा पासे थइ ईश पदे जती शिरा, २ गन्धर्वथी नीकळी जयपदने स्पर्शती शिरा अने ३ सुग्रीवपदथी नीकळी गिरि पदे जती शिरा, एज रीते—

१ अग्निपदथी रोगपदे जती कोणगत शिरा, २ मुख्यपदथी नीकळी सत्यपर्यन्त लंबायेली शिरा अने ३ वितथपदथी नीकळी असुरपदे जती शिरा आ बधी तिर्यग् जती ३-३ शिराओ पूर्वापरायत अने दक्षिणोत्तरायत वंश अने उपवंशोनो वेध करे छे.

एते च सूत्रसम्पाता, महामर्माणि कीर्तिताः ।
सूत्रसपाताग्रपङ्क्तौ, लाङ्गुल षट्कमेव च ॥४९॥
शिरासूत्रसंपातेषु, लाङ्गुलषट्कमेव च ।
चतुर्विंशतिलाङ्गलानि, पदाग्रेषु त्रिकर्णगा ॥५०॥
ब्रह्मणश्च चतुःपार्श्वे-ष्वष्टसूत्राणि पद्मकम् ।
पक्षेषु लाङ्गलद्वन्द्वं, षड्रेखाभिर्विधीयते ॥ ५१ ॥

चतुःकर्णेषु शूलानि, षड्रेखाभिश्च वज्रकम् ।
त्रिशूल-लाङ्गलपद्म-शिरा-नाडीर्विवर्जयेत् ॥५२॥

भा०टी०—आ सूत्रसंपातो (वंश-उपवंश-शिरा-संगमस्थानो)ने 'महामर्म' कह्या छे. सूत्रसंपातोना अग्रभागो ज्यां मळे छे ते छ स्थानोने लांगल कहे छे. सूत्र अने शिराना अग्रभागो मळीने पण छ लांगलो थाय छे. बधां मळीने २४ लांगलो अर्धपदोमां अने कोण विभागोमां उत्पन्न थाय छे.

ब्रह्माजीनी चारे दिशाओमां आठ सूत्रोवडे ४ पद्म बने छे अने पद्मोनी पासे ६-६ रेखाओवडे बे बे लांगलो बने छे. चार बाह्य-कोणोमां ४ शूलो अने ६-६ रेखाओवडे वज्रो उत्पन्न थाय छे. वास्तुगत त्रिशूल, लांगल, पद्म, शिरा अने नाडीओ टाळीने स्तंभा-दिने स्थापवा जोइए.

बन्धूच्छेदश्चोपवंशे, मर्मणि स्यात्कुलक्षयः ।
वज्रे च वज्रपाताः स्यु-स्त्रिशूले च रिपोर्भयम् ॥५३॥
पद्मे पतिविनाशश्च, लाङ्गलेषु प्रजाक्षयः ।
कर्णशिरायां स्त्रीनाशः, सम्पाते चाग्रजातकम् ॥५४॥
चतुर्षु ब्रह्मकर्णेषु, महामर्म सुकीर्तितः ।
धन-धान्य-विनाशश्च, सर्वनाशस्तथैव च ॥ ५५ ॥

भा०टी०—स्तंभआदिवडे उपवंशनो वेध थाय तो बन्धुओनो नाश, मर्मनो वेध कुलनो क्षय, वज्रनो वेध वज्रनो पात अने त्रिशूलनो वेध शत्रुनो भय करनार छे, पद्मनो वेध गृहस्वामीनो नाश, लांगलनो वेध संताननो क्षय, कोणनी शिरानो वेध स्त्रीनो विनाश करे छे अने संपातवेध आद्य संताननो नाश करे छे. ब्रह्माना ४ खूणाओमां महामर्म कह्यो छे. तेनो वेध धनधान्यनो नाश करे छे एटलुं ज नहि पण आ महामर्मनो वेध सर्वनाशकारी छे.

पदव्यासषोडशांशो, भागो द्वादशकः पुनः ।
वालाग्रं सन्धिसम्पाते, वर्ज्यते मर्म शिल्पिभिः ॥५६॥
अष्टवर्गः समाख्यातः, कर्णपार्श्वाश्च कीर्तिताः।
ब्रह्मकर्णे त्रिपद्मान्ते, महामर्मचतुष्टयम् ॥५७॥
मर्मोपमर्मणी रक्ष्ये, महादोषभयावहे ।
वशोपवशसन्धींश्च, रेखापट्टक च लाङ्गलम् ॥५८॥

भा०टी०—पदविस्तारनो सोलमो भाग उपवंशना उपमर्मना अने बारमो भाग मर्मवेधमां टाळवो अने संधिसंपातमां शिल्पिओए वालाग्रमात्र मर्मस्थान छोडीने स्तंभादिनो न्यास करवो.

आ प्रमाणे अष्टवर्ग (अष्ट सूत्र-सपात) बताव्यो अने कोणो तथा पार्श्वभागो कह्या, ब्रह्माना कोण भागोमां पद्मोना अंतमां चार महामर्मस्थानो छे मर्म तथा उपमर्म महादोषदायक अने महा भयंकर छे माटे ए बेने अवश्य बचाववा वली वंश, उपवंश, संधि वज्र अने लांगलना वेधने पण वर्जवो.

भूपरिग्रहो वास्तोश्च, मर्मादि कथित तव ।
पित्रोर्घातो भवेच्चैव, कृते शिरसि खातके ॥५९॥
भुजे स्कन्धे बन्धुनाशो, हृदये च महाभयम् ।
धन-धान्य-समृद्धिश्च, जायते कुक्षिखातके ॥६०॥

भा०टी०—विश्वकर्माजी अपराजितने कहे छे के—तने भूमि परिग्रह, वास्तु संस्थान अने मर्मोपमर्मादि कह्यु

मस्तक उपर खात करे तो माता-पितानो नाश, भुज उपर के स्कंध उपर खात करे तो भाईनो नाश कर, हृदयभागमां खात करे तो महाभय उपजे अने कुक्षिमां खात करे तो धन धान्यनी समृद्धि थाय

वास्तु परिभ्रमण—

रवौ कन्यातुलालिस्थे, पूर्वा शिरःसमाश्रिता ।
धनौ च मकरे कुम्भे, दक्षिणेन व्यवस्थितः ॥६१॥

मीने मेषे वृषे चैव, पश्चिमेन समाश्रितः ।
मिथुने सिंहे कर्के च, ह्युत्तरेण व्यवस्थितः ॥६२॥

सर्वकालक्रमोऽयं च, राशिमध्ये ह्यतः शृणु ।
देवताक्रमयोगेन, स वास्तुः सरते महीम् ॥६३॥

यत्र भानुस्तत्र शिरो, लक्षितव्यं रविक्रमात् ।
अन्यथा कुरुते दुःखं, शिरो वास्तोरलक्षितम् ॥६४॥

देवागारं गृहं यत्र, प्रकुर्यात् शिरःसम्मुखम् ।
मृत्यु रोग भया नित्यं, शस्तं च कुक्षिसम्मुखम् ॥६५॥

भा०टी०—कन्या, तुला अने वृश्चिकना सूर्यमां वास्तुपुरुष पूर्वमां मस्तक करीने रहे छे. धन, मकर अने कुंभना सूर्यमां वास्तु दक्षिणमां रहे छे. मीन, मेष अने वृषभना सूर्यमां वास्तु पश्चिमाश्रित होय छे तथा मिथुन, कर्क अने सिंहना सूर्यमां वास्तुनुं मस्तक उत्तरे होय छे. वास्तुना राशिभ्रमणनो सार्वकालिक एज क्रम छे. आ संबन्धमां विशेष सांभल—ते वास्तु स्वगत देवताओनी साथे अनुक्रमे पृथ्वी उपर फरे छे, जे दिशामां सूर्य होय तेनो निर्णय करी कइ दिशामां वास्तुनुं मस्तक आवे छे तेनो निर्णय करी लेवो. सूर्यना क्रमथी वास्तुना मस्तकने जाण्या विना तेना वर्जित अंग भागमां खात आदि करनारने दुःखदायक थाय छे. वास्तुना मस्तक संमुख द्वारवाला देवालय, घर आदि करे तो नित्य मरण, रोग अने भय थया करे छे. जे काले जे दिशामां वास्तुनी कुक्षि होय ते काले ते दिशाना मुखवाला देवालय अने घर आदिनो आरंभ करवो ते श्रेष्ठ छे.

कन्या तुला वृश्चिके च, भास्करो यदि संस्थितः ।
पूर्वामुख न कर्तव्यं, गृह भवति निष्फलम् ॥६६॥
धनौ च मकरे चैव, कुम्भे वाऽथ दिवाकरः ।
न याम्यदिग्मुख कुर्याद्, राजचौराग्निभिर्भयम् ॥६७॥
मीने मेषे वृषे चैव, पश्चिमा दिक् च दूषिता ।
स्त्रीभी रोगो महाघोरो, भवेच्च रौद्रदारुणः ॥६८॥
मिथुने कर्के सिंहे च, वेश्म नैवोत्तराननम् ।
दोष-शोकमय तत्तु, न कुर्याच्च विचक्षणः ॥६९॥
तत्र ना सर्पते वास्तुः, क्रमेण गृहमध्यत' ।
पूर्व-दक्षिणतश्चैव, पश्चिमोत्तरतो मुखम् ॥७०॥

भा०टी०—कन्या, तुला अने वृश्चिक राशिमा सूर्य रह्यो होय त्यारे पूर्व दिशाना द्वारवाळुं घर न करवु केमके ते घर नकामुं जाय छे, धनु, मकर अने कुंभनो सूर्य होय ते काले दक्षिणना द्वारवाळु घर न बनाववुं. केमके तेमा राज, चौर अने अग्निनो भय थया करे छे. मीन, मेष अने वृष राशिमा सूर्य होय त्यारे पश्चिम दिशा दूषित होय छे, ए कालमा पश्चिम द्वारवाळु घर न बनाववु, ते घरमा स्त्री निमित्त महा भयंकर रोगोत्पत्ति थाय छे मिथुन, कर्क अने सिंह राशिनो सूर्य होय त्यारे चतुर शिल्पिए उत्तराभिमुखनु घर न बनाववु, कारणके ते दोषप्रचुर अने शोकमय होय छे आ प्रमाणे वास्तुपुरुष अनुक्रमे घरमा फरे छे अने पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर आ प्रत्येक दिशामा तेनु मुख आवे छे, माटे जे दिशामा तेनुं मुख होय ते दिशाना द्वारवाळु घर ते काले बनाववानो आरंभ न करवो

शिरो नेत्रे च बाहू च, उदर कटिजङ्घया ।
वेधयन्ते गृहे मर्म, प्रजाहानि-र्महाभयम् ॥७१॥

भा०टी०—वास्तुपुरुषनुं मस्तक, नेत्र, भुजा, पेट, कटि अने

जंघानो वेध थाय तेवी रीते खात न करवुं, केमके घरमां वास्तुना मर्मनो वेध थतां पूजानी हानि अने महाभयनी उत्पत्ति थाय छे.

कन्यादिसंक्रान्ति योगे, प्राच्यादिषु क्रमाद् दिशि ।
न कुर्वीत शिरो वास्तो,-र्न कार्यं तन्मुखं गृहं ॥७२॥

क्षपाकरे नैव गृहं पुरस्तात्, कुर्यान्नरो वास्तुनयानुकर्ता ।
पतन्ति कन्या न च पृष्ठसंस्थे, तस्मात् प्रयत्नेन विदिग् विचिन्त्या ॥७३॥

भा०टी०—कन्यादि ३-३ संक्रान्तिना योगे अनुक्रमे पूर्वादि दिशामां वास्तुनुं मुख न करवुं अने ते दिशाना द्वारवालुं घर न बनाववुं. चन्द्रमा द्वार संमुख होय तो शिल्पशास्त्रज्ञे घरनो आरंभ न करवो; न पाछल चन्द्र राखीने गृहारंभ करवो, कारणके ते रीते बनावेल घरोमां रहेनाराओने कन्याओनी ज प्राप्ति थाय छे. माटे यत्नपूर्वक विदिशानो विचार करवो.

वास्तुदोष—

दिशायां विदिशायां च, वास्तुवेधविशोधनम् ।
जीर्णे नवतरे वा पि, वेधदोषं विवर्जयेत् ॥७४॥

वेधास्ते कथिताः पूर्वं, दोषांश्चैव ततः शृणु ।
एकपदादिकं वास्तु, पर्यन्तसहस्रान्तिकम् ॥७५॥

सुरस्थानं सदा पूज्यं, पदं पूजां विना यदा ।
विघ्नोत्कटं महाघोरं, कुरुते भयदारुणम् ॥७६॥

वीथिकान्तरबाह्येषु, पदमेकं सुरैर्विना ।
विरोधं गोत्रकलहं, मुक्तकोणस्य तत्फलम् ॥७७॥

भा०टी०—दिशामां अने विदिशामां वास्तुवेध अवश्य टाळवो, भले वास्तु जीर्ण होय के साव नवुं होय पण वेध दोष तो वर्जवो ज

जोइये, तने वेधो कह्या, हवे दोपोने साभळ. एक पदथी माडीने छेक हजारपदना वास्तुपर्यन्त जे वास्तुमा जेटला देवपदो होय ते बधा देवपदोनी पूजा करवी जोइये. कोइ पण पद पूजा विनानुं रही जाय तो ते पदनो देव उत्कट भयप्रद विघ्न उत्पन्न करे छे वीथीनी अंदर अथवा बहार एक पण पद देव विनानुं के पूजा विनानुं न राखवु पद छोडवाथी विरोध अने कुटुम्ब-कलहरूप फल थाय छे.

अन्यपृष्ठे यदा चान्यत्, प्रासादपुरमन्दिरम् ।
खादक नाम तद्वास्तु. परस्परविरोधकम् ॥७८॥

भा०टी०—एक प्रासाद नगर के मन्दिरनी पूठमा एकज बीजु प्रासाद नगर के मंदिर होय तो ते वास्तु 'खादक' कहेवाय छे आ वास्तु रहेनाराओने आपममा विरोधभाव उत्पन्न करे छे

कुक्षिद्वार गृहे वापि, कुर्याद् वा सुरसद्मनि ।
विभ्रम नाम तद् वास्तु, विभ्रमेत गृहाधिपः ॥७९॥

कुक्षिभागे यदा चान्यद्, गृहं वा सुरसद्म वा ।
कुक्षिदं नाम तद् गेह, विभ्रमन्नेव दृश्यताम् ॥८०॥

अग्रे द्वारोन्नतं गेह, निम्नग मध्यसस्थितम् ।
उच्छ्रित नाम तद् वास्तु, वृद्धि-पूजादिक हनेत् ॥८१॥

गृहव्यासकर्णायत, त्रिपञ्चहस्ततलोच्छ्रयम् ।
पट्टकाष्ठद्रव्यादिकं, न भवेद् गृहं शाश्वतम् ॥८२॥

भा०टी०—घर अथवा देव मंदिरना कुक्षिभागमा जेने द्वार होय ते 'विभ्रम' नामनु वास्तु कहेवाय छे, ते वास्तुनो स्वामी सदा भमतो ज रहे छे.

जे घरना कुक्षिभागे बीजुं घर अथवा देवमंदिर होय ते वास्तु 'कुक्षिद' कहेवाय तेनुं फल विभ्रम वास्तुना जेवु ज जाणवुं

आगळ द्वार भागे ऊंचुं अने मध्य भागमां नीचुं होय ते वास्तु 'उच्छ्रित' नामथी ओळखाय छे, जे विस्तार अने संतति आदिनी हानि करनारुं होय छे. जे घरना विस्तारमां कोणभागे लंबाई होय, ३ अथवा ५ हाथ तलनी ऊंचाईवाळुं होय, अनेक काष्ठो अने अनेक द्रव्यवडे जे बनेलुं होय, ते घर लांबा काल सुधी रहेतुं नथी.

कर्णशाला यदा लग्ना, आग्नेयां दिशमाश्रिता ।
अग्निदं नाम तद्वास्तु, कुरुतेऽग्निभयं ध्रुवम् ॥८३॥

भा०टी०—जेने अग्निकोणमां 'शाला' (ओरडो) लागेलो होय ते घर 'अग्निद' कहेवाय अने ते अवश्य अग्निनो भय करे छे.

नैर्ऋत्ये च यदा लग्ना, शाला च वास्तुबाह्यतः ।
नैर्ऋत्यं नाम तद्वास्तु, मृत्यु-व्याध्यन्तिकोद्भवम् ॥८४॥

भा०टी०—जेना नैर्ऋत्य खूणामां वास्तुनी बहार शाला लागी होय ते वास्तु 'नैर्ऋत्य' नामथी ओळखाय छे. आवुं वास्तु मृत्युदायक व्याधिने उत्पन्न करे छे.

वायव्ये तु यदा लग्ना, शाला च गृहबाह्यतः ।
वायव्यं नाम तद् वास्तु, गृहे वायुभयं भवेत् ॥८५॥

भा०टी०—घरनी बहार जेना वायव्य खूणामां शाला लागेली होय ते 'वायव्य वास्तु' कहेवाय छे अने ते घरमां वायुनो भय रहे छे.

ईशाने तु यदा लग्ना, शाला च गृहबाह्यतः ।
देवकं नाम तद् वास्तु, देवदोषः सदा भवेत् ॥८६॥

भा०टी०—जेने घरनी बहार ईशान भागमां शाला लागी होय ते वास्तु 'देवक वास्तु' कहेवाय छे अने ते वास्तुमां रहेनारने देवदोष थाय छे.

अधोभूम्यां च ये दोषा,-स्तथैव चोर्ध्वमादिशेत् ।
ऊर्ध्व भूमी दिशाश्रं चैतद् गुणं दोषमादहेत् ॥८७॥

भा०टी०—नीचेनी भूमिमा जे जे दोषो कह्या छे ते ज ऊर्ध्व भूमिमा (मेडी उपर) पण कहेवा. पण जो ऊर्ध्वभूमिमा दोष न होय तो नीचेना दोषो पण हलका पडी जाय छे

(३) आयाद्यङ्ग-विचार—

आय-व्ययांशका ऋक्ष, तारा-चन्द्रबलं गृहे ।
जीवित मरण ज्ञेयं, वास्तु-विज्ञान-पूर्वकम् ॥८८॥

नगरे वा पुरे ग्रामे, दण्डमान विधीयते ।
'वास्तुदण्ड' इति प्रोक्त-श्चतुर्भिर्हस्तसंख्यया ॥८९॥

दशहस्तं च यत् क्षेत्र,-मङ्गुले च फलप्रदम् ।
यस्यङ्गुले च क्षेत्रे तु, पादैर्वा प्रति शोधयेत् ॥९०॥

तत् क्षेत्र च यथाकार, यवैरेव विशोधयेत् ।
शतहस्तमिते क्षेत्रे, तदग्रहस्तसंख्यया ॥९१॥

क्षेत्रालाभे च तत्रैव, गृह स्यात्तदिशाङ्गुलम् ।
अङ्गुलमात्रक्षेत्रे च, अङ्गुलैस्तदलाभतः ॥९२॥
पादैर्वापि यवैर्वापि, गृहक्षेत्रानुसारतः ।

भा०टी०—आय, व्यय, अशक, नक्षत्र, तारा अने चन्द्रबल, आटली बाबतो घरमा जोवी अने वास्तुनु विशेष ज्ञान प्राप्त करीने तेना जीवन अने मरण काल (विनाश)नो पण पत्तो लगाडी लेवो नगर, पुर अने ग्रामनु माप दण्डवडे करवुं आ दण्ड ते वास्तुदण्ड कहेवाय छे अने हाथसंख्याए ए ४ हाथनो कह्यो छे

दे हस्तमित क्षेत्रनु क्षेत्रफल आगलोवडे काढीने आयादिनो निर्णय करवो जे क्षेत्र आठ आगलनु ज होय तेनुं क्षेत्रफल पाव आगुलो वडे काढवु अथवा तेवा लघुक्षेत्रने यवोवडे मापीने क्षेत्र-फलादि काढवु

सो अथवा एथी अधिक हाथना क्षेत्रमांथी १०० हाथ बाद करीने बाकी रहेला हाथोवडे क्षेत्रफल काढवुं, उपरनी हस्तसंख्या पर्याप्त न होय तो तेना आंगल करी ते गृहक्षेत्रना आय-व्यय नक्षत्रादि काढवां.

अंगुलोवडे मापेल क्षेत्रनुं क्षेत्रफल आंगलोवडे काढवुं. आंगलो वडे न नीकळे तो गृह क्षेत्रानुसारे पाव आंगलो वडे अथवा यवो वडे गणीने आयादि काढवा.

वास्तुभूमि कोना हाथे मापवी ?

तृणच्छन्दे (न्ने) स्वामिहस्तैः, कर्मिहस्तैर्हर्म्यादिके ॥९३॥
राजवेश्म-पुरादीनां, वापि-कूपादिसंभवे ।
देवानां (च) प्रासादेषु, शास्त्रहस्तेन केवलम् ॥९४॥

भा०टी०—तृणवडे ढांकेल झूंपडानुं माप घरधणीना हाथे कराववुं. काचां पाकां मकानो अने मेडीबंध महेलोनुं माप कारीगरना हाथवडे करवुं. राजमहेल अने नगर आदिनुं, वावडी कूपादिकनुं अने देवमंदिरोनुं माप केवल शास्त्रोक्तहस्तवडे करवुं. ८-७-६ जवोनो अनुक्रमे ज्येष्ठ, मध्यम अने कनिष्ठ १ आंगल, आवा २४ ज्येष्ठ, मध्यम अने कनिष्ठ आंगलोनो अनुक्रमे ज्येष्ठ, मध्यम अने कनिष्ठ हाथ ते शास्त्रीय 'हस्त' कहेवाय छे.

आय लाववानी रीति अने नामादि—

दैर्घ्यं हन्यात् पृथुत्वेन, हरेद् भागं ततोऽष्टभिः ।
यच्छेषमायं तं विद्यात्, शास्त्रदृष्टं ध्वजादिकम् ॥९५॥
ध्वजो धूमश्च सिंहश्च, श्वानो वृषः खरो गजः ।
ध्वांक्षश्चेति समुद्दिष्टाः, प्राच्यादिषु प्रदक्षिणाः॥९६॥
अन्योन्याभिमुखास्ते च, क्रमच्छन्दानुसारतः ।
पूर्वाद्या ये समुद्दिष्टा, आयुर्वृद्धिविधायकाः ॥९७॥

भा०टी०—वास्तुक्षेत्रनी लंबाईने पहोळाईवडे गुणवी, पछी जे आंकडो आवे तेने आठनो भाग देवो, भाग लागता जे आंक बाकी रहे ते प्रमाणे शास्त्रोक्त ध्वजादि आय जाणवो, १ शेष रहे तो ध्वज, २ रहे तो धूम, ३ रहे तो सिंह, ४ रहे तो श्वान, ५ रहे तो वृषभ, ६ रहे तो खर, ७ रहे तो गज अने शेष आंक जो शून्य आवे तो ध्वांक्ष आय जाणवो. आ आठे आयो पूर्वादि दिशाओमा अनुक्रमे रहेला छे. अने पोतानी संमुख दिशाना आयने अभिमुख रहेला छे, ते पोतानी दिशासंमुख द्वारवाला वास्तुनी आयुर्वृद्धि करनारा छे

देवालयोमा अने अधमालयोमा शुभ आय—

ध्वजः सिंहो वृषगजौ, शस्यन्ते सुरवेश्मनि ।
अधमाना खर-ध्वांक्ष-धूम-श्वानाः सुखावहाः ॥९८॥

भा०टी०—ध्वज, सिंह, वृषभ अने गज, आ विषम आयो देवालयोमा आववा प्रशंसनीय छे अने खर, ध्वांक्ष, धूम तथा श्वान, आ चार सम आयो अधमजातिना मनुष्योना घरोमा सुखदायक होय छे.

कालपरक आयोनी श्रेष्ठता—

ध्वजः प्रायः कृतयुगे, त्रेतायां सिंह एव च ।
द्वापरे वृषबाहुल्यं, गज एव कलौ युगे ॥९९॥

भा०टी०—ध्वज कृतयुगमा, सिंह त्रेतामा, वृष द्वापरमा अने गज कलियुगमा प्रायः विशेष प्रबल [1]होय छे

वर्णविशेषने आयविशेषनी श्रेष्ठता—

कल्याणं कुरुते सिंहो, नृपाणां च विशेषतः ।
ध्वजः प्रशस्यते विप्रे, वृषो वैश्ये उदाहृतः ॥१००॥

भा०टी०—सिंह आय क्षत्रिओने विशेषतः राजाओने कल्याणकारी छे, ध्वजाय ब्राह्मणने अने वृषाय वैश्य जातिने माटे प्रशंसनीय छे

[1] आ श्लोक हस्तलिखित पुस्तकमां छे

आयोनुं फल—

उत्तरोत्तरमाख्याता-श्चतुर्वर्णफलप्रदाः ।
ध्वजे चैवार्थलाभः स्याद्, धूम्रे संताप एव च ॥१०१॥
सिंहे च विपुला भोगाः, कलिः श्वाने सदा भवेत् ।
धनं धान्यं वृषे चैव, स्त्रीदूषणं च रासभे ॥१०२॥
गजे भद्राणि पश्यन्ति, ध्वाङ्क्षे च मरणं ध्रुवम् ।

भा०टी०—चतुर्वर्णने जे आयो उत्तरोत्तर फलदायक छे ते कह्या, हवे प्रत्येक आयनुं सर्व सामान्य फल कहे छे—

ध्वज आयथी धन प्राप्ति, धूम आयथी संताप, सिंह आयथी विशालभोग प्राप्ति, श्वान आयथी क्लेश, वृष आयथी धन धान्य प्राप्ति, खर आयथी स्त्रीदोष, गज आयथी मंगल दर्शन अने ध्वांक्ष आयथी निश्चितरूपे मरण थाय छे.

कार्य विशेषे आय विशेष—

ध्वज—

प्रासाद-प्रतिमा-लिङ्ग,-जगती-पीठ-मण्डपे ।
वेदी-कलश-मूर्तीनां, पताका-छत्र-चामरे ॥१०३॥
वापी कूप-तडागानां, कुण्डे रम्यजलाश्रये ।
ध्वजोच्छ्रय-संस्थानेषु, ध्वजसूत्रं निवेशयेत् ॥१०४॥
आसने देवपीठेषु, वस्त्रालङ्कारयुक्तिषु ।
भूषणे मुकुटाद्ये च, निवेशयेद् ध्वजं शुभम् ॥१०५॥

भा०टी०—देवमंदिर, देवप्रतिमा, शिवलिंग, जगती, पीठ, मंडप, वेदी, कलश, मूर्ति, (मनुष्यनुं बावलुं) ध्वजा, छत्र, चामर, वाव, कूवो, तलाव, कुण्ड, सुन्दर जलाशय अने ध्वजदण्ड; आ बधा स्थानोमां ध्वजसूत्र देवुं अर्थात् ध्वज आय आपवो. सिंहासन-भद्रासन, देवने स्थापवा योग्य भद्रपीठ, वस्त्र, -अलंकार अने मुकुट प्रमुख आभूषणो; आ सर्वमां पण ध्वज आय शुभ छे.

धूम–

अग्निकर्मसु सर्वेषु, होमशाला-महानसे ।
धूमोऽग्निकुण्डसंस्थाने, होमकर्मगृहेऽपि वा ॥१०६॥

भा०टी०—सर्व प्रकारना अग्निकार्यो, होमशालादि यज्ञस्थानो, रसोडघरो, अग्निकुण्डो अने होमक्रिया स्थानो; आ सघे स्थले धूम आय देवो

सिंह—

आयुधानां समस्तानां, नृपाणां भवनेषु च ।
नृपासने सिंहद्वारे, सिंहस्तत्र निवेशयेत ॥१०७॥

भा०टी०—सर्व प्रकारनी आयुधशालाओ, राजाना मकानो, राजानुं सिंहासन अने राजभवननुं सिंहद्वार, आ सर्वे सिंह आये एवुं सूत्र देवु

श्वान—

श्वानं च म्लेच्छजातीनां, गृहे श्वानोपजीविनाम ।
तथा च शूद्रसद्मेषु, प्रशस्तः श्वानको मतः ॥१०८॥

भा०टी०—म्लेच्छोना घरोमा, श्वानोवडे आजीविका चलावनाराओना घरोमां श्वान आय देवो तथा शूद्र जातिना लोकोने माटे पण श्वान आय शुभ मानेलो छे

वृष—

वणिक्कर्मसु सर्वेषु, भोज्यपात्रेषु मण्डपे ।
वृषस्तुरङ्गशालायां, गोशाला-गोकुलेषु च ॥१०९॥

भा०टी०—सर्व व्यापारिक कार्योमा, भोजनपात्रोमा, भोजन मण्डपमा, अश्वशालामां, गौशालामा अने गोकुलोमा वृष आय शुभ छे.

खर—

तन-वितन धनाढ्ये, वादित्रे विविधे खरः ।
वेश्या कुलाल रजका-दीनां गर्दभजीविनाम् ॥११०॥

भा०टी०—तत-वितत-घनादि वादित्रो तथा बीजा अनेक जातिनां वाजिंत्रो, वेश्या, कुंभार, धोबी आदिनां घरो अने गधेडाओथी आजीविका चलावनाराओनां घरोमां खर आय देवो.

गज—

गजश्च गजशालायां, यानजम्पानयो रथे ।
शय्यायां शिबिकायां च, गजमुद्रास्वातुरके ॥१११॥
अन्तःपुरगृहे चोक्तः, पण्डावासादिकोद्भवः ।
अन्योपस्करस्थाने च, नागादिकगृहे गजः ॥११२॥

भा०टी०—हस्तिशालामां, यान, मियानो, रथ, पलंग, पालखी, गजमुद्राओ (गजबन्धनालयो)मां, रुग्णालयोमां, अन्तपुरमां, पण्डावास (क्लीवगृहो)मां, अन्य उपस्कर (सामान) राखवानां स्थानोमां अने नागदेव आदिना चैत्योमां पण गज आय देवो.

ध्वांक्ष—

अर्हट्टयन्त्रशालासु, जीर्ण(जैन)शालादिसंभवे ।
शिल्पकर्मोपजीविनां, ध्वांक्षः कल्याणकारकः ॥११३॥

भा०टी०—रहेंटिया शालामां, जीर्ण (जैन)शालामां अने वणकर आदि शिल्पकर्मोपजीविओना घरोमां ध्वांक्ष आय कल्याणकारी छे.

प्रतिनिधि आयो—

स्वकस्वकेषु स्थानेषु, सर्वे कल्याणकारकाः ।
स्नेहानुगाऽनुमैत्रे च, ते सर्वे हितकामदाः ॥११४॥
वृषस्थाने गजं दद्यात्, सिंहं वृषभ-हस्तिनोः ।
ध्वजः सर्वेषु दातव्यो, वृषो नाऽन्यत्र दीयते ॥११५॥

भा०टी०—पोतपोताना स्थानोमां सर्व आयो कल्याणने करनारा छे, जे जेना तरफ स्नेहवालो छे ते पोताना ते मित्रना स्थानमां पण हितकारक अने इच्छित फल आपनार थाय छे. वृषना स्थाने

गज आपवो, वृष अने गजना स्थाने सिंह आपवो, ध्वज सर्वमां आपवो, ज्यारे वृष पोताना स्थान सिवाय बीजे न आपवो.

आयोना मुखनी दिशा—

वारुण्याभिमुखो ध्वजः, सिंहो गजाभिदृष्टिकः ।
वृषभः प्राच्यभिमुखो, गजो याम्यामुखस्तथा ॥११६॥
सम्मुखा याम्योत्तराः शस्ता, अशस्ताः पृष्ठतोमुखाः ।
स्वके स्वके वै स्थाने च, प्रशस्तास्त्रिषु दिक्षु च ॥११७॥

भा०टी०—ध्वज आय पश्चिमाभिमुख, सिंहआय उत्तराभिमुख, वृष आय पूर्वाभिमुख अने गज आय दक्षिणाभिमुख रहेल छे. आय सामो, डाबो अने जमणो शुभ छे, पण तेनी पूठ शुभ नथी. आम पोतपोताना स्थानथी प्रत्येक आय त्रण त्रण दिशामां शुभ छे उदाहरण तरीके ध्वज आय पश्चिमाभिमुख छे तो पूर्वाभिमुख वास्तुने संमुख, उत्तराभिमुखने जमणो अने दक्षिणाभिमुख द्वारने डाबो थाय जे शुभ छे, पण पश्चिमाभिमुखने ते पृष्ठतोमुख होइ शुभ नथी, एम दरेकना संबन्धमां जाणवु

महागणेश्वराः प्रोक्ता, अष्टदिक्क्षेत्रपालकाः ।
वास्तुकर्मसु सर्वेषु, आया दिक्पतयोऽष्ट हि ॥११८॥
पूजिताः पूजयन्त्येव, निघ्नन्ति चाऽपदस्थिताः ।
साध्यक्षेत्रं च त्रिपुटं, प्रभिन्नं च नवांशकैः ॥११९॥
अष्टायाऽऽयसंस्थानानि, मध्ये स्यात् कुलदेवता ।
गृहस्याभिमुखाः शस्ता, मध्यमाश्च पराङ्मुखाः ॥१२०॥

भा०टी०—आयोने महागणेश्वरो अने आठ दिशाना क्षेत्रपालो कह्या छे सर्व वास्तुकर्मोमां आयो आठ दिशापालो छे ए यथास्थाने राखेला सुख देनारा छे अने वर्ज्य-स्थाने रहेला हानिकारक थाय छे वास्तुक्षेत्रमां उभी आडी चार चार लीटी खेंचीने तेना नव भागो, पाडवा, आठ दिशाना आठ भागो आयोना स्थानो अने

मध्यभाग कुलदेवतानुं जाणवुं. आयो घर तरफ मुखवाला श्रेष्ठ अने पूंठवाला मध्यम जाणवा.

साध्यक्षेत्रगुणाकारै-रायाश्चैव प्रतिष्ठिताः ।
यावत्तु क्षेत्रभक्तिः स्यात्, तावदायः प्रपालयेत् ॥१२१॥

भा०टी०—साध्यक्षेत्रनी लंबाई पहोलाईना गुणाकारवडे आयो स्थापित कराय छे, तेथी ज्यां सुधी क्षेत्रनी ते रचना कायम होय छे त्यां सुधी तेनो आय पोतानी शुभ असर बतावे छे.

आय ज्ञानार्थकोष्टक—

दैर्घ्यांगुल		पृथुलांगुल	२१	२२	२३	२४	१७	१८	१९	२०	
			१३	१४	१५	१६	९	१०	११	१२	
			५	६	७	८	१	२	३	४	
२१	१३	५	१	६	३	८	५	२	७	४	अष्टौ आयाः
२२	१४	६	६	४	२	८	६	४	२	८	
२३	१५	७	३	२	१	८	७	६	५	४	
२४	१६	८	८	८	८	८	८	८	८	८	
१७	९	१	५	६	७	८	१	२	३	४	
१८	१०	२	२	४	६	८	२	४	६	८	
१९	११	३	७	२	५	८	३	६	१	४	
२०	१२	४	४	८	४	८	४	८	४	८	

नक्षत्र—

आयामो यश्च क्षेत्रस्य, गुणितव्यः प्रविस्तरः ।
तत्क्षेत्रस्य फलं साध्यं, गुणित्वा दैर्घ्य-विस्तरैः ॥१२२॥
फले चाष्टगुणे तस्मिन्, सप्तविंशतिभाजिते ।
यच्छेषं लभ्यते तत्र, नक्षत्रं तद्गृहस्य तत् ॥१२३॥

भा०टी०—प्रथम वास्तुक्षेत्रनी लंबाई अने पहोलाई मापवी, ते पछी ते लंबाईना अने पहोलाईना अंकथी गुणीने तेनुं क्षेक्षफल साधवुं. अने फलना अंकनो ८ थी गुणाकार करी आवेल गुणित

अंकने २७ मो भाग दवो, भाग लागता जे अंक शेष रहे तेटलामुं ते घरनुं नक्षत्र जाणवुं

त्रिविध नक्षत्र गण—

देव-मर्त्य-राक्षसाना, नक्षत्राणा त्रिधा गणः ।
यस्य यस्याऽनुगा मैत्री, वैरं स्याच्च परस्परम् ॥१२४॥
स्वगणे परमा प्रीति-र्मध्या देवे च मानुषे ।
राक्षसे कलहं विन्द्यात्, मृत्यु मनुष्य-रक्षसोः ॥१२५॥

भा०टी०–नक्षत्रगण ३ प्रकारनो छे देवगण, मानवगण अने राक्षसगण; जेनी जे साथे मैत्री अथवा परस्पर वैर होय, त्या स्वस्व गणने परम प्रीति, देव मनुष्यने मध्यम प्रीति, देव राक्षसने कलह अने मनुष्य राक्षसना योगे मरण जाणवु. ते तपासीने गृहस्वामीना नक्षत्र साथे प्रीतिवाळुं देवालयनु अथवा घरनु नक्षत्र लेवु अने परस्पर वैरवाला गणनुं नक्षत्र टाळवु

नव देवगणाः प्रोक्ता, मनुष्या नव कीर्तिताः ।
नव रक्षोगणाश्चैव, नक्षत्राणा त्रिधा गणः ॥१२६॥
कृत्तिका मघा विशाखा, अश्लेषा शततारका ।
चित्रायुक्ता धनिष्ठा च, ज्येष्ठा मूल तु राक्षसाः ॥१२७॥
मृगोऽश्विनी रेवती च, हस्त-स्वाती पुनर्वसू ।
पुष्यानुराधा श्रवण-मेते देवगणाः स्मृता ॥१२८॥
भरणी (च) तिस्रः पूर्वा-श्चार्द्रा च रोहिणी तथा ।
उत्तरात्रयसयुक्ता, मनुष्याश्च प्रकीर्तिताः ॥१२९॥

भा०टी०—९ नक्षत्रो देवगणा, ९ मानवगणा, अने ९ राक्षसगणा, आम नक्षत्रगणो त्रण प्रकारना छे

कृत्तिका, मघा, विशाखा, आश्लेषा, शतभिषा, चित्रा, धनिष्ठा, ज्येष्ठा अने मूल ए राक्षसगण, मृगशिर, अश्विनी, रेवती, हस्त, स्वाति, पुनर्वसु, पुष्य, अनुराधा अने श्रवण ए देवगण अने भरणी, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद, आर्द्रा, रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा अने उत्तराभाद्रपद ए मानवगणना नक्षत्रो छे

अंगुलात्मकक्षेत्राद् नक्षत्र

दैर्घ्यांगुल / पृथुत्वांगुल	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
										नक्ष
१	८	१६	२४	५	१३	२१	२	१०	१८	२६
२	१६	५	२१	१०	२६	१५	४	२०	९	२५
३	२४	२१	१८	१५	१२	९	६	३	२७	२४
४	५	१०	१५	२०	२५	३	८	१३	१८	२३
५	१३	२६	१२	२५	११	२४	१०	२३	९	२२
६	२१	१५	९	३	२४	१८	१२	६	२७	२१
७	२	४	६	८	१०	१२	१४	१६	१८	२०
८	१०	२०	३	१३	२३	६	१६	२६	९	१९
९	१८	९	२७	१८	९	२७	१८	९	२७	१८
१०	२६	२५	२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७
११	७	१४	२१	१	८	१५	२२	२	९	१६
१२	१५	३	१८	६	२१	९	२४	१२	२७	१५
१३	२३	१९	१५	११	७	३	२६	२२	१८	१४
१४	४	८	१२	१६	२०	२४	१	५	९	१३
१५	१२	२४	९	२१	६	१८	३	१५	२७	१२
१६	२०	१३	६	२६	१९	१२	५	२५	१८	११
१७	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
१८	९	१८	२७	९	१८	२७	९	१८	२७	९
१९	१७	७	२४	१४	४	२१	११	१	१८	८
२०	२५	२३	२१	१९	१७	१५	१३	११	९	७
२१	६	१२	१८	२४	३	९	१५	२१	२७	६
२२	१४	१	१५	२	१६	३	१७	४	१८	५
२३	२२	१७	१२	७	२	२४	१९	१४	९	४

ज्ञानार्थक कोष्टक

११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
त्राणि												
७	१५	२३	४	१२	२०	१	९	१७	२५	६	१४	२२
१४	३	१९	८	२४	१३	२	१८	७	२३	१२	१	१८
२१	१८	१५	१२	९	६	३	१७	२४	२१	१८	१५	१२
१	६	११	१६	२१	२६	४	९	१४	१९	२४	२	७
८	२१	७	२०	६	१९	५	१८	४	१७	३	१६	२
१५	९	३	२४	१८	१२	६	२७	२१	१५	९	३	२४
२२	२४	२६	१	३	५	७	९	११	१३	१५	१७	१९
२	१२	२२	५	१५	२५	८	१८	१	११	२१	४	१४
९	२७	१८	९	२७	१८	९	२७	१८	९	२७	१८	९
१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७	६	५	४
२३	३	१०	१७	२४	४	११	१८	२५	५	१२	१९	२६
३	१८	६	२१	९	२४	१२	२७	१५	३	१८	६	२१
१०	६	२	२५	२१	१७	१३	९	५	१	२४	२०	१६
१७	२१	२५	२	६	१०	१४	१८	२२	२६	३	७	११
२४	९	२१	६	१८	३	१५	२७	१२	२४	९	२१	६
४	२४	१७	१०	३	२३	१६	९	२	२२	१५	८	१
११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
१८	२७	९	१८	२७	९	१८	२७	९	१८	२७	९	१८
२५	१५	५	२२	१२	२	१९	९	२६	१६	६	२३	१३
५	३	१	२६	२४	२२	२०	१८	१६	१४	१२	१०	८
१२	१८	२४	३	९	१५	२१	२७	६	१२	१८	२४	३
१९	६	२०	७	२१	८	२२	९	२३	१०	२४	११	२५
२६	२१	१६	११	६	१	२३	१८	१३	८	३	२५	२०

राशि-

अथ राशीन् प्रवक्ष्यामि, लब्धाः क्षेत्रफलेषु ये ।
तदनुक्रमयुक्तं च, कथये तव सांप्रतम् ॥ १३० ॥

भा०टी०—हवे क्षेत्रफल उपरथी निर्णीत थयेल नक्षत्रो वडे प्राप्त थती राशिओ अने तेओनो अनुक्रम तने कहुं छुं.

गृहक्षेत्रेषु यद्दक्षं, षष्ट्या संघातयेद् बुधः ।
पञ्चत्रिंशच्छतभक्ते, शेषा भुक्तिघटिको(ट्यु)त्तमाः ॥१३१
ऋक्षभुक्तिक्रमभुक्ताः, स्वस्वराशिकसंस्थिताः ।
स्युर्मेषाद्या राशयश्च, अश्विन्यादिक्रमेषु च ॥१३२॥

भा०टी०—घरनुं जे नक्षत्र आव्युं होय तेने ६० थी गुणवुं, पछी ते गणित अंकने १३५ नो भाग देवो, जे लाभे ते भुक्त राशि अने जे शेष रहे ते वर्तमान राशिनी भोग्य घडिओ जाणवी, अश्विन्यादि क्रमथी नक्षत्र भुक्तिना क्रमानुसार मेषादि राशिओ आवशे.

उदाहरण—गृह नक्षत्र ८ मुं पुष्य आव्युं छे, एने ६० थी गुणतां ४८० घडी थइ, एने १३५ नो भाग देतां ३ आव्या, एटले त्रीजी मिथुन राशि भुक्त थइ, वर्तमान भोग्य चोथी कर्क राशि आवी, एज प्रमाणे सर्वत्र गृहनक्षत्रना अंकने ६० थी गुणी १३५ नो भाग देतां गृहनी राशि आवशे.

चातुर्वर्ण्य राशि-

चातुर्वर्ण्यप्रशस्तांश्च, राशीनथ वदाम्यहम् ।
तत्र त्रयस्त्रयः प्रोक्ता, विप्रशूद्रान्तमार्गतः ॥१३३॥
वृश्चिकः कर्कटो मीनो, ब्राह्मणाः परिकीर्तिताः ।
धनुर्मेषस्तथा सिंहो, राजन्याश्च शुभाः स्मृताः ॥१३४॥
वृषः कन्या च मकर, एते वैश्या उदाहृताः ।
मिथुनं च तुला कुम्भ-स्त्रयः शूद्राः प्रकीर्तिताः ॥१३५॥

भवेद् द्वादशभिर्विप्रः, क्षत्रियो नवभिस्तथा।
षड्राशिभिर्भवेद् वैश्य,-स्त्रिभिः शूद्रः प्रशस्यते ॥१३६॥

भा०टी०—हवे चार वर्णने योग्य राशिओ कहु छुं. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अने शूद्र, आ चार वर्णो पैकीना प्रत्येक वर्ण माटे ३-३ राशि श्रेष्ठ कहेल छे कर्क वृश्चिक मीन राशिओ ब्राह्मणने श्रेष्ठ छे, मेष सिंह धनु क्षत्रियने शुभ, वृष कन्या मकर वैश्यने श्रेष्ठ अने मिथुन तुला कुंभ ए त्रण शूद्रने श्रेष्ठ छे. ब्राह्मण बारेय राशिओथी श्रेष्ठ छे, क्षत्रिय नव राशिओथी, वैश्य छ राशिओथी अने शूद्र पोतानी त्रण राशिओथी ज श्रेष्ठ छे. आशय ए छे के उच्च वर्णवालाने नीच वर्णनी राशिवाला घरो शुभ छे पण नीच वर्णवालाने उच्चवर्णनी राशिवालां घरो सारां नथी

राशिकूट—

षडष्टके ध्रुवं मृत्युः, प्रीतिः स्यात् समसप्तमे।
अनिष्टं पञ्च-नवमे, पुष्टिर्दश-चतुर्थके ॥ १३७ ॥
तृतीयैकादशे मैत्री, द्वितीय-द्वादशे रिपुः।
राशयः षड्विधा एव,-मन्योन्य पति-वेश्मनोः ॥१३८॥

भा०टी०—घर अने घर स्वामीनी राशि परस्पर छठी आठमी होयतो गृहस्वामीनु मृत्यु थाय, परस्पर सातमी होय तो प्रीतिकारक, परस्पर नवमी पाचमी होय तो अनिष्टकारक, परस्पर चोथी दशमी होय तो पुष्टिकारक, परस्पर त्रीजी अग्यारमी होय तो मैत्रीकारक अने परस्पर बीजी बारमी होय तो शत्रुताकारक जाणवी. आम घर अने घरस्वामिनी राशियोना छ सम्बन्धो बने छे, ते पैकीना त्रण अशुभ संबन्धवाली घरनी राशि वर्जनीय छे

वेश्मपत्योर्भवेच्चैव, ग्रहमैत्री परस्परम्।
न पीडयन्त्यात्मक्षेत्र, स्नेहिनः क्षेत्रपालकाः ॥१३९॥

भा०टी०—गृह अने गृहस्वामीनी राशिना स्वामीग्रहो परस्पर मित्र होय अथवा एक होय तो षडष्टक नवपंचम अथवा बीजी बारमी राशिनो दोष नथी, कारण के ग्रहो पोताना अथवा मित्रना क्षेत्रना पालक होवाथी पीडा करता नथी.

चन्द्र—

गृहाग्रे च यदा चन्द्रः, कुरुते वेश्मनः क्षयम् ।
राट्चौराग्निभयं घोरं, चन्द्रो वै पृष्ठिमागतः ॥१४०॥
धनं धान्यं क्षमारोग्यं, कुरुते दक्षिणे स्थितः ।
श्री-स्त्री-पुत्रानुत्तमांश्च, चन्द्रो वै उत्तरे स्थितः ॥१४१॥

भा०टी०—जो चन्द्रमा घरने सामे आवे तो घरनो नाश करे, घरनी पाछल आवे तो राजभय, चोरभय अने अग्निभय आदि घोर भय उत्पन्न करे, जो घरनी दक्षिण दिशामां रह्यो होय तो धन, धान्य, पृथिवी अने आरोग्यनो करनारो थाय अने जो उत्तर-दिशामां रह्यो होय तो लक्ष्मी, स्त्री अने उत्तम पुत्रोनी प्राप्ति करावे.

चन्द्रनो वासो जाणवानी रीति—

सप्तोर्ध्वाः स्थापयेद्रेखाः, पुनर्भिन्नाश्च सप्तभिः ।
रेखाप्रोत्तानि साभिजिन्नक्षत्राण्यष्टविंशतिः ॥१४२॥
कृत्तिकां दद्यादैशान्यां, शेषर्क्षाणि प्रदक्षिणे ।
गृहक्षेत्रोक्तमृक्षं च, तत्र चन्द्रमुदीरयेत् ॥१४३॥

भा०टी०—७ रेखाओ ऊभी खेंचवी, पछी आडी ७ रेखाओ वडे भेदवी, आम ७ ऊभी अने ७ आडी रेखाओ खेंची सप्तशलाका चक्र बनाववुं, ए पछी ईशान खूणानी ऊभी रेखा उपर 'कृत्तिका' नक्षत्र लखवुं अने ते पछी बाकीनी रेखाओ उपर अनुक्रमे रोहिण्या-

दि शेष अभिजित सहित २८ नक्षत्रो लखवा, जाणे के रेखाओना छेडाओमा परोव्या होय तेम लखीने जोवु. निश्चित करेल घरनुं नक्षत्र ज्या हशे त्या चन्द्रनो वासो हशे गृहनक्षत्र अने गृहारंभनु दिन नक्षत्र ए बने नक्षत्रो घरद्वारने सामे अथवा पाछळ आवता होय तो ते दिवसे घर बनाववानो कार्यारंभ कदापि न करवो गृह-नक्षत्र डाबु-जमणुं होय छता दिननक्षत्र पण सामे-पाछळ आवतु होय तो ते दिवसे बनता सुधी काम न करवु. देवालयमा वास्तुचन्द्र तेम ज दिनचन्द्र सामे होय तो श्रेष्ठ गणाय छे

व्यय-

नक्षत्रे वसुभिर्भक्ते, यच्छेष व्ययमादिशेत् ।
अष्टौ व्ययास्तथा प्रोक्ता, आयेष्वष्टसु योजिताः ॥१४४॥
आयाश्च कथिताः पूर्वं, व्ययानां लक्षण शृणु ।
एकैकस्यायसस्थाने, व्ययोऽत्र त्रिविधः स्मृतः ॥१४५॥
समो व्ययः पिशाचश्च, राक्षसस्तु व्ययोऽधिकः ।
व्ययो न्यूनो यक्षश्चैव, धन-धान्यकरः स्मृतः ॥१४६॥

भा०टी०—नक्षत्रनी संख्याना अकने ८ नो भाग देता जे अक शेष रहे तेटलामो व्यय कह्यो छे कुल आठ व्ययो कह्या छे, जे आठ आयोनी साथे योजायेला छे आयो पूर्वे कह्या छे एटले व्ययना संबन्धमा हवे साभळ! एक एक आयनी साथे व्यय त्रण प्रकारनो बने छे, आय समान व्यय ते 'पिशाच व्यय' कहेवाय छे, आयथी अधिक व्यय होय ते 'राक्षस व्यय' कहेवाय छे अने आयथी ओछो व्यय ते 'यक्ष व्यय' गणाय छे, ए यक्षव्यय धनधान्यनो करनारो छे

अनायव्ययकर्तार, आयहीना व्ययाऽधिका ।
व्ययाधिका विनश्यन्ति, अचिरेणैव सांप्रतम् ॥१४७॥

भा०टी०—आय वगर खर्च करनारा, ओछी आवक ने घणो खर्च करनारा अने आवक वाला पण अधिक खर्च करनारा थोडा ज समयमां विनाश पामे छे, तेम वास्तुने विषे पण जाणवुं.

ध्वजादिकेष्वष्टायेषु, अष्टौ शान्तादिका व्ययाः।
प्रत्येकव्ययसंस्थाने, आयो न्यूनेत्तरः स्मृतः ॥१४८॥

शान्तः पौरश्चप्रद्योतः, श्रियानन्दो मनोहरः।
श्रीवत्सो विभवश्चैव, चिन्तात्मा च व्ययाः स्मृताः॥१४९॥

आयस्थाने व्ययो योज्यो, ह्यऽप्रशस्तो व्ययोऽधिकः।
व्ययो न्यूनस्तथा श्रेष्ठो, धन-धान्यकरः स्मृतः ॥१५०॥

भा०टी०—ध्वजादि ८ आयोनी साथे शान्तादिक ८ व्ययो आपवा, पण प्रत्येक व्ययना स्थाने आयनुं स्थान अधिक होवुं शुभ कह्युं छे. १ शान्त, २ पौर, ३ प्रद्योत, ४ श्रियानन्द, ५ मनोहर. ६ श्रीवत्स, ७ विभव अने ८ चिन्तात्मा; ए आठ व्ययो छे. ज्यां आयनी योजना होय त्यां व्ययनी योजना होय ज, पण आय करतां व्यय अधिक होय तो अशुभ जाणवो. आयना नंबरथी व्ययनो नंबर नीचेनो होय तो ते श्रेष्ठ अने धन-धान्यने करनारो जाणवो.

ध्वजे शुभः स्मृतो शान्तो, नित्यं कल्याणकारकः।
भोगः पूजा बलिः शान्ति-नृत्यं गीतं सुरालये ॥१५१॥

धूमस्थाने यदा शान्तो, हेम-रत्नादि-संभवः।
अग्न्युपजीविकानां च, धातु-द्रव्य-फलप्रदः ॥१५२॥

सिंहस्थाने च पौरश्चेत्, सिंहवच्च पराक्रमैः।
निहन्ति रिपुसैन्यानि, ह्यात्मस्थाने महोत्सवाः॥१५३॥

प्रद्योतः श्वानसंस्थाने, नित्यं भोगसुखावहः।
अनेकभोगशय्यादि-वेश्मादिहितकामदः ॥१५४॥

श्रियानन्दो धृपस्थाने, नित्यं श्री-सुखशान्तिदः ।
व्यवहारोपस्करं द्रव्यं, गुरुदेवार्चने रतिः ॥१५५॥
मनोहरः खरे योग्यः, सर्वमनोरथप्रदः ।
समस्तभोगयुक्तानां, तीर्थयात्राप्रकाशकः ॥१५६॥
श्रीवत्सो गजसस्थाने, स्त्रिया क्रीडात्मनः स्मृतः ।
शृङ्गारभोगयुक्ताना, बलपुष्टिप्रदायकः ॥१५७॥
विभवो ध्वाङ्क्ष-सस्थाने, शिल्पिनां हितकामदः ।
सूत्र-शस्त्रादि-सम्पन्न-भोगशृङ्गारनिश्चल. ॥१५८॥

भा०टी०—'ध्वजआय' स्थाने 'शान्त' व्यय शुभ अने सदा कल्याणकारी कह्यो छे जो देवालयमा ध्वजायना स्थाने शान्त व्यय होय तो त्या नित्य भोग चढे, पूजा थाय, नैवेद्य चढे, गीत नृत्य थया करे अने शान्तिकारक थाय. 'धूमाय' स्थाने 'शान्तिव्यय' आपवामा आवे तो सुवर्ण-रत्नादिनी प्राप्ति थाय अने अग्निजीवीओने धातु-द्रव्यादिनो लाभ करावे 'सिंह'ना स्थाने 'धीर' व्यय होय तो ते वास्तुमा सिंह जेवा पराक्रमी पुरुषो पाके, जे शत्रुओनी सेनाने मारी पोताना घरे महोत्सव प्रवर्तावे. 'श्वान'ना स्थाने 'प्रद्योत' व्यय होय तो नित्य भोग सुखने आपे, अनेक भोग शय्यादि आपनार अने वेश्मादिने हित इच्छित देनार थाय 'वृष'ना स्थाने 'श्रियानन्द' व्यय होय तो लक्ष्मी, सुख अने शान्ति देनारो थाय, व्यापारोपयोगी सामानथी घर भर्युं रहे अने ते वास्तुमा रहेनारने गुरु-देवनी पूजामा प्रीति रहे 'खर' आयस्थाने मनोहर' व्यय देवो योग्य छे कारण के ए सर्व मनोरथ पूरनार छे, सर्व भोग संपन्न मनुष्योने पण ए तीर्थयात्रानी भावना करावे छे 'गजआय'ना स्थाने 'श्रीवत्स' व्यय आवता घरस्वामीने स्त्रीसुखनी प्राप्ति अने शृङ्गार भोगमा प्रवृत्तिमान मनुष्योने बल अने पुष्टि आपे छे

'ध्वांक्ष'ना स्थाने 'विभव' व्यय होय तो शिल्पकर्मिओने हित इच्छित आपे छे अने सूत्र-शस्त्रादिना शिल्पने जाणनारने भोग शृङ्गारमां निश्चल बनावे छे.

सर्वेषु शान्तआयेषु, प्रशस्तः सर्वकामदः ।
षट्सु सिंहादिषु शुभः, पौरो धूमध्वजौ विना ॥१५९॥
ध्वजे धूमे तथा सिंहे, प्रद्योतादिन् विवर्जयेत् ।
शेषेषु ते प्रशस्ताश्च, ज्ञेयाः श्वानादिपञ्चसु ॥१६०॥
खरे वृषे श्रियानन्दो, गजे ध्वाङ्क्षे च शोभनः ।
मनोहरं त्यजेत् सोऽथ, खरे ध्वाङ्क्षे गजे शुभः ॥१६१॥
श्रीवत्सश्च गजे ध्वाङ्क्षे, विभवो ध्वाङ्क्षके शुभः ।
व्ययो न्यूनतरः श्रेष्ठो, ह्यधिकश्चैव राक्षसः ॥१६२॥
चिन्तात्मकं व्ययं चापि, आयेष्वष्टसु वर्जयेत् ।
पिशाचकमायसमं, न कुर्याच्छुभकर्मसु ॥१६३॥

भा०टी०—सर्व आय स्थानोमां 'शान्त व्यय' शुभ सर्व कामित फल आपनार छे अने सिंहादि छ स्थानोमां 'पौर' शुभ छे मात्र ध्वज अने धूम शुभ नथी. ध्वज धूम अने सिंहस्थानमां प्रद्योतादि व्ययो वर्जवा, शेष श्वानादि ५ आयस्थानोमां प्रद्योतादि शुभ गणेला छे. खर, वृष, गज अने ध्वाङ्क्ष स्थानोमां श्रियानन्द व्यय श्रेष्ठ छे, पण मनोहरने टाळवो. मनोहर व्यय खर, गज अने ध्वांक्षमां शुभ छे. श्रीवत्स व्यय गज अने ध्वांक्ष स्थानमां अने विभव केवल ध्वांक्ष स्थाने शुभ छे. जेम व्यय आयथकी न्यून अने न्यूनतर होय तेम श्रेष्ठ छे, अधिक व्यय राक्षस थाय छे. 'चिन्तात्मक' नामना छेल्ला व्ययने आठेय आयस्थानोमां वर्जवो अने आयसम व्यय जे पिशाच थाय छे तेनो पण शुभकार्योमां त्याग करवो.

आयस्थाने व्ययप्रदानकोष्ठक-

आयाः	अष्टौ व्ययाः-
ध्वजे	१ शान्त
धूमे	१ शान्त.
सिंहे	१ शान्त, २ पौर.
श्वाने	१ शान्त, २ पौर, ३ प्रद्योत
वृषे	१ शान्त, २ पौर, ३ प्रद्योत, ४ श्रीयानंद
खरे	१ शान्त, २ पौर, ३ प्रद्योत, ४ श्रियानंद, ५ मनोहर
गजे	१ शान्त, २ पौर, ३ प्रद्योत, ४ श्रियानंद, ५ मनोहर, ६ श्रीवत्स.
ध्वाङ्क्षे	१ शान्त, २ पौर, ३ प्रद्योत, ४ श्रियानंद, ५ मनोहर, ६ श्रीवत्स, ७ विभव[1].

अंशक-

शृणु वत्स ! यथा चांशो, वास्तुवेदे त्रिधा स्मृतः ।
गर्भकस्य क्रमस्थानं, शुभाशुभं प्रचक्षते ॥१६५॥
यद्वस्तौ मूलराशिश्च, आयार्थाय फलीकृतः ।
तत्र राशौ व्ययो मिश्रो, गृहनामाक्षराणि च ॥१६६॥
गुणभक्तो च यच्छेष-मंशकं त्रिविधं विदुः ।
इन्द्रो यमश्च राजा च, त्रिभिर्नामभिरंशकाः ॥१६७॥

भा०टी०—हे अपराजित[1] हवे वास्तुशास्त्रमां कहेल त्रण प्रकारना अंशकने सामळ, गर्भकोनु क्रम स्थान १ शुभ, २ अशुभ अने ३ शुभ, आ प्रमाणे कहेवाय छे. पूर्वे आयने माटे दर्शनो

१ श्यानो विभवानंद एम पाठांतर छे

विस्तारथी गुणाकार करीने क्षेत्र फलात्मक जे मूलराशि कह्यो छे. तेमां व्ययनो आंक मेळववो अने घर अथवा प्रासादना नामाक्षरोनो आंक मेळववो, पछी ते क्षेत्रफलनी अंक राशिने ३ नो भाग देवो, भाग लागतां जे शेष रहे ते त्रण पैकीनो एक अंशक जाणवो, १ शेष रहे तो पहेलो इन्द्रांशक, २ शेष रहे तो बीजो यमांशक अने ० शेष रहे तो त्रीजो राजांशक जाणवो, इन्द्र, यम अने राजा; आ त्रण नामोवडे त्रण अंशको ओळखाय छे.

अंशकप्रदानस्थान—

प्रासाद-प्रतिमा-लिङ्ग,-जगती-पीठ-मण्डपे ।
वेदी-कुण्ड-श्रुक्षु चैवे-न्द्रो ध्वजपताकादिके ॥१६८॥

क्षेत्राधीशे च नागेन्द्रे, गणाध्यक्षे च भैरवे ।
ग्रहे मातृगुणे देव्यां, यमांशको धुरादिके ॥१६९॥

पुरप्राकार-नगरे,-खेटे कूटे च कर्वटे ।
हर्म्य-राजवेश्मादीनां, शस्तो राजांशको मतः ॥१७०॥

भा०टी०—देवमन्दिर, देवप्रतिमा, शिवलिङ्ग, जगती, पीठ, मण्डप, वेदी, कुण्ड, श्रुचा, अने ध्वजापताका आदि; आ बधामां इन्द्रांशक लेवो श्रेष्ठ छे. क्षेत्रपाल, नागेन्द्र, गणाध्यक्ष, भैरव, ग्रहो, मातृकाओ अने देवी; आ बधाना स्थानोमां अने धुरा (रथ-गाडा) आदिमां यमांशक लेवो. नगरनो कोट, नगर, खेडुं, छावणी शाखा-नगर-महेल, राजमहालय आदि स्थानोमां राजांशक राखवो शुभ छे.

स्वर्गादिभोगयुक्तानां, नृत्यगीतमहोत्सवे ।
प्रवरे पाण्डित्ये चेन्द्रां-शकः प्राज्ञोत्तमैर्मतः ॥१७१॥

वणिक्कर्मविधौ चैव, मद्यमांसादिकोद्भवे ।
इत्युक्तकर्मणि चैव, प्रशस्तः स्याद् यमांशक ॥१७२॥

गजाश्वरथक्रीडायां, यानजम्पानकादिके ।
स्वर्गतुल्यभोगभुक्तौ, राजाशकः शुभो मतः ॥१७३॥

भा०टी०—स्वर्गादितुल्य भोगयुक्त गृहस्थोना घरो, गीत-नृत्यादि उत्सव स्थानो अने श्रेष्ठ विद्याविलासना स्थानोमां विद्वानोए इन्द्रांशकने उत्तम मान्यो छे. मद्य-मांसादिना विक्रयस्थानो अने एज प्रकारना बीजा व्यवसायना स्थानोमां ज यमांशकने शुभ मानेलो छे हाथी घोडा अने रथनडे क्रीडनाराओना क्रीडास्थानो, यान-वाहनोने विषे, अने स्वर्गोपम भोग भोगववाना स्थानोमां राजांशक शुभ मानेल छे.

तारा—

गणयेत्स्वामिनक्षत्राद्, यावदृक्षं गृहस्य च ।
नवभिस्तु हरेद् भागं, शेषास्ताराः प्रकीर्तिताः ॥१७४॥

शान्ता मनोहरा क्रूरा, विजया कलिका तथा ।
पद्मिनी राक्षसी वीरा, ह्यानन्दा नवमी मता ॥१७५॥

शान्ता शान्तिकरी नित्यं, मनोल्हादा मनोहरा ।
क्रूरा विवर्जिता प्राज्ञै,-श्चौराग्न्यादिभयकरी ॥१७६॥

विजया जयकल्याणा, कलिका कलहप्रदा ।
पद्मिन्या प्राप्यते सौख्यं, महातीर्थफलं तथा ॥१७७॥

राक्षसी च तथा घोरा, निशाया भयदायिनी ।
वीरा सौम्या भोगदा च ह्यानन्दानन्दकारिणी ॥१७८॥

एवं नवविधाऽऽकारा, निराकारा हि तारकाः ।
क्षीणश्चन्द्रो यदा चारे, भवेत्तारा बलप्रदा ॥१७९॥

क्रूरा च कलिका चैव, राक्षसी तु तृतीयका ।
क्रूराद्या इति वै तिस्रो, वर्जयेत् शुभकर्मसु ॥१८०॥

शान्ता मनोहरा चैव, विजया पद्मिनी तथा ।
वीराऽऽनन्देति षट्तारा, नित्यं कल्याणकारिकाः ॥१८१॥

भा०टी०—गृहस्वामीना नक्षत्रथी गृहनक्षत्रपर्यंत गणीने नक्षत्र संख्याने ९ थी भागवी, शेष रहे ते गृहस्वामीनी तारा कही छे. शेष १ रहे तो शान्ता, २ रहे तो मनोहरा, ३ रहे तो क्रूरा, ४ रहे तो विजया, ५ रहे तो कलिका, ६ रहे तो पद्मिनी, ७ रहे तो राक्षसी, ८ रहे तो वीरा अने ९ रहे तो नवमी आनन्दा नामनी तारा जाणवी. १ 'शान्ता' नित्य शान्ति करनारी, २ 'मनोहरा' मनने प्रसन्नता देनारी छे. ३ 'क्रूरा' चौर अग्नि आदिनो भय करनारी होइ विद्वानोए वर्जित करी छे. ४ 'विजया' जय कल्याण करनारी, ५ 'कलिका क्लेश देनारी, ६ 'पद्मिनी' सुख अने महान तीर्थना फलने देनारी छे. ७ 'राक्षसी' तारा नाम प्रमाणे ज घोर राक्षसी छे अने रात्रिना समयमां भय देनारी छे, ८ 'वीरा' सौम्य अने भोग सुख देनारी छे, ज्यारे ९ 'आनन्दा' आनन्द करावनारी छे. आम नव प्रकारना आकारनी ताराओ कही, ज्यारे चन्द्रमा क्षीणबली होय त्यारे तारा बल देनारी होय छे. क्रूरा कलिका अने राक्षसी आ त्रण ताराओ शुभ कामोमां वर्जवी जोइये. शान्ता, मनोहरा, विजया, पद्मिनी, वीरा अने आनन्दा; आ ६ ताराओ नित्य कल्याण करनारी छे.

अधिपति—

करराशिहतोच्छ्राये, भागैर्हृते ततोऽष्टभिः ।
अधिपतिर्भवेच्छेषं, नाम्ना च सदृशं फलम् ॥१८२॥
वितथः कनकश्चैव, धूम्रकोऽवितथस्वरः ।
बिडालविजयौ चैव, दान्तः कान्तस्तथा मृगः ॥१८३॥
विषमायो भवेच्छस्त, आयहीना व्ययाः शुभाः ।
आधिपत्यं समं शान्तं, शुभदं सर्वदा नृणाम् ॥१८४॥

भा॰टी॰—क्षेत्रफलनी राशिवडे गुणेल गृहना उदयने ८ भागे भागतां जे शेष रहे ते घरनो अधिपति जाणवो, अधिपति नाम प्रमाणे फल देनारो होय छे.

१ वधे तो वितथ[1], २ वधे तो कनक, ३ वधे तो धूम्रक, ४ वधे तो अवितथस्वर, ५ वधे तो निडाल, ६ वधे तो निजय, ७ वधे तो दान्तमृग अने ० वधे तो कान्तमृग नामनो अधिपति जाणवो.

विषम आय शुभ होय, आयथी हीन व्यय होय ते शुभ होय अने अधिपतिपणु सम संख्यावाळु होय ते पण मनुष्योने माटे सदा शुभदायक होय छे

मतान्तरे अधिपति-

यद्वाऽऽयव्ययसंयोगे, यदैक्यं वसुभिर्भजेत् ।
शेषस्त्वधिपतिः केचिद्, विषमः स भयावहः ॥१८९॥

भा॰टी॰—अथवा आय तथा व्ययना आंकने जोडी आठे भागतां जे शेष रहे ते अधिपति, एम केटलाक आचार्यो कहे छे अधिपति विषम होय तो ते भयकारक छे, अर्थात् पहेलो, त्रीजो, पांचमो अने सातमो ए ४ अधिपतिओ अशुभ छे, ज्यारे बीजो, चोथो, छठ्ठो अने आठमो ए ४ शुभ होय छे.

---

१ ग्रन्थान्तरमां त्रिहृन नाम छे २ ग्रन्थान्तरमां कणक नाम छे ३ ग्रन्थान्तरे धूम्रद नाम छे ४ ग्रन्थान्तरमां दुन्दुभि नाम छे ५ ग्रन्थान्तरमां दान्त तथा कान्त नाम छे

प्रासाद-अधिपति ज्ञानार्थक कोष्टक

				गृहोदयांगुलानि—							
	१ वितथ	२ कनक									
	३ धूम्रक	४ अवितथ स्वर		१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४
	५ विडाल	६ विजय		९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
	७ दान्तमृग	० कान्त मृग		१	२	३	४	५	६	७	८
क्षेत्रफलांगुलानि	१७	९	१	१	२	३	४	५	६	७	८
	१८	१०	२	२	४	६	८	२	४	६	८
	१९	११	३	३	६	१	४	७	२	५	८
	२०	१२	४	४	८	४	८	४	८	४	८
	२१	१३	५	५	२	७	४	१	६	३	८
	२२	१४	६	६	४	२	८	६	४	२	८
	२३	१५	७	७	६	५	४	३	२	१	८
	२४	१६	८	८	८	८	८	८	८	८	८

वास्तु जन्मतिथि-

आयर्क्षव्ययतारांशा,-धिपान् क्षेत्रफले क्षिपेत् ।
अर्कैर्भक्ते भवेल्लग्न,-मथ लग्नेऽष्टसंगुणे ॥१८६॥
हृते शरैकैः शेषं तु, तिथिर्नामसमं फलम् ।
तिथौ नवघ्ने वारः स्या-दर्काद्यो मुनिभिर्हृते ॥१८७॥

भा०टी०—आय नक्षत्र, व्यय अंशक अने अधिपति; ए बधानो आंक क्षेत्रफलमां जोडी १२नो भाग आपतां शेष रहे ते लग्न, ते लग्नना आंकने ८ थी गुणी १५नो भाग देवो, शेष रहे ते प्रतिप-

दादि वास्तुनी जन्मतिथि जाणवी, आ तिथिओना नामसमान फल होय छे, वास्तुमा बीज, आठम, बारस वर्जित छे, तिथिना आकने ९ थी गुणी ने ७ नो भाग देवाथी वास्तुनो सूर्य आदि जन्मवार आवे छे.

शुभ अङ्गोनी अधिकताथी वास्तुनी स्थिरता–

आय–व्ययांश-नक्षत्र,–तारा-चन्द्र-मैत्र्यादिकम् ।
प्रीतिरायुश्च मृत्युश्च, चिर नन्दति चेच्छुभाः ॥१८८॥

भा०टी०—आय, व्यय, अंशक, नक्षत्र, तारा, चन्द्र, राशि मैत्री, ग्रहमैत्री, आयुष्य अने मृत्युकारी तत्त्व, आ सर्व वस्तुओ शुभ होय तो ते घर घणा काल पर्यन्त स्थिर रहे छे

केटलां अङ्गो शुभ होय तो सारा–

त्रिभिः श्रेष्ठैस्तु श्रेष्ठ स्यात्, पञ्चभिश्चोत्तमोत्तमम् ।
सप्तभिः सर्वकल्याण, नवभिर्जयसपदः ॥१८९॥

भा०टी०—३ श्रेष्ठ अगो वडे वास्तु श्रेष्ठ गणाय छे, ५ श्रेष्ठ अगो होय तो उत्तमोत्तम, ७ उत्तम अगो वडे सर्वने कल्याणकारक अने ९ उत्तम अगोवाळु वास्तु होय तो तेना स्वामीने जय अने संपत्ति आपनारुं थाय छे

वास्तुमा शु शु न लेवु ?–

न षट्काष्टकं त्रिकोण, द्वादशो द्वितीयाष्टमी ।
न चाष्टद्वादशश्चन्द्र–स्तारा त्रि-पञ्च-सप्तमी ॥१९०॥
न द्वितीयाशक कुर्याद्, न वा चाष्टममायकम् ।
न चन्द्रोऽग्रे च पृष्ठे च, नववास्तुककर्मणि ॥१९१॥

भा०टी०—नविन वास्तु निर्माण कार्यमा षडष्टक तथा नव-पंचम राशिकूट न लेवु, बीज, आठम, बारस तिथि न लेवी, आठमो,

बारमो चन्द्र न लेवो; त्रीजी, पांचमी, सातमी तारा न लेवी; बीजो अंशक न लेवो; आठमो आय न लेवो अने सामो अने पाछल चन्द्रमा न लेवो.

वास्तुनुं जीवन अने विनाश—

अष्टभिश्च हते क्षेत्रे, फले षष्टिविभाजिते ।
लब्धे दशगुणे जीवो, मृत्युर्वै भूतभाजिते ॥१९२॥
पृथिव्यापस्तथा तेजो, वायुराकाशमेव च ।
पञ्चतत्त्वानि प्रोक्तानि, विभक्तानि स्युरन्तके ॥१९३॥
अप्सु चाद्भिर्भवेन्मृत्यु,-स्तेजस्यग्निबलं भवेत् ।
वायुर्वायुकरो देहे, त्वाकाशे शून्यता भवेत् ॥१९४॥
धन-धान्येषु नष्टेषु, देहः पतति जर्जरः ।
इत्थं मृत्युः प्रभवेद्धि, पञ्चतत्वविनाशतः ॥१९५॥

भा०टी०—क्षेत्रफलने ८ गुणुं करी ६० थी भागवुं, लब्ध फलने १० गणुं करतां जे आवे ते वास्तुना आयुष्यनो आंक जाणवो, ते जीवितना अंकने ५ नो भाग देतां जे शेष रहे तेटलामा भूतथी ते वास्तुनो नाश थशे एम जाणवुं. १ रहे तो पृथ्वी, २ रहे तो पाणी, ३ रहे तो अग्नि, ४ रहे तो वायु अने ५ अर्थात् ० रहे तो आकाशतत्त्वना कोप वडे ते वास्तुनो नाश जाणवो.

अथवा जेम धन धान्यना नाशथी शरीर जर्जरित थइने पडी जाय छे, एज रीते पांच तत्त्वना विनाशथी वास्तु जीर्ण थइने पडी जाय छे.

(४) प्रासादांग निरूपण—

जगती—

मूल प्रासाद, एना मंडपो अने आ बधानी आगल पाछल डावी जमणी कोटनी अंदरनी तमाम भूमिने शिल्पशास्त्रकारोए 'जगती'ना नामथी ओळखावी छे.

जगतीनो आकार अने परिमाण—

आ जगतीनो छंद (आकार) एनी लंबाइ-पहोलाइ अने एनी उचाइनुं शास्त्रमा विस्तृत वर्णन थयेलु छे. अपराजितपृच्छामां कह्युं छे के—

जगत्या लक्षणं वत्स, शृणु वक्ष्यामि सांप्रतम् ।
सा चाऽमूढदिग्भागा, मनोज्ञा सर्वतः प्लवा ॥१९६॥
चतुरस्रा तथायता, वृत्ता वृत्तायता तथा ।
अष्टास्रा च तथा कार्या, प्रासादस्यानुरूपतः ॥१९७॥
ज्येष्ठा कनिष्ठप्रासादे, मध्यमे मध्यमा तथा ।
ज्येष्ठे कनिष्ठा व्याख्याता, जगती मानसंख्यया ॥१९८॥
कनिष्ठे भ्रमणी चैका, मध्यमे भ्रमणी-द्वयम् ।
ज्येष्ठे तिस्रो भ्रमण्यश्च, सांगोपांगिकसंख्यया ॥१९९॥
प्रासादपृथुमानेन, द्विगुणा चोत्तमा तथा ।
मध्यमा चतुर्गुणा या,ऽधमा पञ्चगुणोच्यते ॥२००॥

भा॰टी॰—(विश्वकर्माजी कहे छे) हे पुत्र ! हवे जगतीनुं लक्षण कहु छु, ते तु साभल जगती अदिग्मूढ, मनोहर अने सर्व दिशा तरफ जलवहननाळी जोइए, चोरस, लंबचोरस, गोळ, लंबगोळ अथवा अष्टास्र, जेवा छन्दनो प्रासाद होय तेवा ज छन्दनी तेने अनुरूप जगती करवी, कनिष्ठ प्रासादने ज्येष्ठ, मध्यम प्रासादने मध्यम तने ज्येष्ठ प्रासादने कनिष्ठमाननी जगती बनाववी.

कनिष्ठ प्रासादनी जगतीमा एक, मध्यम प्रासादनी जगतीमा बे अने ज्येष्ठमानना प्रासादनी जगतीमा सागोपाग त्रण भ्रमणीओ करवी

उत्तममानना प्रासादने तेना विस्तारथी बे गुणी, मध्यममानना प्रासादने चार गुणी अने कनिष्ठमानना प्रासादने पाच गुणी जगती

राखवी; कनिष्ठादि प्रासादोना योगे आ जगतीओ पण उत्तमा, मध्यमा अने कनिष्ठा; ए नामोथी ओळखाय छे.

ठक्कुर फेरूना मते जगतीनुं मान—

जगई पासायंतरि, रसगुणा पच्छा नवगुणा पुरओ ।
दाहिणवामे तिउणा, इअ भणियं खित्तमज्जायं ॥२०१॥

भा०टी०—जगति प्रासादने आंतरे पाछल छ गुणी, आगल नवगुणी, अने डावी-जमणी तरफ त्रण-त्रणगुणी राखवी. आ प्रमाणे प्रासादभूमिनी मर्यादा प्रथम निश्चित करीने कार्यारंभ करवो.

जगतीनी उंचाई—

एकहस्ते तु प्रासादे, जगत्या उच्छ्रयः समः ।
द्विहस्ते हस्तः सार्धस्तु, त्रिहस्ते तु द्विहस्तकः ॥२०२॥
सार्धद्विकर उत्सेधः, प्रासादे वेदहस्तके ।
चतुर्हस्तस्योपरिष्टाद्, यावद् द्वादशहस्तकम् ॥२०३॥
प्रासादस्यार्धमानेन, त्रिभागेन ततः परम् ।
चतुर्विंशतिहस्तान्तं, कारयेत्तद्विचक्षणः ॥२०४॥
पादेनैवोच्छ्रयं तावद्, यावत्पञ्चाशहस्तकम् ।
एवमन्यश्च कर्तव्यो, जगतीनां समुच्छ्रयः ॥२०५॥

भा०टी०—एक हाथना प्रासादनी जगती एक हाथ उंची करवी, बे हाथना प्रासादनी दोढ हाथ, त्रण हाथना प्रसादनी बे हाथ अने चार हाथना प्रासादनी जगती अढी हाथ उंची करवी. चार हाथ पछीथी बार हाथ सुधीना कोइ पण माननो प्रासाद होय तो प्रासादना अर्धमाननी उंचाईवाली जगती करवी, पांच हाथे अढी, छ हाथे त्रण, सात हाथे साढी त्रण, आठ हाथे चार, नवहाथे साढीचार, दशहाथे पांच, अग्यारहाथे साढीपांच, अने बारहाथना प्रासादे जगती छ हाथनी उंचाईमां करवी.

१०८ भागनो मडोवरो—

ते पछी बुद्धिमान शील्पीए १३ थी २४ हाथ पर्यन्त ऊचा प्रासादनी जगती त्रीजाभागे अने २५ थी ५० हाथपर्यन्तनी ऊचाईवाला प्रासादनी जगती प्रासादमानथी चोथा भागनी ऊचाईए करवी, उक्त प्रकारे तथा एवी जुदा प्रकारनी पण जगतीओनी ऊचाई करी शकाय छे

जगतीनी ऊचाईनो त्रीजो प्रकार—

प्रासादार्धोऽर्कहस्तान्ते, त्र्यंशा द्वाविंशतिकरे।
द्वात्रिंशदन्ते तुर्यांशा, भूतांशा च शतार्धके ॥२०६॥

भा०टी०—१ थी १२ हाथ सुधीना मानना प्रासादोनी जगती प्रासादना विस्तारथी अर्धमाननी, १३ थी २२ हाथ सुधीना प्रासादोनी प्रासादना त्रीजा भागनी, २३ थी ३२ हाथ सुधीना प्रासादोनी प्रासादना चोथा भागनी अने ३३ थी ५० हाथ सुधीना प्रासादोनी जगती प्रासादमानना पांचमा भाग जेटली ऊची करवी, १२ हाथ सुधी प्रतिहाथे १२ आंगलनी, २२ हाथ सुधी ८ आंगलनी, ३२ हाथ सुधी ६ आंगलनी अने ५० हाथ सुधी पोणा पांच आंगलनी हाथप्रति वृद्धि करवी.

खरशिला—

जगती जेटली ऊची लेवी होय तेटली लईने तेनो उपरनो भाग पत्थरो वडे अथवा इंट चूना वगेरेथी अत्यंत दृढ बनाववो, आ उपरितन भागने अतिशय कठोर होवाना कारणे शिल्पशास्त्रकारोए 'खरशिला' ए नामथी वर्णव्यो छे, ए संबन्धमां प्रासाद मंडनकार लखे छे—

अतिस्थूला सुविस्तीर्णा, प्रासादधारिणी शिला।
अतीव सुदृढा कार्या, ईष्टका-चूर्ण-वारिभिः ॥२०७॥

भा०टी०—प्रासादने धारण करनारी खरशिला घणी जाडी अने विस्तारवाली करवी, इंट चूना अने जल वडे एने अत्यंत मजबूत बनाववी.

आ खरशिलानुं दल प्रासादना प्रमाणमां ओछुंवत्तु जाडुं करवुं, सामान्य रीते १६ आंगलनी जाडाईमां आ शिला करवी. पण प्रासाद बहुज न्हानो होय तो एथीये ओछी जाडी करवी, जेमके प्रासाद १ हाथनो होय तो खरशिला ६ आंगल जाडी करवी, पण ते पछी ५ हाथ पाछल १-१ आंगलनी वृद्धि करवी, अर्थात् २ हाथनो होय तो ७ आंगल, ३ हाथे ८ आंगल, ४ हाथे ९ आंगल अने ५ हाथे १० आंगल जेटली खरशिला जाडी करवी, ६ थी ९ हाथ सुधीना प्रासादनी खरशिलानी जाडाईमां हाथ प्रति अर्ध अर्ध आंगलनो वधारो करवो, १० थी २० हाथ सुधी पाव आंगलनी अने २१ थी ५० हाथ सुधीमां हाथ दीठ १-१ जवनी (शिलाना पिंडमां) वृद्धि करवी. आ प्रमाणे करतां ५० हाथना प्रासादनी खरशिला २० आंगल जाडी थशे.

जगतीनी आसपासना प्रदेशनी भूमि जो नीची होय अने भविष्यमां जलभयनी संभावना होय तो जगती उपर मूलप्रासादना स्थाने प्रथम उपपीठ चणाववुं.

उपपीठनो विस्तार अने छन्द तो पीठना जेवो ज कराववो, पण एनो उंचाईनो नियम नथी, जेटली आवश्यकता होय तेटली उंचाईमां करवी; उपपीठ होय तो तेनी उपर अने तेना अभावमां जगती उपर प्रासादना मूलस्थाने सूत्र छांटीने ९ अथवा ५, जेटली शिलाओ प्रतिष्ठित करवी होय तेटला खाडाओ प्रथमथी ज राखवा, निधिकलशो राखवा माटे खाडाओमां बीजा न्हाना खाडाओ राखवा, अथवा नीचे न्हाना खाडावाली उपशिलाओ गोठववी, शुभ मुहूर्ते निधिकलशो अने शिलाओनी प्रतिष्ठा करीने उपपीठ अथवा जगती

उपरना ते खाडाओ बराबर करी देवा अने पछी प्रासादनु चणतर शरु करता प्रथम भीटनो थर चणवो

भीट—

पीठ नीचे अने खरशिला उपर वच्चे जे थर आवे छे तेने शिल्पशास्त्रो 'भिट्ट' ए नामथी उल्लेखे छे. भीटनो पिंड (जाडाई) प्रासादना मानानुसारे ओछोवत्तो होय छे. शास्त्र कहे छे—

शिलोपरि भवेद् भिट्ट,-मेकहस्ते युगाङ्गुला ।
अर्धाङ्गुला भवेद्, वृद्धिर्यावद्धस्तशतार्धकम् ॥२०८॥
अङ्गुलेनांशहीनेन, अर्धेनाऽर्धेन च क्रमात् ।
पञ्चदिक्-विंशतिर्यावच्छतार्धं च विवर्धयेत् ॥२०९॥

भा०टी०—खरशिला उपर भीट होय छे, के जेनी जाडाई एक हाथना प्रासादे ४ आंगलनी होय छे अने ते पछी ५० हाथ सुधी हाथ प्रति अर्ध आंगलनी वृद्धिए पिंड रचाय छे, त्रीजी रीते १ हाथथी ५ हाथ सुधी एक आंगलनी, ६ थी १० सुधी पोणाआंगलनी ११ थी २० सुधी अर्ध आंगलनी अने २१ थी ५० सुधी पाव आंगलनी वृद्धिए भीटनो पिंड राखवो भीट एक बे अने त्रण पर्यन्त होइ शके छे, पहेलाथी बीजुं अने त्रीजाथी त्रीजु भीट उचाईमां ओछुं करवु, तेमज जे भीटनी जेटली उंचाई होय तेना चोथा भाग जेटलो तेनो निर्गम (निकालो) करवो, भीट उपर पीठनुं चणतर करवुं.

पीठ—

पीठ अनेक प्रकारना होय छे. प्रासादना मानने अनुसारे पीठनी मांडणी कराय छे, प्रासाद म्होटा माननो होय तो तेनी उंचाई अधिक होवाथी पीठना सामान्य थरो उपर गजथर-अश्वथर आदि बीजा थरो देइने तेने महापीठ बनावाय छे, पण प्रासादमान कनिष्ठ होय अने थोडा खर्चमां काम पतावबुं होय तो पीठ पण त्रण अथवा पांच साधारण थरोवालुं बनावाय छे शास्त्रमां कह्यु छे के—

गजाश्वनरपीठाद्य-मल्पद्रव्ये न संभवेत् ।
जाड्यकुम्भश्च कर्णाली, प्रशस्ता सर्वकामदा ॥२१०॥
जाड्यकुम्भः कर्णकश्च, ऊर्ध्वं वै शीर्षपत्रिका ।
शिरःपाली विना त्वेवं, कर्णपीठं तु कारयेत् ॥२११॥

भा०टी०—थोडा धनमां गजथर अश्वथर नरथरादि रूपवालुं पीठ बनवुं संभवित नथी, माटे एवी स्थितिमां जाडंबो अने कणी पण तेवा अल्प द्रव्यवाला भक्तोनी इच्छा पूर्ण करी शके छे, अर्थात् जाडंबा अने कणीना थरो वडे पण पीठ बनावी शकाय छे. जाडंबो कणी अने उपर ग्रासपट्टी; आ थरोवालुं अथवा केवल जाडंबा-कणीथी बनेलुं पीठ 'कर्णपीठ' नामथी ओलखाय छे.

पीठनो उदय—

पीठनो उदय प्रासादना मान प्रमाणे अधिक ओछो होय छे, कनिष्ठ मानना प्रासादे पीठनो उदय तेना प्रमाणमां अधिक होय छे, पण जेमजेम प्रासादनुं मान अधिक होय तेम तेम पीठनुं मान ओछुं थतुं जाय छे. अपराजित पृच्छामां कह्युं छे के:—

एकहस्ते तु प्रासादे, पीठं वै द्वादशाङ्गुलम् ।
द्व्यष्टाङ्गुलं द्विहस्ते च, त्रिहस्तेऽष्टादशाङ्गुलम् ॥२१२॥
अर्धं पादं त्रिभागं वा, त्रिविधं परिकल्पयेत् ।
त्र्यंशोनार्धेन पादेन, चतुर्हस्ते सुरालये ॥ २१३ ॥
पादः पीठोच्छ्रयः कार्यः, प्रासादे पञ्चहस्तके ।
पञ्चोर्ध्वं दशपर्यन्तं, रसांशो हस्तवृद्धये ॥ २१४ ॥
ततो हस्ते चाष्टमांशो, वृद्धिः स्याद् विंशत्यवधि ।
षट्त्रिंशदन्ता वृद्धिस्तु, हस्ते वै द्वादशांशिका ॥२१५॥
चतुर्विंशत्यंशिका त,-दूर्ध्वं यावच्छतार्धकम् ।
मध्ये न्यूनेऽधिके पञ्च-मांशो ज्येष्ठं कनिष्ठकम् ॥२१६॥

त्रिज्येष्ठमिति च ख्यात, त्रिमध्यं त्रिकनिष्ठकम्।
तस्याभिधान वक्ष्येद्-मुदितं नवधोच्छ्रयात् ॥२१७॥

भा०टी०—१ हाथना प्रासादने पीठ १२ आगलनुं करवुं, २ हाथे १६ अने ३ हाथे १८ आगलनु पीठ करवु, अर्थात् आ त्रणे प्रासादोने अनुक्रमे पोताना अर्धा भागे, त्रीजा भागे अने चोथा भागे पीठ करवुं, ४ हाथना प्रासादने एना मानथी एक तृतीयांश हीन, अर्धमाने, अथवा चोथा भागे उचु पीठ करवु; पाच हाथना प्रासादने तेना चोथा भागे अर्थात् ३० आगलनुं पीठ करवु, ६ थी १० हाथ सुधीना प्रासादोना पीठोमा ४ आगलनी वृद्धि करवी, ११ थी २० हाथ सुधी प्रतिहस्ते ३नी, २१ थी ३६ हाथ सुधी प्रतिहस्ते २ नी अने ३७थी ५० हाथ सुधी प्रतिहस्ते १ आगलनी पीठना उदयमा वृद्धि करवी

पीठनु उक्त मध्यमान छे, आमांथी पोतानो पञ्चमांश ओछो करवाथी ज्येष्ठ (कनिष्ठ) अने उमेरवाथी कनिष्ठ (ज्येष्ठ) पीठ बने छे.

उपर्युक्त ज्येष्ठ, मध्यम अने कनिष्ठ, आ प्रत्येकना ज्येष्ठज्येष्ठ, ज्येष्ठमध्यम अने ज्येष्ठकनिष्ठ, मध्यमज्येष्ठ, मध्यममध्यम अने मध्यमकनिष्ठ तथा कनिष्ठज्येष्ठ, कनिष्ठमध्यम अने कनिष्ठकनिष्ठ, आम ३-३ भेद पाडता उदय ९ प्रकारनो थाय छे. अने उदयना भेदे पीठ पण ९ प्रकारना बने छे, जेना नामो आ प्रमाणे छे—

शुभद सर्वतोभद्र, पद्मक च वसुन्धरम्।
सिंहपोठ तथा व्योम, गरुड हंसमेव च ॥ २१८ ॥

वृषभं यत् भवेत्पीठ, मेरोराधारकारणम्।
पीठमानमिद ख्यातं, प्रासादे आदिमीमया ॥२१९॥

भा०टी०—१ शुभदपीठ, २ सर्वतोभद्रपीठ, ३ पद्मपीठ, ४ वसुन्धरपीठ, ५ सिंहपीठ, ६ व्योमपीठ, ७ गरुडपीठ, ८ हंसपीठ

अने ९ वृषभपीठ; आ छेल्लुं वृषभपीठ मेरु प्रासादने होय छे, आम प्रासादनी आदि सीमा, एटले तेना विस्तारने अनुसारे पीठोनुं मान कह्युं.

नवपीठोनां नामो अने अंगुलात्मक मान—

१ हाथना प्रासादना ज्येष्ठज्येष्ठ पीठनुं नाम 'शुभद' अने मान १२ आंगलनुं.

२ हाथना प्रासादना ज्येष्ठमध्यम पीठनुं नाम 'सर्वतोभद्र' अने मान १६ आंगलनुं.

३ हाथना प्रासादना ज्येष्ठकनिष्ठ पीठनुं नाम 'पद्मपीठ' अने मान १८ आंगलनुं.

४ हाथना प्रासादना मध्यमज्येष्ठ पीठनुं नाम 'वसुन्धर' अने मान २४ आंगलनुं.

५ हाथना प्रासादना मध्यममध्यम पीठनुं नाम 'सिंहपीठ' अने मान ३० आंगलनुं.

६ थी १० हाथना प्रासादोना मध्यमकनिष्ठ पीठनुं नाम 'व्योमपीठ' अने मान ६ हाथे ३४, ७ हाथे ३८, ८ हाथे ४२, ९ हाथे ४६ अने १० हाथे ५० आंगलनुं होय छे.

११ थी २० हाथ सुधीना प्रासादोना कनिष्ठज्येष्ठ पीठनुं नाम 'गरुडपीठ' अने मान ११ हाथे ५३, १२ हाथे ५६, १३ हाथे ५९, १४ हाथे ६२, १५ हाथे ६५, १६ हाथे ६८, १७ हाथे ७१, १८ हाथे ७४, १९ हाथे ७७, अने २० हाथे ८० आंगलनुं राखवुं.

२१ थी ३६ हाथना प्रासादोना कनिष्ठमध्यम पीठनुं नाम 'हंसपीठ' छे अने मान २१ हाथे ८२, २२ हाथे ८४, २३ हाथे ८६, २४ हाथे ८८, २५ हाथे ९०, २६ हाथे ९२, २७ हाथे ९४, २८ हाथे ९६, २९ हाथे ९८, ३० हाथे १००, ३१ हाथे १०२,

३२ हाथे १०४, ३३ हाथे १०६, ३४ हाथे १०८, ३५ हाथे ११०, अने ३६ हाथना प्रासादे ११२ आंगलनी ऊंचाईनुं पीठ जाणवुं.

३७ थी ५० हाथ सुधीना प्रासादोना कनिष्ठकनिष्ठ पीठनु नाम 'वृषभपीठ' अने मान ३७ हाथे ११३, ३८ हाथे ११४, ३९ हाथे ११५, ४० हाथे ११६, ४१ हाथे ११७, ४२ हाथे ११८, ४३ हाथे ११९, ४४ हाथे १२०, ४५ हाथे १२१, ४६ हाथे १२२, ४७ हाथे १२३, ४८ हाथे १२४, ४९ हाथे १२५ अने ५० हाथना प्रासादे पीठमान १२६ आंगलनु होय.

लतिनादि ५ प्रासादोनां पीठोनो उदय–

अपराजित पृच्छा—

विभक्ते चैकविंशत्या, प्रासादस्य समुच्छ्रये ।
पीठानि पञ्च पञ्चादे-नंवान्तं भागवृद्धितः ॥२२०॥
लतिने चाथ सान्धारे, नागरे मिश्रके पि वा ।
विमाने पि समाख्यात', पीठमानसमुच्छ्रयः ॥२२१॥

भा०टी०—प्रासादना उदयना २१ भाग करवा, ते एकवि-शिया ५ भागथी ९ भाग सुधीना उदयमाला अनुक्रमे लतिन आदि ५ प्रासादोने माटे ५ पीठो करवा, लतिनने ५ भाग, सान्धारने ६ भाग, नागरने ७ भाग, मिश्रकने ८ भाग अने विमानने ९ भाग जेटलो पीठनो उदय करवो

पीठोदयना भागो—

त्रिपञ्चाशत्समुत्सेधे, द्वाविंशत्यशनिर्गमे ।
नवांशो जाड्यकुम्भश्च, सप्तांश कर्णक भवेत् ॥२२२॥
सान्तर छाद्यिका युक्ता, सप्तांशा ग्रासपटि(ट्टि)का ।
सूर्यदिग्वसुभागाश्च, गजवाजिनराः क्रमात् ॥२२३॥

वाजिस्थानेऽथवा कार्यं, स्वस्वदेवस्य वाहनम् ।

भा०टी०—उदयमां ५३ भाग अने निर्गममां २२ भागवाला पीठमां जाडंबो ९ भागनो, अंत्रोट सहित कणी ७ भागनी, छाजली सहित ग्रासपट्टि ७ भागनी, गजथर १२ भागनो, अश्वथर १० भागनो अने नरथर ८ भागनो उंचो करवो, अथवा अश्वथरना स्थाने पोतपोताना देवना वाहननो थर करवो.

अपराजितपृच्छामां निर्गमनुं प्रमाण—

जाड्यकुम्भः पञ्चभागः, कर्णाली चाष्टभागिका ।
गजपीठं चतुर्भागं, त्रिभागं वाजिपीठकम् ॥२२४॥
नरपीठं द्विभागं च, कर्तव्यं शुभलक्षणम् ।
खुरकाज्जाड्यकुम्भान्तं, द्वाविंशद्भागनिर्गतम् ॥२२५॥

भा०टी०—जाडंबो ५ भाग, कणी ८ भाग, गजपीठ ४ भाग, अश्वपीठ ३ भाग अने नरपीठ २ भाग जेटलुं निर्गमे करवुं, आम पीठ उपरना खुराथी जाडंबो २२ भाग जेटला निर्गमे करवो.

गजथरादि विनानुं पीठ होय तो तेना उदयना २३ भाग करीने जाडंबो ९ भाग, कणी ७ भाग अने ग्रासपट्टी ७ भाग उदयमां करवी. एज प्रमाणे निर्गमना २२ भागोमांथी गजादि थरोना ९ भागो ओछा करी निर्गम १३ भागनो करवो, तेमां जाडंबो ५ भागनो अने कणी ८ भागनी निर्गमे करवी, जो ग्रासपट्टी थरमां हाय तो पण निर्गम तो १३ भागनो ज करवो, जाडंबो ५ भागना निर्गमे करी कणी अने ग्रासपट्टी बंने समसूत्रे ८ भाग जेटली निर्गमे करवी.

प्रासादनो उदय—

१ ला प्रकारनो उदय—

पीठ उपरथी प्रासादनां चणतरनो प्रारंभ थाय छे, प्रासादना

माननें अनुसारे तेनो उदय अधिक ओछो करवानुं विधान छे, १ हाथथी माडीने ५० हाथ सुधीना मानना प्रासादो होय छे, एमा ओछा मानना प्रासादोनो उदय अधिक अने अधिकमानना प्रासादोनो उदय ओछो करवामां आवे छे, छेल्ला ५० हाथना प्रासादनो उदय मात्र २५ अथवा तो २६ हाथनो होय छे, ज्यारे कनिष्ठमा कनिष्ठ २५ आगलना प्रासादनो ३३ अने ज्येष्ठमाने ३८ आगलनो उदय थइ शके छे, ए विषे अपराजित पृच्छानुं विधान—

एकहस्ते तु प्रासादे, त्रयस्त्रिंशद्भिरङ्गुलैः ।
द्विहस्ते तु प्रकर्तव्यः, पञ्चपञ्चाशदंगुलैः ॥२२६॥
सप्तसप्तत्यंगुलैश्च, प्रासादे तु त्रिहस्तके ।
चतुर्हस्ते तु प्रासादे, एकोनशतसङ्ख्यकैः ॥२२७॥
प्रासादे पञ्चहस्ते मे-कविंशतिशतांगुलैः ।
पञ्चहस्तान्ततो वृद्धि,-र्ह्रस्व कुर्यात्तदूर्ध्वतः ॥२२८॥
पञ्चहस्तादूर्ध्वतश्च, यावत्स्यान्नवहस्तकम ।
ह्रस्वं हस्तार्धभागेन, पञ्चोर्ध्वं च नवान्तकम ॥२२९॥
तदूर्ध्वे त्रयोदशान्तं, पादभागं परित्यजेत् ।
अष्टमांश ततो ह्रस्व, यावद्विंशतिहस्तकम् ॥२३०॥
ततो द्वात्रिंशदंश च, ह्रस्व यावच्छताधकम् ।
महागन्त कुंभकादे,-रुच्छ्रयो नागरे मतः ॥२३१॥

भा०टी०—एक हाथना प्रासादनो उदय १ हाथ ९ आगलनो करवो, २ हाथना प्रासादे २ हाथ ७ आगल, ३ हाथे ३ हाथ ५ आगल, ४ हाथे ४ हाथ ३ आगल, अने ५ हाथे ५ हाथ १ आगलनो प्रासादनो उदय करवो, आम पाच हाथ सुधी तो व्यास थकी उदय अधिक छे, पण पाच हाथ उपरना मानना प्रासादोमा व्यासनी अपेक्षाए उदयमान ओछु थतुं जाय छे, ६ हाथथी ९ हाथ सुधीना प्रासा-

विंशत्यन्तं दशोर्ध्वं च, वृद्धिः सूर्यांगुलैर्भवेत् ।
त्रयोदशकराः सप्ता-ङ्गुलं विंशतिहस्तके ॥२३६॥
अत ऊर्ध्वं पुनर्वृद्धि-र्हस्ते हस्ते करार्धतः ।
त्रिंशद्धस्ते सप्तांगुलं, हस्ता अष्टादशैव च ॥२३७॥
ऊर्ध्वं पञ्चाशदन्तं च, हस्ते हस्ते नवांगुलाः ।
कराणां वै सार्धपञ्च-विंशतिश्च शतार्धके ॥२३८॥
एकोनविंशत्यंगुला, कामदा च तदग्रतः ।
एषा युक्तिर्विधातव्या, प्रासादस्योत्तमोदये ॥२३९॥
नागरे लतिने चैव, सान्धारे चैव मिश्रके ।
विमान-नागर-छन्दे, कुर्याद्विमानपुष्पके ॥२४०॥
कुंभकादि-प्रहारान्तं, प्रयुक्तं वास्तुवेदिभिः ।
तदधस्तात्तु पीठं स्या-दूर्ध्वं च शिखरोदयः ॥२४१॥
विस्तारसम उत्सेधे, यावत् प्रथमभूमिका ।
शृंगं कूटोदयं त्यक्त्वा, शेषं मंडोवरो भवेत् ॥२४२॥

भा०टी०—१ हाथना प्रासादे ३३ आंगलनो उदय, २ हाथे ५५, ३ हाथे ७७, ४ हाथे ९९ अने ५ हाथे १२१ आंगलनो उदय जाणवो. आम ५ हाथ सुधी ह्रास करवा छतां प्रासादना विस्तारथी उदय कंइक अधिक होय, पण ते पछी प्रत्येक विस्तारना हाथप्रति उदयमां ह्रास ज थतो जाय, पांच पछी ६ थी ९ पर्यन्त प्रतिहाथे उदयमां १४-१४ आंगलनी वृद्धि करवी, अर्थात् १०-१० आंगलनो ह्रास करवो. १० हाथना प्रासादनो उदय ८ हाथनो करवो, दश उपरान्त २० हाथ सुधी प्रतिहस्ते १२-१२ आंगलनी वृद्धि करवी, एटले के १२-१२ आंगलनो ह्रास करवो, २० हाथना प्रासादने १३ हाथ अने ७ आंगलनो उदय करवो.

ए पछी ३० हाथ सुधी फरि १२-१२ आंगलनी प्रतिहस्त

वृद्धि करवी, अर्थात् १२-१२ आगलनो ह्रास करवो, ३० हाथना प्रासादनो उदय १८ हाथ अने ७ आंगलनो करवो, त्रीस पछी ५० हाथ सुधीना विस्तारना प्रासादोमा प्रति हस्ते उदय ९-९ आगलनो वधारवो, अर्थात् १५-१५ आगलनो ह्रास करवो, आम करता ५० हाथना प्रासादनो उदय २५॥ हाथनो थशे

उक्त उदयमानमा १९ आगलनो उमेरो करवाथी २६ हाथ ७ आगलनो उत्तमोदय थशे, नागर, लतिन, साधार, मिश्रक, विमान नागर अने विमानपुष्पक जातिना प्रासादोने उपर प्रमाणे उदय करवो,

वास्तुशास्त्रना जाणकारोए आ उदय कुंभक थरना प्रारभथी प्रहार थर पर्यन्तनो करवानु कह्यु छे, केमके कुभकने नीचे पीठ अने प्रहारने उपर शिखरनो उदय होय छे

जे प्रासादना विस्तारनो जेटलो उदय होय त्यां सुधी ते प्रासादनी पहेली भूमिका जाणवी, उपरनां शृंगो अने कूटोनो उदय वाद करतां नीचेनुं मंडाण 'मडोवर'ना नामथी ओलखाय छे

त्रीजा प्रकारनो उदय—

एकादिपञ्चहस्तान्त, पृथुत्वेनोदयः समः ।
हस्ते सूर्यांगुला वृद्धि-र्यावत् त्रिंशत्करावधि ॥२४३॥
नवागुला करे वृद्धि-र्याव द्धस्तशतार्धकम् ।
पीठोर्ध्वं उदयश्चैव, छाद्यान्तो नागरादिषु ॥२४४॥

भा०टी०—१ थी ५ हाथ पर्यन्त विस्तारना जेटलो उदय होय, ए पछी ३० हाथ सुधीना प्रासादोमा विस्तारना प्रतिहाथे उदयमा १२-१२ आगलनी वृद्धि करवी, आ मत प्रमाणे ३० हाथना प्रासादे १७ हाथ १२ आगलनो उदय थशे, ३१ थी ५० हाथ सुधी प्रतिहस्ते उदयमा ९-९ आगलनी वृद्धि करवी, आम करता ५० हाथना प्रासादनो उदय २५ हाथनो थशे, नागरादि प्रासादोनो उदय पीठ उपरथी छाजा पर्यन्तनो गणाय छे,

चोथा प्रकारे प्रासादोदय—

आ उदयमानने ३ जा प्रकारना उदयमाननी साथे थोडोक मतभेद छे, १ थी ३ हाथ सुधीनुं मान १ ला २ जा मानने मलतुं छे, ४ हाथथी एनुं मान जुदुं पडे छे. ४ हाथे ४ हाथ १ आंगल, ५ हाथे ५ हाथ, ६ हाथे ५ हाथ २२ आंगल, ७ हाथे ६ हाथ १७ आंगल, ८ हाथे ७ हाथ ८ आंगल, ९ हाथे ७ हाथ १९ आंगल, १० हाथे ८ हाथ, १५ हाथे १० हाथ ६ आंगल, २० हाथे १२ हाथ १२ आंगल, २५ हाथे १४ हाथ १८ आंगल, ३० हाथे १७ हाथ, ३५ हाथे १९ हाथ ६ आंगल, ४० हाथे २१ हाथ १२ आंगल, ४५ हाथे २३ हाथ १८ आंगल, अने ५० हाथे २५ हाथनो उदय थाय छे.

पांचमा प्रकारे प्रासादोदय—

१ थी ५ सुधी विस्तार अने उदय समान होय छे, ६ थी १३ हाथ सुधी १२ आंगलनी वृद्धि करवी, १४ थी २१ हाथ सुधी ११ आंगलनी अने २२ थी ५० सुधी हाथ प्रति १०-१० आंगलनी वृद्धि करवी.

आ मत प्रमाणे १३ हाथना प्रासादे ९ हाथनुं, २१ हाथे १२ हाथ १६ आंगलनुं अने ५० हाथे २५ हाथ २ आंगलनुं प्रासादे उदयमान थाय छे.

छट्ठा प्रकारनो प्रासादोदय—
फेरू ठक्कुरना मते—

इगदुतिचउपणहत्थे, पासाइ खुराउ जा पहारथरो।
नवसत्तपणतिएगं, अंगुलजुत्तं कमेणुदयं ॥२४५॥
इच्चाइ खबाणंते, पडिहत्थे चउदसंगुलविहीणा।
इअ उदयमाण भणिअं, अओ य उड्ढं भवे सिहरं ॥२४६॥

भा०टी०—१, २, ३, ४, ५, हाथना प्रासादोनो उदय अनुक्रमे ९, ७, ५, ३, १ आगल सहित १, २, ३, ४, ५ हाथनो जाणवो, अर्थात् १ हाथे १ हाथ ९ आगल, २ हाथे २ हाथ ७ आगल, ३ हाथे ३ हाथ ५ आगल, ४ हाथे ४ हाथ ३ आगल अने ५ हाथे ५ हाथ १ आगल, प्रासादनो उदय करवो आ मान्यता अपराजितनी साथे अक्षरशः मले छे पण ए पछीनी हस्तवृद्धिनो नियम अपराजितनी मान्यतानी साथे मेल खातो नथी.

फेरुना मते ६ थी ५० हाथ सुधीना प्रासादोना उदयनी वृद्धिनो एक ज नियम छे के प्रतिहस्ते १४ अंगुलनो ह्रास करवो, एटले के-प्रतिहाथ १० आगलनी ज उदयमा वृद्धि करवी, आ नियमानुसारे ६ थी २० हाथ सुधीना प्रासादोनु उदयमान २. ३, ४, ५, मा प्रकारना उदय मानथी ओछु आवे छे.

ठक्कुर फेरुए आ उदयमा विराट अने महार थरोनो उदय समिलित कर्यो छे, ए सूचक वस्तु छे, अपराजितकार स्थले स्थले 'प्रहारान्तं' ए शब्द लखीने एम सूचित करे छे के 'पूर्वे नागरजातिना प्रासादोनो उदय प्रहार थरना मथाळा सुधी गणातो हतो अने तेनो आरंभ कुंभाथी करातो हतो' फेरुए खुराथी प्रारंभ कर्यो ए विचारणीय छे, आ उपरथी अनुमान थाय छे के ते वखते खुरानी उंचाई मंडोवरमा ज नहि पण प्रासादना उदयमां पण प्रविष्ट थइ चुकी हशे

उदयमानमा मतभेद—

अपराजित पृच्छाना मते आ उदय कुंभाथरथी छाजानी उपर आवता प्रहारथर सुधीनो गण्यो छे, वास्तुसारमा ठक्कुर फेरुए 'खुरकुंभ' इत्यादिथी शरु करी 'वइराड पहार तेर थर' अहियां सुधीनो मंडोवरो मान्यो छे, फेरुए 'खुरा'ने मंडोवरमां गण्यो छे

ज्यारे अपराजितकारे मंडोवराना १४४ भागोमां खुराना पण ५ भागो सामेल गण्या छे, छतां ज्यां ज्यां उदयनो प्रसंग आव्यो छे, खुराने तेमां गण्यो नथी, पण वैराट, प्रहार थरोने गण्या छे. प्रासाद-मंडनमां खुराथी छाजा पर्यन्तनो ज मंडोवरो अने तेनी उंचाईने ज उदय मान्यो छे, एटले खुराने ग्रहण करीने छाजा उपरना पूर्वोक्त २ थरोने छोडी दीधा छे, आजना शिल्पिओ पण उदय अने मंडो-वरानो हिसाब प्रासादमंडन प्रमाणे ज गणे छे, जे अपराजितथी विरुद्ध जाय छे. भूमिजप्रासादना मंडोवरामां अपराजित पृच्छाकार कुंभाथी छाद्यान्त 'शीर्षोदय' करवानुं विधान करे छे, अने त्यां खुराना थरने पीठमां गणवानो स्पष्ट निर्देश पण करे छे, जुओ—

भूमिजे चैव प्रासादे, वराटे च विमानके।
विस्ताराच्च समुत्सेध-पर्यन्तं चाद्यभूमिका ॥२४७॥
शृंगकूटोदयं त्यक्त्वा, तन्मध्ये तु विचक्षणैः।
शीर्षोदयो विधातव्य-श्छाद्यान्तं कुंभकादितः ॥२४८॥

भा०टी०—भूमिज, वराट, अने विमान जातिना प्रासादना विस्तार जेटला उदयमां प्रथम भूमिका पूरी थाय छे, शृंग अने कूटोदयने उपर छोडीने विचक्षण शिल्पिए कुंभाथी छाजा सुधीना मध्यभागमां शीर्षोदय (प्रासादना मस्तकनी उंचाई) करवो.

ए पछी थरवालाओना भागांक लखना ग्रन्थकार कहे छे—

"खुरकं पीठ मध्ये तु," अर्थात् 'खुराने पीठमां गणी कुंभादि स्तरोमां उदयना भागांक गणवा'

उपरना विवेचनथी समजाशे के अपराजित नागर जातिना मंडोवरानी उंचाईमां खुराने गणनामां लेता हता पण प्रासादनो उदय तो ते कुंभाथी ज आरंभ करता अने प्रहार सुधीना थरोने उदयमां गणी लेता. भूमिजादि प्रासादोना मंडोवरामां ते खुराने तेम छाजा

उपरना थरोने संमिलित न्होता करता, आधुनिक शिल्पि गणे एनी उपर विचार करवो घटे.

मंडोवराना थरोनी भाग संख्या—
प्रासादमण्डने—

वेदवेदेन्दुभक्ते तु, छाद्यान्ते पीठमस्तकात् ।
खुरकः पञ्चभागः स्या-द्विंशतिः कुम्भकस्तथा ॥२४९॥
कलशोऽष्टौ द्विसार्धं तु, कर्तव्यमन्तरालकम् ।
कपोतिकाष्टौ मञ्ची स्यात्, कर्तव्या नवभागिका ॥२५०॥
पञ्चत्रिंशत्पदा जंघा, तिथ्यंशैरुद्गमो भवेत् ।
वसुभिर्भरणी कार्या, शिरःपट्टी दशांशिका ॥२५१॥
अष्टांशाऽथ कपोतालि-र्द्विसार्धमन्तरालकम् ।
छाद्यं त्रयोदशांशोच्च, दशभागैर्विनिर्गमः ॥२५२॥

भा०टी०—पीठना मथाळाथी छाजा सुधीनी उंचाईना १४४ भाग कल्पी, खुरो भाग ५, कुंभो २०, कलश ८, अंतराल २॥, केवाल ८, माची ९, जंघा ३५, दोढियो १५, भरणी ८, शरावटी १०, मालाकेवाल ८, अंतराल २॥ अने छाजु १३ भागनु उंचु करवु, छाजानो निर्गम १० भागनो करवो.

१०८ भागनो मंडोवरो-

खुरकं च चतुर्भागं, कुम्भकं दशपञ्चकम् ।
कलशं चापि षड्भागं, त्रिभागाऽन्तरपत्रकम् ॥२५३॥
कपोतालीं च षड्भागां, मञ्चिकामपि तादृशीम् ।
द्वात्रिंशत्पदिकोच्छ्राया, जंघा कुर्याद् विचक्षणः ॥२५४॥
उद्गमं रुद्रभागं च, रुपि-त्रांशैरन्तरूकम् ।
भरणी चैव षड्भागा, कपोताली षडेव तु ॥२५

त्रिभागान्तरपत्रं च, कर्तव्यं तु विचक्षणैः ।
खूटछाद्यं च दिग्भागं, सप्तभागविनिर्गमम् ॥२५६॥

भा०टी०—(१०८ भागना मंडोवरामां) विद्वान् शिल्पीए खुरक ४ भाग, कुंभक १५ भाग, कलश ६ भाग, अंतरोट ३ भाग, केवाल ६ भाग, मांची पण ६ भाग, अने जंघा ३२ भागनी ऊंची करवी, ११ भागनो मकरमुखोथी शोभतो दोढियो, भरणी ६ भाग, माला-केवाल ६ भाग, अंतराल ३ भाग, अने छाजुं १० भाग ऊंचुं अने ७ भागना निकाले करवुं.

२७ भागनो मंडोवरो–प्रासादमण्डने–

पीठतश्छाद्यपर्यन्ते, सप्तविंशतिभाजिते ।
द्वादशानां खुरादीनां, भागसंख्या क्रमेण तु ॥२५७॥

१ ४ १॥ ॥ १॥ १॥ ८ ३
स्यादेक वेद सार्धार्ध-सार्ध सार्धाष्टभिस्त्रिभिः ।
१॥ १॥ ॥ २॥
सार्धसार्धाऽर्ध भागैः, स्याद्, द्विसार्धैर्द्व्यंशनिर्गमः ॥२५८॥

भा०टी०—पीठथी छाजा पर्यन्तना मंडोवराना २७ भागो कल्पीने खुरादि १२ थरोनी भागसंख्या अनुक्रमे आ प्रमाणे राखवी, खुरो १, कुंभो ४, कलशो १॥, अंतराल०॥, केवाल १॥, मांची १॥, जंघा ८, दोढियो ३, भरणी १॥, मालाकेवाल १॥, अंतराल०॥, अने छाजुं २॥ भागनुं उंचुं करवुं, छाजानो निकालो २ भागनो करवो.

ठक्कुर फेरुना मते २५ भागनो मंडोवरो–

खुर-कुंभ-कलस-कठूवालि,–मञ्चीजंघा य छज्जि उरजंघा ।
भरणि-सिरवट्टि-छज्जय, वइराड पहार तेर थरा ॥२५९॥
इग तिय दिवड्ढु तिसु कमि, पण सड्ढा इग दु दिवड्ढ दिवढोअ ।
दो दिवड्ढु दिवड्ढु भाया, पणवीसं तेर थरमाणं ॥२६०॥

भा०टी०—खुरो, कुंभो, कलसो, केवाल, मांची, जंघा,

छाजली, उरजघा (दोढिओ), भरणी, शरावटी, छाजुं, निराट अने प्रहार; आ १३ थरो प्रासादोना मंडोवरोमां होय छे. आ थरोनी भाग संख्या अनुक्रमे नीचे प्रमाणे राखवी—१,+३,+१॥,+१॥,+१॥,+५॥,+१,+२,+१॥,+१॥,+२,+१॥,+१॥=२५. ए उपरांत मेरुमंडोवरो, चतुर्मुख मंडोवरो, आदि अनेक प्रकारना मंडोवराओनुं शास्त्रमां निरूपण छे पण ते सर्वनुं वर्णन करवाने अत्र अवकाश नथी

गर्भगृहोच्छ्रयः—अपराजितपृच्छायाम्—

कुंभी तु कुम्भके ज्ञेया, स्तम्भो ज्ञेयस्तथोद्‌गमे ।
भरणं भरण्या ज्ञेयं, कपोताल्या तथा शिरः ॥२६१॥

अधस्तात्कूटछाद्यस्य, कुर्यात् पट्टस्य पेटकम् ।
अर्धोदयं करोटं च, कर्तव्यं विधिपूर्वकम् ॥२६२॥

भा०टी०—कुंभाने मथाळे कुंभीनुं, दोढियाने मथाळे स्तंभनुं, भरणीने मथाळे भरणानुं, अने मालांकशालने मथाळे शिरानुं मथाळुं मेलवयुं. शिरा उपर पाटानुं पेटक छाजानी निचली फरके गोठवयुं अने विस्तारना अर्धा उदयमां विधिपूर्वक करोटक करवुं.

गर्भगृहोच्छ्रय जाणवानी बीजी रीति—

अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि, मानं गर्भगृहस्य च ।
प्रासादानां बृहन्मानं, वत्स ! विज्ञायते यतः ॥२६३॥

गर्भव्यासः सपदंशः, सपादः सार्ध एव च ।
पादोनांशाधिको वा पि, ज्येष्ठ मध्य कनिष्ठकः ॥२६४॥

तत्रोदयेऽष्टभिर्भक्ते, भागेनैकेन कुंभिका ।
स्तंभः सार्धचतुष्कांशो, भागस्तु थालको भवेत् ॥२६५॥

शीर्षकं भागमेकं तु, अर्धः पट्टसमुच्छ्रयः ।
गर्भव्यासार्धमानेन, कुर्यात पद्मशिलोदयम् ॥२६६॥

न कर्तव्या दर्दरिका, पञ्च-सप्तमथोचिते ।
अनेनैव प्रकारेण, कुर्याद् गर्भगृहोच्छ्रयम् ॥२६७॥

भा०टी०—हे अपराजित! हवे गर्भगृहनी ऊंचाईनुं बीजुं मान कहुं छुं ते सांभल, जेथी बृहत् प्रासादोना गर्भगृहनो उदय जाणी शकाय.

गर्भगृहना विस्तारने स्वषड्भाग युक्त करवाथी अथवा सवायो, दोढो, पोणबमणो करतां जे प्रमाण थाय तेटला प्रमाणनो उदय ज्येष्ठ-मध्यम-कनिष्ठ-प्रासादोना गर्भगृहनो जाणवो, अर्थात् ज्येष्ठ प्रासादोना गर्भ विस्तारथी तेनो उदय षडंश युक्त अथवा चतुर्थांश युक्त करवो, मध्यम मानना प्रासादोना गर्भ विस्तारथी तेओनो उदय दोढो करवो अने कनिष्ठ मानना प्रासादोना गर्भ विस्तारथी तेनो गर्भगृहोच्छ्रय पोणबमणो करवो.

उक्त गर्भोदयने ८ थी भांगी १ भागनी कुंभी, ४॥ भागनो थांभलो, १ भागनो थालक, १ भागनुं शरुं अने ०॥ भागनो पाट ऊंचो करवो, अने ते पछी पाटो उपर खूणिया नाखीने गर्भगृहना विस्तारना अर्ध भाग जेटली ऊंची जाय एवी रीते पद्मशिला ढांकी करोटक करवुं, पण गर्भगृह उपर पांच सात के गमे तेटला थरनी पण दादरी न करवी, उक्त प्रकारे गर्भगृहनो उच्छ्रय करवो.

उंबरो-अपराजितपृच्छामां—

उदुम्बरं तथा वक्ष्ये, कुंभिकान्तसमुच्छ्रयम् ।
तस्यार्धेन त्रिभागेन, पादेन रहितं तथा ॥२६८॥
उक्तं चतुर्विधं शस्तं, कुर्याच्चैवमुदुम्बरम् ।
अत्युत्तमाश्च चत्वारो, न्यून्या दूष्यास्तथाधिकाः ॥२६९॥

भा०टी०—हवे उंबराने कहुं छुं, उंबरानी ऊंचाई कुंभीना मथाळा सुधी, तेना अर्धभागे, बे तृतीयांशे अथवा पोणा भागे होय

छे, ऊंबरानुं उक्त ४ प्रकारनुं मान अत्युत्तम छे, एथी ओछुं अथवा अधिक मान करवाथी ते दूषित थाय छे

अर्धचन्द्र अने उदुम्बर क्यां मूकवा ?

खुरकोर्ध्वेऽर्धचन्द्रः स्यात्, तदूर्ध्वे स्यादुदुम्बरः ।
उदुम्बरार्धे त्र्यंशे वा, पादे वा गर्भभूमिका ॥२७०॥
मण्डपेषु च सर्वेषु, पीठान्ते रंगभूमिका ।
एषा युक्तिर्विधातव्या, सर्वकामफलोदया ॥२७१॥

भा०टी०—खुरा उपर अर्धचन्द्र शिला मूकी तेना उपर ऊंबरो स्थापन करवो, वली ऊंबराना अर्धभागे, एक तृतीयांशे अथवा चतुर्थ भागे गभारानी भूमि ऊंची लेवी, सर्व मंडपोमा पीठने मथाळे ज रंगभूमि राखवी, पण ऊंची लेवी नहि, आ प्रकारनी युक्ति करवाथी सर्व इच्छाओ पूर्ण करनार प्रासाद थशे.

ऊंबराना अंग विभागो—

द्वारविस्तारत्रिभागेन, मध्ये मन्दारको भवेत् ।
वृत्तं मन्दारकं कुर्यात्, युतं पद्ममृणालकैः ॥२७२॥
मूल-नासिकयोर्मध्ये, स्थाप्यश्चोदुम्बरस्तथा ।
सिंहशाखा मूलनासा-समसूत्रे विचक्षणैः ॥२७३॥
जाड्यकुंभः कर्णमाला, चोर्ध्वे वृत्तं मृणालकम् ।
मन्दारोभयपक्षे तु, कीर्तिवक्त्रद्वयं भवेत् ॥२७४॥
भृकुट्या कुटिलाक्षं च, दंष्ट्राभिः समलङ्कृतम् ।
कर्णोपशृंगैस्तदधः, शाखापत्रैरलङ्कृतम् ॥२७५॥
तलच्छन्दे च शाखा तु, स्यादुदुम्बरपक्षयोः ।
तद्रूपा क्रियते प्राज्ञै-र्निर्गमे पीठसंयुता ॥ २७६ ॥

भा०टी०—ऊंबराना मध्यभागे द्वार विस्तारना त्रीजा भाग

जेटलो मन्दारक बनाववो. मंदारकने गोल अने कमलतंतुओ वडे सुशोभित करवो. चतुर शिल्पिओए बंने मूल नासिकोना मध्य भागमां मूल नासिक तथा सिंह शाखाना समसूत्रे उंबराने स्थापवो, तेना निचला भागमां जाडंबो ने कणी (कर्णमाला) बनाववी, उपरनी गोलाईमां कमलमृणाल करवा. अने मन्दारनी बंने बाजु कीर्तिमुखो करवां, कीर्तिमुखो भृकुटिए कुटिलनेत्रवालां, दाढाओ वडे युक्त, नीचे कर्ण -उपकर्ण शृंगोए शोभित, शाखापत्रोए अलंकृत करवां, बुद्धिमानोए उदुम्बरना बंने छेडाओ पासे तलछंदमां पीठ निर्गमवाली तेवी ज दलविभक्तिवाली शाखा करवी.

अर्धचन्द्रक-प्रासादमण्डने—

खुरकेण समं कुर्या-दर्धचन्द्रस्य चोच्छ्रितिम् ।
द्वारव्याससमं कुर्या-न्निर्गमं च तदर्धतः ॥२७७॥
द्विभागमर्धचन्द्रश्च, भागेन द्वौ गकारकौ ।
शंखपत्रसमायुक्तं, पद्माकारैरलंकृतम् ॥ २७८ ॥

भा०टी०—अर्धचन्द्रनी उंचाई खुरा जेटली, लंबाई द्वारना विस्तार जेटली अने तेनो निर्गम लंबाईथी अर्धो करवो, अर्धचन्द्र-शिलानी लंबाइना बे भागमां वच्चे अर्धचन्द्र करवो, अने एक भाग जेटली जगामां बंने बाजुए बे गगारा करवा; गगारा, शंखो अने पद्मपत्रोए अलंकृत करवा.

नागर-प्रासादद्वारोदय-

अपराजितपृच्छायाम्-

एकहस्ते तु प्रासादे, द्वारं स्यात् षोडशांगुलम् ।
कार्या षोडशनो वृद्धिः, पर्यन्ते च चतुष्करम् ॥२७९॥
गुणांगुलाष्टहस्तान्तं, तत्परं द्व्यंगुला करे ।
पञ्चाशहस्तपर्यन्तं, प्रयुक्ता वास्तुवेदिभिः ॥२८०॥

यान-वाहन-पर्यंके, द्वारे-प्रासादसद्मनाम् ।
दैर्घ्यार्धेन पृथुत्वं स्या-च्छोभनं तत्कलाधिकम् ॥२८१॥

भा०टी०—१ हाथना प्रासादनु द्वार १६ आंगलनु थाय, आ प्रमाणे ज ४ हाथ सुधी द्वारनी ऊंचाईमां हाथे १६ आंगलनी वृद्धि, त्यार हाथ पछी ८ हाथ सुधी प्रत्येक हाथे अथवा तेना त्रिभागे ३ आंगलना हिसाबे वृद्धि करवी अने आठ पछी ५० हाथ पर्यन्त प्रतिहस्ते २-२ आंगलना हिसाबे द्वारनी ऊंचाईमां वृद्धि करवी. यान, वाहन, पलंगो, अने प्रासाद तथा घरना द्वारोमां लंबाईथी विस्तार अर्ध करवो, विस्तार दैर्घ्यना अर्धथी जे आंगल [1]वधु होयतो पण शुभ छे, पण दैर्घ्य विस्तारथी बमणा उपर न होवु जोइये.

क्षीरार्णवनुं नागर-द्वारमान—

एकहस्ते तु प्रासादे, द्वारं च षोडशांगुलम् ।
इयं वृद्धिः प्रकर्तव्या, चतुर्हस्तं यदा भवेत् ॥२८२॥
वेदांगुला भवेद्वृद्धि-र्यावच्च दशहस्तकम् ।
हस्तविंशतिमाने च, हस्ते हस्ते द्वयांगुलम् ॥२८३॥
द्वयंगुला च भवेद्यावत्, प्रासादं त्रिंशहस्तकम् ।
अंगुलैका ततो वृद्धि-र्यावत्पञ्चाशहस्तकम् ॥२८४॥
नागराख्यमिदं द्वार-मुक्तं क्षीरार्णवे मुने ! ।
दशांशेन यदा हीनं, द्वारं स्वर्गं मनोरमे ॥२८५॥
अधिकं च दशांशेन, प्रासादे पर्वताश्रिते ।
तावत् क्षेत्रान्तरं प्रोक्त-मर्हं चादि मुनीश्वर ! ॥२८६॥

---

१ भाजराज्यना किल्लिमी मूलमां आवेल 'कला शब्दनो अर्थ सोळमो भाग' एम करे छे, पण ते बराबर जणातो नथी, शिल्पशास्त्रमां बीजा पारिभाषिक शब्दोनी जेम कला पण पारिभाषिक शब्द छे अने तेनो अर्थ बे आंगल थाय छे जेमके—

"स्यादेकमगुलं मात्रा, कला प्रोक्ताऽङ्गुलद्वयम्' इत्यादि।

शिवद्वारं भवेज्ज्येष्ठं, कनीयश्च जिनालये ।
मध्यस्थं सर्वदेवानां, सर्वकल्याणकारकम् ॥२८७॥
उत्तमं तूदयार्धेन, पादोनं मध्यमानकम् ।
कनीयस्तत्र हीनं च, विस्तृतं द्वारमेव च ॥२८८॥

भा०टी०—१ हाथना प्रासादे द्वार आंगल १६, आ १६ आंगलनी वृद्धि ४ हाथना प्रासाद सुधी करवी; ५ थी १० हाथ सुधी ४ आंगलनी वृद्धि करवी, ११ थी २० अने २१ थी ३० हाथ सुधीना बंने दशकना प्रासादोना द्वारना उदयमां प्रतिहस्त २-२ आंगलनो वधारो करवो, ३१ थी ५० हाथ सुधीना प्रासादोना द्वारोदयमां प्रतिहस्ते १-१ आंगलनी वृद्धि करवी, हे मुनि ! क्षीरार्णवमां आ प्रकारना द्वारोने 'नागरद्वार' कह्युं छे.

आ द्वारमानने दशांशहीन कनिष्ठमान करवाथी स्वर्गना मनोहर चैत्योनुं द्वारमान थाय छे, अने दशांशयुक्त ज्येष्ठमान करवाथी पर्वताश्रित प्रासादोनुं द्वारमान थाय छे, हे मुनीश्वर ! प्रासाद माने आवेल मध्यममान स्थानान्तरनां सर्व प्रासादोनुं द्वारमान करवुं योग्य छे.

शिवप्रासादनुं द्वार ज्येष्ठ, जिन प्रासादनुं द्वार कनिष्ठ अने बीजा सर्वदेवोना देवालयनुं द्वार मध्यम माननुं करवुं सर्व प्रकारे कल्याणकारी छे, विस्तारमां द्वार पोताना उदयथी अर्धमाननुं होय तो उत्तम गणाय, उत्तमने चतुर्थांश हीन करवाथी विस्तारनुं मध्यमान थाय छे अने तेथी पण हीन करतां कनिष्ठ बने छे.

भूमिजप्रासादद्वारमान-अपराजितपृच्छायाम्—

एकहस्ते तु प्रासादे, द्वारं सूर्यांगुलोदयम् ।
हस्ते हस्ते सूर्यवृद्धि-र्यावत् स्यात्पञ्चहस्तकम् ॥२८९॥
त्रि तुर्यांशाच्च सप्तान्तं, नवान्तं च तदर्धतः ।
तदूर्ध्वं शतार्धान्तं च, वर्धयेद् द्व्यंगुलैः पुनः ॥२९०॥

उच्छ्रयार्धेन विस्तारं, शुभं स्यात्तु कलाधिकम् ।
भूमिजे द्वारमानं च, प्रयुक्तं वास्तुवेदिभिः ॥२०.१॥

भा०टी०—एक हाथना भूमिज प्रासादने १२ आगल उचुं द्वार होय, पांच हाथ सुधीना प्रासादोने एज प्रमाणे प्रतिहस्ते १२-१२ आगलनी उदयमां वृद्धि करवी, ए पछी ७ हाथ सुधी प्रतिहस्ते ९-९ आगलनी, ९ हाथ सुधी ६-६ आगलनी अने ९ पछी ५० हाथ सुधीना प्रासादोना द्वारोदयमां प्रतिहस्ते २-२ आगलनी वृद्धि करवी.

द्वारनी उचाईना अर्धभागे तेनो विस्तार करवो शुभ छे, विस्तारमां १ कला अधिक होय तो पण श्रेष्ठ छे भूमिज प्रासादनुं द्वारमान वास्तुवेदि विद्वानोए उपर प्रमाणे जणाव्युं छे.

द्राविडद्वारमान-अपराजित पृच्छायाम्—

एकहस्ते तु प्रासादे, द्वारं विद्याद्दशांगुलम् ।
दशांगुलं प्रतिकरं, यावत् षड्हस्तकं भवेत् ॥२०.२॥
अत ऊर्ध्वं दिक्करान्तं, वृद्धिः पञ्चांगुला भवेत् ।
द्व्यंगुला च ततो वृद्धिः, पञ्चाशद्धस्तकावधि ॥२०.३॥
पृथुत्वं च तदर्धेन, शुभं स्यात्तु कलाधिकम् ।
द्राविडे द्वारविस्तारः, प्रयुक्तो वास्तुवेदिभिः ॥२०.४॥

भा०टी०—एक हाथना द्राविड प्रासादनुं द्वार १० आंगलना उदयवाळुं करवुं अने ६ हाथ सुधीना प्रासादोना द्वारोनुं मान ए ज रीते प्रतिहस्ते १०-१० आगलनी वृद्धिए करवुं, ए पछी १० हाथ सुधी प्रतिहाथे ५ आंगलनी अने ११ थी ५० हाथ सुधी प्रतिहाथे २ आगलनी वृद्धि करवी. द्वारनो विस्तार एना उदयथी अर्ध प्रमाणमां राखवो, १ कला-अधिक विस्तार होय तो शुभ छे, वास्तुशास्त्रना विद्वानोए द्राविडद्वार विस्तार उपर प्रमाणे कह्यो छे.

सप्तशाखाश्च सप्तांगे, नवशाखा नवांगके ।
हीनशाखं न कर्तव्यं, अधिकं नैव दूपयेत् ॥३०५॥

भा०टी०—शिवना प्रासादनुं द्वार नवशाख, बीजा देवोनुं प्रासादद्वार सप्तशाख, चक्रवर्तीना प्रासादनुं द्वार पांचशाख, मंडलिक राजाना प्रासादनुं द्वार त्रिशाख अने शूद्र, वैश्य तथा ब्राह्मणना घरोनां द्वार एक शाखनां करवां. एक शाखथी नव शाख सुधीना प्रत्येक द्वारमां आय शुद्धि करवी, जे शास्त्रमां छे तेज युक्तिपूर्वक शाखा मान करवुं अने शिल्पिओए सर्व द्वारो पण तेज रीते शास्त्रानुसारे करवां.

आयने माटे एक, दोढ अथवा अडधो आंगल मानथी ओछो अथवा वधतो करवो पडे तो करवो पण शुद्ध आय उपजाववो, केमके आय दोषनी शुद्धि माटे आटली हानि-वृद्धि करवी दूषित नथी.

प्रासादनी जाति अने रूपोने अनुरूप द्वार रचना पण तेवी करवी अने शाखाना निचला भागमां प्रासादना तलच्छंदने अनुरूप अंग विभागो पाडवा.

त्रण अंग, पांच अंग, सात अंग अने नव अंग; आ पैकीना जेटला अंगोनो प्रासाद होय तेटली ज द्वारशाखाओ तेना द्वारे करवी, अर्थात् त्रण अंगना प्रासादे त्रण, पांच अंगनाने पांच, सात अंगवालाने सात अने नव अंगना प्रासादने नव शाख द्वार करवुं. प्रासादना अंगथी ओछी शाखानुं द्वार न करवुं, अधिक शाखानुं करे तो दोष नथी.

अपराजितपृच्छामां शाखाओनी वर्तना—

त्रिशाखानी वर्तना—

चतुर्भागांऽकितं कृत्वा, त्रिशाखं वर्तयेत्ततः ।
मध्ये द्विभागिकं कुर्यात्, स्तंभं पुरुषसंज्ञकम् ॥३०६॥

पत्रशाखा च कर्तव्या, खल्वशाखा तथैव च ।
स्त्रीसज्ञा च भवेच्छाखा, पार्श्वयोः पृथुभागिका ॥३०७॥
निर्गमश्चैकभागेन, रूपस्तम्भे प्रशस्यते ।
पेटके विस्तरः कार्यः, प्रवेशाचतुर्थांशकः ॥३०८॥
कोणिका स्तम्भमध्ये तु, भूषणार्थाय पार्श्वतः ।
शाखोत्सेधचतुर्थांशे, द्वारपालौ निवेशयेत् ॥३०९॥
कालिन्दी वामशाखायां, दक्षिणे चैव जाह्नवी ।
गंगाऽर्कतनयायुग्म मुभयोर्वामदक्षिणे ॥३१०॥
गन्धर्वा निर्गमे कार्या, एकभागा विचक्षणैः ।
नन्दी च वामशाखायां, महाकालश्च दक्षिणे ॥३११॥
इति त्रिशाख समोक्त, पञ्चशाखमथ शृणु ।

भा०टी०—द्वार शाखाना विस्तारमा ४ भागो पाडीने त्रिशाख द्वारनी रचना करवी, मध्यमा २ भागनो पुरुषसज्ञावालो रूपस्तभ करवो, स्तभनी बने बाजुमा १-१ भागना विस्तार वाली स्त्रीसंज्ञा वाली पत्रशाखा तथा खल्वशाखा, आ बे शाखाओ करवी, रूपस्तभ नो निर्गम १ भागनो राखवो प्रशसनीय गणाय छे, रूपस्तभना पेटानो विस्तार प्रवेशना चोथा भाग जेटलो करवो, रूपस्तभमा बने तरफ शोभा माटे कोणिओ काढवी

द्वार शाखनी उचाइना चोथा भागमा नीचे बे प्रतिहारो करवा, डाबी शाखामा जमना अने जमणी शाखामां गगानी मूर्तिओ बना-ववी, ज्या गगा छे त्या गगानु युग्म अने जमनाना स्थाने जमनानु युग्म प्रतिहारनी डाबी अने जमणी बाजुमा करवुं

निर्गम भागमा बुद्धिमान शिल्पिओए १ भागना गन्धर्वो बनाववा, डाबी शाखामा नन्दी अने जमणीमा महाकालने आलेखवा, आ प्रमाणे त्रिशाखद्वारनी वर्तना कही हवे पञ्चशाखने सामल !

पंचशाखनी वर्तना—

शाखाविस्तारमानं च, षड्भिर्भागैर्विभाजयेत् ।
एकभागा भवेच्छाखा, रूपस्तंभो द्वि भागिकः ॥३१२॥
निर्गमश्चैकभागेन, रूपस्तंभे प्रशस्यते ।
कोणिका स्तंभमध्ये च, उभयोर्वामदक्षिणे ॥३१३॥
गन्धर्वा निर्गमे कार्या, एकभागा विचक्षणैः ।
तत्सूत्रे खल्वशाखा च, सिंहशाखा च भागिका ॥३१४॥
सपादः सार्धभागो वा, रूपस्तंभः प्रशस्यते ।
उत्सेधस्याष्टमांशेन, शस्तं शाखोदयं मतम् ॥३१५॥
पत्रशाखा च गन्धर्वा, रूपस्तंभस्तृतीयकः ।
चतुर्थी खल्वशाखा च, सिंहशाखा ततः परम् ॥३१६॥
पञ्चशाखमितिख्यातं, संक्षेपात्कथितं मया ।

भा०टी०—शाखा विस्तार मानना ६ भागो कल्पी १-१ भागनी शाखाओ अने २ भागनो वच्चे रूपस्तंभ करवो, रूपस्तंभ निर्गममां १ भागनो करवो प्रशस्त छे, रूपस्तंभमां डाबी जमणी कोणिओ करवी अने तेना निर्गममां चतुर शिल्पिओए एक भागनी गन्धर्वशाखा करवी, तेना समसूत्रे स्तंभनी बीजी तरफ खल्व शाखा अने सिंह शाखा १-१ भागनी करवी, रूपस्तंभना २ भागोमांथी १। अथवा १॥ भागनो रूपस्तंभ विस्तारमां राखवो योग्य गणाय, द्वार शाखानी उंचाइना ८ भागो करी तेना एक अष्टमांश जेटलो शाखानो विस्तार राखवो श्रेष्ठ छे. १ पत्रशाखा, २ गन्धर्व शाखा, ३ रूपस्तंभ, ४ खल्व शाखा, अने ५ मी सिंह शाखा; ए प्रमाणे पंच शाखद्वारनी शाखाओ होय छे, जेथी ए द्वार 'पंचशाख' ए नामथी प्रसिद्ध छे, जेनुं में संक्षेपमां निरूपण कर्युं. हे अपराजित! हवे सप्तशाखद्वारने कहुं ते सांभल ।

सप्तशाखद्वारनी वर्तना—

शाखाविस्तारमानं तु, वसुभागविभाजितम् ।
भाग-भागाश्च शाखाः स्युः, मध्ये स्तंभो द्विभागिकः॥३१७॥
कोणिका भागपादेन, विस्तारे निर्गमे तथा ।
निर्गमः सार्धभागेन, रूपस्तंभे प्रशस्यते ॥३१८॥
गन्धर्वा सिंहशाखा च, निर्गमे भाग एव च ।
निर्गमश्च तदर्धेन, शेषशाखासु शस्यते ॥ ३१९ ॥
पत्रशाखा च गन्धर्वा, रूपशाखा तृतीयका ।
स्तंभशाखा भवेन्मध्ये, रूपशाखा तु पञ्चमी ॥३२०॥
षष्ठी स्यात् खल्वशाखा च, सिंहशाखा च सप्तमी ।
प्रासादकर्णसहिता, सिंहशाखाऽग्रसूत्रतः ॥३२१॥

भा०टी०—शाखाविस्तारना आठ भाग पाडी बाजुमां एक एक भागनी ६ शाखाओ करवी अने मध्यमां २ भागविस्तारनो १ रूपस्तंभ बनाववो, रूपस्तंभमां बने तरफ विस्तार अने निर्गममां पा. पा भागनी कोणिओ करवी रूपस्तंभनो निर्गम दोढ भागनो करवो प्रशंसनीय छे. गन्धर्वा अने सिंहशाखानो निर्गम १-१ भागनो करवो अने बाकीनी शाखाओ निर्गमे अर्धा अर्धा भागनी करवी सारी छे, १ पत्रशाखा, २ गन्धर्वशाखा, ३ रूपशाखा, ४ मध्यमां रूपस्तंभशाखा, ५ रूपशाखा, ६ खल्वशाखा अने ७ सिंहशाखा, सप्तशाख द्वारनी आ ७ शाखाओ छे, आमां सिंहशाखा अने प्रासादनो मूल कर्ण, आ बेने समसूत्रमां लेवा, नवशाखद्वारनुं निरूपण पण शिल्पशास्त्रमां करेलुं छे छतां आजे तेनो विशेष उपयोग न होवाथी अहीं आपवुं आवश्यक जणातुं नथी

द्वारशाखाना विस्तारनुं मान—

द्वारोच्छ्रयप्रमाणेन, शाखा विस्तारयेत्सुधी ।

षंडशेन त्रिशाखां तु, पञ्चशाखां तु पञ्चभिः ॥३२२॥
सप्तशाखां युगांशेन, नवशाखां त्रिभिस्तथा ।
इदं मानं च ज्ञातव्यं, शाखानां विस्तरे शुभम् ॥३२३॥

भा०टी०—द्वारनी उंचाइने अनुसारे बुद्धिमाने शाखानो विस्तार करवो, त्रिशाखानी शाखानो विस्तार द्वारनी उंचाईना छट्ठा भाग जेटलो राखवो, पंचशाखनी शाखानो विस्तार द्वारोदयना पंचमांशे राखवो, सप्तशाखद्वारनी शाखानो विस्तार द्वारोदयना चतुर्थांशे राखवो अने नवशाखनी शाखानो विस्तार उंचाइना त्रीजा भाग जेटलो करवो, आ प्रमाणे शाखाओनो विस्तार शुभ जाणवो.

उत्तरंग—

द्वारना उत्तरंगना मध्यगागे ते देवनी मूर्ति करवी के जे देवनी मूर्ति तेमां प्रतिष्ठित करवी होय, तेमज ते देवना परिवारनां रूपको उत्तरंगमां पण करवां के जे शाखाओमां कर्यां होय, सामान्य देव-मंदिरना उत्तरंगमां कलश, स्वस्तिक, आदि मंगल चिह्नो करवानो रिवाज पण छे, छतां वैदिक देवोना देवालयोना द्वारोना उत्तरंगोमां गणपति करवानो रिवाज विशेष छे.

जिनेन्द्रायतनना ८ प्रतीहारो—

इन्द्रश्चेन्द्रजयश्चैव, महेन्द्रो विजयस्तथा ।
धरणेन्द्रः पद्मकश्च, सुनाभः सुरदुन्दुभिः ॥३२४॥
इत्यष्टौ प्रतिहाराश्च, वीतरागेऽतिशान्तिदाः ।
अनुक्रमेण संस्थाप्याः प्राच्यादिषु प्रदक्षिणाः ॥३२५॥

भा०टी०—जैन प्रासादोमां पूर्वमुख प्रासादना द्वारपालो, १ इन्द्र, २ इन्द्रजय करवा, दक्षिणमुख प्रासादना द्वारपालो १ महेन्द्र, २ विजय नामना करवा, पश्चिममुख प्रासादोना द्वारपालो १ धरणेन्द्र, २ पद्मक करवा अने उत्तरमुख प्रासादना द्वारपालो १ सुनाभ, २

सुरदुन्दुभि नामना करवा. द्वारमां प्रवेश करतां १ लो जमणा हाथे अने २ नवरनो प्रतिहार डावा हाथे आवे एवी रीते प्रदक्षिणा क्रमे बनाववा.

आयुधो—

आ वीतरागना प्रतिहारो अतिशय शांति आपनारा छे, माटे पूर्वादि दिशाओमां एमने अनुक्रमे प्रदक्षिणा क्रमथी स्थापवा, इन्द्रना जमणा हाथोमां फल अने वज्र, डावा हाथोमा अंकुश अने दण्ड, आ ४ आयुधो आपवां, अने एज जमणा हाथना डाबामा अने डावा हाथनां जमणा हाथोमा आपवाथी इन्द्रजयनुं रूप बनशे एज रीते महेन्द्रना जमणा बे हाथोमा बे वज्रो तथा डावा बे हाथोमा फल अने दण्ड आपवो, अने विजयना हाथोमा महेन्द्रथी अपसव्य क्रमथी एज आपवा. धरणेन्द्रना जमणा हाथोमां वज्र तथा अभय अने डावा हाथोमा सर्प अने दण्ड आपवो, तथा एज आयुधो पद्मकना हाथोमा अपसव्य क्रमथी आपवा. सुनाभना जमणा हाथोमां फल अने वासली तथा डावा हाथोमा वासली अने दण्ड आपवो, एज आयुधो सुर दुंदुभिना हाथोमा अपसव्य क्रमथी आपवा.

(१) प्रतिमाओना पदस्थानो—

प्रासादना छन्दानुसारे चोरस, लंबचोरसादि गर्भगृह बनावीने तेना मध्यभागथी प्रारंभ करी २८ मंडलो बनाववा, ▣ इत्यादि आकारे गर्भगृहनी च्यारे भींतो तरफ एकथी आगे बीजु आम छेल्लु २८ मुं मंडल भींतोने अडकतु आवशे, आ २८ मंडलो पैकीना सर्वना वचला १ ला मंडपमा शिव, २ जा मंडलमा हेमगर्भ, ३ जामा नकुलीश, ४थामा सावित्री, ५मामा रुद्र, ६ठामा कार्तिकेय, ७मामा पितामह, ८मामां वसुदेव, ९मामा जनार्दन, १०मामा विश्वेदेव, ११ मे अग्नि, १२ मे सूर्य, १३ मे दुर्गा, १४ मे गणेश, १५ मे ग्रहो, १६ मे मातृकाओ, १७ मे गणो, १८ मे भैरव, १९ मे क्षेत्रपाल,

२० मे यक्षराज, २१ मे हनुमान, २२ मे भृगु, २३ मे घोर, २४ मे दैत्य, २५ मे राक्षस, २६ मे पिशाच अने २७ मे पदे भूतोने स्थापन करवा. २८ मुं पद शून्य छे, त्यां कोइ स्थापित थतुं नथी.

मंडलोमां देवोना स्थानोनो अतिदेश—

विष्णुना स्थाने उमादेवीने, ब्रह्माना स्थाने सरस्वतिने, मध्यमंडलमां सावित्रीने, अने सर्वमंडलोमां लक्ष्मीने स्थापित करी शकाय छे.

वीतराग (जिन) ने विघ्नराजना १४ मा मंडलमां स्थापवा, एम जिनशासनमां कहेल छे. मातृमंडलना स्थाने सर्वदेवीओ, बेठी अने उभी विष्णुनी मूर्तिओ, जलशायी विष्णु अने वाराह; ए सर्वने विष्णुना मंडलमां स्थापवा. विष्णुनां सर्व रूपोने ९मा मंडलमां स्थापवां, कल्की अने रामने वाराहना पदमां स्थापवा, अर्ध नारीश्वरने रूद्रना स्थाने, हरिहर उमानी मूर्तिने विष्णुना पदमां स्थापवी. मिश्रमूर्तिने (त्रि पुरुष–हरिहर–ब्रह्मानी मूर्तिने) ७मा ब्रह्माना स्थानमां, चंद्र–सूर्य–पितामहनी मिश्रमूर्तिने भास्करपदमां, वेदोने ब्रह्माना पदमां अने ऋषिओने भास्करपदमां स्थापन करवा,-आ उपरांत ग्रन्थोमां जे देवो कहेला छे ते जेना सानिध्यमां होय तेना परिकर रूपे सर्वकाले तेना ज पदमां स्थापित करवा.

स्पष्टीकरण—

मंडलोनुं तात्पर्य प्रासादना गर्भगृहमां देवप्रतिमाने स्थापन करवा योग्य स्थाननो निर्देश करवानुं छे, जे देवालयना गर्भगृहनो जेवो आकार होय तेज आकारनां मध्यथी कल्पी एकने फरतुं बीजुं, बीजाने घेरतुं त्रीजुं, त्रीजाने चोमेर वींटतु चोथुं; आम २८ मंडलो कल्पवां अने मध्यमंडलथी द्वार सामेनी भींत तरफ बीजा त्रीजा चोथा यावत् २८मा मंडल सुधी निशानो करवां, पछी स्थापनीय देवनुं मंडल ज्यां आवतुं होय त्यां तेना गर्भे लीटी खेंची ते लीटी

देवप्रतिमाना पगना गुल्फना गर्भे राखीने ते प्रतिमाने बेसाडवानुं पीठ अथवा पद्मासन बनाववु, पछीत तरफनो गभारानो भाग पीठ नीचे लेवो, डाबी-जमणी तरफनो भाग पण पदना गर्भ सूत्रमा आवतो होय एटलो पीठमा मेळववो, द्वार तरफ गुल्फ आगेनो पग बहार नीकळे एटलो भद्रनो दासो बहार काढवो, उर्ध्व प्रतिमाओ तेमज आसनस्थ प्रतिमाओना आसनो आ रीते ते ते देवना मडल मध्यथी उठाववा, आसननो निकालो गर्भमध्यथी द्वार तरफना मंडलार्धमां काढवो

एं विषयमा, (१) अपराजितपृच्छानुं विधान नीचे प्रमाणे छे—

प्रासादाना समस्ताना, विभक्तिर्गर्भभित्तितः ।
गर्भमध्ये सर्वतश्च, देवताः क्रमतः स्थिताः ॥३२६॥
चतुरस्रे आयते च, वृत्ते वृत्तायते तथा ।
अष्टास्रे च तथा प्रोक्तो, गर्भः प्रासादरूपतः ॥३२७॥
ब्रह्मस्थानादिकं गर्भं, भित्तिपर्यन्तमेवलम् ।
मण्डलं भवनाकारं, विभक्तिक्रमछन्दतः ॥३२८॥
अष्टाविंशतिसंख्याकं, मध्यगर्भानुरूपतः ।
क्रमादेकैकदेवाना, निवासो मडले स्थितः ॥३२९॥
प्रथमं मडलं चैव, यद् भवेद् गर्भमध्यतः ।
शिवस्य परमं स्थानं, तन्मेकरिव मध्यतः ॥३३०॥
यवयवार्धैस्तु किञ्चित्, कुर्यादीशानमाश्रितम् ।
समस्ते च मण्डलार्धे, तनसूत्रेषु देवताः ॥३३१॥
पादपद्माग्रसस्थाने, स्वकीयपदमध्यतः ।
पदस्य गर्भसस्थाने, पार्श्वगर्भाद्यादिकम् ॥३३२॥
कर्णपिप्पलिका सूत्रं, भुजगर्भे तु संस्थितम् ।
पादगुल्फगर्भसूत्रे, पदसूत्रेषु देवताः ॥३३३॥

आ श्लोकोनो भावार्थ स्पष्टीकरणमां आवी गयो छे.

(२) समरांगणसूत्रधारनां देवतापदस्थानो—

भक्ते प्रासादगर्भार्धे, दशधा पृष्ठभागतः ।
पिशाच-रक्षो-दनुजाः, स्थाप्या गन्धर्व-गुह्यकाः ॥३३४॥
आदित्य-चण्डि(न्द्रि)का-विष्णु-ब्रह्मेशानाः पदक्रमात् ।

भा०टी०—पछीत तरफना अर्धगर्भगृहने दशे भांगी क्रमशः भीत तरफना १लामां पिशाचो, २जामां राक्षसो, ३जामां दैत्यो, ४थामां गन्धर्वो, ५मामां यक्षो, ६ट्ठामां सूर्य, ७मामां चन्द्रिका (चण्डिका) देवी, ८मामां विष्णु, ९मामां ब्रह्मा अने १०मा भागमां शिवनी स्थापना करवी.

(३) समरांगणसूत्रधारना देवतापदस्थानो
(बीजा प्रकारे)—

गर्भे षड्भागभक्ते वा, त्यक्त्वैकं पृष्ठतोंऽशकम् ।
स्थापनं सर्वदेवानां, पञ्चमेंऽशे प्रशस्यते ॥३३५॥

भा०टी०—अथवा गर्भगृहना ६ भाग करी पछीत तरफनो छट्ठो भाग छोडीने पांचमा भागमां सर्व देवोनी स्थापना करवी प्रशंसनीय छे.

(४) प्रासादमंडननां देवतापदस्थानो—

पट्टाधो यक्ष-भूताद्याः, पट्टाग्रे सर्वदेवताः ।
तदग्रे वैष्णवं ब्राह्मं, मध्ये लिंगं शिवस्य च ॥३३६॥

भा०टी०—यक्ष, भूत, आदिने पाट नीचे अने सर्व जातिनी देवीओने पाटनी आगे बेसाडवी; देवीओनी आगे विष्णुनुं अने विष्णु आगे ब्रह्मानुं आसन स्थापवुं अने शिवलिङ्गने गर्भगृहना मध्यभागे स्थापवुं.

(५) आज काल प्रचलित देवता पदस्थानो—

प्रासादगर्भस्य दले विधेये, द्वाराग्रखण्डं परिवर्जनियम्।
अन्ये दले पञ्चविभागभक्ते, तस्मिन्विधेयानि निजा-
सनानि ॥ ३३७ ॥
यक्षादयश्च प्रथमे विभागे, द्वितीयभागेऽखिलदेवताश्च ।
ब्रह्मा च विष्णुश्च जिनस्तृतीये, चतुर्थभागादधिके हरश्च॥
॥ ३३८ ॥

भा०टी०—गर्भगृहना २ भाग करी द्वार तरफनो १ भाग छोडी देवो, बीजा भागना ५ भागो करी तेमां देवताओना आसनो निश्चित करवा. (भींत तरफथी गणता) पहेला भागमा यक्ष आदि पुरपदेवोनु, २जा भागमा सर्व देवीओनु, ३जा भागमा ब्रह्मा विष्णु तथा जिननुं, अने ४था भागनी बहार शिवनु आसन स्थापन करवु.

दृष्टिस्थान—

जेम जुदा जुदा देवोना पदस्थानो गर्भगृहमा जुदा जुदा होय छे तेज प्रकारे द्वारमा देवोना दृष्टिस्थानो पण जुदा जुदा होय छे, उंबराथी उत्तरंग सुधीनी द्वारनी उचाई मापीने तेना ६४ भागो करवा, आ ६४ भागो पैकीना नीचेथी १।३।५।७।९।११।१३।१५।१७।१९।२१।२३।।२५।२७।२९।३१।३३।३५।३७।३९।४१।४३।४५।४७।४९।५१।५३।५५।५७।५९।६१।६३, आ ३२ विषमभागो दृष्टिपदो छे, ज्यारे २ थी ६४ पर्यन्तना तमाम समभागो शून्य स्थानो छे, आ सम पदोमा कोइ पण देवनी दृष्टि रखाती नथी, विषम पदो पैकीना १।३।५।७।९।११।१३।१५।१७, आ नव पदोमा शिव तत्त्वोनो दृष्टिन्यास थाय छे, ए पछी १९।२१।२३, आ पदोमा व्यक्ताऽव्यक्तादि पदोनी स्थापना करवी, ए पछी २५मा सर्प, २७ मा शेषशायी विष्णु, २९मा गरुड, ३१मा मातृकाओ, ३३मा यक्ष, ३५मा भृंगशूकर

(वाराह), ३७मां उमा-महेश्वर, ३९मां बुध, ४१मां ब्रह्मयुग्म (ब्रह्मा अने सावित्री !) ४३ मां दुर्वासा-अगस्त्य-अने नारद-ऋषि, ४५ मां लक्ष्मीनारायण, ४७मां विधाता, ४९मां गणेश तथा सरस्वती, ५१ लक्ष्मी, ५३ मां हरसिद्धि, ५५ मां ब्रह्मा विष्णु सूर्य तथा वीतराग (जिन), ५७मां रुद्र, ५९मां चण्डिका, ६१मां भैरव अने ६३ मा स्थानमां वेतालनी मूर्तिनी दृष्टि राखवी, ए पछीना ६४मा पदमां कोइनी दृष्टि न राखवी, तेने दृष्टिशून्य रहेवा देवुं.

ए विषयमां अपराजित०नुं विधान—

द्वारोच्छ्रयस्य मध्यं तु, वसुभागविभाजितम् ।
शुभाऽशुभदृष्टिस्थानं, हिताऽहितफलप्रदम् ॥३३९॥
पदमेकैककं भूयो, ह्यष्टधा प्रविभाजितम् ।
चतुःषष्ट्यंशोच्छ्रितं स्या-दुदुम्बरदशान्तकम् ॥३४०॥
विषमांशेषु सर्वेषु, देवतादृष्टियोजनम् ।
दृष्टिस्थानानि द्वात्रिंशद्, द्वात्रिंशच्च विलोमतः॥३४१॥
विषमस्था शुभा चैवं, विलोमे चाऽशुभोद्गमः ।
दृष्टिदोषविपाकेन, स्थाननाशो धनक्षयः ॥३४२॥
नगरे च पुरे ग्रामे, राष्ट्रे तीर्थे तपोवने ।
दृष्टिघातहतं यच्च, न पुनस्तत् प्ररोहति ॥३४३॥
पादेऽर्चायाः कटिं यावत्, कार्या वाहनदृक् तथा ।

भा०टी०—द्वार मध्यनी उंचाईना ८ भाग करवाथी शुभ अशुभ दृष्टिस्थानो, के जे हितकर अने अहितकर छे ते जणाय, एक एक अष्टमांशना फरी ८-८ भागो करी उंबराथी उत्तरंग पर्यन्त द्वारनी उंचाइना ६४ भाग करो, आमां जे विषम भागो छे ते बधामां देवताओनी दृष्टि रहेती होवाथी ते ३२ दृष्टिस्थानो कहेवाय

छे अने ३२ समभागो विपरीत स्थानो छे, तथा विषम स्थानो शुभ अने विपरीत स्थानो अशुभ होय छे दृष्टिदोषना विपाकथी स्थान-भ्रष्टता अने धनहानि थाय छे नगरमा, पुरमा, ग्राममां, देशमा, तीर्थमा के तपोवनमा दृष्टिदोषरूप प्रचण्ड वायुथी जे उखडी जाय छे ते फरीने उगतु नथी, माटे दृष्टि शुभ स्थानमा राखवी

वाहनदृष्टि—

वली देवना वाहननी दृष्टि प्रतिमाना पगथी कटिभाग सुधी उंची राखवी, एथी ऊची न राखवी.

ठक्कुर फेरुनुं दृष्टिविधान—

दृष्टिस्थानना संबन्धमा वास्तुसारकर्ता ठक्कुर फेरुनो मत उप-र्युक्त मान्यताथी जुदो पडे छे, फेरु द्वारोदयना १० भाग करीने दृष्टिस्थानो निश्चित करे छे जे नीचेनी गाथाओथी जणाशे.

दसभागकयदूवार, उदुंबर-उत्तरगमज्झेण ।
पढमंसि सिवदिट्ठी, बीए सिवसत्ति जाणेह ॥३४४॥
सयणासणसुर तइए, लच्छीनारायणं चउत्थे य ।
वाराह पचमए, छट्ठंसे लेवचित्तस्स ॥ ३४५ ॥
सासणसुर सत्तमए, सत्तमसत्तंसि वीयरागस्स ।
चंडिय भइरव अडंसे, नवमिंदा चमरछत्तधरा ॥३४६॥
दसमे भाए सुन्न, जक्खा गधव्वरक्खसा चेव ।
हिट्ठाउ कमि ठविज्जइ, सयलसुराण च दिट्ठी अ ॥३४७॥

भा०टी०—उबरा-उत्तरंग वच्चेना द्वारोदयना १० भाग करीने सर्व देवोना दृष्टिस्थानो निश्चित करवा, नीचेथी अनुक्रमे १ ला भागे शिवनी दृष्टि, २जामा शिवशक्तिनी, ३जामां शेषशायी देवनी,

४थामां लक्ष्मी नारायणनी, ५मामां वाराहनी, ६ट्ठामां लेपचित्रनी, ७मामां शासनदेवोनी, ७माना ७मा भागमां वीतराग देवनी, ८मामां चंडिका तथा भैरवनी, ९मामां चमरधर-छत्रधर देवोनी दृष्टि स्थापवी अने दशमा भागने दृष्टि रहित राखवो अथवा १०मा भागमां गंधर्वो अने राक्षसोनी दृष्टि स्थापन करवी.

ठक्कुर फेरुनी दृष्टिस्थान संबन्धी आ मान्यताने कोइ प्राचीन ग्रन्थनो आधार छे के केम ? ए विचारणीय वस्तु छे, आ विषयमां अपराजितनी मान्यता फेरुना ध्यानमां न होय एम पण कही शकाय तेम नथी, कारण के फेरु पोते ज आगल चालीने ८ भागनी चर्चा करे छे, ते लखे छे के—

भागट्ठ भणंतेगे, सत्तम-सत्तंसि वियरागस्स ।
गिहदेवालि पुणेवं, कीरइ जह होइ वुड्ढिकरं ॥३४८॥

भा०टी०—कोइ द्वारना ८ भाग करीने सातमाना सातमा भागमां वीतरागनी दृष्टि स्थापवानुं कहे छे, पण आम घर दहेरासरमां करवुं जोइये के जेथी वृद्धिकारक थाय.

आचार्य वसुनन्दिनी दृष्टिस्थान विषयक मान्यता—

दिगम्बराचार्य वसुनन्दीनी दृष्टिस्थान विषयक मान्यता उपर्युक्त बंने मतोथी जुदी पडे छे, तेओ द्वारना ९ भाग करी सातमाना ७मा भागमां दृष्टिस्थान माने छे; जुओ—

विभज्य नवधा द्वारं, तत्षड्भागानधस्त्यजेत् ।
ऊर्ध्वं द्वौ सप्तमं तद्वद्, विभज्य स्थापयेद् दृशम् ॥३४९॥

भा०टी०—द्वारना ९ भाग करी ६ नीचे अने २ ऊपर छोडवा पछी ७माना एज रीते ९ भाग करीने (सातमा भागमां) दृष्टिने स्थापन करवी.

ठक्कुर फेरुनो दश भागनो अने वसुनन्दिनो नव भागनो 'दृष्टि स्थान विषयक सिद्धान्त कया प्रामाणिक शिल्पग्रन्थना आधारे निर्णीत थयो हशे ? ए कहेतु मुश्केल छे, बंने विद्वानोना सिद्धान्त कोइ आधार तो राखता हशे ज, एमा शंका नथी, छता वर्तमान कालीन सर्वमान्य ८ भागना सिद्धान्तना मुकाबलामा ए बे अप्रसिद्ध सिद्धान्तोने अनुसरवानी अमे सलाह आपी शकता नथी.

प्रणाल मूकवानी दिशा—

अर्चानां तु मुखं पूर्वं, प्रणालं वामतः शुभम् ।
उत्तरायां न विज्ञेया, ह्यर्चारूपेण देवता ॥ ३५० ॥
जैनयुक्तसमस्ताश्च, याम्योत्तर क्रमैः स्थिता. ।
वाम-दक्षिण-योगेन, कर्तव्यं सर्वकामदम् ॥ ३५१ ॥
वामे वामं प्रकर्तव्यं, दक्षिणे दक्षिण शुभम् ।
मण्डपादिप्रतिमाना, तथा युक्त्या विधीयते ॥३५२॥
मण्डपे ये स्थिता देवा-स्तेषां वामे च दक्षिणे ।
प्रणालं कारयेद्धीमान्, जगत्या वै चतुर्दिशम् ॥३५३॥

भा०टी०—जे प्रतिमाओ पूर्वसमुख बेठी होय त्या तेमना डाबा हाथनी तरफ सिंहासनमां प्रणाल मूकवी शुभ छे, उत्तरमुखी कोइ देवीनी मूर्ति तो जाणवी ज नहि, बाकी जैन प्रतिमा तेमज बीजी सर्व प्रतिमाओ जे दक्षिण-उत्तर दिशाना क्रमे बेसाडेली होय तेमना डाबा तथा जमणा हाथनी तरफ प्रणाल राखवी, दक्षिण संमुख होय तेना डाबा हाथे, उत्तराभिमुख होय तेना जमणा हाथे प्रणाल मूकवी, पण विपरीत न मूकवी उपलक्षणथी जेम पूर्वमुखने डाबा हाथे मूकवी शुभ छे तेम पश्चिमाभिमुखने जमणा हाथे मूकवी शुभ छे मंडपादिकमा प्रतिमाओ बेठेली होय तो त्यां नीचेनी युक्तिए प्रणाल मूकवी, मंडपमा बेठेल देवोना आसने पण डाबा

जमणा हाथना क्रमे प्रणाल मूकवी अने जगतीमां च्यारे दिशाओमां प्रणालो मूकवी, पूर्व-दक्षिणामुख बेठेल प्रतिमाओने त्यां डावा हाथनी तरफ अने पश्चिम-उत्तरमुख देवोने त्यां जमणा हाथे प्रणाल मूकवी शुभ गणाय छे. प्रासादोने अंगे पण एज नियम जाणवो.

प्रतिमामान-द्वारोदयमाने (ऊर्ध्वस्थित—)

द्वारोच्छ्रयश्च नवधा, भागमेकं परित्यजेत् ।
शेषत्र्यंशे द्विभागार्चा, त्र्यंशोना द्वारतोऽथवा ॥३५४॥

भा०टी०—द्वारना उदयना ९ भाग करी एक भाग छोडी देवो, शेष रहेल ८ भागात्मक द्वारना ३ भाग पाडी १ भाग जेटलुं ऊंचुं आसन बनाववुं अने २ भागनी प्रतिमा स्थापवी, अथवा द्वारनी ऊंचाईना बे भाग जेटली ऊंची प्रतिमा स्थापवी.

(ऊर्ध्वस्थित तथा आसीन—)

द्वारदैर्घ्ये तु द्वात्रिंशे, तिथि-शक्र-कलांशकैः ।
ऊर्ध्वार्चा आसनस्था च, मनुविश्वार्कभागतः ॥३५५॥

भा०टी०—द्वारनी ऊंचाईना ३२ भाग पाडी, ते बत्रीसमांना १६-१५ अथवा १४ भाग जेटली उभी प्रतिमा ते द्वारवाला गभारामां ज्येष्ठ, मध्यम अथवा जघन्यमाने राखवी अने बेठी प्रतिमा तेज बत्रीसा १४-१३-१२ भाग जेटली ऊंची ज्येष्ठ, मध्यम अने कनिष्ठ माने राखवी.

गर्भमाने प्रतिमामान—

चतुरस्रीकृते क्षेत्रे, दशभागविभाजिते ।
भित्तिर्द्विभागा कर्तव्या, षड्भागं गर्भमन्दिरम् ॥३५६॥

तृतीयांशेन गर्भस्य, प्रासादे प्रतिमोत्तमा ।
मध्यमा स्वदशांशोना, पञ्चांशोना कनीयसी ॥३५७॥

भा०टी०—प्रासादनी चोरस भूमिना दश भाग करी बे बे भागनी भींतो करी ४ भाग भींतोमां रोकवा अने ६ भागनो गभारो करवो, ए गभारानुं जे मान होय तेना त्रीजा भागना माननी प्रतिमा बेसाडवी ते उत्तम गणाय, उत्तम मानमाथी दशमांश हीन करवाथी मध्यम अने पञ्चमांश हीन करवाथी कनिष्ठ माननी प्रतिमा कहेवाय छे

प्रासादमाने प्रतिमामान—

१ हाथना प्रासादे प्रतिमा ६ आगलनी, २ हाथना प्रासादे प्रतिमा १२ आगलनी, ३ हाथना प्रासादे प्रतिमा १८ आगलनी अने ४ हाथना प्रासादे प्रतिमा १ हाथना उदयनी बेसाडवी, आम "*प्रासाद तुर्यभागस्य, समाना प्रतिमोत्तमा*" आ वचनानुसारे प्रासादनुं जे मान होय तेना चोथा भागनी ऊंची प्रतिमा उत्तम माननी गणाय छे, प्रतिमानु मान द्वारोदय, गर्भविस्तार अने प्रासादविस्तार आदि अनेक उपायो वडे निर्णीत कराय छे, छतां आ छेल्ली प्रासाद विस्तारना चोथा भागे प्रतिमामान राखवानी रीति अधिक प्रचलित छे, प्रतिमा विषम अंगुलनी होय तेज श्रेष्ठ गणाय छे, माटे प्रासादमाने तेनुं जे मान आवतु होय तेमा १ आगल वधारीने अथवा घटाडीने विषमांगुलनी प्रतिमा बेसाडवी, विषमांगुल माटे ६ ने बदले ७, १२ ने बदले १३ अथवा ११ नी प्रतिमा ज राखवी योग्य गणाय, कदापि तैयार प्रतिमा प्रमाणोपेत न मलतां ओछा माननी मले तो ते चाली शके पण उत्तम मानथी १ आगलथी अधिक ऊंची तो न ज चाले,

शिखर—

शृंगो अने उरु शृंगो (प्रासाद मण्डने)

छाद्यस्योर्ध्वं प्रहारः स्यात्, शृंगे शृंगे तथैव च।
प्रासाद-शृंग-शृंगेषु, अधोभागे तु छाद्यकम् ॥३५८॥

मूलकर्णे रथादौ वा, एक-द्वि-त्रीन् क्रमान्न्यसेत् ।
निरन्धारे मूलभित्तौ, सान्धारे भ्रमभित्तिषु ॥३५९॥
ऊरुशृंगाणि भद्रेषु, ह्येकादिग्रहसंख्यया ।
त्रयोदशोर्ध्वे ससाधो, लुप्तानि चोरुशृंगकैः ॥३६०॥

भा०टी०—मंडोवरो ढंकाया पछी छाजा उपर प्रहारनो थर देवो, ज्यां ज्यां शृंगो लगाडवानां होय त्यां पण सर्वत्र प्रहार देवो. प्रासादना प्रत्येक शृंगने नीचे छाद्य लगाडीने उपर प्रहार देवो अने पछी शृंग उठाववुं, मूलकोण, पडरा आदि उपर एक, बे या त्रण शृंगो क्रमे चढाववां, ३ थी अधिक शृंगो चढाववां नहि. निरंधार प्रासादनी मूल भींत उपर अने सांधार प्रासादनी भ्रमणीनी भींतो उपर शृंगो चढाववां, शृंगो भीतमां समाववां पण गभारामां के भ्रमणीनी अंदर पडवा न देवां.

भद्रो उपर १ थी मांडीने ९ सुधीनी संख्यामां उरुशृंगो चढाववां, उरुशृंगोनी उंचाईना १३ भाग कल्पीने निचला ७ भागो नीचेना बीजा उरुशृंगवडे दबाववा, तेना नीचेना ७ भागो ते पछीना त्रीजा उरुशृंगवडे लोपवा; एम प्रत्येक पछीना उरुशृंगवडे पहेला उरुशृंगना ७ भागो लोपवा अने उपरना ६ भाग उघाडा राखवा. जेम शृंगो कोइ पण अंगविभाग उपर ३ थी अधिक चढतां नथी, तेम उरुशृंगो पण ९ थी अधिक चढतां नथी.

अपराजितपृच्छायाम्—

निरंधारेषु सर्वेषु, नागरे मिश्रके पि वा ।
विमान-नागरच्छन्दे, कुर्याद् विमान-पुष्पके ॥३६१॥
भित्तेः पृथुत्वे यन्मानं, तच्छृंगक्रम ऊर्ध्वतः ।
गर्भमध्ये यदारेखा, महामर्मक्षयावहा ॥३६२॥
एक-द्वि-त्रिक्रमा उक्ता, भित्तिमध्ये यथोत्तरम् ।

अधिका नैव कर्तव्या, पीडिते च कुलक्षयः ॥३६३॥

एकादिग्रहसंख्यान्त-मुरःशृंग क्रमोद्गतम् ।
अधःस्थेन भवेल्लुप्त-मुरःशृंग तु पश्चिमम् ॥३६४॥

सप्त सप्त ह्यधो लुप्ता, ऊर्ध्वस्थांशास्त्रयोदश ।
एकविध घटाबाह्यं, स्कन्धे स्कन्धं तु कारयेत् ॥३६५॥

एकैक युक्तिसूत्र तु, कर्तव्यं सर्वकामदम् ।
सूत्रयित्वा क्रमयोग, मूलसूत्रानुसारतः ॥३६६॥

छन्दभेदो न कर्तव्यो, जातिभेदो न वा पुनः ।
उद्भवेच्च महामर्म, जातिभेदे कृते ननु ॥३६७॥

यदि छन्दे छन्दो नास्ति, नायमाध्ये प्रतिष्ठितम् ।
तत्प्रासादफल नास्ति, मोक्षकारो न विद्यते ॥३६८॥

भा०टी०—सर्वे जातिना निरधार प्रासादो, नागरो, मिश्रको, विमाननागर-छन्दो अने विमानपुष्पको, आ सर्वे प्रासादोमा भीतना निस्तारनु जे मान होय ते मानना शृंगो चढाववा, गर्भमा रेखा न पाडवी, केमके रेखानु गर्भमा पडवु महामर्मरूप क्षयकारक गणाय छे, भित्ति उपर एक बे अथवा त्रण क्रमो अनुक्रमे चढाववा अधिक न चढाववा, अधिक क्रमो चढाववाथी रेखा अदर पडवाथी गर्भ पीडाय छे अने गर्भने पीडित करवाथी कुलनो क्षय थाय छे.

भद्रविभागमा १ थी ९ सुधी उर शृंगो क्रमे चढाववा, नीचेना बीजा उरःशृंग वडे पहेला उरःशृंगने लोपवु (ढाकवु) एम प्रत्येक उरःशृंगनी उचाईना १३-१३ भाग करी नीचेना ७-७ भागो बीजा बीजा उरःशृंगो वडे लोपवा, आमल्सारानी बहारनो भाग एक प्रकारनो करवो, उचाईमां विस्तारमा एक सूत्रे क्रमो चढाववा, स्कंधे स्कन्ध मेलववो, सूत्रवडे तमाम क्रमोनी दलविभक्ति करवी, क्रमो

मूल प्रासादना छंद अने जातिना ज करवा, छंदभेद अथवा जातिभेद न करवो, केमके तेम थतां ' महामर्म ' उत्पन्न थाय छे.

जो छंदे छंद न मले, नीचेनी रचना प्रमाणे उपरनी प्रतिष्ठित न थाय तो ते प्रासाद शुभफल दायक थतो नथी अने तेनाथी मोक्षफलनी प्राप्ति थती नथी.

प्रासादस्य पुरो भागे, निर्वाणमुरःशृंगकम् ।
तस्याग्रे शुकका प्रोक्ता, उरःशृंगाद्यनुक्रमात् ॥३६९॥
एक-त्रि-पञ्च-सप्ताङ्क-सिंहस्थानानि कल्पयेत् ।
तस्यादिभक्ति सूत्रं तु, कोलिकायामसूत्रतः ॥३७०॥

भा०टी०—प्रासादना आगला भागे जे ' निर्वाण ' नामक उरःशृंग छे, तेनी आगे शुकनास करवानुं विधान छे. ते शुकनासनी रचनानुं सूत्र कोलिनी लंबाईना सूत्रे करवुं, एटले के कोली जेटली उंचाईमां होय तेटली ज शुकनासिका लंबाईमां बहार निकालवी.

कोलीना भेदो—

अञ्चिता कुञ्चिता शस्या, त्रिधोदितक्रमागता ।
मध्यस्था-भ्रमा-संभ्रमाख्याः, कोलिलाः परिकीर्तिताः ॥३७१॥
प्रासादे दशधा भक्ते, भूमिसीमाविचक्षणः ।
अञ्चिता च द्विभागा स्यात्, त्रिभागा कुञ्चिता तथा ॥३७२॥
शस्या चैव चतुर्भागा, त्रिधा चोक्तक्रमागता ।
मध्यस्था प्रासादपादे, भ्रमा सद्मत्रिभागतः ॥३७३॥
अर्धे तु संभ्रमा कार्या, प्रासादस्य प्रमाणतः ॥३७४॥

भा०टी०—१ अंचिता, २ कुंचिता, ३ शस्या; आ त्रण कोलिओ अनुक्रमे कही छे, बीजी त्रण कोलिओ-१ मध्यस्था, २ भ्रमा, ३ संभ्रमा नामनी पण छे.

प्रासाद-कोण सीमाविस्तारना १० भागोमांथी २ भागनी

अंचिता, ३ भागनी कुंचिता अने ४ भागनी शस्या नामनी कोली करवी. प्रासादविस्तारना चोथा भागनी १ मध्यस्था कोली, त्रीजा भागनी २ जी भ्रमा अने प्रासादना प्रमाणथी अर्धा भागनी ३ जी संभ्रमा नामनी कोली करवी.

अग्रे कोली कपोल तु, शुकनासस्तु नासिका ।
सान्धारे स्तम्भरेखा च, कर्तव्या मध्यकोष्टके ॥३७५॥
भ्रमणी बाह्यभित्तिश्च, क्रमात्सख्या प्रकल्पयेत् ।
शृंगोरुशृंगप्रत्यंगे-र्गणयेदण्डकानि च ॥ ३७६ ॥
कर्णं तथांग तिलकं, कुर्यात् प्रासादभूषणम् ।
कर्णं रथं प्रतिरथं, सुभद्रं प्रतिभद्रकम् ॥ ३७७ ॥
सलिलान्तरमार्गेषु, शुद्धान्येवांगसंख्यया ।
इहैवांगप्रमाणेन, सपाद शृंगमुच्छ्रये ॥ ३७८ ॥
स्कन्धस्यार्धोदये घण्टा, सर्वकामफलप्रदा ।

भा०टी०—प्रासादने आगे कोली ते प्रासादना 'कपोल' रूप अने शुकनास 'नासिका' रूप होय छे. साधार प्रासादोमां मध्यकोष्टका स्तंभथी रेखा उठाववी, अने भ्रमणी तथा बाह्यभींतने प्रासादनी मानसंख्यामां परिगणित करवी.

शृंगो, उरुशृंगो अने प्रत्यंगोनी अंडको गणवां अने कर्णो, तवांग, तिलक, ए बधा प्रासादना भूषण रूपे करवां, कोण, रथ, प्रतिरथ, सुभद्र, प्रतिभद्र, आ बधा प्रासादना अंगो गणाय छे, जलमार्गो वच्चे आ अंगोनी संख्या स्पष्ट जणाय छे, अर्थात् प्रत्येक बे अंगो वच्चे पाणीतार छोडवाथी उक्त अंगो एक बीजाथी जुदां जणाइ आवे छे, आ अंगोना मानानुसारे उपर शृंगो बनाववां, अने प्रत्येक शृंग पोताना विस्तारथी सवायु उंचु करवु. स्कंधना विस्तारना अर्धा भाग जेटलो आमलसारानो उदय करवो शुभ फलदायक छे.

प्रहारांशं पुनर्दद्यात्, पुनः शृंगाणि कारयेत्।
शृंगे शृंगे च प्रासादं, विभक्तमिव कारयेत् ॥३७९॥

समस्तानामधोभागं, कुर्यांच्छाद्यविभूषितम् ।
अधःशृंगपक्षभागे, ऊर्ध्वशृंगवरोद्गमः ॥ ३८० ॥

उरुशृंगं यदा लुप्तं, रेखा-कर्ण-जलान्तरैः ।
तत्र कारयितुः पीडा, कर्तुश्चापि महद् भयम् ॥३८१॥

भा०टी०—जे अंगो उपर शृंगो उठाववां होय तेनी उपर प्रथम प्रहार थरो देवा अने पछी शृंगो करवा, फरि प्रहार देवा अने फरि शृंगो करवां; भिन्न भिन्न शृंगोमां प्रासादने वहेंची देवुं, समस्त शृंगोनो निचलो भाग प्रथम छाजाओथी विभूषित करी उपर प्रहार लगाडी ते उपर शृंगो बनाववां. नीचेना शृंगोनी एक बाजुथी उपरनां शृंगो उठाववां.

रेखा, कर्ण अने जलमार्गोथी जो उरुशृंग लोपाय तो कराव-नारने पीडा अने करनारने पण भयनुं कारण बने छे.

मूलशिलात उदये, पर्यन्तकलशान्तके ।
विभक्ते विंशतिभागै-रध ऊर्ध्वं प्रकल्पयेत् ॥३८२॥

अष्टभिर्भागैर्ज्येष्ठः, सार्धैरष्टभिर्मध्यमः ।
कनिष्ठो नवभिर्भागै-स्त्रिधा मण्डोवरो मतः ॥३८३॥

शेषा ये ऊर्ध्वभागास्तैः, कर्तव्यः शिखरोदयः ।
इदं मानं समुद्दिष्टं, प्रोक्तं वै वास्तुवेदिभिः ॥३८४॥

भा०टी०—खरशिलाथी कलश पर्यन्तना प्रासादना उदयना २० भागो करी नीचे उंचेना विभागो कल्पवा, नीचेना भागमां ८-८॥ अने ९ भाग ऊंचो अनुक्रमे ज्येष्ठ, मध्यम, अने कनिष्ठ मंडोवरा करवो, उपर जे भागो रहे तेटलो ऊंचो शिखरनो उदय

करो, वास्तुशास्त्रना ज्ञाताओए कहेल मंडोवरानुं अने शिखरनुं मान आ प्रमाणे कह्युं.

रेखा—

शिल्पशास्त्रमा शिखरनी रेखा महत्त्वनु स्थान धरावे छे, अपराजितपृच्छामा रेखाना निरूपणमा ३ सूत्रो (अध्यायो) अने १०१ श्लोको रोकायेला छे, कोइ पण जातना प्रासादना शिखरनुं निर्माण रेखा ज्ञान विना निर्दोषपणे थइ शकतुं नथी, शिखरनी ऊंचाई अने तेना वलन (नमन)नु परिमाण नक्की करवा सूत्रनी दोरी वडे लींटीओ खेंचवामा आवती, तेओने शिल्पशास्त्रोमा 'रेखा' ए नाम अपायुं छे.

रेखाना भेदो—

शिल्पशास्त्रमा रेखाओ बे प्रकारनी बतावी छे, एक 'नागरी' रेखाओ अने बीजी 'चन्द्रकला' रेखाओ

नागरी रेखाओनी बे पच्चीसीओ होय छे, एक पचीसी 'उदयभेदोद्भवा' अने बीजी 'कलाभेदोद्भवा.' बन्ने पच्चीसीओनो अनुक्रमे शिखरना उदय अने वलनमां उपयोग थाय छे, बीजी पच्चीसीनी रेखाओने खंड अने कलाओ लागती होवाथी 'कलाभेदोद्भवा' ए नाम पडयु छे

नागरी रेखाओ पैकीनी ए बीजी पच्चीसीनी पहेली रेखा पंचखडी, बीजी षट्खडी, आम एक एक खंडनी वृद्धिए २५ मी रेखा २९ खडी थाय छे. आ जातिनी रेखाओमां ५ थी ओछा अने २९ थी अधिक खंडो होता नथी.

आ रेखाओना प्रतिखडे एक एकनी वृद्धिए कलाओ लागे छे, आ पच्चीसीनी पहेली पच खंडी रेखा के जेनुं नाम 'चन्द्रकला' छे, एना पहेला खंडमा १, बीजामा २, एम वधारता पाचमामा ५ कलाओ उपजे छे, एकंदर एना ५ खंडोमा १५ कलाओ लगाडाय

छे, ए नियमानुसार आनी पच्चीसमी 'त्रैलोक्यविजया' रेखाना २९ खंडोमां ४३५ कलाओ उपजे छे अने आखी पच्चीसीनी ४४७५) च्यारहजार च्यारसौ पंचोतेर कलाओ उपजे छे, शिखरना वलनमां आ कलाओ पैकीनी कोइ पण १-१ कलानी हानि वृद्धिए कलाओ जेटलां शिखरो उपजे छे.

चन्द्रकला रेखाओ—

साधारण रेखाओनुं 'चन्द्रकला' ए नाम एनी सोलनी संख्याने लीधे पडयुं लागे छे, केमके मूलमां ए रेखाओ १६ छे अने वधी 'समचार' खंडो वाली छे, पण आ सोल पैकीनी प्रत्येकनी पाछल बीजी १५-१५ रेखाओ विषमचारिणी पण छे, तेथी ए २५६ नी संख्याए पहोंचे छे.

'चन्द्रकला' रेखाओमां त्रण खंडो अने चोवीश कलाओथी ओछा खंडो के कलाओवाली कोइ रेखा होती नथी. पहेली चन्द्रकला रेखा के जेनुं नाम 'शशिनी' छे ते त्रिखंडा छे अने एने चोवीस कलाओ होय छे, ए पछीनी १५ रेखाओ पण एनीज जातिनी होवाथी ते छे तो त्रिखंडा, पण ए वधीमां प्रथमखंड सिवायना खंडोमां कलाओनी वृद्धि थती जाय छे, बीजा त्रिखंडाना बीजा खंडमां ९ अने त्रीजामां १० कलाओ लागे छे, पहेला खंड करतां त्रीजामां एक चतुर्थांश कलाओ वधु होवाथी ए रेखा 'सपादचार' वाली कहेवाय छे, एज प्रमाणे जेम जेम रेखाओनो नंबर वधे छे तेम तेम तेना खंडो वधे छे अने तेनी साथे चार पण वधे छे.

सोलमी त्रिखंडाना पहेला खंडनी ८ कलाओ करतां त्रीजा खंडनी ३८ कलाओ पोणा पांचगणी थइ जाय छे अने तेथी ए रेखाओनो चार पोणापांच गणो गणाय छे.

चन्द्रकलारेखाओ पैकीनी बीजी मूल रेखा 'शान्तिनी' गणाय

छे, आ चतुष्खण्डा छे, एना च्यारे खंडोमां १२-१२ कलाओ लागे छे, अर्थात् ए पण समचार वाली छे, त्रिखंडानी जेम एनी पाछल पण बीजी १५ चतुष्खंडाओ छे, जे अनुक्रमे सपाद, सार्ध, पादोन-द्वय आदि चार वाली छे; आ प्रमाणे प्रत्येक मूल रेखामा एक एक खंडनी वृद्धि थता १६ मी 'अमृता' रेखा अढार खंडवाली बने छे

मूल रेखाओमा जेम जेम नंबर वधे छे तेम तेम एमना पहेला खंडोमां ४-४ कलाओनी वृद्धि थाय छे, पहेली मूलरेखा अने एनी अनुवर्त्तिनी १५ रेखाओना पहेला खंडमा ८-८ कलाओ छे तो बीजी मूलरेखा अने तेनी जातिनी १५ रेखाओना पहेला खंडमां १२-१२ कलाओ छे, आम ४-४ नी वृद्धि थतां सोलमी 'अमृता' अने एनी जातनी १५ रेखाओना पहेला खंडमा ६८-६८ कलाओ उपजे छे अने अमृता वर्गनी छेल्ली रेखाना छेल्ला खंडमा ३२३ कलाओ उपजे छे, आ सोलमीनी सोलमी अर्थात् २५६ मी रेखाना बधा खंडोनी कलासंख्या ३५१९ नी थाय छे, आम आ बधी रेखाओनो कलाविस्तार अनेक लाखोनो संख्यामा छे, अने जेटला रेखाओना कला भेदो तेटला ज समच्छंदे शिखरना भेदो उपजे छे.

नागरी रेखाओ—

उदय रेखाओ—

सूत्ररेखोत्थिता रेखा, संख्यायां पञ्चविंशतिः ।
नामानि कथयिष्यामि, सव्यासादेर्यथाक्रमम् ॥३८५॥

सव्यासा शोभना भद्रा, सुरूपा सुमनोरमा ।
शुभा चैव तथा शान्ता, कौबेरी च सरस्वती ॥३८६॥

कौला च करवीरा च, कुमुदा पद्मिनी तथा ।
कनका विकटा चैव, रम्या च रमणी तथा ॥३८७॥

वसुन्धरा तथा हंसी, विशाखा नन्दिनी तथा ।

जया च विजया चैव, सुमुखा च प्रियानना ॥३८८॥
इत्येताः कीर्तिता रेखाः, संख्यायां पञ्चविंशतिः ।
उदयभेदोद्भवाः ख्याताः, सपादकर्णमध्यतः ॥३८९॥

भा०टी०—खूणनी रेखाथी जे आकार उत्पन्न थाय छे तेनुं नाम रेखा छे अने संख्यामां ते पचीस छे, ते 'सव्यासा'दि २५ रेखाओनां अनुक्रमे नामो कहीश.

१ सव्यासा, २ शोभना, ३ भद्रा, ४ सुरूपा, ५ सुमनोरमा, ६ शुभा, ७ शान्ता, ८ कौबेरी, ९ सरस्वती, १० कौला, ११ करवीरा, १२ कुमुदा, १३ पद्मिनी, १४ कनका, १५ विकटा, १६ रमा, १७ रमणी, १८ वसुन्धरा, १९ हंसी, २० त्रिशाखा, २१ नन्दिनी, २२ जया, २३ विजया, २४ सुमुखा अने २५ प्रियानना; आ २५ नागरी रेखाओनां नामो कह्यां; आ रेखाओ उदयभेदे उत्पन्न थनारी होवाथी आ नामथी प्रसिद्ध छे, आ रेखाओ सवाया रेखा विस्तार तुल्य उदय अने कोण विस्तार तुल्य उदय वच्चेना अंतरमां उत्पन्न थाय छे.

कला रेखाओ—

पञ्च-खण्डादि-खण्डर्द्ध्या, एकोनत्रिंशकावधि ।
खंडचारे कला ज्ञेया, अंकवृद्धिक्रमेण तु ॥३९०॥

एक-द्वि-त्रि-चतुः-पञ्च,-षट्-सप्ताष्ट क्रमोद्गताः ।
अनेन क्रमयोगेन, एकोनत्रिंशकावधि ॥३९१॥

पञ्चखण्डे कलाश्चैव, संख्यया दश पञ्च च ।
एकोनत्रिंशे पञ्चत्रिं-शदुत्तरं चतुःशतम् ॥३९२॥

भा०टी०—पांच खंडथी मांडीने १-१ खंडने वधारतां २५ रेखाना २९ खंडो थशे, प्रत्येक खंडे नंबरवृद्धिनी साथे कलावृद्धि

करवी. एक, बे, त्रण, च्यार, पाच, छ, सात, आठ इत्यादि क्रमे प्रत्येक खडे एक एक कलानो आक वधारवो, पंच खडोना पहेला खंडे १, बीजा खडे २, त्रीजा खडे ३, चोथा खडे ४, पाचमा खडे ५ कलाओ लगाडता पाच खंडे १५ कलाओ थशे, एज प्रमाणे २५ मी रेखाना २९ खडोनी सर्व कलाओ ४३५) च्यारसो पात्रीश थशे

चन्द्रकला कलावती, कलधौता च रुधिरा ।
नलिनी मालिनी मूला, दुन्दुभिर्वनवल्लिका ॥३९३॥
रत्नचूला वृन्दारका, त्रिशिखा नन्दकौमुदी ।
नयना चक्रोन्मत्ता च, विशाला विभ्रमा लता ॥३९४॥
मृगा च दीपशिखा च, कुमुदमंजरी तथा ।
पूर्णरम्या च माहेन्द्री, कीर्तिपताका तत्परा ॥३९५॥
त्रैलोक्यविजया चैव, नामभि: पञ्चविंशतिः ।
कलारेखाः समाख्याताः, सर्वकामफलप्रदाः ॥३९६॥

भा०टी०—१ चन्द्रकला, २ कलावती, ३ कलधौता, ४ रुधिरा, ५ नलिनी, ६ मालिनी, ७ मूला, ८ दुंदुभि, ९ वनवल्लिका, १० रत्नचूला, ११ वृंदारका, १२ त्रिशिखा, १३ नन्दकौमुदी, १४ नयना, १५ चक्रोन्मता, १६ विशाला, १७ विभ्रमा, १८ लता, १९ मृगा, २० दीपशिखा, २१ कुमुदमजरी, २२ पूर्णरम्या, २३ माहेन्द्री, २४ कीर्तिपताका अने २५ त्रैलोक्यविजया, आ २५ कलारेखाओ नामपूर्वक कही, शिखरना वलनमा आ रेखाओनो उपयोग करवाथी इच्छानुसारे शिखरो बनावी शकाय छे.

कला रेखाओथी भेदातो स्कध—

दशधा मूलपृथुत्व, षड्भाग: स्कन्ध उच्यते ।
पञ्चभागो भवेत् स्कन्धो, भागो वामे च दक्षिणे ॥३९७॥

षड्वाह्ये दोषदः प्रोक्तः, पञ्चमध्ये न शस्यते।
षट्पञ्चमध्यगे स्कन्धो-ऽर्धभागे च जिनांकितः ॥३९८॥
विभक्तिसूत्रैः स्कन्धाः, क्रमेण पञ्चविंशतिः।
नामान्यनुक्रमात्तेषां, कथये तव साम्प्रतम् ॥३९९॥

भा०टी०—रेखा मूले विस्तार दश भागनो अने स्कंन्ध विभागे छ भागनो करवो, आ छ भागना स्कन्धमांथी डावी अने जमणी बाजुथी अर्ध-अर्ध भाग ओछो करीने ५ भागनो स्कन्ध पण करी शकाय छे. ६ भागथी अधिक विस्तारनो स्कन्ध दोषयुक्त गणाय छे अने पांच भागथी ओछा विस्तारनो स्कंध शोभानी दृष्टिए वखाणातो नथी, पांच भागना स्कंधनी डाबी जमणी तरफ अर्धो अर्धो भाग छोडयो, ते प्रत्येकना विस्तारने २४-२४ विभागसूत्रो वडे चिन्हित करीने ते अर्ध भागोना २५-२५ भागो करो, आथी स्कन्धना २५ भेदो उत्पन्न थशे, जेनां नामो तनें अनुक्रमे कहुं छुं.

२५ स्कन्धोनां नाम—

शमः शान्तः शुभः सौम्यो, गधर्वः शंखवर्धनः।
कीर्तिनन्दो महाभोगः, संभ्रमो दिशिनायकः ॥४००॥
रुद्रतेजाः सदाभ्यासो, जनानन्दस्तथोदकः।
यक्षो दक्षः क्षितिधरः, समात्रः संयुतस्तथा ॥४०१॥
शेखरश्च प्रजापूर्णः, प्रवर्तश्च प्रधानकः।
रेखाविभूषणश्चैव, विजयानन्द इत्यमी ॥४०२॥
स्कन्धास्तु नामतो ज्ञेयाः, संख्यातः पञ्चविंशतिः।

१ शम, २ शांत, ३ शुभ, ४ सौम्य, ५ गन्धर्व, ६ शंखवर्धन, ७ कीर्तिनन्द, ८ महाभोग, ९ संभ्रम, १० दिशिनायक, ११ रुद्रतेज, १२ सदाभ्यास, १३ जनानन्द, १४ उदक, १५ यक्ष, १६ दक्ष,

१७ क्षितिधर, १८ समाग, १९ मंयुत, २० शेखर, २१ प्रजापूर्ण, २२ प्रवर्त, २३ प्रधान, २४ रेखाविभूषण अने २५ विजयानन्द, ए २५ प्रकारना रूपो नामथी जाणवा

चन्द्रकला रेखाओ—

अथातः सप्रवक्ष्यामि, रेखाभेदं पृथग विधम् ।
चन्द्रकलादि-समुत्पत्तिः, षोडशैव प्रकीर्तिता ॥४०३॥

त्रिखण्डादौ खण्डवृद्धि-र्यावत्खण्डान्यष्टादश ।
षोडशैव समाचारा-श्चन्द्रकलादौ कीर्तिताः ॥४०४॥

अष्टादावष्टपष्टयन्त, चतुर्वृद्धिक्रमेण तु ।
रेखाणा च प्रयोक्तव्यं, षट्पञ्चाशच्छतद्वयम् ॥४०५॥

भा०टी०—हवे जुदा प्रकारना रेखाभेदने कहु छु, चन्द्रकला रेखाओनी मूल उत्पत्ति १६ प्रकारनी कही छे, एमा पहेली चन्द्रकला रेखा त्रिखडा छे, ते पछी १-१ खडनी वृद्धि थता १६ मी चन्द्र-कला सुधी १८ खण्ड थाय छे, आ १६ मूलरेखाओ समचारवाली छे, जेम पहेलीथी बीजीमा १-१ खड वधे छे तेम एमना खडोमा ४-४ कलाओनी पण वृद्धि थाय छे, पहेली त्रिखंडाना प्रत्येक खंडमा ८-८ कलाओ लागे छे, तेम बीजी चतुष्खडाने च्यारे खंडोमा १२-१२ कलाओ लागे छे, आ नियम प्रमाणे १६ मी १८ खडाना तमाम खडोमा ६८-६८ कलाओ लागे छे, आ १६ रेखाओ अने तेमा ए प्रत्येकनी जातिनी १५-१५ रेखाओ शामेल करीने २५६ चन्द्रकला रेखाओनो शिखर निर्माणमा उपयोग करवो.

१६ मूलचन्द्रकला रेखाओना नाम—

शशिनी शान्तिनी चैव, लक्ष्मिणी कामिनी तथा ।
पुष्टिपणी च शुभा शान्ता, आल्हादा कुमुदा तथा ।४०६।

सुखासनी शंखिनी च, विद्याशोधनिका तथा ।
नाहिनी दीपिनी सौम्या, अमृता षोडशी तथा ॥४०७॥
एकैकस्याः स्वच्छन्देषु, षोडशैव प्रकीर्तिताः ।
रेखाश्चैवं प्रयोक्तव्याः, षट्पञ्चाशच्छतद्वयम् । ॥४०८॥

भा०टी०—१ शशिनी, २ शान्तिनी, ३ लक्ष्मिणी, ४ कामिनी, ५ पुष्पिणी, ६ शुभा, ७ शान्ता, ८ आल्हादा, ९ कुमुदा, १० सुखासनी, ११ शंखिनी, १२ विद्याशोधनी, १३ नाहिनी, १४ दीपिनी, १५ सौम्या अने १६ अमृता; ए मूलरेखाओ पैकीनी एक एकना स्वच्छंदे १६-१६ रेखाओ कही छे, जे सर्व मलीने २५६ थाय छे ते आ प्रमाणे—

१ शशिनीआदित्रिखंडा १६,	९ कुमुदाआदिअग्यारखंडा १६,
२ शान्तिनीआदिचतुष्खंडा १६,	१० सुखासनीआदिबारखंडा १६,
३ लक्ष्मिणीआदिपञ्चखंडा १६,	११ शंखिनीआदितेरखंडा १६,
४ कामिनीआदिषट्खंडा १६,	१२ विद्याशोधिनीआदिचउदखंडा १६
५ पुष्पिणीआदिसप्तखंडा १६,	१३ नाहिनीआदिपंदरखंडा १६,
६ शुभाआदिअष्टखंडा १६,	१४ दीपिनीआदिसोलखंडा १६,
७ शान्ताआदिनवखंडा १६,	१५ सौम्याआदिसत्तरखंडा १६,
८ आह्लादाआदिदशखंडा १६,	१६ अमृताआदिअढारखंडा १६,

आम १६ने १६थी गुणीने २५६ बसो छप्पन्न रेखाओ वास्तुशास्त्रिओए कही छे, तेनो शिखर निर्माणमां उपयोग करवो.

चारविधि—

रेखापृथुत्ववन्मानं, सपादं वा कर्णोदयम् ।
दिग्भक्ते च तलच्छंदे, स्कन्धे कुर्यात् षडंशकम् ॥४०९॥
स्कन्धस्थाने कलाचारो, रेखानामन्तसिद्धये ।
समः सपादः सार्द्धश्च, पादोनद्विगुणस्तथा ॥४१०॥

द्विगुणश्च सपादौ द्वौ, सार्धौं पादोनकास्त्रयः ।
त्रिगुणोऽथ सपादोऽसौ, सार्धः पादोनवेदकः ॥४११॥
चतुर्गुणः सपादश्च, सार्धः पादोनपञ्चकः ।
इति षोडशधा चार, त्रिखंडाद्यासु लक्षयेत् ॥४१२॥

भा०टी०—रेखा विस्तार तुल्य वा रेखा विस्तारथी सवायो अथवा कर्णव्यासतुल्य रेखानो उदय करवो, रेखाने तलछन्दे १० विभाग जेटली विस्तृत करीने स्कन्धविभागे तेने अंदर वाली ६ भाग जेटली राखवी, कलाचार स्कन्धविभागमा जइने रेखाओनो अंत करे छे अर्थात् स्कन्ध सुधी रेखा उची जइने समाप्त थाय छे

कलाओनो चार समान, सवायो, दोढो, पोणा बे गणो, बेगणो, सवाबेगणो, अढीगणो, पोणात्रणगणो, त्रणगणो, सवात्रणगणो, साढा-त्रणगणो, पोणाच्यारगणो, च्यारगणो, सवाच्यारगणो, साढाच्यारगणो अने पोणापांचगणो, आम त्रिखडादि १६–१६ रेखाओनी कलाओनो चार (चढाव) १६ प्रकारनो जाणवो जोईये

प्रत्येक मूलरेखा समचारी होय छे, त्यारे ते पछीनी १५ रेखा-ओमा एक पछी एकमा ४–४ कलाओ वधती होवाथी ४ कलानी वृद्धिवाली 'सपादचारी' ८ नी वृद्धिवाली 'सार्धचारी,' आदि नामो प्राप्त करे छे.

प्रथमा त्रिखंडाना प्रथम खडमा ८, बीजा खडमा ८ अने त्रीजा खडमा पण ८ कलाओ लागे छे, आम १६ त्रिखडाओना प्रथम खंडमा ८–८ कलाओ लागे छे.

प्रथमा त्रिखडाना ३ खंडोनी २४ कलाओ वडे स्कन्ध २४ ठेकाणे भेदाय छे, द्वितीया त्रिखडानी २७ कलाओ वडे २७ ठेकाणे, त्रीजीनी ३० कलाओथी ३० ठेकाणे स्कन्ध छेदाय छे, आम जे जे रेखाओना सर्व खडोनी जेटली कलाओ होय तेटले

ठेकाणे ते स्कन्धने चिन्हित करे छे अने तेटला प्रकारनां शिखरोनी उत्पत्ति थाय छे.

अधःखण्डे तु यश्चार, उर्ध्वंखण्डेऽप्यसौ भवेत् ।
समं सा लभते चारं, सपादं वा पदाधिकम् ॥४१३॥

समं सपादं सार्धं वा, यावत्पादोनपञ्चकम् ।
त्रिखंडादौ खंडवृद्ध्या-ऽष्टादशखण्डकावधि ॥४१४॥

भा०टी०—नीचेना रेखा खण्डमां जे चार होय छे तेज उपरना खंडमां पण होय छे, सम, सपाद के सार्धं, जे चार निचला खंडमां होय छे, ते चारने रेखा प्रत्येक खंडमां मेलवे छे, त्रिखंडाथी मांडीने अष्टादशखंडी रेखा सुधीनी प्रत्येक रेखाने माटे एज नियम लागु करवो, भले ते समचारी होय, सपादचारी होय अथवा तो पादोन-पञ्चचारी होय, पण तेना पोताना प्रत्येक खंडमां तो चार सरखोज पामे.

कलाविधि

आदिखंडे चतुर्वृद्धि-रूर्ध्वंखण्डेषु तद्गुणा ।
षोडशादिद्वि-रष्टोक्ता, षट्पञ्चाशच्छतद्वयम् ॥४१५॥

स्कन्धस्थाने कलासंख्या, रेखाणां तु गुणोदिता ।
सिद्धाश्चयत्कृतारेखा-स्तदूर्ध्वे चामलसारकम् ॥४१६॥

विषमा भूमिकाः कार्या, न शस्यन्ते समास्तु ताः ।

भा० टी०—पूर्वं रेखाना आदिखंडनी कलाओथी बीजा छंदनी अग्रेतन रेखाना आदिखंडमां ४ कलाओनी वृद्धि थाय छे. ते अग्रेतन प्रथम प्रथम रेखा समचारी होवाथी तेना बधा खंडोमां कलासंख्या तेज रहे छे अने समानछंदनी पोतानी बीजी १५ विषम-चारी रेखाओना द्वितीयादि खंडोमां रेखाना नंबर प्रमाणे कला संख्या वधे छे, प्रथम विषमचारी रेखाना प्रथम खंडे ८ कलाओ हशे तो

बीजे ९ अने त्रीजे १० कलाओ लागशे, जो तेज छंदनी विषमचारी १६मी रेखा हशे तो तेना प्रथमखंडे ८, बीजे २३ अने त्रीजे ३८, आम रेखाना नंबर अनुसारे उपला प्रतिखंडे १५-१५ नी वृद्धि थशे, केमके आ १६मी रेखानो विषमचारिणी तरीके १५मो नंबर छे, एज प्रमाणे तमाम रेखाओना पोताना प्रथम खंडथी द्वितीयादि खंडोनी कलासंख्या पोतपोताना नंबर प्रमाणे प्रथमखंडनी कलाओथी द्वितीयादि खंडोमां तत्तद्गुणी वृद्धि करीने कलाओ लगाडवी, आम १६ ने १६ गुणा करीने बनावेली २५६ रेखाओने विषे जाणवु.

स्कन्धविभागे प्रथम करता बीजीनी ३ कलाओ वधारवी, बीजी करता त्रीजीनी ३ वधारवी, सर्वथी पहेली 'शशिनी' रेखानी २४ कलाओ स्कंधविभागे लागे छे त्यारे बीजीनी २७, त्रीजीनी ३०, चोथीनी ३३, इत्यादि एक एक रेखानी वृद्धिए स्कंधविभागे ३-३ कलाओनी वृद्धि करता जवु, ज्यां ज्यां कलाओ वडे रेखाओनी समाप्ति थाय त्यां उपर आमलसारो मूकवो

रेखासमाप्ति विषम भूमिकाए करवी, समभूमिए करवी प्रशस्त नथी, अर्थात् उदयरेखा अने वलनरेखाओनी विषम कलाओ ज्यां एकत्र थती होय त्यां प्रासादनी रेखा छोडवी उत्तम गणाय छे.

२५६ रेखाओना नाम—

१६ त्रिखण्डा—शशिनी, शीतला, सौम्या, शान्ता, मनोरमा, शुभा, मनोभद्रा, वीरा, कुमुदा, पद्मशेखरा, ललिता, लीलावती, त्रिदशा, पूर्णमण्डला, पूर्णभद्रा, भद्राणी

१६ चतुष्खण्डा—शान्तिनी, शुभा, शाता, त्रिदिवा, देवदुर्लभा, बीभत्सा, शिवा, सौम्या, वीरभद्रा, नारायणी, सुप्रिया, शेखरा, रम्या, पूर्णा, पूर्णभद्रा, विजया

१६ पञ्चखण्डा—लक्ष्मिणी, श्री, अमरा, विद्रुा, पूर्णमण्डला,

सुगन्धा, मानसी, शैला, नन्दा, मन्दाक्षी, कौतुका, शांति, लाभा, कल्याणी, सुभद्रा, भद्रेश्वरी.

१६ षट्खण्डा—कामिनी, कमला, पद्मा, संभ्रमा, भ्रमशेखरा, शुभा, सारसंभूता, वैदेवी, गान्धारी, गन्धर्वा, वृत्ता, तिलका, लोकसुंदरी, भद्रा, महाभद्रा, ऐन्द्री.

१६ सप्तखण्डा—पुष्पिणी, पुष्पिका, चम्पा, समद्दा, तिलका, अद्भुता, सिद्धा, सिद्धांगी, स्वरूपा, क्रीडामणि, नरनारा, नरेश्वरी, विरूपाक्षा, महोद्भवा, सिद्धांशा, सर्वमंडला.

१६ अष्टखण्डा—शुभा, शीतला, गन्धा, मालती, हर्म्यसंयुता, मेघा, मेघपदा, अनुजा, कृष्णा, निर्मला, परा, तेजा, प्रतापतेजा, कीर्ति, आनन्दा, संभूता.

१६ नवखण्डा—शान्ता, मुकुला, नन्दा, श्रिया, भद्रा, नन्दना, शोभना, सुभद्रा, सुता, कुलनंदिनी, गंभीरा, मधुरा, शेखरा, शिखरोन्नता, महानीला, रत्नाचला.

१६ दशखण्डा—आह्लादा, श्रिया, नन्दा, गोमती, नामसुन्दरी, सुभद्रा, भद्रिका, भद्रा, भद्रांगा, भद्रमालिनी, संभूता, भूतशरदा, पताका, कीर्तिवर्द्धिनी, माहेन्द्री, सुन्दरी.

१६ एकादशखण्डा—कुमुदा, भद्रका, ध्वजा, ध्वजाक्षी, मकरध्वजा, सुपताका, वीरभद्रा, रूपभद्रा, विनायका, वीरा, विक्रमा, रम्या, मन्मथा, देवसुन्दरी, उग्रा, कनकेशी.

१६ द्वादशखण्डा—सुखासनी, वरदा, रम्या, सुन्दरा, मोदा, मोदकी, शिवा, सर्वलंभा, विशाला, कुलनायका, शिभा, शिवतमा, दिव्या, शिवांगना, विश्वेश्वरी, विश्वरुपा.

१६ त्रयोदशखण्डा—शान्तिकी, विमला, सूर्या, वर्धना,

विजया, वाञ्छिता, वंशोद्भवा, वंशभूता, रेखिता, वंशतारा, अधिवास्या, वश्या, माना, शिवोद्भवा, वास्या, वसंतोद्भवा.

१६ चतुर्दशखण्डा—विद्याशोधनी, रम्या, गौरी, हसी, सरस्वती, सारंगी, सौरम्या, शुकाग्रा, अशोका, शौचकी, कनका, कनकावती, कदर्पी, कंदर्पाश्रिता, कमला, कलहसी.

१६ पञ्चदशखण्डा—नाहिनी, हस्तिनी, कुम्भिका, गजमालिनी, गजी, गजागा, शेखरी, राज्ञी, गजेश्वरी, रत्ना, रत्नगर्भा, माला, जया, उग्रतेजा,प्रिया, आसक्ता.

१६ षोडशखण्डा—द्वीपिनी, सिंहिनी, सिंही, सिंहरूपा, सिंहोन्नता, सिंहग्रीवा, सिंहा, सिंहास्या, सिंहेश्वरी, महानादा, नादवती, सिंहनादा, नादोद्भवा, सिंहागना, सिद्धा, सकलेश्वरी.

१६ सप्तदशखण्डा—सौम्या, नारायणी रम्या, नरा, नरोत्तमा, नरेश्वरी, नराहा, नरागा, नृत्येश्वरी, वीरमती, वीरागी, महावीरा, वीरनायका, वीभत्सा, सती, शान्ता.

१६ अष्टादशखण्डा—अमृता, रम्या, गगा, ककुदा, कुमुदशेखरी, वीभत्सा, पार्थिवी, कान्ता, मनोहरी, स्वरूपा, विक्रमा, शान्ता, मनोज्ञा, सर्वतोमुखी, यज्ञभद्रा, सुवासीना.

अपराजितपृच्छाना मूलश्लोकोमां उपर्युक्त २५६ चन्द्रकला रेखाओनां नामो छे, अमोए विस्तार भयथी श्लोको न लखता नामोनो ज निर्देश कर्यो छे

नागरे ललिते रेखा, सान्धारे मिश्रके तथा।
लाञ्छना-सूत्र-योगेन, रेखा भवति नागरी ॥४१७॥

कथिता गर्भमार्गार्थं, विमाने भूमिजे तथा।
वराटे द्राविडे चैव, प्रशस्ता गर्भमार्गतः ॥४१८॥

स्तंभाद्याश्चैव गर्भाद्याः, प्रासादभित्तिमानतः ।
चतुर्विधा भवेद्रेखा, विमाने चैव भूमिजे ॥४१९॥
वराटे द्राविडे कार्या छन्दे विमाननागरे ।
विमान–पुष्पके तद्वद्, वल्लभीष्वपि कामदा ॥४२०॥
लाञ्छना–सूत्रयोगेन, रेखा सूत्रद्वयाङ्किता ।
वेणिकोशोद्भवा रेखा, कलाभेदक्रमादपि ॥४२१॥
नागरे लतिने कार्या, सान्धारेऽप्यथ मिश्रके ।
दारुजे च रथारोहे, प्रशस्ता सर्वकामदा ॥४२२॥
शिखान्ता वा भवेद्रेखा, घण्टान्ता चाप्यथोच्यते ।
स्कन्धान्ता च तथा प्रोक्ता, अन्यथा दोषकारणम् ॥४२३॥

भा०टी०—नागर, लतिन, सांधार अने मिश्रक प्रासादोना शिखरोमां नागरी रेखानो प्रयोग करवो, नागरी रेखा चिह्नमाटे तैयार करेला सूत्रना योगथी उत्पन्न थाय छे.

विमान प्रासाद तथा भूमिज प्रासादनी रेखा गर्भमर्यादाए विस्तृत करवानुं कथन छे. तथा वराट अने द्राविड जातिना प्रासादोमां रेखा विस्तारगर्भथी कंइक बाहर राखवी श्रेष्ठ छे.

स्तंभ मर्यादाए, गर्भ मर्यादाए भित्ति मर्यादाए, भित्ति मर्यादाए अने उक्त गर्भनी बाहरनी मर्यादाए; आम विस्तारमां रेखा च्यार प्रकारनी होय छे. आ च्यारे प्रकारनी रेखा विमान अने भूमिज प्रासादमां लेवाय छे, वली वराट, द्राविड, विमाननागर, विमानपुष्पक अने वल्लभी; आ बधी जातिना प्रासादोमां पूर्वोक्त च्यारप्रकारनी रेखाओ यथायोग्य उपयोगमां लेवी शुभ फलदायक छे.

नागर, लतिन, सांधार, मिश्रक, दारुज (सिंहावलोकन) अने रथारोह; आ सर्व प्रासादोमां वेणिकोशना योगथी लाञ्छना सूत्रद्वयवडे

षट्खण्डायाः १६ भेदाः

२०	२०	२०	२०	२०	२०
२०	२१	२२	२३	२४	२५
२०	२२	२४	२६	२८	३०
२०	२३	२६	२९	३२	३५
२०	२४	२८	३२	३६	४०
२०	२५	३०	३५	४०	४५
२०	२६	३२	३८	४४	५०
२०	२७	३४	४१	४८	५५
२०	२८	३६	४४	५२	६०
२०	२९	३८	४७	५६	६५
२०	३०	४०	५०	६०	७०
२०	३१	४२	५३	६४	७५
२०	३२	४४	५६	६८	८०
२०	३३	४६	५९	७२	८५
२०	३४	४८	६२	७६	९०
२०	६५	५०	६५	८०	९५

सप्तखण्डायाः १६ रेखा भेदाः

२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४
२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
२४	२६	२८	३०	३२	३४	३६
२४	२७	३०	३३	३६	३९	४२
२४	२८	३२	३६	४०	४४	४८
२४	२९	३४	३९	४४	४९	५४
२४	३०	३६	४२	४८	५४	६०
२४	३१	३८	४५	५२	५९	६६
२४	३२	४०	४८	५६	६४	७२
२४	३३	४२	५१	६०	६९	७८
२४	३४	४४	५४	६४	७४	८४
२४	३५	४६	५७	६८	७९	९०
२४	३६	४८	६०	७२	८४	९६
२४	३७	५०	६३	७६	८९	१०२
२४	३८	५२	६६	८०	९४	१०८
२४	३९	५४	६९	८४	९९	११४

अष्टखण्डायाः १६ रेखाभेदाः

२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८
२८	२९	३०	३१	३२	३३	३४	३५
२८	३०	३२	३४	३६	३८	४०	४२
२८	३१	३४	३७	४०	४३	४६	४९
२८	३२	३६	४०	४४	४८	५२	५६
२८	३३	३८	४३	४८	५३	५८	६३
२८	३४	४०	४६	५२	५८	६४	७०
२८	३५	४२	४९	५६	६३	७०	७७
२८	३६	४४	५२	६०	६८	७६	८४
२८	३७	४६	५५	६४	७३	८२	९१
२८	३८	४८	५८	६८	७८	८८	९८
२८	३९	५०	६१	७२	८३	९४	१०५
२८	४०	५२	६४	७६	८८	१००	११२
२८	४१	५४	६७	८०	९३	१०६	११९
२८	४२	५६	७०	८४	९८	११२	१२६
२८	४३	५८	७३	८८	१०३	११८	१३३

नव खण्डायाः १६ रेखा भेदाः

३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२
३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०
३२	३४	३६	३८	४०	४२	४४	४६	४८
३२	३५	३८	४१	४४	४७	५०	५३	५६
३२	३६	४०	४४	४८	५२	५६	६०	६४
३२	३७	४२	४७	५२	५७	६२	६७	७२
३२	३८	४४	५०	५६	६२	६८	७४	८०
३२	३९	४६	५३	६०	६७	७४	८१	८८
३२	४०	४८	५६	६४	७२	८०	८८	९६
३२	४१	५०	५९	६८	७७	८६	९५	१०४
३२	४२	५२	६२	७२	८२	९२	१०२	११२
३२	४३	५४	६५	७६	८७	९८	१०९	१२०
३२	४४	५६	६८	८०	९२	१०४	११६	१२८
३२	४५	५८	७१	८४	९७	११०	१२३	१३६
३२	४६	६०	७४	८८	१०२	११६	१३०	१४४
३२	४७	६२	७७	९२	१०७	१२२	१३७	१५२

दश खण्डाया. १६ रेखा भेदा'

३६	३६	३६	३६	३६	३६	३६	३६	३६	३६
३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५
३६	३८	४०	४२	४४	४६	४८	५०	५२	५४
३६	३९	४२	४५	४८	५१	५४	५७	६०	६३
३६	४०	४४	४८	५२	५६	६०	६४	६८	७२
३६	४१	४६	५१	५६	६१	६६	७१	७६	८१
३६	४२	४८	५४	६०	६६	७२	७८	८४	९०
३६	४३	५०	५७	६४	७१	७८	८५	९२	९९
	४४	५२	६०	६८	७६	८४	९२	१००	१०८
			६३	७२	८१	९०	९९	१०८	११७
			६६	७६	८६	९६	१०६	११६	१२६
			९	८०	९१	१०२	११३	१२४	१३५
	८	६०	७२	८४	९६	१०८	१२०	१३२	१४४
३६	४९	६२	७५	८८	१०१	११४	१२७	१४०	१५३
३६	५०	६४	७८	९२	१०६	१२०	१३४	१४८	१६२
	५१	६६	८१	९६	१११	१२६	१४१	१५६	१७१

एकादश खण्डायाः १६ भेदाः

४०	४०	४०	४०	४०	४०	४०	४०	४०	४०	४०
४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०
४०	४२	४४	४६	४८	५०	५२	५४	५६	५८	६०
४०	४३	४६	४९	५२	५५	५८	६१	६४	६७	७०
४०	४४	४८	५२	५६	६०	६४	६८	७२	७६	८०
४०	४५	५०	५५	६०	६५	७०	७५	८०	८५	९०
४०	४६	५२	५८	६४	७०	७६	८२	८८	९४	१००
४०	४७	५४	६१	६८	७५	८२	८९	९६	१०३	११०
४०	४८	५६	६४	७२	८०	८८	९६	१०४	११२	१२०
४०	४९	५८	६७	७६	८५	९४	१०३	११२	१२१	१३०
४०	५०	६०	७०	८०	९०	१००	११०	१२०	१३०	१४०
४०	५१	६२	७३	८४	९५	१०६	११७	१२८	१३९	१५०
४०	५२	६४	७६	८८	१००	११२	१२४	१३६	१४८	१६०
४०	५३	६६	७९	९२	१०५	११८	१३१	१४४	१५७	१७०
४०	५४	६८	८२	९६	११०	१२४	१३८	१५२	१६६	१८०
४०	५५	७०	८५	१००	११५	१३०	१४५	१६०	१७५	१९०

त्रयोदश खण्डायाः १६ भेदाः

४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८
४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०
४८	५०	५२	५४	५६	५८	६०	६२	६४	६६	६८	७०	७२
४८	५१	५४	५७	६०	६३	६६	६९	७२	७५	७८	८१	८४
४८	५२	५६	६०	६४	६८	७२	७६	८०	८४	८८	९२	९६
४८	५३	५८	६३	६८	७३	७८	८३	८८	९३	९८	१०३	१०८
४८	५४	६०	६६	७२	७८	८४	९०	९६	१०२	१०८	११४	१२०
४८	५५	६२	६९	७६	८३	९०	९७	१०४	१११	११८	१२५	१३२
४८	५६	६४	७२	८०	८८	९६	१०४	११२	१२०	१२८	१३६	१४५
४८	५७	६६	७५	८४	९३	१०२	१११	१२०	१२९	१३८	१४७	१५६
४८	५८	६८	७८	८८	९८	१०८	११८	१२८	१३८	१४८	१५८	१६८
४८	५९	७०	८१	९२	१०३	११४	१२५	१३६	१४७	१५८	१६९	१८०
४८	६०	७२	८४	९६	१०८	१२०	१३२	१४४	१५६	१६८	१८०	१९२
४८	६१	७४	८७	१००	११३	१२६	१३९	१५२	१६५	१७८	१९१	२०४
४८	६२	७६	९०	१०४	११८	१३२	१४६	१६०	१७४	१८८	२०२	२१६
४८	६३	७८	९३	१०८	१२३	१३८	१५३	१६८	१८३	१९८	२१३	२२८

चतुर्दश खण्डायाः १६ भेदाः

५२	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५२
५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०	६१	६२	६३	६४	६५
५२	५४	५६	५८	६०	६२	६४	६६	६८	७०	७२	७४	७६	७८
५२	५५	५८	६१	६४	६७	७०	७३	७६	७९	८२	८५	८८	९१
५२	५६	६०	६४	६८	७२	७६	८०	८४	८८	९२	९६	१००	१०४
५२	५७	६२	६७	७२	७७	८२	८७	९२	९७	१०२	१०७	११२	११७
५२	५८	६४	७०	७६	८२	८८	९४	१००	१०६	११२	११८	१२४	१३०
५२	५९	६६	७३	८०	८७	९४	१०१	१०८	११५	१२२	१२९	१३६	१४३
५२	६०	६८	७६	८४	९२	१००	१०८	११६	१२४	१३२	१४०	१४८	१५६
५२	६१	७०	७९	८८	९७	१०६	११५	१२४	१३३	१४२	१५१	१६०	१६९
५२	६२	७२	८२	९२	१०२	११२	१२२	१३२	१४२	१५२	१६२	१७२	१८२
५२	६३	७४	८५	९६	१०७	११८	१२९	१४०	१५१	१६२	१७३	१८४	१९५
५२	६४	७६	८८	१००	११२	१२४	१३६	१४८	१६०	१७२	१८४	१९६	२०८
५२	६५	७८	९१	१०४	११७	१३०	१४३	१५६	१६९	१८२	१९५	२०८	२२१
५२	६६	८०	९४	१०८	१२२	१३६	१५०	१६४	१७८	१९२	२०६	२२०	२३४
५२	६७	८२	९७	११२	१२७	१४२	१५७	१७२	१८७	२०२	२१७	२३२	२४७

पञ्चदश खण्डायाः १६ भेदाः कला सहिताः

५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६
५६	५७	५८	५९	६०	६१	६२	६३	६४	६५	६६	६७	६८	६९	७०
५६	५८	६०	६२	६४	६६	६८	७०	७२	७४	७६	७८	८०	८२	८४
५६	५९	६२	६५	६८	७१	७४	७७	८०	८३	८६	८९	९२	९५	९८
५६	६०	६४	६८	७२	७६	८०	८४	८८	९२	९६	१००	१०४	१०८	११२
५६	६१	६६	७१	७६	८१	८६	९१	९६	१०१	१०६	१११	११६	१२१	१२६
५६	६२	६८	७४	८०	८६	९२	९८	१०४	११०	११६	१२२	१२८	१३४	१४०
५६	६३	७०	७७	८४	९१	९८	१०५	११२	११९	१२६	१३३	१४०	१४७	१५४
५६	६४	७२	८०	८८	९६	१०४	११२	१२०	१२८	१३६	१४४	१५२	१६०	१६८
५६	६५	७४	८३	९२	१०१	११०	११९	१२८	१३७	१४६	१५५	१६४	१७३	१८२
५६	६६	७६	८६	९६	१०६	११६	१२६	१३६	१४६	१५६	१६६	१७६	१८६	१९६
५६	६७	७८	८९	१००	१११	१२२	१३३	१४४	१५५	१६६	१७७	१८८	१९९	२१०
५६	६८	८०	९२	१०४	११६	१२८	१४०	१५२	१६४	१७६	१८८	२००	२१२	२२४
५६	६९	८२	९५	१०८	१२१	१३४	१४७	१६०	१७३	१८६	१९९	२१२	२२५	२३८
५६	७०	८४	९८	११२	१२६	१४०	१५४	१६८	१८२	१९६	२१०	२२४	२३८	२५२
५६	७१	८६	१०१	११६	१३१	१४६	१६१	१७६	१९१	२०६	२२१	२३६	२५१	२६६

सप्त दश खण्डायाः १६ भेदाः

६४	६४	६४	६४	६४	६४	६४	६४	६४	६४	६४	६४	६४	६४	६४	६४	६४
६४	६५	६६	६७	६८	६९	७०	७१	७२	७३	७४	७५	७६	७७	७८	७९	८०
६४	६६	६८	७०	७२	७४	७६	७८	८०	८२	८४	८६	८८	९०	९२	९४	९६
६४	६७	७०	७३	७६	७९	८२	८५	८८	९१	९४	९७	१००	१०३	१०६	१०९	११२
६४	६८	७२	७६	८०	८४	८८	९२	९६	१००	१०४	१०८	११२	११६	१२०	१२४	१२८
६४	६९	७४	७९	८४	८९	९४	९९	१०४	१०९	११४	११९	१२४	१२९	१३४	१३९	१४४
६४	७०	७६	८२	८८	९४	१००	१०६	११२	११८	१२४	१३०	१३६	१४२	१४८	१५४	१६०
६४	७१	७८	८५	९२	९९	१०६	११३	१२०	१२७	१३४	१४१	१४८	१५५	१६२	१६९	१७६
६४	७२	८०	८८	९६	१०४	११२	१२०	१२८	१३६	१४४	१५२	१६०	१६८	१७६	१८४	१९२
६४	७३	८२	९१	१००	१०९	११८	१२७	१३६	१४५	१५४	१६३	१७२	१८१	१९०	१९९	२०८
६४	७४	८४	९४	१०४	११४	१२४	१३४	१४४	१५४	१६४	१७४	१८४	१९४	२०४	२१४	२२४
६४	७५	८६	९७	१०८	११९	१३०	१४१	१५२	१६३	१७४	१८५	१९६	२०७	२१८	२२९	२४०
६४	७६	८८	१००	११२	१२४	१३६	१४८	१६०	१७२	१८४	१९६	२०८	२२०	२३२	२४४	२५६
६४	७७	९०	१०३	११६	१२९	१४२	१५५	१६८	१८१	१९४	२०७	२२०	२३३	२४६	२५९	२७२
६४	७८	९२	१०६	१२०	१३४	१४८	१६२	१७६	१९०	२०४	२१८	२३२	२४६	२६०	२७४	२८८
६४	७९	९४	१०९	१२४	१३९	१५४	१६९	१८४	१९९	२१४	२२९	२४४	२५९	२७४	२८९	३०४

वास्तुसार प्रकरणमां ठक्कुर फेरुए शिखरोना उदयने अंगे नीचे प्रमाणे जणाव्युं छे—

दूणु पाऊणु भूमजु, नागरू सतिहाउ दिवड्ढु सप्पाउ ।
दाविडसिहरो दिवढो, सिरिवच्छो पऊणदूणो अ ॥४२४॥

भा० टी०—भूमिज प्रासादनुं शिखर बे गणुं अथवा पोणा बे गणुं करवुं, नागर प्रासादनुं शिखर दोढुं, सवायुं, अथवा एकतृतीयांश सहित उंचुं करवुं, द्राविडप्रासादने शिखर दोढुं उंचुं करवुं अने श्री-वत्स जातिना शिखरनी उंचाई पोणा बे गणी करवी. आ शिखरोनी उंचाईना वैविध्यनुं कारण रेखा वैविध्य ज होइ शके, नागर जातिना प्रासादोनां शिखरो दोढां उपरांत उंचां लेइ जवानुं विधान नथी, केमके आ जातिना प्रासादोमां रेखा स्कन्धान्त मानवामां आवती होइ ते अपेक्षाए शिखरो व्यासतुल्य, सवायां अने दोढां उंचां गण-वामां आवे छे, जे प्रासादोनां शिखरो पोणा बमणां गणाय छे ते जातिने अंगे रेखा स्कन्धान्त अने बमणां उंचां शिखरोमां रेखा शिखान्त मनाती होवी जोइये.

आमलसारकना आकारो—

द्वयोः प्रथयोर्मध्ये, वृत्तमामलसारकम् ॥
नागरे लतिने कुर्यात् , सान्धारे चैव मिश्रके ।
विमान-नागरच्छन्दे, विमान-पुष्पके तथा ॥४२५॥
विमाने भूमिजे चैव, वृत्तं च कर्णिकान्तकम् ।
द्राविडे तु तथा चैव, तं तु रेखानुरूपकम् ॥४२६॥
वराटे तु भवेद् घण्टा, यादृग् मन्दारपुष्पकम् ।
वलभीषु च सर्वासु, गजपृष्ठाकृतिस्तथा ॥४२७॥
नागरे घण्टाकृत्तिकां, कुर्यात् सिंहावलोकने ।
घण्टा चैवमुपाख्याता, प्रयुक्ता वास्तुवेदिभिः ॥४२८॥

भा०टी०—रंने प्रतिरथो वच्चे गोलाकार आमलसारक करवो. नागर, लतिन, सान्धार, मिश्रक, विमाननागर, विमानपुष्पक, विमान अने भूमिज, आ नव प्रासादोनो आमलसारो गोल अने फरती कणीओ काढेलो बनाववो. द्राविड प्रासादनो आमलसारो तेनी रेखाने अनुरूप होय तेवो, वराट प्रासादनो आमलसारो मदारवृक्षना पुष्पने आकारे, सर्व वलभी प्रासादोमां आमलसारो हस्तिनी पीठना आकारे लंबगोल, तथा नागर अने सिंहावलोकन प्रासादोनो आमलसारो घंटना आकारनो बनाववो

आ प्रमाणे वास्तुशास्त्रिओए प्रयोजेल आमलसारानुं निरूपण कर्युं.

आमलसारानी अंगविभक्ति—

उदये च तदर्धे तु, विभक्ते चतुर्भागिके।
ग्रीवा पादोनभागा स्यात्, सपादं च तथाऽण्डकम् ।४२९।
चन्द्रिका चैकभागेन, भागा चामलसारिका।

भा०टी०—आमलसारो निस्तारमां बे प्रतिरथोना मध्य बरा बर करी तेना उदय विस्तारथी अर्धमाननो करवो अने ते उदयने ४ भागे वहेंची ०॥। भागनी ग्रीवा (गळुं), १। भागनुं आमलसारानुं अंडक, १ भागनी चंद्रिका (गलत) अने १ भागनी आमलसारी (झाजरी) करवी.

प्रासाद-पुरुष-निवेशन—

अथातः संप्रवक्ष्यामि, पुरुषस्य निवेशनम् ।
न्यसेद्देवालयेष्वेव, जीवस्थाने फलं लभेत् ॥४३०॥
छादनोपप्रवेशेषु, शृंगमध्येऽथवोपरि ।
शुकनासाग्रमानेषु, वेधूर्ध्वे भूमिकान्तरे ॥४३१॥
गर्भमध्ये विधानज्ञे, हृदयवर्णको विधिः ।
हंसतुली ततः कुर्यात्, ताम्रपर्यंकमस्थिनाम् ॥४३२॥

शयनं चापि निर्दिष्टं, पद्मं च दक्षिणे करे।
त्रिपताकं करं वामं, कारयेद् हृदि संस्थितम् ॥४३३॥

प्रमाणं तस्य वक्ष्यामि, प्रासादादौ समस्तके।
हस्तादिशतार्धं यावत्, प्रकल्पयेदनुक्रमम् ॥४३४॥

वृद्धिमर्धांगुलां हस्ते, यावन्मेरुं प्रकल्पयेत्।
एवंविधः प्रकर्तव्यः, सर्वकामफलप्रदः ॥४३५॥

हेमजे तारजे वापि, ताम्रजे वापि भागशः।
कलशे आज्यपूर्णे तु, सौवर्णपुरुषं न्यसेत् ॥४३६॥

पर्यंकचतुष्पादेषु, कुम्भाँश्चतुर एव च।
हिरण्यनिधिसंयुक्तान्, आत्मसुद्राभिमुद्रितान् ॥४३७॥

एवं च रोपयेद् जीवं, यथोक्तं वास्तुशासने।
तस्य न संभवेद् दौस्थ्यं, यावदाभूत संप्लवम् ॥४३८॥

भा०टी०—विश्वकर्माजी अपराजितने कहे छे–हवे हुं पुरुष–प्रवेशनी विधि कहुं छुं, सर्व देवालयोमां जीवस्थाने पुरुषनो प्रवेश करावबो के जेथी फल मले.

शिखरने बांधणे, शिखर मध्यभागे, अथवा तेना उपला भागमां, शुकनासना अन्ते अने वेदीनी उपरि भूमिकामां गर्भना मध्यभागे हृदय प्रतिष्ठानी विधि करवी.

प्रथम त्रांबानो पलंग करावी ते उपर रेशमी तलाइ (गादी) बिछाववी अने ते उपर प्रासाद पुरुषने सुवडाववो.

पुरुषना जमणा हाथमां कमल अने डाबा हाथमां ३ पताका-वाली ध्वजा आपवी ने डाबो हाथ पोतानी छातीअे अडकेलो राखवो.

हवे पुरुषनुं प्रमाण कहुं छुं, १ हाथथी ५० हाथना फेरु प्रासाद पर्यन्तना तमाम प्रासादोमां पुरुषनुं प्रमाण १ हाथे अर्ध आंगलना

हिसाबे करवुं, ५० हाथ सुधी प्रतिहस्ते अर्ध अर्ध आंगलनी वृद्धिए प्रासाद पुरुषनु निर्माण करवु. आम प्रमाणोपेत पुरुष करवो के जेथी सर्व इष्ट फल देनारो थाय, सुवर्ण पुरुषने सोनाना, रूपाना, त्रांबाना, अथवा त्रणे धातुओना बनेला अने घृतथी भरेला कलश उपर स्थापित करवो.

पलंगना ४ पायाओ नीचे उपर पोतपोताना लखेला नामो वाला दारुणा वडे मुद्रित करीने सुवर्णादि रत्नगर्भित ४ निधि कलशो स्थापन करवा

आ प्रमाणे वास्तुशास्त्रमा कहेल विधिथी प्रासादना जीवस्थानमा जे जीवनी (पुरुषनी) स्थापना करे छे तेने सृष्टिना अंतपर्यन्त दुःख-दौर्भाग्य प्राप्त थतुं नथी

कलश

देवागारेषु सर्वेषु, नृपाणां भवने तथा ।
संस्थाप्यो दिव्यः कलशो, विश्वकर्मवचो यथा ॥४३९॥
शैलजे शैलज कुर्याद्, दारुजे दारुज तथा ।
धातुजे धातुज चैव-चैष्टिके चैष्टिक शुभम् ॥४४०॥
चित्रे चित्रो विधातव्यो, हेमजः सर्वकामदः ।
श्रेष्ठौ सर्वत्र श्रेष्ठाना, सुवर्णकलशध्वजौ ॥४४१॥

भा०टी०—सर्व देवमंदिरो उपर अने राजमहेलो उपर दिव्य कलश स्थापन करवो एवुं विश्वकर्मानुं वचन छे, पत्थरना प्रासाद उपर पत्थरनो, काष्ठना मंदिर उपर काष्ठनो, धातुना प्रासादे धातुनो अने इटना प्रासादे इटनो कलश शुभ होय छे, चित्रविचित्र द्रव्यथी बनेल प्रासाद उपर तेवा चित्र पदार्थनो बनेलो कलश करवो. अने सुवर्णनो कलश सर्वप्रकारना प्रासादो उपर चढावबो ते इच्छित फलदायक छे. सुवर्णनो कलश अने ध्वज सर्वत्र श्रेष्ठमा श्रेष्ठ छे.

प्रासादमाने कलशमान—

प्रासादस्याष्टमांशेन, पृथुत्वं कलशाण्डके।
षोडशांशैर्युतं श्रेष्ठं, मध्यं द्वात्रिंशदंशतः ॥४४२॥
मूलरेखापञ्चमांशे, पृथुत्वं तस्य कारयेत्।
घण्टाविस्तारपादेन, तत्पादेन युतं पुनः ॥४४३॥
इत्थं कलशविस्तार, उच्छ्रयस्तस्य सार्धतः।
नागरे लतिने शस्तः, सांधारे मिश्रके तथा ॥४४४॥
विमाननागरच्छन्दे, विमान-पुष्पके तथा।
धातुजे रत्नजे चैव,रथारोहे च दारुजे ॥४४५॥
शैलजे स चतुर्थांश, ऐष्टिकादौ समस्तके।
इत्युक्तः कलशश्चैवं, सर्वकामफलप्रदः ॥४४६॥

भा०टी०—१ प्रासादमानना आठमा भाग जेटलो कलशना अंडक (पेटा)नो विस्तार करवो ए कलशनुं कनिष्ठ मान छे, ए मानमां एनो १६मो भाग उमेरवाथी कलशनु उत्तममान अने ३२मो भाग वधारवाथी मध्यम माननो कलश गणाय छे.

२-रेखामूलना विस्तारना पञ्चमांशे विस्तृत पण कलश करी शकाय छे.

३-आमलसाराना सवाया चतुर्थांश जेटलो विस्तृत पण कलश होइ शके छे.

आ कलशनो विस्तार कह्यो, एनो उदय विस्तारथी दोढो करवो. नागर, लतिन, सांधार, मिश्रक, विमाननागर, विमानपुष्पक; आ बधा प्रासादोनो कलश उक्त अष्टमांशे करवो अने धातुज, रत्नज, रथारोह, दारुज (सिंहावलोकन), शैलज अने सर्वप्रकारना ऐष्टिक; आ बधी जातना प्रासादोना कलशो उक्त मानथी सवाया मानना (चतुर्थांशाधिक) बनाववा.

ए प्रमाणे सर्व इष्टफल आपनारो कलश कह्यो. आज मानानुसारे बनेलो कलश सर्व इच्छाओने सफल करे छे.

वराटादि प्रासादोनो कलश—

वराटे द्राविडे चैव, भूमिजे विमानोद्भवे ।
वलभीषु समस्तासु, प्रासादस्य पडशके ॥४४७॥
तत्पडशयुतः श्रेष्ठः, कनिष्ठस्तद्विहीनकः ।
इत्थं मान समुद्दिष्टं, कर्त्तव्य सर्वकामदम् ॥४४८॥

भा०टी०—वराट, द्राविड, भूमिज, विमान अने सर्वप्रकारनी वलभीओमा प्रासादना पष्ठांश जेटलो कलशनो विस्तार करवो फल शतुं आ मध्यम मान जाणवुं, आमा १ पष्ठांश वधारतां उत्तम अने १ पष्ठांश घटाडता कनिष्ठ मान आवे छे; आ प्रकारनुं कलशनुं मान करवुं ते सर्व शुभ फलदायक छे.

कलशनी अगविभक्ति—

उच्छ्रयो नवभागः स्यात्, पड्भागा विस्तृतिस्तथा ।
अण्डक तु त्रिपादं च, पाद च पद्मपत्रिका ॥४४९॥
ग्रीवा पादोनभागा च, सपादे द्वे च कर्णिके ।
मातुलिंग त्रिभिर्भागैः, कर्तव्य सर्वकामदम् ॥४५०॥
उच्छ्रयः कथितश्चैव, विस्तार शृणु साम्प्रतम् ।
पद्मपत्र त्रिभिर्भागैस्तत्कन्दं द्विविभागकम् ॥४५१॥
अण्डक च घटाकार, कुर्यात् पड्भागविस्तृतम् ।
ग्रीवा मध्ये द्विभागा स्यात्, चतुर्भि' कर्णिकान्तरे ॥४५२॥
सार्धद्वयश बीजपूर-मग्रे निम्न सुलक्षणम् ।
प्रमाणसूत्रमाख्यात, कलशे सर्वकामदे ॥४५३॥

भा०टी०—कलशनी ऊचाईना ९ अने विस्तारना ६ भाग करवा, ते नव भागमाथी ३ भागनु अंडक, १ भागनी पद्मपत्री,

०।।। भागनी ग्रीवा (गळुं), १। भागनी बे कणिओ अने ३ भागनुं ऊंचुं बीजोरुं (डोडलो) करवुं ए शुभदायक छे, ए कलशनी ऊंचाईना अंगविभागो कह्या. हवे विस्तारने सांभल ! पद्मपत्रनो विस्तार ३ भागनो करवो, तेना कंदनो विस्तार २ भागनो अने अंडक (पेट) घडाना आकारनुं ६ भागे विस्तृत करवुं, ग्रीवा मध्यमां २ भागना विस्तारे अने कणिओ ४ भागे विस्तारमां करवी बीजोरुं नीचेथी २ भागे अने उपर १।। भागे विस्तारमां करवुं, आ प्रमाणे सर्व अंगो पोतपोताना माने ऊंचा अने विस्तृत उत्तम लक्षण युक्त करवां, आ प्रमाणे सर्वेच्छापूरक कलशनुं प्रमाण सूत्र कह्युं, आ लक्षण नागर प्रासादना कलशनुं छे.

प्रकारान्तरे कलशना अंग विभागो—(?)

अत ऊर्ध्वं पुनश्चान्यं, प्रवक्ष्येऽहमनुक्रमम् ।
पूर्ववच्च समुत्सेधो, विस्तरः पूर्वकल्पितः ।।४५४।।
पद्मपत्रनिभाकारा, त्रिपदा पद्मपत्रिका ।
कर्णिका पदमेकं तु, सपादः पद्मसंभवः ।।४५५।।
द्विभागं चाण्डकं कुर्याद्, वृत्ताकारं सुलक्षणम् ।
ग्रीवा पादोनभागा स्याद्, भागार्धं चार्कपट्टिका ।।४५६।।
लतिने चैव कर्तव्या, अर्धांशे पद्मपत्रिका ।
त्रिभागं बीजपूरं स्याद्, विकसितपद्माकृति ।।४५७।।
उच्छ्रूयः कथितश्चैत्थं, विस्तरं शृणु सांप्रतम् ।

भा०टी०—आ पछी वली कलशना संबंधमां अंगोनो बीजा क्रम कहुं छुं, कलशनी ऊंचाईना अने विस्तारना प्रथमनी जेम ज अनुक्रमे ९ अने ६ भागो कल्पवा. ऊंचाईना नव भागोमांथी नीचे ३ भागनी पद्मपत्रिका कमलपत्रना आकारनी करवी, १ भागनी कर्णिका अने १। भागनो कमल संभव (पत्र) करवो, ते पछी २

भागनुं गोल आकारनु सुलक्षण अंडक करवुं. ०॥। भागनी ग्रीवा अने ०॥ भागनी अर्कपट्टी करवी. ललित प्रासादना कलशमा पद्मपत्रिका अर्धभागनी करवी ३ भागनुं बीजोरुं (डाडलो) करवुं, बीजपूरनो आकार विकाशी कमलना डोडा जेवो करवो, आम ऊचाईना भागो कह्या हवे विस्तारना विषयमा साभल !

पद्मपत्र त्रिभिर्भागै-र्द्विभागा कर्णिका धृता ॥४५८॥
पद्माग्रे पत्रि(ट्टि)का चैव, चतुर्भागा च विस्तरे।
पड्भागमण्डकं चैव, ग्रीवा मध्ये द्विभागिका ॥४५९॥
अर्कपट्टी चतुर्भागा, सार्धत्र्यंशा च पत्रि(ट्टि)का।
सार्धद्वय बीजपूरं, निम्नाग्रे पद्मकाकृति ॥४६०॥
पद्मनिबन्धतिलकं, मुक्तरत्नैः सुवृत्तकाम्।
अर्केऽर्कपट्टिका कुर्यात्, पद्मपत्राऽग्र उन्नताम् ॥४६१॥

भा०टी०—पद्मपत्रनो विस्तार ३ भागनो, कर्णिकानो २ भागनो, पद्मपत्र पछी पट्टिकानो विस्तार ४ भागनो, अंडक विस्तार ६ भागनो, ग्रीवा मध्यमा बे भागनी, अर्कपट्टी ४ भागनी, ३॥ भागनी पट्टिका अने २॥ भागनो बीजोरानो विस्तार करवो, बीजपूरनो आकार कमलना डोडाना जेवो करवो.

सूर्यना मंदिरे पद्मपत्रनी आगे ऊची अर्कपट्टी गोल पद्मना तिलक जेवी रत्नजडित करवी

ध्वज-दण्ड—

ध्वजाधरस्तम्भिका च, कलशैश्च विभूषिता।
वंशाधारा वलयबन्धा, वंशाना वेष्टनादिकैः ॥ ४६२ ॥

भा०टी०—ध्वजाधार थाभली (दंड) कलशोवडे शोभित

भा०टी०—दण्डनी पाटली अर्धचन्द्राकारनी करवी, तेनुं मान १ थी ५ हाथ सुधीना दंडे विस्तारथी ७ गणी, ६ थी १२ हाथ पर्यन्तना दंडे विस्तारथी ६ गणी अने ते उपरना मानवाला दंडे विस्तारथी ५ गणी लांबी करवी, तथा विस्तारमां लंबाईना ३ जा भागनी करवी, उक्तमाने लांबी-पहोळी पाटली सर्व इच्छाओने पूर्ण करनारी होय छे.

पाटलीनुं स्वरूप—

अर्धचन्द्राकृतेश्चैव, पक्षे कुर्याद् गगारकम् ।
वंशोर्ध्वे कलशं चैव, पक्षे घण्टाप्रलम्बनम् ॥४७२॥
चामरैर्भूषितं कुर्याद्, घंटापक्षे विचक्षणः ।
पताका पापहारी च, शत्रुपक्षक्षयंकरी ॥४७३॥

भा०टी०—पाटलीना मध्यभागे अर्धचन्द्राकार करी तेनी बंने बाजुमां गगारा करवा, पाटलीना मध्यभागे दंड उपर कलश करवो, अने बंने तरफ घंटडिओ लटकाववी, बुद्धिमाने घंटडीओनी तरफना भागोने चामरो वडे सुशोभित करवा, अने पाटली उपर पापने हर- नारी तथा शत्रुना पक्षनो नाश करनारी पताका-ध्वजा चढाववी.

दण्ड शानो बनाववो ?

वंशमयस्तु कर्तव्यः, सारदारुसमन्वितः ।
निर्व्रणः सुदृढः कार्यः (दण्डः), प्राञ्जलो दोषवर्जितः॥४७४॥
समग्रन्थिर्विधातव्यो, विषमैः पर्वभिर्युतः ।

भा०टी०—दंड वांशनो करवो अथवा श्रेष्ठ जातिनी लाकडीनो करवो. ते दंड घा वागेलो, पोचो, के वांको चुको न होय एवो निर्दोष, समगांठोवालो अने विषम पर्वोवालो बनाववो जोईए.

ध्वजानुं मान—

ध्वजादण्डप्रमाणेन, पताका च प्रलंबयेत् ।
पृथुत्वमष्टमांशेन, त्रिशिखाग्रविभूषिताम् ॥४७५॥
शिखाः पञ्च प्रकर्तव्या, ध्वजाग्रे तद् विचक्षणैः।
दिव्यवस्त्रपताका चाऽर्धचन्द्रश्चैव किंकिणी ॥४७६॥

भा०टी०—ध्वजादंडना माने दंड उपर पताका लगाववी, पताकानो विस्तार लंबाईना आठमा भागनो करवो, ३ शिखाओ वडे पताकाने भूषित करवी, अथवा तेने ५ शिखाओ करवी. पताका दिव्यवस्त्रनी बनाववी, ते उपर अर्धचन्द्रनो आकार करवो, निचले छेडे शिखाओ उपर घुघरीओ लटकाववी

ध्वजावती (स्तंभिका) रोपण—

रेखार्धे त्रिभागोर्ध्वे वा, सूत्रांशे पादवर्जिते ।
ध्वजावती तु कर्तव्या, ईशाने नैर्ऋतेऽपि वा ॥४७७॥
प्रासादपृष्ठिदेशे तु, दक्षिणे च प्रतिरथे।
स्तंभवेधस्तु कर्तव्यो, भित्तेरस्याष्टमांशके ॥४७८॥

भा०टी०—रेखाना अर्धे भागे, बे तृतीयांशे, अथवा पोणा भागे उपर ध्वजानी स्तंभिका ईशान अथवा नैर्ऋत्य तरफ करवी, प्रासादनी पूठली तरफना जमणा पडरामा प्रासादनी भींतना ८ मा भाग जेटलो स्तंभिका रोपवा माटे खाडो करवो

शैलजे चैव प्रासादे, कलशस्य पदानुगम् ।
खादिरमिन्द्रकील तु, प्रवेश्य कलशान्तिके ॥४७९॥
चतुरस्रमष्टास्र वा, वृत्त वाऽग्राग्रवर्तुलम् ।
सुदृढ निर्व्रणं कुर्याद् , गर्भशुद्ध प्रमाणतः ॥४८०॥
ध्वजावती स्तभिका च, चतुरस्रा चाष्टांशका ।
वृत्तोर्ध्वं चतुरस्रिका ॥४८१॥

तदूर्ध्वे कलशं कुर्यात्, सुरूपलक्षणान्वितम् ।
निकुञ्चवलिके कार्ये, वंशाधारस्य वाह्यतः ॥४८२॥
वंशबन्धास्तु कर्तव्या, हस्ते हस्ते तथा पुनः ।
हस्ते सपादे सार्धे वा, द्विहस्ते वाऽप्यथोचिते ॥४८३॥

भा०टी०—पत्थरना प्रासादमां कलशस्थाने खेरनो 'इन्द्र-कील' नीचे खोसीने कलश पर्यन्त उंचो राखवो. इन्द्रकील नीचे चोरस, मध्यमां अष्टास्र अने उपर गोल करवो, मजबूत, खाडा-खांचा वगरनो, नक्कर अने प्रमाणयुक्त करवो.

ध्वजावती स्तंभिकाने पण नीचेथी अनुक्रमे चतुरस्र, अष्टास्र, षोडशास्र करी उपर गोल अने अन्त भागमां पाछी चोरस करवी, तेना उपर सुन्दर अने सुलक्षणवालो कलश करवो. थांभलीने दबावीने स्थिर राखवा माटे खाडानी बहार बे वलिओ (मजबूत लाकडिओ) टेका रूपे उभी करवी, आम स्तंभिकाने मजबूत स्थिर करी पछी तेनी साथे ध्वजदंडने मजबूत बंधोवडे बांधवो, आ बन्धो हाथे हाथे, सवा सवा हाथे, दोढ दोढ हाथे, अथवा बे बे हाथे दंडनी लंबाईनो विचार करीने देवा, बन्धो वच्चे बे हाथथी अधिक अंतर न राखवुं.

जिनेन्द्र प्रासाद पञ्चक—

पद्मरागो विशालाख्यो, विभवो रत्नसंभवः ।
लक्ष्मीकोटर इत्येवं, पञ्चैते तु जिनालयाः ४८४॥

भा०टी०—१ पद्मराग, २ विशाल, ३ विभव, ४ रत्नसंभव अने ५ लक्ष्मी कोटर; ए पांच जिनप्रासादोनां नामो छे.

तलविभक्ति २२ भाग—

कर्णौ नन्दी-प्रतिरथः, पूर्ववच्च सुसंस्थितः ।
नन्दिका भागनिष्कासा, द्विभागा पार्श्वशोभणा ॥४८५॥

भागनन्दी पुनः कार्या, वेदांशो भद्रविस्तरः ।
निष्कासश्चैकभागस्तु, कर्तव्यः शुभलक्षणः ॥४८६॥
चतुर्भागा भवेद् भित्तिः, शेषं गर्भगृहं भवेत् ।

भा०टी०—कर्ण, कर्णनी नन्दी, अने प्रतिरथ, ए पूर्वनी जेम ज अनुक्रमे ३, ३, १ भागना बनाववा, नन्दीनो निर्गम १ भागनो करशे, आ कर्णनन्दी अने प्रतिरथनी वच्चे १-१ भागनी क्षोभणा करवी, वली १ भागनी भद्रनी पासे नन्दी करवी, ४ भागनो भद्रनो विस्तार करवो, आम तलना ३-१-१-३-१-४-१-३-१-१-३=२२ भागनी दल विभक्ति करवी, आम करतां ४ भागनी भींत थशे अने बाकीनो गभारो रहेशे, अर्थात् बे भित्तिओमा ८ भागनुं तल रोकाशे अने १४ भागनो गभारो थशे, पाछे जिनेन्द्र प्रासादो ए ज प्रमाणे २२ भाग सिराडना बनाववा

शिखरनी रचना—

कर्णे शृंगत्रयं कार्यं, क्रमोत्तरभागनिर्गतम् ॥४८७॥
षोडशांशं च शिखर-मुरःशृंगं तदर्धतः ।
तत्पदोनं तदग्रं च, तस्याग्रं च युगांशकम् ॥४८८॥
कर्णतुल्यः प्रतिरथो, द्विक्रमा चैव नन्दिका ।
कर्णे प्रतिरथे भद्रे, शृंगाणि त्रीणि त्रीणि च ॥४८९॥
द्वौ द्वौ कूटौ नन्दिकाया, प्रत्यंगाणि ततोऽष्टभिः ।
भद्रनन्द्येककूटं च, पद्मरागः स उच्यते ॥४९०॥
भद्रशृंगे विशालाख्यो, विभवं च तथा शृणु ।
कर्णकूटं नन्दि शृंगं, नाम्ना च विभवस्तथा ॥४९१॥
भद्रशृंगे कामदस्तु, कर्तव्यो रत्नसंभवः ।
भद्रं त्यक्तनन्दिकं कुर्यात्, संभवेल्लक्ष्मीकोटरः ॥४९२॥

भा०टी०—१ कोण उपर अनुक्रमे ३ शृंगो निर्गमे १-१ भागनां करवां, रेखाना मूल भागमां शिखर १६ भाग जेटलुं विस्तृत करवुं. उरःशृंग शिखरना अर्ध भागे अर्थात् आठ भागे विस्तारमां करवुं. बीजुं उरःशृंग पहेलाना पोणा भागनुं अर्थात् ६ भागनुं अने तेथी आगेनुं उरःशृंग विस्तारे ४ भाग जेटलुं करवुं. कर्णे अने प्रतिरथे सरखा क्रमो करवा. नंदिए २ क्रमो चढाववा अने कर्ण प्रतिरथ तथा भद्र उपर ३-३ शृंगो चढाववां, कर्णनी नन्दिओए २-२ कूटडा चढाववा अने ८ प्रत्यंगो चढाववां, भद्रनी नन्दिए १-१ कूटडो चढाववो. आ प्रकारना तल तथा शिखरवालो प्रासाद 'पद्मराग' ए नामथी ओलखाय छे. अंडक संख्या ७३.

२ पद्मरागना भद्रे चोथुं उरःशृंग लगाडतां ":विशाल" नामनो बीजा प्रकारनो जिनप्रासाद बने छे. अंडक ७७.

३ कोण उपर १-१ कूटडो अने नन्दिओ उपर १-१ शृंग वधारतां "विभव" नामनो प्रासाद बने छे. अंडक ९३.

४ उपरनी रचनामां भद्रे १-१ शृंग वधारतां "रत्नसंभव" प्रासाद तैयार थाय छे. अंडक ९७.

५ उपरना प्रासादनी भद्रनन्दी अक्रमी करतां "लक्ष्मीकोटर" प्रासादनुं निर्माण थाय छे. अंडक ८१.

अपराजित पृच्छाना १६४ मा सूत्रमां जिनेन्द्रप्रासाद-पञ्चकनी निर्माणविधि उपर प्रमाणे बतावेल छे, आजना समयमां आवा प्रासादोनुं निर्माण दोढथी बे लाख द्रव्यना व्ययथी थई शके छे.

केसरी आदि २५ नागर प्रासाद—

अपराजित पृच्छामां आ प्रासादोनुं सांधार प्रासादरूपे सविस्तर वर्णन छे पण त्यां ज लखे छे के—

दशहस्तादधो नास्ति, प्रासादो भ्रमसंयुतः ।
षट्त्रिंशातं निरन्धाराः, कार्या वेदादि हस्ततः ॥४९३॥

भा०टी०—१० हाथना मानथी ओछा माननो कोइ प्रासाद 'भ्रमदार' होतो नथी ४ हाथथी ३६ हाथ सुधीना माननो प्रासाद निरन्धार (भ्रमहीन) करी शकाय छे, पण भ्रमवालो (सांधार) करवो ज होय तो तेनुं मान दश हाथ नीचे न होवुं जोइए.

पञ्चविंशतिः साधारा., प्रयुक्ता वास्तुवेदिभिः ।
भ्रमहीनास्तु ये कार्याः, शुद्धच्छन्देषु नागराः ॥४९४॥

भा०टी०—वास्तुशास्त्रना ज्ञाताओए प्रयोजेल जे २५ साधार प्रासादो छे ते शुद्ध नागर छंदोमां भ्रमहीन पण करवा, आ उपरथी सिद्ध थाय छे के केसरी आदि प्रासादो भ्रमहीन पण करी शकाय छे, आधुनिक कारीगरो पण घणे भागे कनिष्ठ प्रासादो केसरी आदिमांना ज करे छे तेथी अमो पण अपराजितोक्त भ्रमदार प्रासादोना वर्णनने छोडीने वास्तुमञ्जरी आदिना निरूपणने अत्र उद्धृत करीये छीए.

१ केसरी—

क्षेत्रेऽष्टभक्ते द्वौ कर्णौ, भद्रं वेदांशविस्तरम् ।
भागार्धनिर्गमः पञ्चा-ण्डकोऽयं केसरी मतः ॥४९५॥

भा०टी०—प्रासाद भूमिने ८ भागे वहेंचीने २-२ भागना कोण अने ४ भागना विस्तारवालु भद्र करवु. १ भागनो निर्गम करवो, आ प्रकारना पञ्चांडक प्रासादने 'केसरी' ए नामथी मान्यो छे. आने अंडक ५ छे, कोणे ४, शिखरे १ ए पछीना सर्वतोभद्रा

३-३ शृंगो करवाथी तेनुं नाम "अमृतोद्भव" पडे छे, अंडक संख्या ३३; कर्णे १२, भद्रे १२, पडरे ८, शिखरे १. तिलक १६; पडरे ८, नंदीए ८.

९ हिमवान तथा १० हेमकूट—

द्वे द्वे प्रतिरथे द्वे द्वे, भद्रे च हिमवान् मतः।
भद्रे तृतीयं नन्द्यां तु, तिलकं हेमकूटकः ॥५०२॥

भा०टी०—कोणे ३-३, पडरे २-२ अने भद्रे २-२ शृंगो तथा नंदि उपर १-१ तिलक चढाववाथी अमृतोद्भवनुं नाम 'हिमवान' पडे छे, अंडक संख्या ३७. कोणे १२, पडरे १६, भद्रे ८, शिखरे १. तिलक ८ नंदीए. भद्र उपर त्रीजुं शृंग अने नन्दीए तिलक चढावतां उपरनुं हिमवान् नाग मटीने 'हेमकूट' नाम पडे छे. अंडक ४१; कोणे १२, पडरे १६, भद्रे १२, शिखरे १. तिलक १६, प्रतिनन्दी २-२.

११ कैलास तथा १२ पृथिवीजय—

रेखाधस्तिलकं नन्द्यां, शृंगं कैलाससंज्ञकः।
रेखायास्तिलकस्थाने, शृंगं पृथ्वीजयस्तदा ॥५०३॥

भा०टी०—कोणना त्रीजा शृंगने कमी करी तेना स्थाने तिलक अने नन्दीना नीचेना १ तिलकना स्थाने शृंग चढाववाथी 'कैलास' प्रासाद बने छे, अंडक ४५; कोणे ८, पडरे १६, भद्रे १२, नन्दीए ८, शिखरे १. तिलक १२; कोणे ४, नन्दीए ८.

रेखा नीचेना तिलकने स्थाने त्रीजुं शृंग लगाडवाथी 'पृथिवीजय' नामनो प्रासाद निष्पन्न थाय छे, अंडक ४९; कोणे १२, पडरे १६, भ॰ १२, नन्दीए ८, शिखरे १. तिलक ८. नन्दीए

१३ इन्द्रनील—

षोडशांशे भागमाना, कोणी कर्ण-रथान्तरे।
शेषं मन्वंशवद् भद्रे, निर्गमोंऽशः परे समाः ॥५०४॥
कर्णे शृंगद्वयं नन्द्या, तिलकं च प्रत्यंगकम् ।
द्वयं रथे त्रयं भद्रे, नन्दी सैकेन्द्रनीलकः ॥ ५०५ ॥

भा०टी०—तलना १६ भाग करीने कोण तथा पडरा वच्चे १ भागनी कोणी (नन्दी) करवी, बाकी दल विभक्ति १४ भागनी. जेम २-२ भागना कोण, पडरो, भद्रार्ध अने १-१ भागनी भद्र-नन्दी करवी, भद्रनो निकालो १ भागनो करवो, बीजा अंगो निकाले समदल करवा.

कोणे २-२ शृंगो, नन्दी उपर तिलक अने प्रत्यंगो ८-८. पडरे २-२ शृंगो, भद्रे ३-३ शृंगो, भद्रनन्दीए १-१ शृंग चढा-ववाथी 'इन्द्रनील' प्रासाद बनशे, अंडक संख्या ५३, कोणे ८, प्रत्यंगे ८, पडरे १६, भद्रे १२, भद्रनन्दीए ८, शिखरे १. तिलक ८ नन्दीए

१४ महानील तथा १५ भूधर—

नन्द्यां शृंगे महानीलो, रेखाधस्तिलके सति ।
रेखाधस्तिलकस्थाने, शृंगं यदि स भूधरः ॥ ५०६ ॥

भा०टी०—नन्दी उपर (कोण पडरा वच्चेनी कोणी उपर) तिलकना स्थाने शृंग अने कोण उपर शृंगना स्थाने तिलक करवाथी 'महानील' प्रासादनी रचना थाय छे, अंडक ५७; कोणे ४, प्रत्यंगे ८, पडरे १६, भद्रे १२, भद्रनन्दीए ८, कर्णनन्दीए ८ अने शिखरे १. तिलक ४ कोणे. ए 'महानील'ना कोणे तिलकना स्थाने शृंग चढाववाथी भूधर प्रासाद बने छे, अंडक ६१, कोणे ८,

प्रत्यंगे ८, पडरे १६, भद्रे १२, भद्रनन्दीए ८, कर्णनन्दीए ८, अने शिखरे १.

१६ रत्नकूट—

अष्टादशांशे भद्रस्य, पार्श्वयोर्नन्दिकाद्वयम् ।
शेषं कलांशवत् कर्णे, द्वे शृंगे तिलकं तथा ॥ ५०७ ॥
नन्द्यां द्वे द्वे तु तिलके, प्रत्यंगं युग्मभागिकम् ।
नन्द्यां तु तिलकं भद्रे, युगं शृंगत्रयं रथे ॥ ५०८ ॥
रत्नकूटस्तदा नाम, शिवलिंगेषु कामदः ।
प्रशस्तः सर्वदेवेषु, राज्ञां तु जयकारणम् ॥ ५०९ ॥

भा०टी०—तलना १८ भागोमां भद्रना बंने पार्श्वभागोमां १-१ नन्दी वधारवी, बाकी दलविभागो १६ भागना तलनी जेमज करवा, कोण उपर २ शृंगो तथा तिलक करवा, २ नन्दीओ उपर २-२ तिलको करवा, बाजुमां २-२ भागना प्रत्यंगो करवा, नन्दीए १-१ शृंग, १-१ तिलक करवा, भद्रे ४-४ शृंगो अने पडरे ३-३ शृंगो करवा, आवी रचनावालो प्रासाद 'रत्नकूट' ए नामथी ओलखाय छे, शिवलिंगोने माटे इच्छापूरक छे, छतां सर्व देवोने माटे प्रशस्त छे अने राजाओने जयनुं कारण छे. अंडक ६५; कोणे ८, प्रत्यंगे ८, प्रतिरथे २४, प्रतिरथनन्दीओए ८, भद्रे १६ अने शिखरे १. तिलक ४४; कर्णनंदीए १६, भद्रनन्दीए १६, प्रतिरथनन्दीए ८ अने कोणे ४.

१७ वैडूर्य—

शृंगं तृतीयं रेखाधः, कर्तव्यं सर्वशोभनम् ।
वैडूर्यश्च तदा नाम, कर्तव्यः सर्वदैवतः ॥ ५१० ॥

भा०टी०—कोण उपर त्रीजुं शृंग चढाववाथी ए रत्नकूटनो ज

'वैडूर्य' नामनो प्रासाद बने छे, सर्वे देवोने योग्य आ वैडूर्य करवो जाईये. अंडक ६९, कोणे १२, प्रत्यंगे ८, प्रतिरथे २४, प्रतिरथनन्दीए ८, भद्रे १६, अने शिखरे १. तिलको ४०, कर्णनन्दीए १६, भद्रनन्दीए १६ अने प्रतिरथनन्दीए ८.

१८ पद्मराग अने १९ वज्र—

तत्र नन्द्यां तु तिलकं, द्वे शृंगे पद्मरागकः ।
रेखाधस्तात् पुनः शृंगं, कारयेद्वज्रकस्तदा ॥ ५११ ॥

भा०टी०—कोणना त्रीजा शृंगने बदले तिलक करवा, प्रतिरथ नन्दीए २-२ शृंगो अने कर्ण तथा भद्रनन्दीए २-२ तिलक करवाथी 'पद्मराग' प्रासाद बनशे. अंडक ७३, कोणे ८, प्रतिरथनंदीए १६, पडरे २४, प्रत्यंगे ८, भद्रे १६ अने शिखरे १ तिलको ३६; कोणे ४, कर्णनन्दीए १६ अने भद्रनन्दीए १६. रेखा नीचे वली त्रीजु शृंग देवाथी ए पद्मरागप्रासाद ज 'वज्र' एवुं नाम धारण करे छे, अंडको ७७, कोणे १२, प्र.नदीए १६, प्रत्यगे ८, पडरे २४, भद्रे १६ अने शिखरे १. तिलको ३२; कर्णनन्दीए १६ अने भद्रनन्दीए १६.

२० मुकुटोज्ज्वल अने २१ ऐरावत—

नखभक्ते द्वयं कर्णः, सार्धा कोणी द्वयं रथः ।
सार्धोनन्दी भद्रनन्दी, भागो भद्र युगांशकम् ॥५१२॥
कर्णे द्विशृंगे तिलकं, रेखा मन्वंशविस्तरा ।
नन्द्यां शृंगं च तिलकं, प्रत्यंगं स्यादथोरथे ॥ ५१३ ॥
द्वयं भद्रे चतुःशृंगं, नन्द्यां शृंगं च तैलकम् ।
भद्रनन्द्यां तथा शृंगं, प्रासादो मुकुटोज्ज्वलः ॥ ५१४ ॥
तत्र रेखाधस्तत्शृंगे, विहिते गजराजकः ।

भा०टी०—२० भागना तलमां २ भागनो कर्ण, १॥ भागनी कोणी (नन्दी), २ भागनो प्रतिरथ, १॥ भागनी नन्दी, १ भागनी भद्रनन्दी अने २ भागनुं भद्रार्ध करवुं, शिखरमां कोणे २ शृंग तथा तिलक करवा, रेखानो विस्तार १४ भागनो करवो, नन्दी उपर शृंग तथा तिलक करवा, प्रतिरथे प्रत्यंग चढाववां, पडरे २ शृंगो अने भद्रे ४ शृंगो करवा, नन्दीए शृंग तथा तिलक करवा अने भद्र-नन्दीए शृंग करवा, आथी 'मुकुटोज्वल' नामक प्रासाद बने छे. अंडको ८१; कोणे ८, कोणनन्दीए ८, प्रत्यंगे ८, प्र. नंदीए ८, भद्रनन्दीए ८, पडरे २४, भद्रे १६ अने शिखरे १. तिलको २०; कर्णनन्दीए ८, प्र. नन्दीए ८ अने कोणे ४. आ मुकुटोज्ज्वलना कोणे त्रीजुं शृंग चढाववाथी 'ऐरावत' प्रासादनी उत्पत्ति थाय छे. अंडको ८५; कोणे १२, कोणनन्दीए ८, प्रत्यंगे ८, प्रतिरथे २४, प्र.नन्दीए ८, भद्रनन्दीए ८, भद्रे १६ अने शिखरे १. तिलको २४; कर्णनन्दीए ८, भद्रनन्दीए ८ अने प्र. नन्दी ८.

२२ राजहंस—

तथैव तिलकं कुर्यात्, भद्रकर्णे तु शृंगकम् ।
राजहंसः समाख्यातः, कर्तव्यो ब्रह्ममंदिरे ॥५१५॥

भा०टी०—तेज रीते कर्णना त्रीजा शृंगने स्थाने तिलक अने भद्रनन्दीए बीजुं शृंग करवाथी 'राजहंस' नामनो प्रासाद बने छे, आ प्रासाद ब्रह्माजीने माटे बनाववो, अंडको ८९; कोणे ८, कोण-नन्दीए ८, प्रत्यंगे ८, प्रतिरथे २४, प्र. नन्दीए८, भद्रनन्दीए १६, भद्रे १६ अने शिखरे १. तिलको ४ कोणे.

२३ गरुड—

तथैव तिलकं कुर्यात्, भद्रं कर्णे च शृंगकम् ।
गरुडः स समाख्यातः, कर्तव्यश्च श्रियःपतेः ॥५१६॥

भा०टी०—तथा भद्रनन्दीए तिलक करवो अने कोण उपर ओजुं शृंग करवुं. आ प्रकारे बनावेल प्रासाद 'गरुड' ए नामथी प्रख्यात छे, आ प्रासाद विष्णुने माटे खास करवा जेवो छे, अंडको ९३; कोणे १२, कोणनन्दीए ८, प्रत्यंगे ८, प्रतिरथे २४, प्र नन्दीए ८, भद्रनन्दीए १६, भद्रे १६ अने शिखरे १. तिलको भद्रनन्दीए ८.

२४ वृषभ—

द्वाविंशत्यंशके नन्दी, भागेन भद्रपार्श्वयोः ।
अथ प्रतिरथाः कर्णो, भद्रार्धं च द्विभागिकम् ॥५१७॥
कर्णे द्विशृंगे तिलकं, भद्रे शृंगचतुष्टयम् ।
शृंगद्वयं प्रतिरथे, प्रत्यंगानि त्रिभागतः ॥ ५१८ ॥
रथे शृंगत्रयं कुर्यात्, द्वे द्वे उपरथे तथा ।
भद्रनन्द्यां ततः शृंगं, वृषभोऽयं हरप्रियः ॥५१९॥

भा०टी०—२२ भागे वहेंचेला तलमां भद्रनी बंने बाजुए १ भागनी नन्दी, प्रतिरथ-रथ-उपरथ-कर्ण अने भद्रार्ध ए पाचे २-२ भागना करवा, शिखर विभागे कर्णे २ शृंगो तथा तिलक, भद्रे ४ उरःशृंग, पडरे २ शृंग, तथा विस्तारे त्रण भागना प्रत्यंग, रथे ३ शृंग, उपरथे २ शृंग, अने भद्रनन्दीए १ शृंग. आ प्रकारनी रचनावालो गिरप्रिय 'वृषभ' नामनो प्रासाद बने छे, अंडक ९७, कोणे ८, भद्रे १६, पडरे १६, प्रत्यंगे ८, रथे २४, उपरथे १६, भद्र नन्दीए ८ अने शिखरे १ तिलको ४ कोणे.

२५ मेरुप्रासाद—

कर्णे शृंग तृतीयं स्यान्मेरुः सिद्धिप्रदा इमे ।
सान्धारा वा निरन्धाराः, प्रासादाः पञ्चविंशतिः ॥५२०॥

भा०टी०—वृषभ प्रासादना कोणे त्रीजुं शृंग वधारवाथी ते प्रासाद 'मेरु' नामे ओलखाय छे, अंडको १०१; कोणे १२, भद्रे १६, पडरे १६, प्रत्यंगे ८, रथे २४, उपरथे १६, भद्रनन्दीए ८ अने शिखरे १; आ २५ प्रासादो सान्धार अथवा निरंधार होय, सर्व सिद्धिने आपनारा छे.

मण्डप—

वास्तुमञ्जरीकार लखे छे—

प्रासादाग्रे मण्डपः स्या-देक-त्रि-द्वारसंयुतः ।
जिने त्रिपुरुषे द्वार-कासु त्रिमण्डपाः क्रमात् ॥५२१॥

भा०टी०—प्रासादने आगे एक द्वारनो अथवा त्रण द्वारनो मंडप होय छे. जिन, त्रिपुरुष, (ब्रह्मा विष्णु महेश्वर) अने द्वारकाना प्रासाद आगळ एक पछी एक एम त्रण मंडपो करवा.

अपराजितमां मण्डपोनुं निरूपण नीचे प्रमाणे छे—

अथाऽतः संप्रवक्ष्यामि, मण्डपानां तु लक्षणम् ।
प्रासादस्य प्रमाणेन, मण्डपं कारयेद् बुधः ॥५२२॥

समः सपादः सार्धश्च, सपादोनद्वय एव च ।
द्विगुणश्चापि कर्तव्यः, सपादद्वय एव च ॥ ५२३ ॥

सार्धद्वयस्तु कर्तव्यो, ह्येतदूर्ध्वं न कारयेत् ।
सप्तधा प्रमाणसूत्रं, वास्तुवेदैरुदाहृतम् ॥ ५२४ ॥

भा०टी०—हवे मण्डपोनुं लक्षण कहीश, विद्वान् स्थपतिए प्रासादना मानने अनुसारे मंडपने करवो, १ प्रासाद-सम मानना, २ प्रासादथी सवाया, ३ दोढा, ४ पोणाबेगणा, ५ बे गणा, ६ सवाबेगणा, तथा ७ अढी गणा मानना मंडप बनाववो, एथी अधिक

प्रमाणनो न बनाववो, कारण के वास्तुशास्त्रीओए मंडपनुं प्रमाण-सूत्र सात प्रकारे कह्युं छे.[१]

प्रासादेषु च सर्वेषु, दशहस्ताधिकेषु च ।
उक्तः समः सपादश्च, मण्डपो वास्तुवेदिभिः ॥५२५॥
पञ्चहस्तात्परं चैव, यावत्स्याद् दशहस्तकम् ।
सार्धायामो मण्डपश्च, सृष्टो वै विश्वकर्मणा ॥५२६॥
चतुर्हस्ते च प्रासादे, पादोनद्वयविस्तरः ।
त्रिहस्ते द्विगुणश्चैव, तद्विशेषा चतुष्किका ॥५२७॥
चतुष्कं चाष्टाशं चापि, शुम्भस्तभानुसारतः ।
वितानं संवरणोक्तं, सार्धमानेन मण्डपे ॥५२८॥
अलिन्दैर्द्विगुणे चात्र, द्विगुणं च प्रकल्पयेत् ।
द्वि-त्रि-चत्वारोऽलिन्दा, द्विगुणात्परे च मण्डपे ॥५२९॥
वितानानि संवरणा, विभक्तानि चतुष्किका ।
स्वक-स्वकेषु स्थानेषु, पादाढ्या तद् भुक्तिभिः ॥५३०॥
स्वार्धमानेनोच्छ्रयस्तु, मूलसंवरणोक्तिभिः ।
शुकनाससमा घण्टा, न न्यूना न ततोऽधिका ॥५३१॥

भा०टी०—१० हाथथी अधिक मानना सर्व प्रासादोमा वास्तु ज्ञाताओए मण्डप प्रासादना सममाने अथवा प्रासादथी सवाया

---

१ समरांगणसूत्रधारमां आ सबन्धे नीचे प्रमाणे विशेष छे—

क्षुद्रप्रासादकेषु स्यु-र्मण्डपा बहवोऽपरे ।
क्षेत्राऽलाभे पुनरिमान्, सर्वान् सर्वेषु योजयेत् ॥१॥

भा०टी०—न्हाना न्हाना देवलोमा बीजा अनेक मानना (अढी गणाथी पण अधिक मानना) मंडपो होय छे, वली वास्तुभूमिनी कमीना कारणे बधा मानना मंडपो बधा प्रासादोमा करी शकाय छे, जेमके ३ हाथना प्रासादनो मंडप ६ हाथनो जोईये, पण भूमिना अभावे ओछो पण थइ शके छे

तो प्रजाने भयकारक बने, शालाओ (जगतीनी चोकियो) वडे मूल प्रासाद ग्रस्त थाय (दबाय) तो दोषकारक छे, माटे मूलप्रासाद अग्रस्त (कोइथी पण न दबायेलो) करवो, के जेथी पोताना कुटुंबमां स्वकृत अथवा शत्रुकृत क्लेश न थाय, प्रजाथी दबायेलो राजा जेम तेजो हीन गणाय छे तेज रीते बीजा पाटो वडे दबायेलो प्रासाद जाणवो, माटे जगतीनी शालानी विधि मूल प्रासादना सूत्रानुसारे करवी, मूल प्रासाद ग्रस्त थतां प्रासाद अने जगती बंने परस्पर ग्रस्त थाय छे अने ते सूर्यने विषे जेम राहु अन्धकार करे तेम अंधकार करे छे.

ज्येष्ठ-मध्य-कनिष्ठाश्च, प्रासादा ये भवन्ति च ।
तदग्रे मण्डपान् कुर्याज्ज्येष्ठ-मध्य-कनिष्ठकान् ॥५४०॥

भा०टी०—ज्येष्ठ मध्यम अने कनिष्ठ जे प्रासादो जेवा होय तेमनी आगल तेवा ज्येष्ठ मध्यम अने कनिष्ठ प्रकारना ज मंडपो करवा. अपराजिते सूत्र १८४ मां एनुं स्पष्टीकरण नीचे प्रमाणे कर्युं छे—

मण्डपास्त्रिविधा वत्स!, ज्येष्ठ-मध्य-कनिष्ठकाः ।
प्रासादाद्द्विगुणायामः, कनिष्ठो मण्डपो भवेत् ॥५४१॥

पादोनद्वितयो मध्यो, ज्येष्ठः सार्धस्तथैव च ।
एकैकास्त्रिविधा ज्ञेया, ज्येष्ठमध्यकनिष्ठकाः ॥५४२॥

त्रिज्येष्ठमिति च ख्यातं, त्रिमध्यं त्रिकनिष्ठकम् ।
नवधा पुनरेकैकं, सप्तविंशतिसंख्यया ॥५४३॥

भा०टी०—मंडपो त्रण प्रकारना कह्या छे, १ ज्येष्ठ, २ मध्य अने ३ कनिष्ठ, प्रासादथी बमणा प्रमाणनो मंडप कनिष्ठ गणाय छे,

पोणा बे गणा मानवालो मध्यम कहेवाय छे, अने प्रासादथी दोढा माननो ज्येष्ठ गणाय छे.

आ त्रण मानना मंडपो पैकीना प्रत्येक मंडपना वली ३-३ भेदो पडे छे १ ज्येष्ठज्येष्ठ, २ ज्येष्ठमध्यम, ३ ज्येष्ठकनिष्ठ. ४ मध्यमज्येष्ठ, ५ मध्यममध्यम, ६ मध्यमकनिष्ठ, ७ कनिष्ठज्येष्ठ, ८ कनिष्ठमध्यम अने ९ कनिष्ठकनिष्ठ

आ ९ प्रकारना मंडपो पैकीनो एक एक मंडप २७ प्रकारनो बने छे.

कनिष्ठ, मध्यम अने ज्येष्ठ मंडपो संबन्धी समरांगण सूत्रधारनुं निरूपण नीचे प्रमाणे छे

प्रासादाद् द्विगुण कुर्यात्, कनिष्ठं तत्र मण्डपम् ।
पादोनद्विगुण मध्य, प्रासादे तु कनीयसि ॥५४४॥
तस्मिन्नेव कनीयांस, विदध्यात् सार्धमानतः ।
पादोनद्विगुणः सार्धः, सपादश्चेति मध्यमे ॥५४५॥
सार्धं सपादस्तुल्यश्चेत्युत्तमाद्याः स्युरुत्तमे ।

भा०टी०—प्रासादथी बे गणा विस्तारवालो कनिष्ठ प्रासादनो मंडप 'कनिष्ठ-कनिष्ठ' मंडप कहेवाय छे, पोणा बे गणो विस्तृत कनिष्ठ प्रासादनो मंडप 'कनिष्ठ-मध्यम' मंडप कहेवाय छे, अने तेज कनिष्ठ प्रासादनो दोढा विस्तारवालो मंडप 'कनिष्ठ-ज्येष्ठ' मंडप कहेवाय छे

मध्यमप्रासादथी पोणा बे, दोढ अने सवा गणो विस्तृत मंडप अनुक्रमे ते प्रासादनो १. मध्यमकनिष्ठ, २. मध्यममध्यम अने ३. मध्यम ज्येष्ठ कहेवाय छे अने उत्तम प्रासादना दोढा, सवाया

अने तुल्यमानना मंडपने अनुक्रमे १. उत्तमकनिष्ठ, २. उत्तममध्यम अने ३. उत्तमज्येष्ठ मंडप नाम अपाय छे.

स्पष्टीकरण—

पूर्वोक्त मण्डपोना निरूपणमां कनिष्ठादि प्रासादोमां कनिष्ठादि मंडपोनुं विधान करतां बमणो, पोणा बे गणो अने दोढो मंडप कनिष्ठ प्रासादोमां करवानुं सूचव्युं छे, ते पूर्वे मंडपलक्षणमां ३ हाथे द्विगुण, ४ हाथे पादोनद्विगुण अने ५ थी १० हाथ पर्यन्ते सार्धमानना मंडप करवानुं जणाव्युं छे तेनाथी जणाय छे.

१ थी १० हाथ सुधीना प्रासादने कनिष्ठ मानी तेना ३ भाग कल्प्या छे, तेमां १ थी ३ हाथ सुधीना प्रासादने 'कनिष्ठकनिष्ठ,' ४ हाथनाने 'कनिष्ठमध्यम' अने ५ थी १० सुधीनाने 'कनिष्ठ-ज्येष्ठ' जाणवो. आ त्रण प्रकारना कनिष्ठ प्रासादोना मंडपो पण क्रमशः कनिष्ठ-कनिष्ठ, कनिष्ठ-मध्यम अने कनिष्ठ-ज्येष्ठ प्रकारना जाणवा.

४ हाथनो प्रासाद 'मध्यम-कनिष्ठ,' ५ थी १० सुधीनो 'मध्यम मध्यम' अने ११ थी २० सुधीनो 'मध्यम-ज्येष्ठ' गणाय छे.

५ थी १० सुधीनो 'उत्तम कनिष्ठ,' ११ थी २० पर्यन्तनो 'उत्तम मध्यम' अने २१ थी ५० पर्यन्तना प्रासादने 'उत्तमोत्तम' जाणवो, आना दोढा, सवाया अने तुल्यमानना मंडपो पण अनुक्रमे १. उत्तम-कनिष्ठ, २. उत्तम-मध्यम अने उत्तमोत्तम जाणवा.

समतलो विषमश्च, संघाटो मुखमण्डपे ।
भित्यन्तरे यदा नैव, दोषस्तंभ-पट्टादिके ॥५४६॥
क्षणमध्येषु सर्वेषु, पट्टमेकं न दापयेत् ।

युग्मं च दापयेत्तत्र, वेधदोषविवर्जितम् । ॥५४७॥
क्षणमध्येषु सर्वेषु, स्तम्भमेकं न दापयेत् ।
युग्माकारमिमंदद्याद्, मूलगर्भं न पीडयेत् ॥५४८॥
मण्डपाना समस्तानां, लक्षणं कथ्यतेऽधुना ।
गतिं स्तम्भं च भित्तिं च, विभक्तिं भागसंख्यया ॥५४९॥

भा०टी०—मुख मंडपनो संघाट (पीठ) समतल होय अथवा विषम तल होय, स्तंभ, पाट आदि समतल होय के विषमतल—जो वच्चे भींतनो आंतरो होय तो दोष गणातो नथी. क्षणोमां एक वधारवु नहि, कदापि वधारवानी आवश्यकता होय तो वेध टालीने समानान्तरे बे वधारवा एज रीते एक स्तंभ कदापि न देवो. पण २–४–६ आम बेकी रुपे स्तंभो देवा, गर्भवेध न थाय ए वातनुं ध्यान राखवु

मंडपोना संबन्धमां सामान्य निरूपण करी सर्व मंडपोनु लक्षण, मंडपोनी रचना विधि, स्तंभनुं लक्षण, भींतनुं स्वरूप, भाग संख्या-पूर्वक दल विभक्ति, आदि विषयोनु स्वरूप हवे पछीना सूत्रमां कहुं छुं

पुष्पकादि २७ मंडपो—

अपराजित पृच्छाना १८६ मा सूत्रमां आ मंडपोनां नाम अने रचना विधि बतावेल छे, आ बधा गूढ मंडपो छे एटले भद्र, उपभद्र तेमज तेमनो निर्गम आदि पण जाणवो आवश्यक तो छेज, छतां आ सूत्रमां ए विषयनुं निरूपण नथी. आथी समरांगण-सूत्रधार उपरथी आ प्रकारनी आवश्यक बातोनी चर्चा करी पछी मंडपोनुं निरूपण करीशुं.

१ पुष्पक-मंडप—

चतुरस्रीकृते क्षेत्रे, दशधा प्रविभाजिते ।
भागैश्चतुर्भिर्भद्रं स्याद्, द्वौ भागौ प्रतिभद्रकम्॥५५०॥

अग्रतः पृष्ठतो वापि, निर्गमो भागिको भवेत् ।
भद्राणां निर्गमो भागं, सार्धभागमथापि वा ॥५५१॥

प्रासादस्य त्रिभागेन, चतुर्भागेन वा भवेत् ।
अर्धेनाथ षडंशेन, चतुर्भागेन वा भवेत् ॥५५२॥

अर्धेनाथ षडंशेन, पञ्चांशेनाथ निर्गतिः ।
प्रासादानां समा कार्या, पादोना वा प्रमाणतः ॥५५३॥

कार्या त्रिभागहीना वा, मण्डपास्तु समैः क्षणैः ।
स्वविस्तारसमं भद्रे, मुखे चैषा प्रकीर्तिता ॥५५४॥

कर्णा द्विभागिका ज्ञेया-स्तेषां कोणचतुष्टये ।
वाम-दक्षिणभागाभ्यां, सहभद्रं षडंशकम् ॥५५५॥

पतिभद्रे न चैतस्मिन्, विदध्यादग्रपृष्ठयोः ।
चतुःषष्ठिधरोऽयं स्यात्, पुष्पको नाम मण्डपः ॥५५६॥

भा०टी०—चोरस बनावेल मंडपभूमिना दश भाग करवा, ते पैकीना ४ भागनुं भद्र अने २ भागनुं प्रतिभद्र करवुं, आगल अने पाछल भद्रनो निर्गम १-१ भागनो करवो, सामान्य रीते मंडपना भद्रोनो निर्गम १ भागनो १॥ भागनो अथवा प्रासादना त्रीजा भागनो वा चोथा भागनो होइ शके, वली प्रासादमानथी अर्ध भागे, षष्ठ भागे, पंचम भागे, समान भागे, एक तृतीयांशहीन अथवा तो पोणा भागे पण मंडपनो निर्गम होय छे. मंडपो समक्षण करवा अने मुखभद्र विभागे एमनो निर्गम दलना विस्तारने अनुसरीने करवो. मंडपना चारे खुणे २-२ भागना कोणा अने डाबा

जमणा त्रिभागो सहित ६ भागनुं भद्र करवु, आ मंडपना आगलना तथा पाछलना भद्रोने प्रतिभद्रो न करवा, आवो ६४ स्तंभनो पुष्पक नामक मंडप बनाववो.

२ पुष्पभद्र—

त्रण दिशाओना भद्रोने प्रतिभद्रो लगाडवा अने प्रासादमुखे केवल प्राग्ग्रीव लगाडवाथी पुष्पभद्र नामनो ६२ स्तंभनो मंडप बने छे.

सुप्रभ—

पुष्पकमाथी ४ स्तंभ ओछा करता ६० स्तंभनो सुप्रभ नामनो मंडप बनाववो.

एज प्रमाणे २–२ स्तंभो ओछा करता उक्त दल विभक्तिना २० सुधीना मंडपो बनाववा

सुग्रीव मंडपनां भद्रो ४ भागनां अने कोणो ३–३ भागना करवा, भद्रोनो निर्गम पूर्वे कह्या प्रमाणे ज करवो

समरांगण सूत्रधारना उक्त वर्णनथी समजाय छे के पुष्पकथी विमानभद्रसुधीना मंडपोनी दल रचना पुष्पकनी रचनाने अनुसरीने करवानो छे ज्यारे सुग्रीव पछीना मंडपोनी दलविभक्ति सुग्रीवना जेवी करवी एवो उक्तग्रंथनो आशय समजाय छे

हवे अपराजित पृच्छाना पाठ उपरथी पुष्पकादि २७ मंडपोनु वर्णन जोइये, आ ग्रन्थमा पण मंडपोनो नाम क्रम तो पुष्पकथी ज शरु थाय छे—

पुष्पकः पुष्पभद्रश्च, सुप्रभो मृगनन्दन. ।
कौशल्यो बुद्धिसंकीर्णो, गजभद्रो जयाह्वय' ॥५५७॥
श्रीवत्सो विजयश्चैव, वस्तुकीर्णश्च श्रीधर ।
यज्ञभद्रो विशालाख्य , सुश्लिष्टः शत्रुमर्दन' ॥५५८॥

भूजयो नन्दनश्चैव, तथा विमानभद्रकः ।
सुग्रीवो हर्षणश्चैव, कर्णिकारः पदाधिकः ॥५५९॥
सिंहश्च सिंहकोभद्रः, सुसूत्राख्यस्तथैव च ।
इत्येते मंडपाः प्रोक्ताः सप्तविंशतिसंख्यया ॥५६०॥

भा०टी०—१ पुष्पक, २ पुष्पभद्र, ३ सुप्रभ, ४ मृगनन्दन, ५ कौशल्य, ६ बुद्धिसंकीर्ण, ७ गजभद्र, ८ जय, ९ श्रीवत्स, १० विजय, ११ वस्तुकीर्ण, १२ श्रीधर, १३ यज्ञभद्र, १४ विशाल, १५ सुश्रेष्ठ, १६ शत्रुमर्दन, १७ भूजय, १८ नन्दन, १९ विमानभद्र, २० सुग्रीव, २१ हर्षण, २२ कर्णिकार, २३ पदाधिक, २४ सिंह, २५ सिंहक, २६ भद्र अने २७ सुसूत्र; आ सत्तावीश मंडपोना नामो छे.

मण्डपोनां नामो तो अनुक्रमे जणाव्यां पण आनी रचना विधि विपरीतक्रमे लखी छे, कारणके छेल्ला मंडपथी बब्बे स्तंभो वधारतां पहेला सुधी आववाथी निरूपण थोडा शब्दोमां सुगमतापूर्वक करी शकायुं छे एवुं प्रथमथी अंतिम सुधी जतां थवुं अशक्य हतुं एटले ग्रन्थकारे आ विपर्यास स्वीकार्यो छे, आ वस्तुने न समजता केटलाक आधुनिक शिल्पिओ आ निरूपण क्रमिक गणी पुष्पकादि क्रमथी मंडपोने जोडे छे अने एज प्रकारना नकशा आपे छे जे ख़रा नथी.

चतुरस्त्रीकृते क्षेत्रे, त्रिधा नवपदाङ्किते ।
कर्णे स्तम्भाश्च चत्वारो, द्वौ द्वौ भद्रे सुसूत्रके ॥५६१॥
अष्टांशपदयुक्ताश्च सूर्यस्तंभाः सुसूत्रके ।
प्राग्रीवाग्रे पदमेकं, स भवेद् भद्रसंज्ञकः ॥५६२॥
तद् भद्रं च परित्यज्य, सिंहः सोऽन्तश्चतुष्किकः ।
प्राग्रीवादग्रयुक्ताच्च, सिंहकाख्यः स उच्यते ॥५६३॥

चतुष्की मध्यतस्त्यक्त्वा, प्राग्रीवाश्च चतुर्दिशम्।
पदाधिको नामतोऽग्रे त्रिपदः कर्णिकारकः ॥५६४॥

भा०टी०—चोरस बनावेला क्षेत्रने त्रण चार त्रण त्रण पदो पाडीने नवपदो वडे चिह्नित करवुं, ते क्षेत्रना ४ कोण विभागोमा ४ स्तभो अने तेना ४ भद्र विभागोमा २-२ स्तंभो देवाथी १२ स्तभवालो 'सुभद्र मण्डप' बने छे सुभद्रमण्डपमा ८ पदयुक्त अर्थात् ८ पदोने स्पर्शता करता १२ स्तंभो आवे छे.

द्वारनी तरफ प्राग्रीवरूपे एक पद वधारीने १४ स्तभनो 'भद्रनामक' मडप बनाववो

आगला भद्रभागनुं पद हटावी कोलीने आगे चोकी करवाथी ३ पदो पडी सिंहमंडप तैयार थशे द्वार तरफ २ स्तभोवडे प्राग्रीव वधारवाथी ए सिंहनो ज 'सिंहक' नामनो मंडप थाय छे.

अंदरनी चोकी काढी नाखीने च्यारे दिशाओमा भद्रो मध्ये प्राग्रीवो करवाथी 'पदाधिक' मडप बने छे

पदाधिकनी आगे त्रणपदो पाडवाथी 'कर्णिकार' नामनो मडप बने छे

त्रिपदे पदमेकं च, चतुष्कं हर्षणो मतः।
सुग्रीवस्त्रिपदाग्रे चा-ऽपरे विमानभद्रकः ॥५६५॥
द्वयात्पक्षेऽपरे त्यक्त्वा, नन्दनः सर्वकामद
तदाऽपरे भूजयं च, परित्यक्तचतुष्ककः ॥५६६॥
पदिका पूर्वभद्रे च, कर्णेऽलिन्दश्चतुर्दिशम्।
स शत्रुमर्दनः स्यात्तः सुश्रेष्ठश्चाऽपरे यदि ॥५६७॥

भा०टी०—त्रिपदने आगे बे थाभला वधारी एक पदनी चोकी करवाथी ए मडपनु नाम 'हर्षण' पडे छे.

हर्षणनी अग्र चोकीनी बने तरफ थामला वधारी त्रिपद करवाथी 'सुग्रीव' मण्डप बने छे.

पाछल बे चोकीओ वधारी त्रिपद पाडवाथी एज मंडप 'विमानभद्र' एवुं नाम धारण करे छे.

पाछलनां त्रिपदो हटावी डावी जमणी तरफ त्रिपदो करवां एटले सर्वेच्छापूरक 'नन्दन' नामनो मंडप बनशे.

नन्दनना पाछला भागे पण त्रिपद करवाथी 'भूजय' बने अने भूजयनी चोकीओ काढी नाखीने पूर्वभद्रमां एक पद राखी च्यारे खूणाओमां १-१ चोकी पाडवाथी ते 'शत्रुमर्दन' नामक मंडप बने छे, ए शत्रुमर्दनना पाछला भागे १ पद वधारवाथी एज मंडपनुं नाम 'सुश्रेष्ठ' पडे छे.

कुर्यात् पक्षेऽपरे त्यक्त्वा, विशालाख्यः स उच्यते ।
तथाऽपरे यज्ञभद्रो, मण्डपः सर्वकामदः ॥५६८॥
त्रिपदाग्रे श्रीधराख्यो, वास्तुकीर्णस्तथाऽपरे ।
दद्यात् पक्षेऽपरे त्यक्त्वा, विजयो नाम नामतः ॥५६९॥

भा०टी०—पाछलुं पद हटावी बे बाजुए १-१ पद पाडवाथी सुश्रेष्ठनो 'विशाल' नामक मंडप बनशे अने पाछला भागे पद वधारवाथी 'यज्ञभद्र' नामनो मंडप सर्वकामना पुरनारो बनशे.

यज्ञभद्र आगे त्रिपदो पाडवाथी 'श्रीधर' अने पाछल त्रिपदो पाडवाथी 'वास्तुकीर्ण' मंडप बने छे.

ए वास्तुकीर्णनां पाछलां त्रिपदोना थांभला हटावी बगलमां त्रिपदो पाडवाथी 'विजय' नामनो मण्डप बने छे.

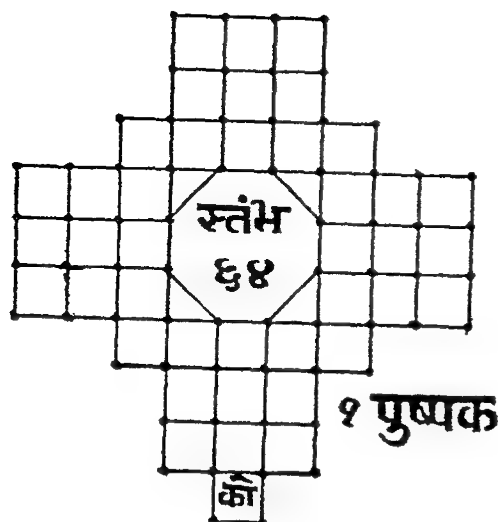
तथाऽपरे च श्रीवत्सः, पदिकाग्रे जयाह्वयः ।
पदिकं त्यक्तमग्रे तु, चतुष्कं गजभद्रकः ॥५७०॥
तथाऽग्रे बुद्धिसंकीर्णः, कौशल्यश्चाऽपरे तथा ।
दद्यात्पक्षेऽपरे त्यक्त्वा, स भवेन्मृगनन्दनः ॥५७१॥
तथाऽपरे सुप्रभस्तु, कर्तव्यः सर्वकामदः ।
त्रिपदं चाऽग्रभदं च, स भवेत् पुष्पभद्रकः ॥५७२॥

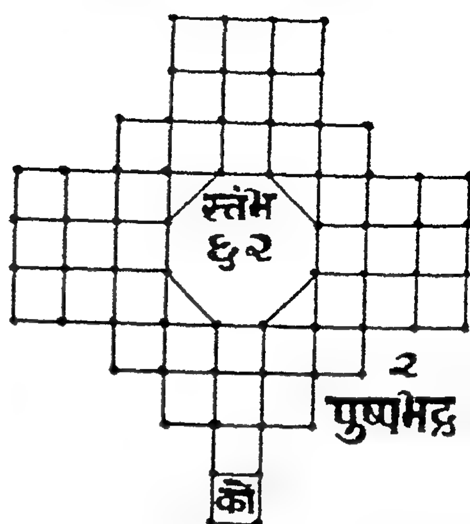
पुष्पकः सर्वत्रिपदः, परित्यक्तचतुष्किकः ।
एवं तु युक्त्या विज्ञेया, मण्डपाः पुष्पकादयः ॥५७३॥

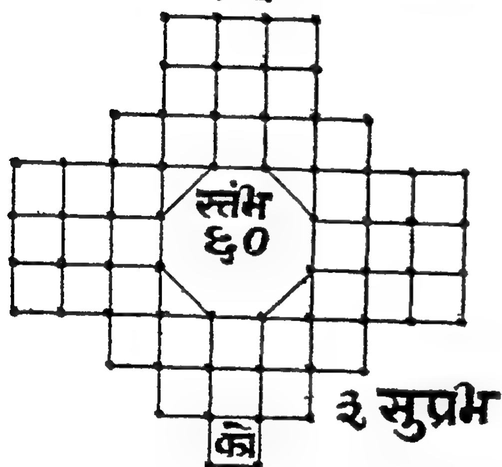
भा०टी०—विजयना पाछला भागे पण त्रणपदो पाडतां 'श्रीवत्स' अने श्रीवत्सने आगले भागे एक पद वधारता ते मंडपनु 'जय' एवुं नाम निष्पन्न थाय छे, जयना आगला पदना २ थाभलाना ४ थांमला करवाथी 'गजभद्र' मंडप बने छे, गजभद्रनी आगल पद वधारवाथी 'वृद्धि संकीर्ण' अने आगल पाछल एक एक पद वधारता 'कौशल्य' मंडप बने छे, कौशल्यना पाछला पदने हटावी बंने बाजुमा १-१ पद वधारवाथी 'मृगनन्दन' मंडप बने, मृगनन्दनना पाछला भागे पद वधारीए तो 'सुप्रभ' नामक सर्वेच्छापूरक मंडप बने, सुप्रभना आगला भद्रे त्रिपद पाडीने पुष्पभद्र अने सर्वदिशाओमां ३-३ पदो पाडीने 'पुष्पक' मंडप करवो, एम उपर बतावेली युक्तिवडे पुष्पकादि मंडपो जाणवा

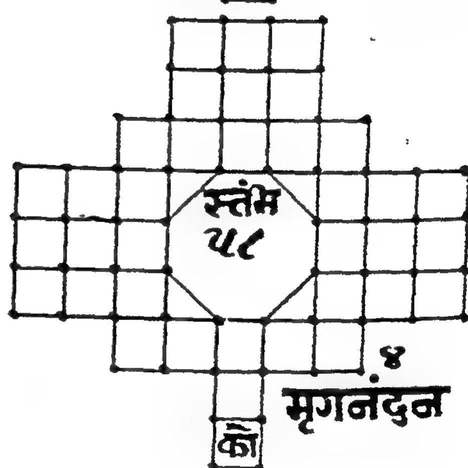
चतुःषष्टिस्तम्भयुक्तः, पुष्पको नाम विश्रुतः ।
द्वि-द्वि स्तम्भत्यागयुक्त्या, पुष्पाद्याः सप्तविंशतिः ॥५७४॥
पुष्पकाद्याश्च युक्ताः स्युः, समैर्वा विषमैस्तलैः ।
अनुक्रमयुक्तमार्गे, सप्तविंशतिमण्डपाः ॥५७५॥
समैः क्षणैः समैः स्तम्भैः, समैश्चापि ह्यलिन्दके ।
विषमे तु तुलापट्टे, गूढे चन्द्रावलोकना ॥५७६॥
निगूढे नृत्ये आख्याताऽधस्ताद् भद्रावलोकना ।
चन्द्रावलोकना जालैः कार्याः कर्णानुगास्तथा ॥५७७॥
निःस्तम्भा भित्तिका भित्ते-रिष्टांशा च चतुष्किका ।
स्तम्भेषु युग्मस्तम्भाश्च, मूलसूत्रसमुद्भवाः ॥५७८॥

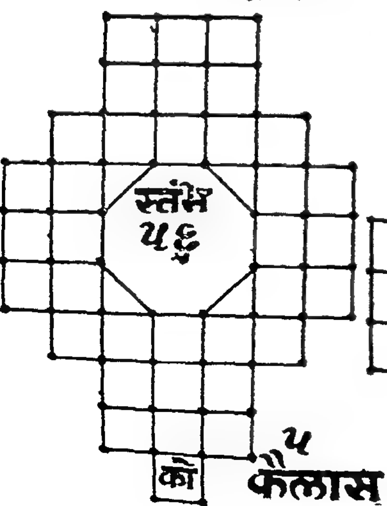
भा०टी०—६४ स्तंभ युक्त मंडप 'पुष्पक' नामथी प्रख्यात छे, बे बे स्तंभ ओछा करतां एकंदर पुष्पकादि २७ मंडपो बने छे. तेने स्पष्ट समजवा माटे निचेनी आकृतिओ उपयोगी बनशेः—

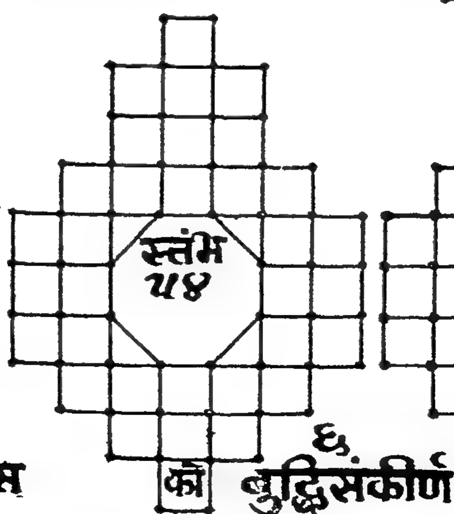

स्तंभ
६४
१ पुष्पक
को

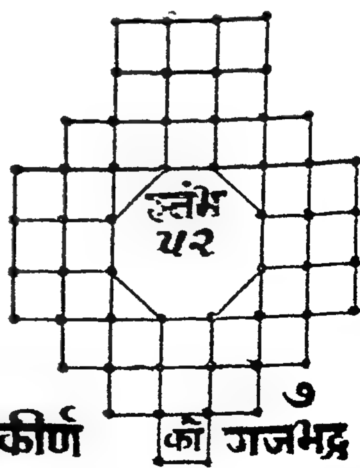

स्तंभ
६२
२
पुष्पभद्र
को

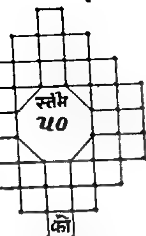

स्तंभ
६०
३ सुप्रभ
को

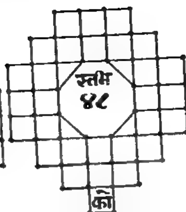

स्तंभ
५८
४
मृगनंदन
को

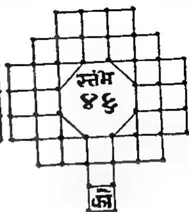

स्तंभ
५६
५
कैलास
को


स्तंभ
५४
६
बुद्धिसंकीर्ण
को

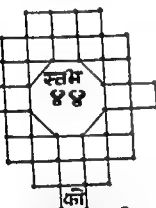

स्तंभ
५२
७
गजभद्र
को

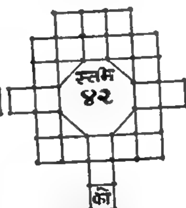


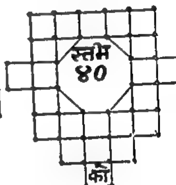




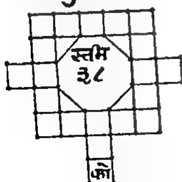
८ जय ९ श्रीवत्स १० विजय

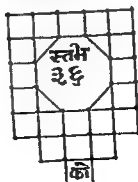


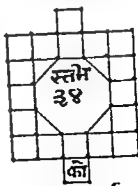




११ वास्तुकीर्ण १२ श्रीधर १३ यज्ञभद्र







१४ विशाल १५ सुश्रेष्ठ १६ शत्रुमर्दन

पुष्पकाद्याश्च युक्ताः स्युः, समैर्वा विषमैस्तलैः ।
अनुक्रमयुक्तमाद्ये, सप्तविंशतिमण्डपाः ॥५७९॥

समैः क्षणैः समैः स्तम्भैः, समैश्चापि ह्यलिन्दकैः ।
विषमे तु तुलापट्टे, गूढे चन्द्रावलोकना ॥५८०॥

निगूढे नृत्ये चाख्यानाऽधस्ताद् भद्रावलोकना ।
चन्द्रावलोकना जालैः, कार्याः कर्णानुगास्तथा ॥५८१॥

निःस्तम्भा भित्तिका भित्ते-रिष्टांशा च चतुष्किका ।
स्तम्भेषु युग्मस्तम्भाश्च, मूलसूत्रसमुद्भवाः ॥५८२॥

भा०टी०—पुष्पकादि मण्डपो समतल उपर होय अथवा विपमतल उपर होय; पुष्पक नामक प्रथम मण्डपना विधानमां बतावेल क्रम प्रमाणे मण्डपोनुं निर्माण करवुं; मण्डपोना क्षणो स्तंभो अने अलिन्दो सम राखवा, विपमतल उपर गूढ मण्डप करवो, तेमां चन्द्रनो प्रकाश पडी शके एवां भद्रविभागे चन्द्रावलोकनो (बारिओ) मूकवां.

'गूढ मंडपे' अने 'नृत्य मंडपे' मंडपना निचला भागमां बारियो मूकवी. विशेष प्रकाशनी आवश्यकता होय तो बे कोणं विभागोमां जालिओ मूकीने तेनी सगवड करवी, जगतीनी दीवालमां स्तंभ देवा नहि, कदापि मंडप अने भींत वच्चे अवकाश अधिक होय तो सम संख्याए स्तंभो उभा करी तेना आधारे पदना विस्तार प्रमाणे चोकियो पाडवी, चोकियो माटेना स्तंभो समसंख्याक होवा जोइये अने चोकियोनो विस्तार मूल सूत्र अनुसारे करवो जोइए.

क्षणमध्येषु सर्वेषु, स्तम्भमेकं न दापयेत् ।
युग्मं च दापयेत्तत्र, वेधदोषविवर्जितम् ॥५८३॥

मूलस्तम्भे यथासूत्रं, स्तम्भो देयश्च मण्डपे ।
तदा नगरनृपेन्द्र-यजमानजयः सदा ॥५८४॥

उत्पद्यते स्तंभवेधे, पद्मिनी नाम राक्षसी ।
पीडयेत् पुर-राजादीन्, वास्तुवेदैरुदाहृतम् ॥५८५॥

द्वि-द्वि-स्तम्भह्रासयोगे, चतुः षष्ट्याश्च द्वादश ।
पुष्पकाद्या इमे प्रोक्ताः, सप्तविंशतिमण्डपाः ॥५८६॥

भा०टी०—कोइपण क्षणमा एक स्तंभ न देवो, पण बे चार इत्यादि समसंख्याए वेधदोष टालीने देवा. प्रासादना मूलसूत्रे जे स्तंभ होय तेज सूत्रे मंडपनो स्तंभ देवो, जेथी नगर, राजा अने यजमान सर्वेनो सदाकाल जय थाय स्तंभ देवामा क्याइ पण वेधदोष उत्पन्न थवा न देवो, केमके स्तंभवेधदोषथी 'पद्मिनी' नामनी राक्षसी उत्पन्न थाय छे, जे नगरजन तथा राजा आदिने पीडा उत्पन्न करे छे, आम शिल्पशास्त्रना ज्ञाताओए कह्यु छे

आम आ सूत्रमा बे बे थाभला घटाडीने ६४ थी १२ थाभला सुधीना पुष्पकादि २७ मंडपो कह्या.

स्तंभोना प्रकारो अने जाडाइ—

रुचका भद्रकाश्चैव, वर्धमानास्तृतीयकाः ।
अष्टास्राः स्वस्तिकाश्चैव, स्तम्भाः प्रासादरूपिणः ॥५८७॥

चतुरस्राश्च रुचका, भद्रका भद्रसयुताः ।
वर्धमानाः प्रतिरथै-रष्टांशैश्चाष्टास्रकाः ॥५८८॥

आसन्योर्ध्वं भवेद् भद्र-मष्टकर्णैस्तु स्वस्तिकाः ।
प्रकर्तव्याः पञ्चविधाः, स्तम्भाः प्रासादरूपिणः ॥५८९॥

प्रासादस्य दशांशेन, स्तम्भाना विस्तरः पृथक् ।
एकादशांशैः कर्तव्यो, द्वादशांशैरथोच्यते ॥५९०॥

त्रयोदशांशैः कर्तव्यः, शक्रांशश्च तथोच्यते ।
एतन्मानं समुदिष्टं, स्तंभानां विस्तरे पृथक् ॥५९१॥

भा०टी०—१ रुचक, २ भद्रक, ३ वर्धमान, ४ अष्टास्र अने ५ स्वस्तिक; आम पांच प्रकारना स्तंभो होय छे, प्रासादने अनुरूप स्तंभो करवा.

चोरस स्तंभो 'रुचक,' भद्रसहित होय ते 'भद्रक,' प्रतिरथ सहित होय ते 'वर्धमान,' अष्टवांस होय ते 'अष्टास्र' तथा पीठ उपर निचला भागमां भद्रवाला अने उपर जतां आठ कोणवाला होय ते स्तंभो 'स्वस्तिक' कहेवाय छे; प्रासादना रूप प्रमाणे उपर्युक्त पांच प्रकारना स्तंभो करवा.

स्तंभोनो विस्तार प्रासाद विस्तारना दशमा, अग्यारमा, बारमा, तेरमा, अथवा चौदमा भागे करवो, आम स्तंभोना विस्तारनुं भिन्न भिन्न मान शास्त्रमां जणावेलुं छे. (प्रासाद जेम विस्तारे अधिक होय तेम तेना स्तंभनो विस्तार उपरना माने करवो ए तात्पर्य छे.)

प्रकारान्तरे स्तंभोनी जाडाई—

प्रासादे एकहस्ते तु, स्तंभो वा चतुरंगुलः ।
द्विहस्ते चांगुलाः सप्त, त्रिहस्ते नव एव च ॥५९२॥

ततो द्वादशहस्तान्तं, हस्ते हस्ते द्वयांगुला ।
सपादांगुल वृद्धिःस्याद्, यावत्षोडशहस्तकम् ॥५९३॥

अंगुलैका ततो वृद्धि-श्चत्वारिंशत्करावधि ।
तदूर्ध्वं च शतार्धान्तं, पादोनांगुलिका भवेत् ॥५९४॥

भा०टी०—१ हाथना प्रासादना स्तंभनी जाडाई ४ आंगलनी, २ हाथना प्रासादना स्तंभनी जाडाई ७ आंगलनी अने ३

हाथना प्रासादना स्तंभनी जाडाई ९ आगलनी करवी. ते पछी ४ थी १२ हाथ पर्यन्तना कोइ पण मापना प्रासादना स्तभनी जाडाईमां प्रतिहस्त २-२ आगलनी वृद्धि करवी, जेम के ४ हाथना प्रासादे स्तभ ११ आगलनो, ५ हाथना प्रासादे स्तंभ १३ आगलनो करवो इत्यादि, १२ पछी १३ थी १६ हाथ सुधीना प्रासादना स्तभनी जाडाइमा हाथ प्रति १। आंगलनी वृद्धि अने १७ थी ४० हाथ सुधीना प्रासादना स्तंभनी जाडाइमा प्रतिहस्त १-१ आगलनी वृद्धि करवी, ते पछीना ४१ थी ५० हाथ सुधीमा प्रतिहस्ते स्तंभनो विस्तार ०॥-०॥ (पोणो) आगल वधारवो

स्तभनी जातिओ—

रुचकश्चतुरस्रः, स्यादष्टास्रिर्वज्र उच्यते ।
द्विवज्रः षोडशास्रिश्च, प्रतीतो द्विगुणस्तनः ॥५९५॥
मध्यप्रदेशे यः स्तम्भो, वृत्तो वृत्तः प्रकीर्तितः ।

भा०टी०—चोरस स्तंभ 'रुचक', अष्टकोण 'वज्र', षोडशकोण 'द्विवज्र' अने बत्रीश कोणवालो स्तभ 'प्रतीत' एवा नामे ओलखाय छे, जे स्तंभ मध्यभागमा गोल होय ते 'वृत्त' स्तम कहेवायो छे

मडप-भद्र-विस्तार—

स्तंभत्रयस्य मार्गेण, क्षणो मण्डपमध्यगः ॥५९६॥
मूलप्रासादमार्गेण, कार्या वा भद्रविस्तृतिः ।
शेषाः क्षणा विधातव्याः, समसंख्याः क्षणेर्धरः ॥५९७॥

भा०टी०—मंडपनो मध्य क्षण स्तभत्रयानुसारे विस्तृत करवो, अथवा तो मूलप्रासादना माने मंडपना भद्रना क्षणनो विस्तार करवो, बीजा चणो-क्षणो अने स्तभोवडे समसंख्याक करवा.

पाट, स्तंभ अने शरानो विस्तार—

पृथुत्वं स्यात् सषड्भाग-पिण्डतुल्यं तु पट्टके ।
स्तंभः पट्टसमः कार्यः, शीर्षकं त्रिगुणं ततः ॥५९८॥

भा०टी०—पाटडानो विस्तार तेनी जाडाइना छट्ठाभाग जेटलो अधिक करवो, स्तंभनी जाडाई पाटडानी जाडाइ जेटली करवी, अने शरु स्तंभथी त्रणगणुं विस्तारे करवुं.

द्वादश त्रिक मंडपो—

सुभद्रश्च किरीटी च, दुन्दुभिः प्रान्त एव च ।
मनोहरश्च शान्तश्च, नन्दाख्यश्च सुदर्शनः ॥५९९॥
रम्यकश्च सुनाभश्च, सिंहः सूर्यात्मकस्तथा ।
निगूढाग्रे त्रिकाख्याना, द्वादश मुखमण्डपाः ॥६००॥
निगूढद्वारस्याग्रे तु, चतुष्किकैवमग्रतः ।
सुभद्रो नाम विज्ञेयो, मण्डपः सर्वकामदः ॥६०१॥
उभौ कक्षौ पुनर्दद्यात्, किरीटी नाम संज्ञितः ।
दुन्दुभिरेकः पूर्वश्च, तथोभौ प्रान्त उच्यते ॥६०२॥
पूर्वं चतुष्किकायां च, मनोहरश्च कामदः ।
शान्तश्चैतदुभोपेतः, स्तम्भैर्द्वयष्टभिरेव च ॥६०३॥

भा०टी०—१ सुभद्र, २ किरीटी, ३ दुंदुभि, ४ प्रान्त, ५ मनोहर, ६ शान्त, ७ नन्द, ८ सुदर्शन, ९ रम्यक, १० सुनाभ, ११ सिंह अने १२ सूर्यात्मक; गूढमंडपनी आगल त्रिक नामथी ओलखाता आ १२ मुखमंडपो होय छे.

गूढ मंडपना द्वारनी आगल मात्र एक चोकी बनाववी तेनुं नाम 'सुभद्र' नामक मंडप अने सुभद्रना बंने बगलमां चोकीयो पाडी

त्रिचोकियुं करवुं ते 'किरीटी' मंडप जाणवो.

त्रिचोकियानी आगल एक चोकी वधारवाथी चउचोकियु बने तेनुं नाम 'दुदुभि' मडप.

दुदुभिनी आगेनी चोकिनी बने बाजु १-१ चोकी वधारी छचोकियुं बनाववु तेनुं नाम 'प्रान्त' मंडप.

प्रान्तनी आगे सातमी चोकी करवाथी पाचमो 'मनोहर' मडप बनशे अने मनोहरनी अग्रचोकीनी बगलमा १-१ चोकी वधारी नव चोकियु बनाववाथी छट्ठो 'शान्त' मडप बनशे; आ मडपमा बधा मलीने १६ स्तंभो लागशे, मूलप्रासादथी त्रिमंडपोनो निर्गम विस्तारमा बेगणो करवो, आम आ छठा मडपनी लंबाइ अने पहोलाइमा ३-३ चोकियो थशे.

एष त्रिकाः समाख्याता', प्रासादपीठमस्तके ।
पुनरेव प्रवक्ष्यामि, तद्विधान् षट् च मण्डपान् ॥६०४॥
तस्य बाह्ये पुनर्दद्यात्, प्रत्यलिन्दाननुक्रमात् ।
चतुष्कीक्रमयोगेन, मण्डपान षट् च लक्षयेत् ॥६०५॥

भा०टी०—आ प्रमाणे प्रासादनी पीठने मथारे बनारा छ त्रिक मंडपो कह्या, वली एज प्रकारना बाकीना छ मडपो हवे कहुं छुं.

पूर्वोक्त शातमडपना बाह्य भागे अनुक्रमे अलिन्दो देवा, एटले चोकियो पडता एक पछी एक छ मंडपो नीचे प्रमाणे बनशे.

तस्याग्रे चतुष्किकायां, नन्दाख्यः सर्वकामदः ।
दधस्त्वाग्रे चोदरे गर्भे, दद्याचैव सुदर्शनः ॥६०६॥
उभौ कक्षौ पुनश्चाग्रे, रम्यकः समुदाहृतः ।
अग्रे द्वि चतुष्किकाभ्यां, सुनाभो नाम समनः ॥६०७॥

कुक्षी पक्षेऽलिन्दयुक्ते, सिंहनामा स उच्यते ।
मुक्तकोणाकृतिः स्थित्या, पूर्णकर्णः सूर्यात्मकः ॥६०८॥

पृथुत्वं च तलोद्भवं, चतुःक्षणाग्रनिर्गमः ।
क्षणे क्षणे चतुष्किकायां, वितानं संवरणोऽथ ॥६०९॥

भा०टी०—ते शान्तमंडपना नव चोकियाना अग्रभागे चोकी वधारवाथी ७ 'नन्द' नामनो मण्डप बने छे. आगेनी चोकी हटावी वच्चेना त्रण चोकियानी बंने तरफ १-१ चोकी वधारवाथी ८ 'सुदर्शन' मंडप बने छे. बगलमां फरि बे चोकियो वधारी १ चोकी आगे वधारतां जे मण्डप बने छे तेनुं नाम ९ 'रम्यक' मण्डप छे. आगलनी चोकिना बगलमां बे चोकी वधारी त्रण चोकियुं करवाथी १० 'सुनाभ' मण्डप बने छे. पाछलना त्रण चोकियानी बगलमां बे चोकियो पाडवाथी ११ 'सिंह' नामक मण्डप बने छे, आ मण्डपनी स्थिति आगलना भागे कोणहीन बने छे, ज्यारे आगलनी बगलनी चोकियो वधारी पूर्ण मण्डप करवो ते १२ 'सूर्यात्मक' मण्डप कहेवाय छे.

आ त्रिक मण्डपोनो विस्तार नाल मण्डप जेटलो करवो अने आगल-नृत्यमण्डपनी तरफ च्यार क्षणो वधारवा; प्रत्येक क्षणनी चोकियोमां वितान अने उपर सांमरण अथवा गुमटिओ करवी.

मण्डपोना संबन्धमां प्रकीर्णक बातो-गूढ मण्डपनी भींत अने द्वार विषे—

भित्तिः प्रासादमानेन, पीठान्तोत्तानपट्टका ।
एकं वा त्रीणि वा कुर्यात्, द्वाराणि तत्र सर्वदा ॥६१०॥

भा०टी०—गूढमण्डपनी भींत प्रासादना माने करवी, पीठना मथाराथी उपरना पाटडा सुधी भींत ऊंची करवी, गूढमण्डपने द्वार

एक अथवा त्रण करवा

शुकस्तभानुसूत्रेण, अष्टाशाभित्तिमाचरेत् ।
मध्यपीठोच्छ्रयोत्सेधा, मण्डपाद्याः समस्तकाः ॥६११॥

भा०टी०—शुकनासना स्तंभमध्यना अष्टमांश जेटली तेनी भींत विस्तारे करवी.

प्रासादो, गूढ मण्डपो, त्रिकमण्डपो, आदि सर्वनी ऊंचाई प्रासाद पीठना मध्यपासाना मथाराथी गणवी

अष्टांशवृत्तोर्ध्वतश्च, विनानान्ता समुच्छितिः ।
चतुष्किका याम्योत्तरे, चाग्रेऽथ द्वारि सोच्यते ॥६१२॥

भा०टी०—मण्डपनी ऊंचाई अष्टांसथी वितान सुधी जाणवी, गूढ मण्डपना डाबा जमणा अने सामेना द्वार उपर चोकियो करवी.

प्रासादे द्वारशाखाया, तद्विधा मण्डपादिके ।
करोटक तदूर्ध्वेषु, बुधा (वृत्त) वधात्तु कारयेत् ॥६१३॥

भा०टी०—प्रासादना द्वारनी शाखा जेवी ज मण्डप आदिना द्वारनी पण शाखा करवी, अने उपर मण्डपना वृत बन्धथी करोटक करावतु.

वारी अने जाली—

वातायनाश्च कर्तव्याः, सह चन्द्रावलोकौ ।
प्रासादद्वारवद् द्वार-विस्तरो मडपे भवेत् ॥६१४॥

भा०टी०—मण्डपोने हवा माटे वारीओ करवी अने प्रकाश माटे जालिओ (तावदानो) पण करवा, प्रासादना द्वार विस्तार जेटलो मण्डपद्वारनो विस्तार पण होय छे.

सपादद्विगुणाः सार्धं-द्विगुणा' सान्तरोद्भवा' ।
क्षुद्रप्रासादकेषु स्यु-र्मण्डपा वहवोऽपरे ॥६१५॥

क्षेत्राऽलाभे तु पुन-रिमान् सर्वेषु योजयेत् ।

भा० टी०—न्हाना देवालयोमां सत्रा वे गणा, अढी गणा, अने एनी वच्चेना मानना, बीजा अनेक मण्डपो थाय छे अने स्थानना अभावे बीजा देवालयोमां पण आ बधा मण्डपो करी शकाय छे.

द्विस्तंभः शुकनासाग्रे, विज्ञेयः पादमण्डपः ।
प्रासादभित्तिमानेन, मण्डपे भित्तयः स्मृताः ॥६१६॥

भा० टी०—शुकनासनी आगल बे थांभला उभा करी चोकी पाडवी तेनुं नाम 'पादमण्डप' कहेवाय छे, प्रासादनी भित्तिनी जाडाई प्रमाणे ज मण्डपनी भींतोनी जाडाई कही छे.

शतमष्टोत्तरं ज्येष्ठ-श्चतुःषष्टिकरोऽवरः ।
कनिष्ठो मण्डपः कार्यो, द्वात्रिंशत्करसंमितः ॥६१७॥

भा० टी०—ज्येष्ठ मण्डप वधारेमां वधारे १०८ हाथनो करवो, मध्यम मण्डप वधुमां वधु ६४ हाथनो अने कनिष्ठ मण्डप अधिकमां अधिक ३२ हाथनो करवो.

चतुःषष्टिपदे ज्येष्ठे, भद्रं कुर्यात् चतुष्पदम् ।
एकाशीतिपदे मध्ये, भद्रं स्यात् पञ्चभागिकम् ॥६१८॥

शतभागविभक्ते तु, षडंशं स्यात् कनीयसि ।
कर्णा द्विभागिकाः कार्या, भित्तियुक्तश्च मण्डपः ॥६१९॥

भा० टी०—ज्येष्ठ मण्डपनी भूमिमां ६४ पद पाडी ४ भागनुं भद्र, मध्यमण्डपना क्षेत्रमां ८१ पद पाडी ५ भागनुं भद्र अने कनिष्ठमण्डपना तलनां १०० पद पाडी ६ भागनुं भद्र करवुं, पण कर्ण तो सर्वमां २-२ पदना ज करवा; आ प्रमाणे भित्तियुक्त गूढ मण्डप करवो.

क्षुरकं कुम्भकलशौ, कपोतं जघया सह ।
प्रासादस्यानुरूपेण, मण्डपेष्वपि कारयेत् ॥६२०॥

भा०टी०—खुरो, कुंभो, कलशो, केवाल अने जांघ, आ थरो गूढ-मण्डपोमा पण प्रासादना जेवा करवा

परिच्छेदनो उपसंहार—

प्रासाद-वास्तुने अंगे लखवानुं घणुं छे, अमोए समुद्रमांथी छांट जेटलुं ज अत्र लख्युं छे, एक परिच्छेद के प्रकरणमां आथी अधिक लखवाने अवकाश पण न होय ए देखीती वात छे तेथी प्रासाद-लक्षण अहीं ज पूर्ण करीये छीये.



प्रासाद-लक्षणे परिशिष्ट-नं० ३

द्वारे दृष्टिस्थान-ज्ञापक कोष्टकम् ।

द्वारोदयांगुल	अधः ५४ भागा	उपरि ९ भागा	दृष्टिपदम्	आयः	आयस्थानम्
४१	३४॥–॥	५॥। ०।	॥ =।	सिंह	आदि ।=॥ भा०
४३	३६।०॥	६) ॥।	॥ =॥।	वृषभ	संपूर्ण
४५	३७॥।≡॥	६। –।	॥ ≡।	गज	आदि०॥ विना
४७	३९॥ =॥	६॥–॥।	॥ ≡॥।	ध्वज	आदि । –॥विना
४९	४१।–॥	६॥।=।	॥। ०।	सिंह	अन्त्ये –॥।
५१	४३)॥	७) =॥।	॥। ०॥।	श्वान	संपूर्ण
५३	४४॥ ≡॥	७। ≡।	॥ –।	वृषभ	आदि ।= भा०
५५	४६। =॥	७॥≡॥।	॥। –॥।	गज	आदि ॥=॥
५७	४८ –॥	८) ।	॥। =।	ध्वज	संपूर्ण
५९	४९॥। ०॥	८। ०॥।	॥। =॥।	सिंह	आ. ≡॥ विना
६१	५१। ≡॥	८॥–।	॥। ≡।	वृषभ	अं. । ≡॥
६३	५३ =॥	८॥।–॥।	॥। ≡॥।	गज	अं. =।
६५	५४॥।–।	९) =।	१) ।	गज	आ. =॥
६७	५६॥०॥	९। =॥।	१) ॥।	ध्वज	आ. ।≡॥
६९	५८ ≡॥	९॥≡।	१ –।)	सिंह	आ. ॥।=
७१	५९॥।=॥	९॥।≡॥।	१–॥।)	वृषभ	आ. –॥
७३	६१॥ –॥	१०। ०।	१=।)	गज	आ. ।=॥
७५	६३। ०॥	१०॥०॥।	१=॥।)	ध्वज	अं. ।=
७७	६४॥। ≡॥	१०॥।–।	१≡।)	ध्वज	आ. ०।
७९	६६॥ =॥	११)–॥।	१≡॥।)	सिंह	आ. । –॥

द्वारे दृष्टिस्थान-ज्ञापक कोष्टकम् ।

द्वारोदयाङ्गुल	अध ८ भागा	उपरि ९ भागा	दृष्टिपदम्	आय	आयस्थानम्
८१	६८। ०।।	११। =।	१। ०।	वृषभ	आ ।।=।। भागे
८३	७०) ।।	११।।=।।।	१। ०।।।	गज	आ. ।।। ≡।।
८५	७१।। ≡।।	११।।। ≡।	१। -।	ध्वज	आ. । ०।। विना
८७	७३। =।।	१२ ≡।।।	१। -।।।	सिंह	आ. ।। -। विना
८९	७५ -।।	१२।। ०।	१। =।	वृषभ	आ ।।।=।। विना
९१	७६।।। ०।।	१२।।। ०।।।	१।=।।।	वृषभ	आ ≡।।
९३	७८। ≡।।	१३ -।	१। ≡।	गज	आ ।। ०।।
९५	८० =।।	१३। -।।	१।≡।।।	ध्वज	आ. ।।। -।।
९७	८१।।। -।।	१३।। =।	१।। ०।	सिंह	आ. =।। विना
९९	८३।। ०।।	१३।।। ≡।।।	१।। ०।।।	वृषभ	आ । ≡।। विना
१०१	८५ ≡।।	१४ ≡।	१।। -।	गज	आ. ।। -। विना
१०३	८६।।। =।।	१४। ≡।।।	१।। -।।	गज	आ -।। अं ।। ०।
१०५	८८।। -।।	१४।।। ०।	१।। =।	ध्वज	आ । =।। अ. ≡।।।
१०७	९०। ०।।	१५) ।।।	१।। =।।।	सिंह	आ. ।। ≡।। भागतरु
१०९	९१।।। ≡।।	१५। -।	१।। ≡।	वृषभ	आ. । ०।। विना सं. अंगुले
१११	९३।। =।।	१५।। -।।।	१।।। ≡।।।	गज	आ. । -।। विना सं अंगुले
११३	९५। -।।	१५।।। =।	१।।। ०।	ध्वज	आ. ।। =।। विना स अंगुले
११५	९७) ।।	१६ =।।।	१।।। ०।।।	सिंह	आ. ।।। ≡।। विना

पञ्च खण्डादयः—२५ रेखाः सकलाः

१	५	१	२	३	४	५	१५								
२	६	१	२	३	४	५	६	२१							
३	७	१	२	३	४	५	६	७	२८						
४	८	१	२	३	४	५	६	७	८	३६					
५	९	१	२	३	४	५	६	७	८	९	४५				
६	१०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	५५			
७	११	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	६६		
८	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	७८	
९	१३	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	९१
१०	१४	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
११	१५	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
१२	१६	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
१३	१७	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
१४	१८	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
१५	१९	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
१६	२०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
१७	२१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
१८	२२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
१९	२३	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
२०	२४	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
२१	२५	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
२२	२६	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
२३	२७	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
२४	२८	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
२५	२९	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४

२५ नागरी रेखाओ (खडकला सहित)

१०५															
१५	१२०														
१५	१६	१३६													
१५	१६	१७	१५३												
१५	१६	१७	१८	१७१											
१५	१६	१७	१८	१९	१९०										
१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१०									
१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२३१								
१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२५३							
१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२७६						
१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	३००					
१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	३२५				
१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	३५१			
१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	३७८		
१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	४०६	
१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	४३५

परिच्छेद १०

कलश-लक्षण—

प्रासादमस्तके मौलि-रूपः कुम्भो निगद्यते ।
तस्मात् सल्लक्षणं कुम्भं, कारयेद् विधिवित्तमः ॥२९॥

भा०टी०—कलश प्रासादना मस्तक उपर मुकुट रूप कहेवाय छे माटे विधिना जाणनारे कलश उत्तम लक्षणान्वित बनाववो.

देहराना शिखर उपरना कलशनुं लक्षण अने परिमाण शिल्प शास्त्रोमां देहराना मान अने जातिने अनुसारे भिन्न भिन्न प्रकारनुं कहेलुं छे.

१–नागर, लतिन, सांधार, मिश्रक, विमाननागर, विमान-पुष्पक अने धातुज, रत्नज, दारुज, रथारुह आदि, आ जातिना प्रासादोना कलशोनां परिमाण नीचे मुजब ३ प्रकारनां होय छे.

(१) नागरादिनो प्रासादना विस्तारथी आठमा भागनो कलशनो विस्तार मध्य भागे करवो अने रत्नजादिनो एथी सवायो करवो, कलशनुं आ जघन्यमान गणाय छे. आमां सोलमो भाग उमेरवाथी तेनुं उत्तम मान अने बत्रीसमो भाग उमेरवाथी मध्यम मान थाय छे.

(२) प्रासादनी मूलरेखाथी पांचमाभाग जेटलुं पण कलशनुं मान होय छे; आ कलशनां माननो बीजो प्रकार छे जे बृहत्प्रासादोनां कलशोने माटे उपयोगी होय छे.

(३) आंबलसारानो विस्तारना ४ भाग करी तेना १ भागने सवायो करतां जे मान आवे तेना बरोबर पण कलशनो विस्तार थाय छे.

(४) वराट, द्राविड, भूमज, विमानोद्भव अने सर्व प्रकारना वलभीप्रासादोना कलशोनुं विस्तार मान प्रासादना व्यासना छट्ठा भाग जेटलु होय छे, आ मध्यम मान छे आने स्वषष्ठांश युक्त कर

वाथी उत्तम अने पञ्चाश हीन करवाथी कनिष्ठ मान गणाय छे

आजकाल कलशमानमां चालती भूल—

उपर नागरादि जातिना प्रासादोना कलशोना भिन्न भिन्न मानो अने ते प्रत्येकना उत्तम मध्यम कनिष्ठादि भेदो लख्या छे छतां आज कालना कारीगरो तेनो कंइ पण उपयोग करता नथी. अने सर्व मानना प्रासादोना कलशोनुं मान एकज प्रकारनु राखे छे खरी वस्तु तो ए छे के दण्डनी जेमज कलशोनु मान पण कनिष्ठ प्रासादोमा उत्तम अने उत्तम प्रासादोमां कनिष्ठ प्रकारनुं राखवु जोइये, वधा मानना प्रासादोना कलशो आठमे भागे विस्तार वालाज न राखवा जोइये, साधार प्रासादोमा के ८-९ गजना निरन्धार प्रासादोना कलशोमां कलशो कनिष्ठमानना अथवा बीजा प्रकारना मानवाला बनाववा जोइये, बीजी पण कलशोना मानने अगे कारीगरोमा एक भूल प्रचलित थयेली छे अने ते चवरियोना कलशोना मानमा.

केटलाक मदिरोना गभारामा चांदीनी अथवा सफेद पाषाणनी ३ घुमटियोवाली चवरियो बनावे छे, अने ते उपर कलशिया चढावे छे, ए कलशोनुं मान पण कारीगरो चवरीना व्यासना अष्टमांश जेटलु नागर प्रासादोना कलशोना हिसावे राखे छे, जे खरी रीते भूलभरेलुं छे. चवरियो ए नागरादि जातिमा नहि पण वास्तवमा वलभी प्रासादोनु लघुरूप छे, अने वलभी प्रासादोना कलशोनुं मान अपराजितपृच्छामा प्रासादना पञ्चाश तुल्य राखवानुं विधान छे, आथी स्पष्ट थाय छे के तेवी चवरियो उपरना कलशो तेना अष्टमाश तुल्य नहि पण पञ्चाश तुल्य विस्तृत करवानु कारीगरोए लक्ष्य राखवु जोइये

कलशनी उचाई—

कलश विस्तारमा ६ भागनो अने उदयमा ९ भागनो होय छे,

एटले के तेनी उंचाई विस्तारथी दोढ गुणी थाय छे. कलशनां बधां मलीने ६ अंगो होय छे. १ पीठ (पडथी), २ अंडक (पेट), ३ ग्रीवा, ४ पहेली कर्णी. ५ बीजी कर्णी अने ६ बीजोरुं (डोडलो), आ ६ अंगोनुं उदयमान अनुक्रमे नीचे प्रमाणे होय छे.

पद्मपत्री (पीठ) भाग ०।।।, अंडक भाग ३।. (क्वचित् भाग १ अने ३ लखेल छे) ग्रीवा ०।।।, बे कर्णियो भाग १। (क्वचित् १-१ भागनी कर्णी लखेल छे) अने बीजपूरक (झालू) भाग २ उदयमां होय छे.

एज ६ अंगोनुं विस्तारमान—

पद्मपत्री नीचे भाग ३ अने उपर कन्दमां भाग २, अंडक भाग ६, ग्रीवा मध्यमां भाग २, कर्णिकान्तरमां भाग ४, निचली कर्णिका ४ अने उपली कर्णिका भाग ३ नी, बीजपूर नीचे २ अने उपर १।। भाग (कोई स्थले १ भाग पण लखेल छे.) विस्तारमां बनाववुं जोइये.

उपर जे ४ प्रकार कलशना बताव्या छे तेनो मूलाधारग्रंथ अपराजितपृच्छा छे, जेनुं विधान नीचे प्रमाणे छे.

प्रासादस्याष्टमांशेन, पृथुत्वं कलशांडके ।
षोडशांशैर्युतं श्रेष्ठं, द्वात्रिंशांशैस्तु मध्यमम् ॥१॥

मूलरेखापञ्चमांशे, पृथुत्वं तस्य कारयेत् ।
घण्टाविस्तारपादेन, तस्य पादयुतं पुनः ॥२॥

उक्तं कलशविस्तारं, उच्छ्रयं तस्य सार्धकम् ।
नागरे लतिने स्वस्थं, सांधारेषु च मिश्रके ॥३॥

विमाने नागरच्छन्दे, कुर्यात् विमान-पुष्पके ।
धातुजे रत्नजे चैव, दारुजे च रथारुहे ॥४॥

शैलजे स चतुर्थांश, ऐष्टकादिसमस्तके।
इत्युक्तः कलशश्चैव, सर्वकामफलप्रदः ॥५॥

वराटे द्राविडे चैव, भूमजे विमानोद्भवे।
वलभीनां समस्ताना, प्रासादषष्ठमाशके ॥६॥

तत्षडशयुतं श्रेष्ठं, कन्यसं तद्विनाकृतम्।
इत्युक्तं मानमुद्दिष्ट, कर्तव्यं सर्वकामदम् ॥७॥

उच्छ्रयं नवभागं च, विस्तार रस भागिकम्।
अण्डक त्रिसपादं च, त्रिपदा (पादोना)पद्मपत्रिका ॥८

ग्रीवा भागपादूना, सपादे द्वे च कर्णिके।
मातुलिंगं त्रिभिर्भागैः, कर्तव्य सर्वकामदम् ॥९॥

अपराजितपृच्छाना उपर्युक्त पाठनो तात्पर्यार्थ अमोए आ कलश लक्षणना निरूपणमां प्रारंभमां ज आपी दीधो छे. एटले पुनरुक्ति करता नथी आ विषयना जाणकार कारीगरो आ विषयनुं शास्त्रीय निरूपण समजीने कलशो बनावे एज आ लेखनु प्रयोजन छे.



परिच्छेद ११, ध्वजदण्ड लक्षण—

दण्डश्चैत्यध्वजाधार-स्तस्माल्लक्षणवेदिना ।
दण्डः सुलक्षणः कार्यः, समानो ग्रन्थि-पर्वभिः ॥३०॥

भा०टी०—दंड चैत्यनी ध्वजानो आधार छे, एटले लक्षणना जाणनारे दण्डने गांठो अने पर्वोना शास्त्रोक्तमान सहित लाक्षणिक बनाववो.

दण्डनी लंबाईना प्रकारो—

(१) प्रासादनी खरशिलाथी कलशना अग्रभाग पर्यन्तनी उंचाईना एक तृतीयांश जेटली ध्वजदण्डनी लंबाई करवी ते दण्डनुं ज्येष्ठमान समजवुं. जेष्ठमानने अष्टमांश हीन करवाथी मध्यममान अने चतुर्थांश हीन करवाथी कनिष्ठमाननो दण्ड थाय छे कोई ग्रंथकारे षडंशहीनने कनिष्ठमान कह्यो छे.

(२) प्रासादना विस्तार (व्यास) बरोबर दण्ड होय तेने पण ज्येष्ठमान दण्ड कहे छे, आ ज्येष्ठमानमां दशमांश हीन करवाथी मध्यम मान अने पंचमांश हीन होय ते दण्ड कनिष्ठमाननो गणाय छे.

(३) प्रासादनी मूल रेखा परिमित दण्ड होय ते दण्ड पण कनिष्ठमाननो गणाय छे. आ कनिष्ठमानमांथी द्वादशांश ओछो करवाथी 'कनिष्ठ मध्यम' अने षडंश हीन करवाथी 'कनिष्ठ कनिष्ठ'माननो दण्ड गणाय छे.

कया मापना प्रासादने माटे कया मापनो दण्ड होवो जोइए ? ए विषयमां घणा शिल्पिओ विचार करता नथी, अने "प्रासाद व्यास मानेन" इत्यादि श्लोकोक्त मापना ज दण्डो करावे छे; पण

वास्तरमां सर्व मापना प्रासादो माटे एक ज प्रकारनुं दण्डनुं माप आपवुं योग्य नथी

उक्त ३ प्रकारनुं दण्डोनुं मान अने तेना विवेकने अंगे अपराजितपृच्छामां नीचेना शब्दोमां निरूपण कर्युं छे—

> आदिशिलोद्भव मानं, तदूर्ध्वे कलशातिकम् ।
> तृतीयांशे प्रकर्तव्यो, ध्वजादण्डः प्रमाणतः ॥१॥
> अष्टमांशे ततो हीने, मध्यमः शुभलक्षणः ।
> कनिष्ठो यो भवेद् दण्डो, ज्येष्ठतः पादवर्जितः ॥२॥
> प्रासाद पृथुमानेन, ध्वजादण्ड तु कारयेत् ।
> मध्यम दशमांशोन, कनिष्ठं चोनपञ्चकम् ॥३॥
> मूलरेखाप्रमाणेन, कनिष्ठो दण्डसभवः ।
> मध्यमो द्वादशांशोनः, षडंशोनः कनिष्ठकः ॥४॥
> प्रासादकोणमर्यादा, सप्तहस्तान्तकं मता ।
> गर्भमानं च कर्तव्य, हस्ताः स्युः पञ्चविंशतिः ॥
> रेखामानं च कर्तव्य, यावत् पचाशद्धस्तकम् ॥५॥

भा०टी०—प्रथम शिलाथी कलशना मथारा सुधीनी उंचाईना त्रीजा भाग जेटलो लंबो ध्वजादण्ड बनावयो ए उत्तम, एथी अष्टमांश ओछो ते मध्यम अने उत्तमथी चोथा भागे ओछो ते कनिष्ठ मानवो दण्ड होय छे. वली प्रासादना विस्तार जेटलो लंबो ते उत्तम, तेथी दशमांश हीन ते मध्यम अने पञ्चमांश हीन ते कनिष्ठ मानवो दण्ड होय छे. प्रासादनी मूलरेखा जेटलो लंबो दण्ड कनिष्ठोत्तम, द्वादशांश हीन करता कनिष्ठमध्यम, अने षडंशहीन करता कनिष्ठकनिष्ठ मानवो दण्ड होय छे.

(१) १ थी ७ हाथ सुधीना प्रासादोनो ध्वजादण्ड प्रासादना कोणथी मापवो जोइये, एटले के जेटला हाथनो प्रासाद होय तेटला

हाथनो दण्ड बनाववो, आ माप ७ हाथ सुधीना प्रासादना दण्डने माटे समजवुं.

(२) ८ थी २५ हाथ सुधीना प्रासादोने माटे दण्डनुं मान ते प्रासादना गर्भना मान जेटलुं राखवुं. अने

(३) २६ थी ५० हाथ सुधीना कोइ पण मानना प्रासाद होय तो तेना दण्डनुं मान मूलरेखाना हिसाबे राखवुं, एटले के मंडोवरानी रेखानी उंचाई जेटलुं दण्डनुं मान गणवुं. आ मानना दण्ड प्रासादना व्यासथी लगभग एक द्वितीयांश जेटलो लंबो थाय छे.

दण्डनां उपादान काष्ठो—

मुख्य रीते तो 'दण्ड' अन्दरथी पोकल न होय, कीट लागेल न होय अने काणा-कोतरवालो न होय. एवा वांसनो ज बनाववो एवो शास्त्रादेश छे, पण तेवा प्रकारनो वांश न मले तो बीजा उत्तम वृक्षोना काष्ठनो पण बनावी शकाय छे. आ संबन्धमां अपराजित-पृच्छामां नीचेनुं विधान दृष्टिगोचर थाय छे—

वंशमयस्तु कर्तव्यः, सारदारुमयस्तथा ।
समग्रन्थिर्विधातव्यः, पर्वभिर्विषमस्तथा ॥६॥

भा०टी०—ध्वजदण्ड वांशनो बनाववो अथवा बीजा श्रेष्ठ लाकडानो पण बनावी शकाय छे. जो वांशनो होय तो ते समसंख्याक गांठो अने विषम संख्याक पर्वो (बे गांठो वच्चेना भाग) वालो होवो जोइए. (बीजा लाकडानो होय तो तेने समसंख्याक वंगडियो लगाडीने तेवो बनाववो.)

ग्रंथान्तरमां दण्डना उपादान रूपे नीचे प्रमाणे पण केटलाक वृक्षोनो नाम निर्देश कर्यो छे.—

वंशमयोऽथ कर्तव्य, आंजनो मधुकस्तथा ।

शींशपः खादिरश्चैव, पिण्डं चैव तु कारयेत् ॥७॥

भा०टी०—दण्ड वांशनो करवो अथवा तो अंजननो, महुडानो, शीशमनो तथा खेरनो बनाववो अने तेने गोलरूपे करवो.

ध्वजादण्डनी जाडाई—

ध्वजादण्डनी जाडाईनो पण नियम होय छे. ए विषयमा लग भग बधा ग्रन्थकारो एकमत छे के एक हाथना दण्डनी जाडाई पोणा आगलनी करवी अने ते पछी प्रत्येक हाथे अडधा आगलनी वृद्धि करवी कोई पण मानना दण्डने माटे एज नियम लागु पडे छे ए नियमनुं प्रतिपादन नीचेना श्लोकमा कर्युं छे.—

एकहस्ते तु प्रासादे, दण्डः पादोनमङ्गुलम् ।
अर्द्धांगुला भवेद्वृद्धि-र्यावत् पचाशद्धस्तकम् ॥८॥

भा०टी०—१ हाथना प्रासाद उपरना दण्डनी जाडाई पोणा आगलनी अने पछीना माप माटे प्रतिहस्त अडधा आगलनी वृद्धि करवी. २ हाथथी ५० हाथना प्रासादे एज प्रमाणे दण्ड जाडो करवो.

ए विषयमा एक मत एवो पण छे के दण्डना छट्ठा भाग जेटली लांबी पाटली करवी अने पाटलीनी लंबाईथी छट्ठा भागे तेनी जाडाई करवी. पाटलीनी जाडाई अने दण्डनी जाडाई सरखी करवी. आ मान्यता रत्नकोषकारनी छे अने आ मान्यता प्रमाणे दण्डनी जाडाई राखवामा आवे तो ४–६ हाथना प्रासादोने अगे योग्य गणी शकाय तेवी छे.

दण्डनी पाटली—

दंड उपरनी पाटलीनी लंबाई दंडनी लंबाईना छट्ठा भाग जेटली राखवानो नियम छे अने पाटलीनी जाडाई तेनी लंबाइना छट्ठा भाग जेटली होवी जोइए एवु विधान छे. पाटली पोतानी लंबाईथी

अर्धी पहोली होय छे, पाटलीने शिल्पशास्त्रकारो 'मर्कटी, मंडूकी' इत्यादि नामोथी ओलखावे छे. अधिकांश ग्रंथकारोनी मान्यता पाटलीना विषयमां उपर जणाव्या प्रमाणे छे, छतां एने अंगे पण मतभेद तो छे ज. ए विषयमां अपराजितपृच्छानुं विधान नीचे प्रमाणे छे—

मण्डूकी तस्य कर्तव्या, अर्द्धचन्द्राकृतिस्तथा।
पृथु दण्डसप्तगुणोक्ता, हस्ताद्या पंचकोद्भवा ॥९॥
षड्गुणा च द्वादशान्ता, शेषा पंचगुणोच्यते।
भागेन च सविस्तारा, कर्तव्या सर्वकामदा ॥१०॥
अर्द्धचन्द्राकृतिश्चैव, पक्षे कुर्यात् गगारकम्।
वंशोर्ध्वे कलशं चैव, पक्षे घण्टाप्रलंबनम् ॥११॥

भा०टी०—ते दण्डनी पाटली अर्धचन्द्र आकारे बनाववी अने तेनी लंबाई दण्डनी जाडाइथी सातगुणी करवी. आ मान १ थी ५ हाथ सुधीना दण्डनी पाटलीनुं छे; ६ थी १२ हाथ सुधीना दण्डनी पाटली दण्डनी जाडाइथी छ गुणी अने ते उपरान्तना दण्डनी पाटली दण्डनी जाडाइथी पांच गुणी लंबी करवी जोइए. पाटली पोतानी लंबाइथी अर्ध भागे विस्तृत करवी, तेनो वचलो भाग अर्ध चन्द्राकारे करवो, अने बन्ने बाजुमां गगारा बनाववा; वांशना उपरना भागे कलश अने पाटलोना बन्ने छेडाओ उपर घंटडियो लटकाववी.

अपराजितपृच्छामां दंड उपर कलश बनाववानुं विधान तो कर्युं, पण कलशनी उंचाईना संबन्धमां कांई जणाव्युं नथी, पण बीजा ग्रंथोमां आ संबन्धमां नीचे प्रमाणे उल्लेख मले छे.

कलशं कारयेत्तस्याः पंचमांशेन दैर्घ्यतः।

भा०टी०—पाटलीना पंचमांश जेटलो लंबो ते उपर कलश कराववो.

ध्वजा-परिमाण—

दण्ड उपर ध्वजा केवा मापनी जोइए एनो पण शिल्पशास्त्रोमां नियम बांधेलो छे, जो के ए विषयमां पण मतभेद तो छे ज, पण आजकाल ध्वजानी लंबाई दंड जेटली ज रखाय छे अने तेनी चोडाई लंबाईना आठमा भागनी होय छे ए विषयमां अपराजित-पृच्छानुं विधान नीचे प्रमाणे छे.

ध्वजदण्डप्रमाणेन, पताकां च प्रलम्बयेत् ।
पृथुत्वमष्टमांशेन, त्रिशिखाग्रविभूषितां ॥१२॥
शिखाः पंच प्रकर्तव्या, ध्वजाग्रे तद्विचक्षणैः ।
दिव्यवस्त्रमयश्चैव, किंकिणीघुर्घुरान्विताः ॥१३॥

भा०टी०—ध्वजादण्ड प्रमाणवाली ते उपर पताका (ध्वजा) लंबाववी, ध्वजानो विस्तार तेनी लंबाईना आठमा भाग जेटलो राखवो, तेना छेडाना अग्र भागमां ३ अथवा ५ शिखाओ बनावीने तेने सुशोभित करवी, ते दिव्य वस्त्र (रेशमी पट्टकूल)नी बनाववी अने घूघरियो वडे अलंकृत करवी



परिच्छेद-१२

जिनप्रतिमा लक्षण—

प्रतिमा हि द्विसंस्थाना, आसीनोर्ध्वस्थितात्मिकाः।
तासां भागक्रमश्चैव, प्रवेशा निर्गमास्तथा ॥३१॥

अङ्गलक्षणभेदाश्च, दोषाश्च विविधाः पुनः।
सर्वमेतत् परिज्ञाय, प्रतिमाः कारयेन्नवाः ॥३२॥

भा०टी०—जिन प्रतिमाओ बे प्रकारना आकारनी होय छे. बेठी-जे पद्मासनस्थ कहेवाय छे. उभी जे कायोत्सर्गिक ए नामथी ओलखाय छे. आ प्रतिमाओना दैर्घ्य विस्तारना मानांको, अंग विभागना प्रवेशो, निर्गमो, अंगगत लक्षणोना भेदो अने प्रतिमाना निर्माणमां थता अनेक दोषो; ए सर्व समजीने नवीन प्रतिमा करावबी जोईये.

प्रतिमा-लक्षणनी दुर्बोधता—

'प्रतिमा-लक्षणनुं' वर्णन ए कुशल मूर्तिशास्त्रज्ञनुं काम छे, प्रतिमा-निर्माताने प्रतिमाने अंगे जाणवानी महत्त्व पूर्ण वातो, जेवी के-मूर्तिना अंगोपांगोनी लंबाई, पहोलाई, निर्गम-प्रवेश, पिंड, परिधि आदि विषयोना ज्ञाननी प्रथम जरुरत पडे छे. आज-कालमां बनती प्रतिमाओ प्राचीन प्रतिमाओनी बराबरी नथी करी शकती एनुं कारण ए विषयोनुं अज्ञान ज छे. उदयमानना १०८ अथवा ५६ आंगलोनो सरवालो मात्र मेलवी देवाथी ज प्रतिमामां लाक्षणिकपणुं आवी जतुं नथी पण एना अंग-प्रत्यंगोनां मानो, तेओनां एक बीजा वच्चेनां अंतरो, प्रत्येक अंग उपांगोना निर्गम-प्रवेशो आदिनुं यथार्थ ज्ञान होय तोज प्रतिमामां खरी लाक्षणिकता उत्पन्न करी शकाय छे,

ते पण प्रत्येक मनुष्यथी नहि पण एना अधिकारी विद्वान् मूर्तिकार द्वारा ज अमोए आवा मनुष्योना हितने लक्ष्यमा राखीने ज आ प्रकरण आलेखवानुं साहस कर्युं छे.

मूर्ति निर्माण विषयने स्पर्शता अनेक मौलिक ग्रन्थो उपलब्ध छे, छतां अमो ते सर्वेनी चर्चा नहि करीये, अमारो प्रस्तुत विषय 'जिन प्रतिमा लक्षण' सुधीज मर्यादित छे, तेमा उत्तर भारतमा पूर्वे जे शिल्पने आधारे जिन प्रतिमाओ बनती हती, तेना ज आधारो लेवानो निर्णय होइ 'जयसंहिता'ने मूल आधार बनावी 'अपराजितपृच्छा, जिन प्रतिमा-विधान, वास्तुसार, बृहत्संहिता, प्रतिमा-मान-लक्षण अने नवताल मूर्ति विधान' आदि ग्रंथोना आधारे अमो जिन प्रतिमा-लक्षणने अंगे मलती उपयोगी हकीकतोनुं वर्णन करशुं. प्रथम जयसंहिताना आ विषयना प्रकरणने अक्षरशः आपी अन्ते बीजा ग्रन्थोने आधारे मानाक कोष्ठको आपीने आ विषयने यथासंभव स्पष्ट करवानो प्रयास करशु.

उपर्युक्त ग्रन्थो पैकीना पहेला बे ग्रन्थो शिल्पना प्राचीन आकर ग्रन्थो छे. आ बंनेमां जिनप्रतिमाने उद्देशीने खास अध्यायो छे.

'जिन-प्रतिमा-विधान'नो उतारो शिल्परत्नाकरमां एना संग्राहके आप्यो छे, ए प्रकरणनो आधार ग्रन्थ जाणी शकायो नथी.

चोथो ग्रन्थ ठक्कुर फेरु कृत वास्तुसार छे, आमा 'बिंबपरीक्षा' नामनु जैन प्रतिमाने अंगे लखायेलु खास प्रकरण छे, बीजाओ करतां ठक्कुर फेरुए आमा घणी वातो स्पष्ट करी छे.

बृहत्संहितामा 'प्रतिमा' निर्माण सबन्धी एक अध्याय छे, जे गुप्तकालीन शिल्पना निरुपणमा महत्त्वनो भाग भजवे छे.

प्रतिमामान-लक्षण एक स्वतन्त्र प्राचीन निबन्ध छे, आमा बुद्ध प्रतिमाना शिल्पनुं प्रतिपादन छे.

पर्यन्त लंबावेल, वक्षस्थलमां श्री वत्सयुक्त मस्तके उष्णीष (शिखा) अने छत्रादिके परिवृत बनाववुं.

आसनस्थित प्रतिमानी चतुरस्रता—

अन्योन्यजानुस्कन्धान्त-स्तिर्यक्सूत्रनिपातनात् ।
केशान्ताञ्चलयोर्मध्ये, सूत्रैक्याचतुरस्रिका ॥८॥

भा०टी०—बे बाजुओ वच्चे आडुं, जमणा जानुथी डाबे खांधे, डाबा जानुथी जमणे खांधे तिर्छुं अने केशान्त तथा आंचलि वच्चे उभुं सूत्र मापवाथी जो सूत्रनी लंबाई बधे सरखी आवे तो प्रतिमा चतुरस्र समजवी.

जिन-प्रतिमानी उंचाई नवतालनी—

नवतालं भवेद्रूपं, तालं च द्वादशांगुलम् ।
अंगुलानि न कंबायाः, किन्तु रूपस्य तस्य हि ॥९॥

भा० टी०—प्रतिमा नवतालनी होय, ते एकताल १२ आंगलनो होय, ए आंगल कंबा (गज)ना नहि पण ते प्रतिमाना ज आंगल जाणवा.

उक्तमष्टोत्तरशतं, श्रीजिने विश्वकर्मणा ।
ऊर्ध्वार्चामानमखिल-मासीने च अथ शृणु ॥१०॥

भा०टी०—श्रीजिननी उभी प्रतिमानुं मान विश्वकर्माए तेना १०८ आंगलनुं कह्युं छे ते प्रमाणे जणाव्युं, हवे बेठी प्रतिमानुं परिमाण सांभल !

पंचतालं समुत्सेधे, चतुस्तालं च विस्तरे ।
तालैकं च विभज्यादौ, अंगुलानां चतुर्दश ॥११॥

तेनांगुलप्रमाणेन, षट्पञ्चाशत्समुच्छ्रितम् ।
विस्तरं तत्प्रमाणेन, विभजेच्च विचक्षणः ॥१२॥

अथैषा मंगुलाना च, यन्मान यत्र कारयेत् ।
आसीनप्रतिमामानं, पट्पञ्चाशद् विभाजितम् ॥१३॥

भा०टी०—पर्यंकासन बिंब उंचाईमा पाच अने विस्तारमा चारताल प्रमाण करवुं, प्रतिमानी उचाईने ५ थी भागीने १४ आगलनो ताल बनाववो, आ आगलना मापथी ५६ आगल बेठी प्रतिमा बनाववी अने ए ज आगलो वडे बुद्धिमाने एनो विस्तार मापवो.[1]

उभी प्रतिमा-मानना ११ अकस्थानो—

भाल १ नासा २ हनु ३ ग्रीवा ४, हृन् ५ नाभी ६ गुह्य ७ मूरुके ८ ।
जानु ९ जवे १० तथा पादौ ११, स्थानान्येकादशानि च ॥१४॥
चतुः ४ पञ्च ५ चतु ४ र्वंह्नि ३, र्दिश १० श्चैव चतुर्दश १४।
सूर्या १२ जिना २४ श्रुतु ४ र्जिना २४, वेदा ४ श्चेति ह्यनुक्रमात् ॥१५॥

भा०टी०—ललाट, नासिका, हडपची, गर्दन, हृदय, नाभि, गुह्य, साथल, ढींचण, जाघ अने पग आ ११ अंगोना उदयमानना अंको अनुक्रमे–४ + ५ + ४ + ३ + १० + १४ + १२ + २४ + ४ + २४ + ४ = १०८ छे.

---

[1] बेठी प्रतिमानी उचाई जे ५६ आगलनी कही छे, तेमा मसूरक (पलांठी नीचेनी गादी)ना ८ आगल अने ललाट उपरना केशान्तमस्तक अने उष्णीषना मळी ६ आगलो, एम कुल ८+६=१४ आंगलनो १ भागो ताल उचाईमां न गणीने उचाई ५६ आगलनी मानी छे, ज्यारे उपर बेठी प्रतिमानो उदय ज ५ तालनो कह्यो तेमां आ १ ताल साथेज गण्यो छे अन्यथा ५६ आगलना ४ ताल थाय. विस्तार ४ तालनो कह्यो छे ज आ अपेक्षाए बेठी प्रतिमा उदय अने विस्तारमां सरखी कही छे

आसनस्थ प्रतिमाना अंगो तथा अंको—

भालं-नासा-हनु-ग्रीवा,-हृन्नाभी-गुह्य हस्तकौ ।
जान्वेतानि न चांगानि, ह्यंकस्थानान्यथ शृणु ॥१६॥
चतुः पञ्च चतुर्वह्निर्दिशश्चैव चतुर्दश ।
चतुश्चतुस्तथा ह्यष्टा-वासीनप्रतिमाङ्ककाः ॥१७॥
जिनादयश्चमालांका, उक्ता ऊर्ध्वे स्वरूपके ।

भा०टी०—ललाट, नासिका, हडपची, गर्दन, हृदय नाभि, गुह्य भाग, हाथो अने ढींचणो; आ ९ अंगस्थानकोना उदयना मानांको अनुक्रमे ४ । ५ । ४ । ३ । १० । १४ । ४ । ४ । ८=५६ छे, आ बेठेली प्रतिमाना अंको छे. आमां २४ । ४ । २४ । आदि अंको नथी कह्या केमके ते उभी प्रतिमा संबन्धी छे.

अंग-प्रत्यंगना विभागे प्रतिमानो उदय—

वर्तनां कथयिष्यामि, अंगुलानां यथाक्रमम् ।
मुखं यक्षांगुलं चैव, विभजेच्च विचक्षणः ॥१८॥
वेदाङ्गुलं ललाटं च, नासिका पंचकाङ्गुला ।
हनुकाङ्गुलचत्वारि, ओष्टः सपाद एव च ॥१९॥
अधरश्च सपादश्च, सार्धांगुला बटी भवेत् ।
त्र्यांगुला भवेद्ग्रीवा, हृदयं च दशांगुलम् ॥२०॥
चतुर्दश तथा नाभौ, चतुर्गुह्यं प्रकीर्तितम् ।
करौ चतुरंगुलानि, अष्ट पादौ प्रकीर्तितौ ॥२१॥
एतं ते कथितं चैव, षट्पञ्चाशत्समुच्छ्रितम् ।
तस्याऽधश्च प्रकर्तव्य-मासनं चाष्टकांगुलम् ॥२२॥
उष्णीषं षडंगुलं च, केशान्तोपरितस्तथा ।
उच्छ्रितं च समाख्यातं, विस्तरं च तथा शृणु ॥२३॥

भा० टी०—हवे केटला आगलो क्या राखवा एनो विवेक कहीश

आखा मुखनो उदय १३ आगलनो राखवो, तेमा ललाट ४, नासिका ५ अने हनुविभाग ४ आगलनो करवो हनुविभागमा उपरनो होठ १। आगलनो नीचेनो होठ १। आगलनो अने हडपटी १॥ आगलनी बनाववी.

गर्दननो उदय ३ आगलनो अने तेनी नीचे स्तनमध्यपर्यन्त हृदय १० आंगल प्रमाण राखवु.

स्तनमध्यथी नाभिपर्यन्त उदरनो उदय १४ आगल, नाभिथी गुह्यपर्यन्त ४ आंगल, तेनी नीचे हस्तयुगलनो ४ आगल अने पाद-युगलनो उदय ८ आंगलनो करवो आम पर्यंकासन स्थित प्रतिमानी ५६ आगलनी उचाईनो विवेक कह्यो

आ ५६ आगलनी प्रतिमाने नीचे आठ आगळनुं आसन (मसूरक-गादी) राखवु अने केशांत उपर ६ आगलनुं उष्णीप राखवुं, आम उचाई कही हवे विस्तार कहु छुं ते साभल !

आसनस्थप्रतिमानो विस्तारविवेक—

वक्त्र विस्तारमानेनां-गुलानि दश पंच च।
भाल चांगुलान्यष्टौ, नेत्र चैवाष्टमागुलम् ॥२४॥
नासिकाग्रमंगुलैक, फेरणे त्रयमगुलम्।
नेत्रागुलानि चत्वारि, द्वयगुलमुदय भवेत् ॥२५॥
द्व्यगुल च भ्रुवोर्मध्ये, पुष्पबाण मह्योक्त (ल्क)ये।
चिबुकांगुल चत्वारि, वटी चत्वारि मेव च ॥२६॥
ग्रोवा दशागुला ज्ञेया, क्षोभणा त्रयमगुलम्।
द्विसार्धांगुलौ द्वावोष्ठौ, सार्धांगुला वटी भवेत् ॥२७॥

कक्षा बाह्यं प्रकर्तव्यं, द्वाविंशमंगुलं बुधैः ।
कटी-विस्तारमानं च, अंगुलानि च षोडश: ॥२८॥

बाहु-कक्षाप्रमाणं च, अंगुलानां च विंशतिः ।
द्वादशांगुलं मध्ये च, स्तनगर्भौ विधीयते ॥२९॥

अष्टांगुलं बाहु-विस्तारं, सप्तांगुलमधस्तथा ।
करतलमष्टांगुलं, दीर्घं तत्र च कारयेत् ॥३०॥

विस्तरेऽष्टांगुलं तत्र, झोलकं चतुरङ्गुलम् ।
बाह्वग्रं चतुरंगुलं, षडंगुलं तत्र मच्छकम् ॥३१॥

घसिका द्व्यंगुला ज्ञेया, कट्यां वामदक्षिणे ।
नवांगुला भवेद् हस्त-विस्तारं चाष्टमांगुलम् ॥३२॥

अष्टांगुलं भवेत् पादो दैर्घ्ये च दश पंच च ।
विस्तरं दैर्घ्यं कथितं, पिंडं चैवमथ शृणु ॥३३॥

भा०टी०—मुख १५, ललाट ८ अने नेत्र ८ आंगल विस्तारमां करवां.

नासिकानो अग्रभाग आंगल १, फरणां आंगल ३, नेत्र आंगल ४, नेत्रोनो उदय २ आंगल, बे भवांनो मध्यभाग २ आंगल, चिबुक ४ आंगल अने हडबची ४ आंगलनी करवी.

गर्दननो विस्तार १० आंगल, तेनो पेसारो ३ आंगल, बन्ने होठो २॥ आंगल अने हडबटी १॥ आंगल विस्तृत करवी.

कक्षानो बाह्य विस्तार २२ आंगल, कटीनो विस्तार १६ आंगल, बाहु मध्यकक्षा प्रमाण २० आंगल अने वच्चे स्तनगर्भ १२ आंगल प्रमाण बनाववो.

बाहु, विस्तारमां उपरना भागे ८ अने नीचे ७ आंगलनो करवो.

हस्ततल ८ आगल दीर्घ अने ८ आगल विस्तृत करवु. ४ आगलनो झोलक (खोलो) करवो

राहुनो अग्रभाग ४ आगलनो अने मत्स्य ६ आगलनो करवो.

घसी २ आगल, डाबी जमणी तरफ कटि ९-९ आगल अने हाथनो विस्तार ८ आगल करवो

पग लगो १५ आगल अने विस्तारे ८ आंगलनो करवो. उदय पछी आ विस्तारमान कह्यु, हवे एना अंगोनो पिंड (जाडाई) सांभलो

आसनस्थ प्रतिमानी जाडाई—

अष्टविंशतिरासने, षोडशाङ्गुलमस्तके ।
कर्णपार्श्वे प्रकर्तव्य, पिंड चैव दशाङ्गुलम् ॥३४॥
चतुरङ्गुल कर्णपिंड-मुरःकुर्याद् द्वयाङ्गुलम् ।
द्वादशांगुल शोध्यश्चो-दराग्रे चैव निर्गमः ॥३५॥
सुमासल प्रकर्तव्य, सुरूप लक्षणान्वितम् ।
युक्त्याऽनया प्रकर्तव्यं, प्रतिमामानमुत्तमम् ॥३६॥
एतत्ते कथित चैव, कर्तव्यं शास्त्र पारगैः ।
पूर्वमानप्रमाणं च, कर्तव्य विधिपूर्वकम् ॥३७॥

भा०टी०—आसन भागमा २८ आगल अने मस्तक भागे १६ आगल प्रतिमा जाडी करवी कानोनी पासे प्रतिमानी जाडाई १० आगलनी अने काननी जाडाई ४ आगल करवी. छातीनो भाग बे आगल तथा उदर मध्य बे आगल बहार निकलतु करवु अने १२ आगलना विस्तारमां तेने पूरु करवु

जैन प्रतिमा साधारण रीते मासल सुरूप अने लक्षणोपेत ,यना

ववी उपर जे मान-प्रमाण कह्युं छे युक्तिथी बनावतां प्रतिमा उत्तम मानवाली बनशे.

हे जय ! आ विपयमां शास्त्रज्ञोनुं जे कर्तव्य हतुं ते तने कह्युं. आ अने पूर्वे प्रतिमाना प्रमाण विपे जे कंई कहेवामां आव्युं, ते विधिथी प्रतिमानुं निर्माण करवुं जोईये.

प्रतिमा-मानांक कोष्टक—

उपर जे प्रतिमाना मानांको जयसंहितामां आप्या छे; ते अने बीजा ६ शिल्पग्रन्थोमां आपेला मानांकोनुं अमे अत्र एक कोष्टक आपीये छीये, तेनुं कारण ए छे के जयसंहितामां पूरा अंको आप्या नथी वली ए ग्रन्थना श्लोकोमां भरपूर अशुद्धिओ होवाथी केटलाक अंकोमां अशुद्धिओ होवानो पण विशेप संभव छे; एटले साथमां आपेल बीजा ग्रन्थोना मानांको वांचकगणने उपयोगी थइ पडशे.

कोष्टकमां १ जयसंहिता, २ जिनप्रतिमा विधान, ३ वास्तु-सार, ४ अपराजितपृच्छा, ५ बृहत्संहिता, ६ प्रतिमामान लक्षण अने ७ समरांगण सूत्रधार; आ ७ ग्रन्थोना मानांको आप्या छे. आ ग्रन्थो पैकीना पहेला ३ ग्रन्थोमांना अंको खास जिनप्रतिमाना मानांको छे, ज्यारे बाकीना ४ ग्रन्थोमां जे अंको मले छे ते ९ ताल प्रतिमा संबन्धि छे. जिन प्रतिमानो पण ९ ताल प्रतिमामां समावेश होवाथी आ चार ग्रन्थोना अंको पण जिनप्रतिमा माटे उपयोगी निवडशे ए निःसंदेह वात छे.

लाघवार्थ अमोए कोष्टकमां ग्रन्थोना नामना आद्याक्षरनो ज 'ज' 'जि' इत्यादि उल्लेख कर्यो छे, वाचकगणे 'ज'नो अर्थ "जय-संहिता, 'जि'नो अर्थ जिनप्रतिमाविधान," इत्यादि समजवानो छे. विशेष स्पष्टीकरण कोष्टकोनी पछी आपीशुं.

प्रतिमामानाङ्क–कोष्टक–

अंग	उदयादि	मानांगुल अंको						
		ज	अ	जि	वा	वृ	प्र०	न
उष्णीष	उदय	६	१	.	.	.	८	
केशांतमस्तक	उदय		३	६	५	.	४	३
केशरेखा	विस्तार		.	.		०।।		
मस्तक	आयाम	१६	.	.	.	१४		.
,,	विस्तार			.	.	.	१८	
,,	परिधि		३६		.	३२	३६	
,,	पिंड	१६		.				.
ललाट	उदय	४	४	४	४	४	४।।	४
,,	विस्तार	८ १/४	.	.		८	१०	
,,	प्रवेश			३	२		.	
भ्रू	उदय			२	२	.		
,,	दैर्घ्य		.			४	५	.
,	मध्य	२	.	.		२	०।।	.
भ्रू–नेत्र	अंतर		.				२	
भ्रूद्वय—	दैर्घ्य	.	.		.	१०	.	.
भ्रूलेखा	उदय					।।)	–)	
नेत्र	उदय	२			१।।	.		
,,	दैर्घ्य	८/४	.	४	४	४	२	.
,,	विस्तार	४	२	२		२	२	.
,,	डोलक			.	१		।।।)	

नेत्र—	निष्कोश	.	२	.	.	.	.	.
,,	विकाश	.	.	.	.	१	.	.
,,	कृष्णतारा	.	.	.	.	०॥ =॥ वे तृतीयांश	०।	.
,,	द्वयान्तरं	.	.	.	.	४	.	.
,,	कर्णान्तरं	.	.	.	.	४	.	५
,,	अपांग	.	.	.	.	.	२	.
नेत्रान्ते	करवीरक	.	.	.	.	१	.	.
अक्षि	गुल्फद्वयं	.	.	.	.	॥०+॥०	.	.
नासिका	उदय	३	१॥	१॥	२	.	१॥	.
,,	दैर्ध्य	५	४	४	५	४	४	४
,,	विस्तार	.	.	.	३	२	.	.
नासाशिखा	पिंड	.	.	.	०॥	.	.	.
नासावंश	मूलवृत्त	१॥	≡०×≡०	.	.	.	≡×≡	.
नासापार्श्व	उर्ध्वत्व	.	.	.	.	.	२।२	.
नासा	फेरणा	३		.	.	.	.	.
चंपिका			४	.	.	.	.	.
नासाग्र	पिंड	१	१-६	.	१	.	१	.

मुख	उदय	१३	.	.		१६+	.	+सकेश मुख दीर्घता
मुख	विस्तार	१५		.				१२
द्राविडमुख	विस्तार	.				१२		
मुखकर्णमध्ये	विस्तार		.	१४	१४			
वदन	दैर्घ्य		.			४	.	
वदन	विस्तार	.		.		१॥		
वदनमध्ये	निस्तार	.	.			३		
मुख	निष्कोश						४	
उत्तरौष्ठ नासाग्र	अतर			.			९।–	
उत्तरौष्ठ	दैर्घ्य			४	६			
,,	निस्तार	१।-१	०।=	०॥		०॥	०॥	
	मध्ये निष्काश		.				०॥। २।	
अधरौष्ठ	दैर्घ्य	.			५			
,,	निस्तारः	१॥ ७।	०॥=	१	१		०॥।	
गोजिका			१	.		०॥	१।	
अन्तकाश		०॥						
हनु	दैर्घ्य	२।	१॥	२		२	१।	.
,,	निस्तार	१॥ २	७	.				

,,	प्रवेश	.	.	३	२	.	.	.
हनु-चिबुक	विस्तार	४	४	४	४	४	४।।	४
चिबुक	विस्तार	२	२	.	.	२	०	.
कर्ण	दैर्घ्य	.	४। =	१०	१०	४	४	४
,,	विस्तार	४	.	२ (३।।)	३	२	२	२
,,	उदय	१४	.	.	.	.	.	.
,,	प्रवेश	.	.	.	१०	.	.	.
,,	निर्गम	.	.	१	.	.	.	.
,,	पिंड	२	.	.	.	.	.	.
,,	उपान्त	.	४। =	.	.	४।।	.	.
,,	ककुदा	.	.	.	.	.	१	.
,,	त्रुटि	.	.	.	.	.	२	.
कर्णपालि-	विस्तार	.	.	.	.	.	०।	.
कर्ण	गुच्छ	.	.	.	.	.	०) =	.
	आयामे	१	.	.	.	.	.	०।।
कर्णाधार	उदय	.	.	.	१	.	.	.
अधःकर्ण	विस्तार	.	.	.	२।।	.	.	.
कर्ण	पिंड	२	.	.	.	.	.	.
कर्णपृष्ठे	निष्काश	.	.	.	.	.	२	.
कर्णद्वय	अंतर	.	१२	.	.	.	.	.
कर्णनासा	अंतर	१०	.	.	.	.	.	.

कर्णाग्रे २ अंतरे	शख		.			४	.	.
ग्रीवा	उदय	३	३॥	.	३	४	४	३
	विस्तार	१०	८	१०	१०	१०	८	८
	क्षोभना	३	.	.			.	
	प्रवेश	.		१०	६	.	.	.
	परिधि	.	२४		.	२१	२४	
ग्रीवा-कर्णान्तरा-वकाश	उदय	.	.		३		.	
ग्री०कर्णान्तर	विस्तार	.	.		१॥			.
हृदय	उदय	१०-१३	१०×१४	१३	१२	१२	.	१०
,,	विस्तार		१४		.			१४
,,	निर्गम	२ (?)				.		.
उरःप्रदेश	विस्तार	३६	.		३६		३६	
वक्षःस्तन	अतर		.	५	५	६	६	५
स्तन-कक्षा	अतर	.	.		.	६	६	
स्तनसूत्राधरि	स्कन्ध		.		६	.		.
श्रीवत्स	उदय	३	.	.			.	.
,,	दैर्घ्य	५		५	५			
,,	विस्तार	३		३	४	.		
श्रीवत्स-स्तनयुं	अंतर	.			६	.		
स्तनवृत्त	विस्तार		.		१॥			
स्तनवृत्त				.		.	०।=	

स्तनान्तर		१२ १४	.	१२	.	.	.	१२
स्तनअधो	भुजांतर	.	.	.	१२	.	.	.
कक्षामध्य		२२	.	२२	.	.	२०	.
कक्षास्कन्ध	अंतर	.	.	८	८	८	.	८
बाह्यकक्षा	प्रमाण	२२	.	१८	.	.	.	.
बाहुकक्षा		२०	.	.	.	.	.	.
कक्षा		.	१-१	.	.	.	.	.
ग्रीवोर्ध्वभागात् कक्षा		.	१२	.	.	.	.	.
ग्रीवाधोभागात् कक्षा		.	८	.	.	.	.	.
कक्षाप्रकोष्ठान्तर		.	१६	.	.	.	.	.
बाहु	दैर्घ्य	१८	.	.	.	१२	१६	१६
बाहुबल	विस्तार	८	.	८	.	.	८	.
बाहुप्रांत	विस्तार	७	७	७	.	.	.	७
बाहु	विस्तार	.	.	.	.	६	६	.
बाहुमूल	परिणाह	.	.	.	.	१६	.	.
बाहुअग्र	परिणाह	.	.	.	.	१२	.	.
भुजोपरिभाग-	प्रवेश	.	.	.	७	.	.	.
भुजसंधि	प्रवेश	.	.	.	८	.	.	.
भुजस्कंध	अंतर	.	७	.	.	.	.	.
प्रबाहु	दैर्घ्य	१८	.	.	.	१२	१८	.

प्रबाहु	विस्तार	•	•	•	•	४	४	•
कोहणी-कुक्षि	अन्तर				३		•	३
कटि-भुज	अन्तर	३	•	•			•	•
कोहणी		७	८		७	•		•
,,	मध्य	७॥			•	•		
प्रबाहु-अग्र		४	•		•		•	•
मणिबध		४	३	•	४	•		•
,,	परिधि	•	१०॥	•			•	
नाभिहृदय	अन्तर	१४	१२	•	१२	१२	•	१२
नाभिस्तन	अन्तर	•		•		१६	•	•
नाभिऊर्ध्वे		•	६	•	•		•	•
नाभि	गामीर्यं		•	•	१	१	•	•
नाभिमध्ये	परिधि				•	४२	•	•
नाभि		•	•			१	•	•
कुक्षिमध्य	निस्तार			•			१५	•
उदराग्रे	निर्गम	३	४	•		•	•	
कटि	निस्तार	१६		१६	१६	१८	१८	२४
कटिवामे	विस्तार	९				•		•
कटिदक्षिणे	निस्तार	९	•	•	•		•	
कटि	परिधि	•	•	•		४४	•	•
गुह्य		१२	१३	•	१२	१२	१२	१२
गुह्य-जघन		४	४			•		•

पाद	उदय	८	.	.	.	.	.	.	आसीन प्रतिमासु
,,	दैर्घ्य	१५	.	१५	१६	१२	१०	१४	
,,	विस्तार	.	६	.	८	६	७	६	
पादतल	,,	८	.	.	.	.	.	.	
पादोष्णी		.	.	.	.	४	.	.	
पाद	परिणाह	.	.	.	.	५	.	.	
पादकंकण	प्रवेश	.	.	.	६	.	.	.	
मसूरातपाद	प्रवेश	६	.	.	.	.	.	.	
उत्संग	दैर्घ्य	.	.	.	९	.	.	.	
,,	विस्तार	.	.	.	४	.	.	.	
झोलक		४	.	.	.	.	.	.	
घसी		१/२	.	.	.	.	.	.	
मच्छक		६	.	.	.	.	.	.	
करांगुष्ट	दैर्घ्य	.	.	.	.	.	.	.	
,,	विस्तार	.	१				१)=		
अंगुष्ट	दैर्घ्य		४। =	.	३	३	४		
.	विस्तार								
अंगुष्ट	उत्सेध					१।			
,,	पिंड	२							
हस्ततर्जनी	दैर्घ्य	.	४॥=	.	४	४॥	+		
मध्यमा	,,		५		५	५	६		

+ प्रदेशिनी अनामिके-मध्यमा नखार्ध हीने कनिष्ठा नखहीना प्र०

अनामिका	दैर्घ्य-अनामिका		४॥=		४	४॥		
कनिष्ठा	दैर्घ्य		४।=		३	३		
तर्जनी	विस्तार		०॥।			०॥।	१	
मध्यमा	विस्तार		०॥।=	१)-			१)-	
अनामिका	विस्तार		०॥।	१			१	
कनिष्ठा	विस्तार		०॥=			०॥।	०॥।=	
पादांगुष्ठ	दैर्घ्य		३॥			३		
	विस्तार			१।=		१॥		
पेसारगर्भर-खाथी अगुष्ट	निर्गम				१५			
पादांगुली तर्जनी	दैर्घ्य		४			३		
पादमध्यमा	,,					२॥।=		
पादअनामिका	,,					२॥।		
पादकनिष्ठा	,,					२॥=		
दीर्घांगुली	निर्गम				१६			
कनिष्ठा	,,				१४			
तर्जनी-अगुष्ठ	अग्रे-अंतर					०।=		
पूर्वपाद तर्जनी	मूलांतर					६		
गुल्फमूल	विस्तार	४						
गुल्फमूल						४		
गुल्फ	परिधि					१०		

आ 'अ' ग्रन्थना आधारे पूर्वं थतुं हशे. 'प्र' ग्रन्थ ८ आंगल लखे छे तेनुं कारण के ते बौद्ध प्रतिमानो प्रतिपादक ग्रन्थ छे. बौद्ध प्रतिमाओना ४ आंगलना केशान्तमस्तक पर ८ आंगलनो 'जटामुकुट' मानेलो छे.

'जि' 'वा' ग्रन्थो उष्णीष विशे कंई लखता नथी, कारणके आ ग्रन्थकारोए उष्णीषो सामेल गणीने अनुक्रमे केशान्तमस्तक ६ अने ५ आंगलनुं गण्युं छे.

'बृ' ग्रन्थमां उष्णीष अने केशान्तमस्तकनो आंक नथी ज्यारे 'न' ग्रन्थमां ३ आंगलनुं केशान्तमस्तक तो बताव्युं छे पण उष्णीष विषे कंईज कह्युं नथी. आनुं कारण ए छे के ए बन्ने ग्रन्थो मुख्यत्वे नवताल प्रतिमाओनुं निरुपण करे छे, जैनप्रतिमाओनुं नहि. उष्णीषनो व्यवहार मुख्यत्वे जैनप्रतिमाओने अंगे छे. 'न' ग्रन्थे 'केशान्तमस्तक' विषे लख्युंज छे अने 'बृ' ग्रन्थमां पण सकेश मुख दीर्घता १६ आंगलनुं लखीने सकेशमस्तकनुं निरुपण करी ज दीधुं छे.

(२) 'नेत्रदैर्घ्य'नां कोष्ठकोमां ८ । ४ अने २ ना आंकडा नजरे पडशे. आमां ८ नो आंक बे नेत्रोनो संयुक्त छे, ४ ना एक एक नेत्रना छे, ज्यारे २ नो अंक पांपणो वच्चेना नेत्रनी लंबाईना समजवाना छे.

(३) कर्ण दैर्घ्यना कोष्ठकोमां ४।= । १० अने ४ ना आंकडा नजरे पडे छे. आमां ४।= अने ४ ना आंकडा दिगम्बर संप्रदायनी प्रतिमा तथा अन्य देवोनी प्रतिमाओना कानोनी दीर्घता सूचवनारा छे, ज्यारे १० नो आंक श्वेताम्बर संप्रदायनी जिनप्रतिमाना कानोनी लंबाई सूचवे छे. श्वेताम्बरो प्रतिमाना कानोनो संबन्ध ठेठ स्कंध सुधी जोडे छे. एटले नीचेनो भाग लंबावीने स्कंधथी १

आंगल उंचो राखे छे अने १ आंगलनो कर्णाधार बनावीने तेने खाधाथी जोडे छे.

(४) 'ज' ग्रन्थ नीचेना कोइ कोइ कोष्ठकमा अमोए उपर नीचे बे बे आकडा लख्या छे, तेमानो उपरनो आक ए ग्रन्थना मूल श्लोको उपरथी निष्पन्न थतो अंक छे, ज्यारे नीचेनो आक ए ग्रन्थनी हस्तलिखित प्रतिना अन्तमां आपेला कोष्टक उपरथी लीधेल छे मूल श्लोको घणा खरा अशुद्ध होइ तेमाथी निकलतो अंक पण अशुद्ध होय अने कोष्टकनो आक कदापि शुद्ध होय तो उपयोगमा लेइ शकाय एम धारी नीचे ए आक पण आपी दीधो छे.



प्रतिमामानांक परिशिष्ट—

'समरांगण सूत्रधारोक्त-प्रतिमा मानाङ्क'

१ श्रवण—

कर्णबन्ध-१॥ गोलक ॥ कर्णपिप्पली-दीर्घा द्विभागगोलक-विस्तृता १ अं०॥ लकार-दीर्घ १॥, विस्तृत १ अं० पिप्पल्यार्धा (त्)तयोर्मध्ये ॥ लकार मध्ये निम्न०॥ अं०॥ पिप्पलीमूले श्रोत्र छिद्रं०॥ अं०॥ स्तूतिका-दीर्घा०॥, विस्तार०। अं०॥ पीयूपी-दीर्घा २ अं०, वि० १॥ (लकारा वर्तयोर्मध्ये)॥ आवर्त-६ अं० (वक्त्रो वृत्तायतश्चसः कर्णस्य वाह्यारेखा) मूलांशविस्तार मूले०॥ अं०, मध्ये०। अं०, अंते ०)अं०॥

उद्घात-पीयूष्या अधोभागे विस्तार ०।= अं० (लकारा वर्त-योर्मध्ये)॥

ऊर्ध्वं कर्ण विस्तार-१ अं०, गोलक द्वियवान्वितः ॥
मध्ये कर्ण विस्तार-२ गोलक चतुर्यवान्वितः ॥
मूले मात्रा १ यवा ६॥ पश्चिमनाल १ अं० वि०॥
पूर्वनाल०॥ अं०वि०॥ प०पू० नाले दीर्घे २ कला. ॥

२ चिबुक—

चिबुक आयाम २ अं०॥ अधर १ अं० ॥ उत्तरोष्ट १ अं० ॥ भाजी०॥ अं० उदय, ॥ नासापुटौ ओष्टचतुर्थभागौ ॥ नासा ४ अं०॥ पुटप्रान्ते नासाग्रविस्तार २ अं०॥ ललाट विस्तार ८ अं०, आयत ४ अं० ॥

गंडान्त शिरसो मानं ३२ अं० ग्रीवा परिणाह २४ अं० ॥ ग्रीवात उरः २ भा०॥ उरसोनाभिः २ भा०॥ नाभे मेण्ढ्रं २ भा०॥ ऊरु-जंघे समे ॥ जानु ४ अंगुल ॥ पादायाम १४ अं० ॥ पद

विस्तार ६ अं०॥ पादोत्सेध ४ अं०॥ अगुष्टायाम ३ अं० ॥ अगुष्ट परिणाह ५ अ०॥ प्रदेशीनी अंगुष्ट समायामा ॥ मध्यमा प्रदेशीनी षोडशांशोना ॥ मध्यमाष्ट भागोनाऽनामिका ॥ अनामिकाष्ट भागोना कनिष्ठा ॥ अंगुष्टनख०॥ अं०॥

अगुलीनखाः

अगुष्ठकोत्सेध १॥= अं०॥
प्रदेशीनी उत्सेध १ अं० ॥ शेषा यथाक्रम हीना ॥
जघामध्ये परीणाहः १८ अं०॥ जानुमध्ये परीणाहः २१ अं०॥
जानुकपाले ३ अं०॥ ऊरुमध्ये परीणाहः ३२ अं०॥
वृषण अर्धभाग ॥ मेढ्र अर्धभाग ॥ मेढ्र परीणाह ६ अ०॥
कोशः (अडकोश ?) ४ अ०॥ कटि विस्तार १८ अं०॥
नाभिमध्ये परीणाह ४६ अ०॥ स्तनयोरंतर १२ अं०॥
स्तनोपरि कक्षामान्तौ ६ अं०॥ भुजायाम ४६ अ०॥
बाहोरुपरि पर्व १८ अं०॥ द्वितिय पर्व १६ अ०॥
बाहु मध्ये परीणाह १८ अं०॥ प्रबाहु परीणाह १२ अ०॥
कर आयाम १२ अं०॥ अगुलीरहितकरायाम ७ अं०॥
करविस्तार ५ अ०॥ मध्यमांगुली ५ अ०॥
मध्यमातः पर्वार्धहीनाप्रदेशीनी ॥
अनामिका प्रदेशीनीसमा ॥ ततः पर्वार्धे मानहीनाकनिष्ठा ॥
अगुली नखाः पर्वार्धमानाः॥ अगुलीनामायामसमः परीणाहः ॥
अगुष्ट दैर्घ्य ४ अं०॥ अगुष्ट परीणाह ५ अ०॥
नखाम्तुगतशारकिंचिद्धीनाः ॥ अगुष्ट=प्रदेशिनी—अंतर २ अ०॥

हीनाधिक माननी प्रतिमा न करवी—

अन्यथा च न कर्तव्य, यदीच्छेत् श्रियमात्मनः।
मानाधिक न कर्तव्यं, मानहीन न कारयेत् ॥३८॥

कृते च बहवो दोषाः; सिद्धिस्तत्र न जायते ।
अज्ञानात् कुरुते यस्तु, सच्छास्त्रं नैव जायते ।
न दोषो यजमानस्य, शिल्पिदोषो महान् ध्रुवम् ॥३९॥

भा०टी०—जो पोतानी शोभा चाहे तो शिल्पी प्रतिमा निर्माणमां शास्त्रथी विपरीत काम न करे. अर्थात् मानाधिक तथा मानहीन प्रतिमा न बनावे, एम करवामां घणा दोषो उत्पन्न थाय छे अने कारकनी कार्यसिद्धि अटके छे. जे शिल्पी अज्ञानवश मानाधिक अने मानहीन प्रतिमाओ बनावे छे ते शास्त्रनुं पालन करतो नथी, आमां यजमान (प्रतिमा करावनार)नो दोष नथी पण आमां खरेखर म्होटो दोष शिल्पीनो ज गणाय छे.

भग्न प्रतिमाना संस्कार विषे—

धातुलेपादिप्रतिमा-अंगभंगे च संस्करेत् ।
काष्ठ-पाषाण-निष्पन्नाः,-संस्कारार्हाः पुनर्नहि ॥४०॥

भा०टी०—धातु, लेप आदिथी बनावेल प्रतिमानो अंग-भंग थाय तो फरी संस्कार करीने तेनो उपयोग करी शकाय पण काष्ठ तथा पाषाणनी प्रतिमा भागी जतां ते फरी संस्कार योग्य रहेती नथी.

अलाक्षणिक प्रतिमाथी हानि—

रौद्री नश्यति कर्तार-मधिकाङ्गा च शिल्पिनम् ।
कृशा द्रव्य-विनाशाय, दुर्भिक्षाय कृशोदरी ॥४१॥
वक्रनासा च दुःखाय, ह्रस्वगात्रा क्षयंकरी ।
अनेत्रा नेत्रनाशाय, स्थूला सौभाग्यवर्जिता ॥४२॥
दुःखाय स्तब्धदृष्टिः स्यात्,-स्वल्पा भोगविनाशिनी ।
जायते प्रतिमाहीन-कटिराचार्यघातिनी ॥४३॥
जंघाहीना भवेद् भ्रातृ-पुत्र-मित्र-विनाशिनी ।
पाणि-पाद-विहीना तु, धनक्षयविधायिनी ॥४४॥

चिपुटी यत्कृनार्थाना, प्राप्तानां च व्ययो भवेत्।
जायते प्रतिमा निम्ना, चिन्ताहेतु-रधोमुखी ॥४५॥
अथापदे तिरश्चीना, नीचोच्चा तु विदेशदा।
अन्यायद्रव्यनिष्पन्ना, परवास्तु दलोद्भवा।
न्यूनाधिकाङ्गी प्रतिमा, सर्वस्य परिनाशिनी ॥४६॥

भा०टी०—भयकर आकारवाली कराववारने अने प्रमाणाधिक अंगवाली प्रतिमा शिल्पी (करनार कारीगर)ने हणे छे, दुबली द्रव्यनो नाश करनारी अने पातलपेटी दुर्भिक्षकारीणी थाय छे. वांका नाकवाली दुःख देनारी, टूंका शरीरवाली क्षय करनारी, नेत्र वगरनी नेत्रनाशिनी थाय छे अने प्रमाणथी जाडी प्रतिमा सौभाग्यहीन होय छे स्तब्ध (अक्कड) दृष्टिवाली दुःख देनारी, हीनांगी भोगनो नाश करनारी अने कटिहीना प्रतिमा आचार्यनो घात करनारी होवाथी त्याज्य छे जंघाहीना भ्रातृ-पुत्र-मित्रनो विनाश करनारी अने हाथ-पगनी खोडवाली प्रतिमा धनक्षय करनारी थाय छे. चिपटी आंखवाली द्रव्य व्यय करावनारी अने नीची तथा नीचा मुखनी प्रतिमा चिन्ता करावनारी थाय छे. तिरछी नजरवाली आपत्ति लावनारी अने प्रमाणथी नीची वा उंची प्रतिमा प्रवास देनारी थाय छे. अन्यायोपार्जित द्रव्यथी तैयार थयेली बीजाना वास्तु द्रव्यथी बनेली अथवा तो न्यूनाधिक अंगोपांगवाली प्रतिमा सर्वनो नाश करनारी निवडे छे

उपर्युक्त प्रतिमानां अशुभ लक्षणो प्रायः प्रतिमाना घडनार शिल्पीना हाथे थयेला होय छे, ते प्रतिष्ठा पहेला प्रतिमा जोवाथी जणाई आवे छे अने तेवी अलाक्षणिक प्रतिमाओ वर्जी शकाय छे, वळी प्रतिष्ठा करनारनी असावधानीथी स्थापन करती वखते केटलीक भूलो थई जवा पामे छे ते पण न थवी जोइये ए सम्बन्धमा फल प्रति-

पादनपूर्वक कहे छे के—

ऊर्ध्वंदृष्टिर्द्रव्यनाशा, तिर्यग्दृष्टिर्महाधये ।
...श्चश्रिताद्दृष्टिश्चो-ध्र्वमुखी कुलनाशिनी ॥४७॥

भा०टी०—प्रतिमानी दृष्टि द्वारना जे भागमां आववी जोईये तेथी उंची रहे तो द्रव्यनो नाश करे, द्वार मध्यने बदले दृष्टि डाबी-जमणी रहे तो मानसिक चिन्ताओने करे छे. प्रतिमा पाछलनी तरफ ढगेली उंचा मुखवाली होय तो कुलनो नाश करे छे अने स्वस्थान-स्थित समदृष्टि कल्याणकारी थाय छे.

लक्षणहीन प्रतिमाना विषयमां समरांगण सूत्रधार—

अशास्त्रज्ञेन घटितं, शिल्पिना दोषसंयुतम् ।
अपि माधुर्यसंपन्नं, न ग्राह्यं शास्त्रवेदिभिः ॥४८॥

अश्लिष्ट संधि विभ्रान्तां, वक्रां चावनतां तथा ।
अस्थिता-मुन्नतां चैव, कांकजंघां तथैव च ॥४९॥

प्रत्यंगहीनां विकटां, मध्येग्रन्थि नतां तथा ।
ईदृशीं देवतां प्राज्ञो, हितार्थं नैव कारयेत् ॥५०॥

अश्लिष्टसन्ध्या मरणं, भ्रान्तया स्थानविभ्रमम् ।
वक्रया कलहं विद्याद्, नतया [भिवसः] वयसः क्षयम्

नित्यमस्थितया पुंसा-मर्थस्य क्षयमादिशेत् ।
भयमुन्नतया विद्याद्, हृद्रोगं च न संशयः ॥५२॥

देशान्तरेषु गमनं, सततं काकजंघया ।
प्रत्यंगहीनया नित्यं, भर्तुः स्यादनपत्यता ॥५३॥

विकटाकारया ज्ञेयं, भयं दारुणमर्चया ।
अधोमुख्या शिरोरोग,-स्तथाधो नतयापि च ॥५४॥

भा०टी०—शास्त्रना ज्ञान विनाना शिल्पिए घडेलुं देखावमां सारुं देखातु पण दोषयुक्त एवु देवतानु प्रतिबिंब शास्त्रना जाणकार पुरुषोए कदापि ग्रहण न करवु.

जेना साधा बरोबर मळेला न होय एवी, घबरायेल अथवा भयभ्रान्त चहेरावाळी, वाकी वळेली, नीची डूंटवाळी, अस्थित अर्थात् जेना अंगोपांग यथास्थान न होय एवी, प्रमाणथी अधिक उंची, कागडानी जंघा जेवी पातळी जांघवाळी, प्रत्यंगो जेना प्रमाणथी हीन होय एवी, भयंकर आकारवाळी, छातीना भागमा गांठवाळी एटले के प्रमाणथी अधिक बहार निकळेली छातीवाळी अने मध्यभागमा नीची वळेली एवी दोषयुक्त देवप्रतिमाओ बुद्धिमाने न भरावबी.

'अश्लिष्ट संधि'–प्रतिमा करावनारनु मरण, 'विभ्रान्ता'–स्थान च्युति, 'वक्रा'–कलह कंकाश, 'नता' अवस्थानी हानि, 'अस्थिता' द्रव्यनाश, 'उन्नता' भय तथा हृदयरोग, 'काकजंघा' नित्य विदेश भ्रमण, 'प्रत्यगहीना' संतानहीनता, 'विकटा' दारुण भय, 'अधोमुखी' माथानो रोग अने 'मध्यग्रंथि' प्रतिमा पण मस्तक रोगने आपनारी होय छे. माटे उक्त दोषोवाळी प्रतिमानो त्याग करवो.

प्रतिष्ठाकल्पोक्त प्रतिमा लक्षणहीनता—

सदोषार्चा न कर्तव्या, यतः स्यादशुभावहा ।
कुर्याद्रौद्री प्रभोर्नाश, कृशांगी द्रव्यसंक्षयम् ॥५५॥
संक्षिप्ताङ्गी क्षयं कुर्या–च्चिपिटा दुःखदायिनी ।
विनेत्रा नेत्र विध्वंस,–हीन वक्त्रा च (त्व) भोगिनी ॥५६॥

व्याधिं महोदरी कुर्याद्, हृद्रोगं हृदये कृशा।
अंगहीना सुतं हन्यात्, शुष्कजंघा नरेन्द्रहा ॥५७॥

पादहीना जनं हन्यात्, कटीहीना च वाहनम्।
ज्ञात्वैवं कारयेज्जैनीं, प्रतिमां दोषवर्जिताम् ॥५८॥

भा०टी०—प्रतिमा दोषयुक्त न बनाववी, केमके ते अशुभ फल आपनारी थाय छे. प्रतिमा जो रौद्राकृति–एटले भयंकर आकारनी होय तो प्रतिष्ठा करावनार गृहस्थनो नाश करे छे. दुर्बल अंगोवाली प्रतिमा द्रव्यनो क्षय करे छे. टूंका अंगोवाली क्षय करे छे. चिपडी आंखोवाली दुःख देनारी होय छे. नेत्रहीना आंखोनो नाश करे छे अने हीनमुखवाली प्रतिमा अभोगिनी अर्थात् पूजाभोग प्राप्त करती नथी.

म्होटा पेटवाली प्रतिमा रोगने उत्पन्न करे छे, हृदयमां दुर्बल प्रतिमा हृदयना रोगो उत्पन्न करे छे. अंगहीन प्रतिमा पुत्रनो नाश करे छे अने शुष्क (गलेल) जांघवाली प्रतिमा देशना राजाने हणे छे. पग हीन प्रतिमा जन सामान्यने मारे छे अने कटिभागमां हीन प्रतिमा यान–वाहननी हानि करे छे. आ प्रमाणे दोषनुं फल जाणीने जैनप्रतिमाने दोष रहित बनाववी जोईये.

अलाक्षणिक प्रतिमा विशे वास्तुसारनुं विधान—

उत्ताणा अत्थहरा, वंकग्गीवा सदेसभंगकरा।
अहोमुहा य सचिंता, विदेसदा हवइ नीचुचा ॥५९॥

विसमासण वाहिकरा, रोरकरऽण्णायदव्वनिप्फन्ना।
हीणाहियंग पडिमा, सपक्खपरपक्खकट्ठकरा ॥६०॥

उड्ढमुही धणनासा, अपूइया तिरियदिट्ठि नायव्वा।
अइथद्धदिट्ठि असुहा, हवइ अहोदिट्ठि विग्घकरा ॥६१॥

भा०टी०—उंचा मुखवाली प्रतिमा धन हरे, वाकी गर्दननी स्वदेशनो भग करे, नीचा मुखवाली अने नीची उंची अनुक्रमे चिन्ता अने भ्रमण करावे

विषम आसनवाली प्रतिमा व्याधि करनारी, अन्यायोपार्जित द्रव्यवडे बनेली दुर्भिक्ष करनारी अने प्रमाणथी हीन या अधिक अंगवाली प्रतिमा स्वपक्ष तथा परपक्षने कष्ट देनारी थाय छे, ऊर्ध्व-मुखी धननो नाश करे छे, तिरछी नजरवाली पूजाने पामती नथी, अतिशय स्तब्धदृष्टि (अक्कडदृष्टि)वाली अशुभ करनारी अने नीची दृष्टिवाली प्रतिमाने विघ्नकारिणी जाणवी.

शिल्परत्नाकरोक्त प्रतिमागत शुभाशुभ रेखाओ—

शुभ रेखाओ-(शार्दूल०)

नन्द्यावर्त-वसुन्धरा-धर-हय-श्रीवत्स-कूर्मोपमाः,
शङ्ख-स्वस्तिक-हस्ति-गो-वृषनिभाः शक्रेन्दु-सूर्योपमाः।
छत्र-स्रग्ध्वज-लिंग-तोरण-मृग प्रासाद पद्मोपमाः
वज्राभा गरुडोपमाश्च शुभदा रेखाः कपर्दोपमाः ॥६२॥

भा०टी०—पाषाण, काष्ठ आदि द्रव्योनडे बनावेली प्रतिमामां जो नन्द्यावर्त पृथ्वी, पर्वत, अश्व श्रीवत्स, कच्छप, शंख, स्वस्तिक, हाथी, वृषभ, इन्द्र, चन्द्र, सूर्य, छत्र, पुष्पमाला, ध्वजा, शिवलिंग, तोरण, हरिण प्रासाद (देवमंदिर अथवा महेल) कमल, वज्र, गरुड अने कपर्दी, आ पैकीना कोईपण पदार्थना जेवो आकार प्रतिमामा रेखाओ वडे बनेलो दृष्टिगोचर थतो होय तो शुभ फलदायक जाणवो.

अशुभ रेखाओ—

हृदये मस्तके भाले, ह्यंसयोः कर्णयोर्मुखे।
उदरे पृष्ठसलग्ने, हस्तयोः पादयोरपि ॥६३॥

एतेष्वंगेषु सर्वेषु, रेखा लाञ्छन-नीलिका ।
बिम्बानां यत्र दृश्यन्ते, त्यजेत्तानि विचक्षणः ॥६४॥

अन्यस्थानेषु मध्यस्था, त्रासफाटविवर्जिता ।
निर्मला स्निग्धशान्ता च, वर्णसारूप्यशालिनी ॥६५॥

भा०टी०—प्रतिमाओना हृदय, मस्तक, ललाट, खांधाओ, कानो, मुख, पेट, पीठ, हाथो अने पगो आ अंगो पैकीना कोइपण अंगमां अथवा अंगोमां आसमानी के काला रंगनुं चिह्न के रेखा होय तो चतुर मनुष्ये तेवी प्रतिमानो त्याग करवो जोईये. उक्त स्थानो सिवायनां स्थानोमां पूर्वोक्त प्रकारनी रेखा होय तो ते मध्यम प्रकारनी गणाय छतां चीराड-चीरा पडेला होय ते तो वर्जनीय ज गणाय. मात्र निर्मल स्निग्ध शान्त अने सरखा वर्णनी रेखाओ दोषरुप गणाती नथी.

प्रतिमाभंगनुं फल—

नखांगुलीबाहुनासां-घ्रीणां भङ्गे पुनः क्रमात् ।
जनभीर्देशभङ्गश्च, बन्धः कष्टं धनक्षयः ॥६६॥
पीठयानपरीवार-ध्वंसे सति यथाक्रमम् ।
जनवाहनभृत्यानां, नाशोभवति निश्चितम् ॥६७॥

भा०टी०—प्रतिमा संबन्धी १ नख, २ आंगली, ३ बाहु, ४ नासिका, ५ चरण; आ पांच अवयवो पैकी कोइनो भंग थतां अनुक्रमे १ लोकभय, २ देश-भंग, ३ बन्धन, ४ कष्ट अने ५ धनक्षय, ए प्रमाणे फल थाय छे. तथा १ पीठ (आसन), २ वाहन (लांछन), अने ३ परिकरना भंगथी अनुक्रमे १ परिवार, २ वाहन अने ३ नोकर-चाकरोनो निश्चितपणे नाश थाय छे.

खण्डित प्रतिमा विषे अपराजितपृच्छानुं मन्तव्य—

नखकेशाऽऽभूषणादि,-शस्त्रवस्त्राद्यलंकृतिः ।

विपमा व्यंगिता नैव, दूपयेन्मूर्तिमगकम् ॥६८॥
शान्ति-पुष्ट्यादिकृत्यैश्च, पुनः सा च समीकृता ।
पुना रथोत्सव कृत्वा, प्रतिमा अर्चयेच्छुभा ॥६९॥

भा०टी०—नख, केश, आभूपणादि अने शस्त्र, वस्त्रादि अलंकार विपम होय अथवा व्यगित (खंडित) होय तो ते प्रतिमाने अथवा तेना अंगने दूपित करता नथी. शातिक पौष्टिक कार्योवडे तेने पाछी सरखी करी रथयात्रानो उत्सव करीने ते प्रतिमाने शुभकारी जाणीने पूजवी.

एज ग्रन्थना मते त्याज्य प्रतिमा—

अङ्गोपागैश्च प्रत्यगैः, कथंचिद् व्यगदूपिताम् ।
विसर्जयेत्ता प्रतिमा-मन्यमूर्तिं प्रवेशयेत् ॥७०॥
याः खण्डिताश्च दग्धाश्च, विशीर्णाः स्फुटितास्तथा ।
न तासा मन्त्रसस्कारो, गतासुस्तत्र देवता ॥७१॥

भा०टी०—अंग उपाग के प्रत्यगमा कोई रीते खंडित होय तो ते प्रतिमाने उठाडीने त्या अन्यमूर्तिनो प्रवेश कराववो, केमके खडित थयेली, बळेली, शीर्ण विशीर्ण थयेली तथा तडकी थयेली प्रतिमामा जे मत्र संस्कार (प्रतिष्ठा वगेरे) करेल होय ते रहेता नथी, तेमांथी प्रतिष्ठादेवतानु सानिध्य मटी जाय छे.

अपराजितनो " विपयमा अपवाद—

पूर्वा वर्षशताद्देवाः, स्थापिताश्च महत्तरैः ।
सानिध्य सर्वकाल तु, व्यंगितानपि न त्यजेत् ॥७२॥
पतनाद् व्यंगिता देवा-स्तेषा दुरितमुद्धरेत् ।
स्नपनोत्सवयात्रासु, पुना रूपाणि चाचरेत् ॥७३॥
नवरेवापि जीर्णवा, ह्यर्चा याऽस्थापि शोभना ।
परिष्कारेऽपरिष्कारे, तत्र दोपो न विद्यते ॥७४॥

भा०टी०—जे देवो सो वर्ष पहेलांना होय अने महापुरुषोना हाथे पतिष्ठित थयेला होय ते खंडित थई गया होय छतां प्रतिष्ठा देवता तेनुं सानिध्य छोडती नथी.

जे प्रतिमा पडवाथी खंडित थई होय तेनुं स्नात्रोत्सव-रथयात्रादि वडे प्रायश्चित करी तेनो संस्कार करी फरी तेनी पूजा चालु करवी.

प्रतिमा नवा प्रतिष्ठापक पुरुषोए स्थापी होय अथवा जुनाओए, पण ए प्रतिमाओ जो लाक्षणिक अने सुन्दर होय तो संस्कार करीने अथवा वगर संस्कारे पण तेनी पूजा करवी एमां दोष नथी.

खंडित प्रतिमा संबन्धी ठक्कुरफेरुनी मान्यता—

वरिससयाओ उड्ढं, जं बिंबं उत्तमेहिं संठवियं।
वियलंगुवि पूइज्जइ, तं बिंबं निक्कलं न जओ ॥७५॥
मुह-नक्क-नयण-नाहि-कडिभंगे मूलनायगं चयह।
आहरण वत्थ परिगर-चिण्हाउहभंगि पूइज्जा ॥७६॥
पयपीठ चिण्ह परिगर-भंगे जगजाणभिच्चहाणिकमे।
छत्तसिरिवच्छसवणे, लच्छी-सुह-बंधवाण खयं ॥७७॥

भा०टी०—सो वर्ष पहेलां उत्तम पुरुषोए प्रतिष्ठित करेल बिंब विकलांक (खंडित) थयुं होय तो पण पूजाय छे, केमके ते कलाहीन थतुं नथी. एटले के मंत्रोद्वारा तेमां उत्पन्न करेल कला-प्रभाव चाल्यो जतो नथी.

मुख, नाक, नेत्र, नाभि, अथवा कटिभागमां खंडित थयेली मूलनायक प्रतिमानो त्याग करवो. पण आभूपण, वस्त्र, परिकर, लांछन अथवा आयुधनो भंग थयो होय तो तेने पूजवामां दोष नथी.

पादपीठ (गादी-मसूरक) लांछन, परिकरना भंगमां अनुक्रमे

स्खलन, यान, वाहन, अने नोकर-चाकरोनी हानि थाय छे. तथा छत्र, श्रीवत्स, कानना भगथी अनुक्रमे लक्ष्मी, सुख अने भाईओनो क्षय थाय छे.

घर अने प्रासादमा स्थापनीय प्रतिमानु मान—

आरभ्यैकांगुलं बिंबं, यावदेकादशांगुलम् ।
गृहेषु पूजयेद् बिंब-मूर्ध्वं प्रासादके पुनः ॥७८॥

भा०टी०—१ आंगलथी मांडीने ११ आंगल सुधीनी प्रतिमा घरमा पूजवी एथी अधिक माननी प्रतिमा प्रासादमा (चैत्यमा) पूजवी.

घरमा पूजवानी प्रतिमा विषेनो विवेक—

प्रतिमा काष्ठ लेपाऽश्म-दन्तचित्रायसां गृहे ।
मानाधिका परीवार-रहिता नैव पूजयेत् ॥७९॥

भा० टी०—काष्ठनी, लेपनिर्मित, पाषाणनी हाथी दन्तनी बनेली, चित्ररुपी, लोहमयी प्रमाणमा ११ आंगलथी म्होटी अने परिकर विनानी प्रतिमा घरमा न पूजवी.

प्रासादमानथी प्रतिमामान—

प्रासादतुर्यभागस्य, समाना प्रतिमा मता ।
उत्तमायकृते सा तु, कार्यैकोनाऽधिकांगुला ॥८०॥
अथवा स्वदशांशेन, हीनस्याप्यधिकस्य वा ।
कार्या प्रासादपादस्य, शिल्पिभिः प्रतिमा समा ॥८१॥
अतिहीना तु याऽर्चा स्यात्, प्रासादपंचमांशके ।
सर्वेषामपि धातूनां, रत्नस्फटिकयोरपि ।
प्रवालस्य च बिम्बेषु, चैत्यमानं यदृच्छया ॥८२॥

भा०टी०—प्रासादना एक चतुर्थांश जेटली उंचाईमा प्रतिमा

होय ते उत्तम गणाय छे. तेमां उत्तमआय लाववा माटे एक आंगल वधारवो अथवा ओछो करवो.

अथवा प्रासादना चतुर्थांशमां तेनो दशमांश जोडतां के हीन करतां जे मान आवे ते माननी ते प्रासादमां प्रतिमा स्थापवी. अर्थात् स्वदशमांश युक्त चतुर्थांश माननी उत्तम, स्वदशांशहीन चतुर्थांश माननी कनिष्ठ अने वचला माननी मध्यम प्रतिमा होय छे.

प्रासादना पंचमांश जेटली प्रतिमा अतिहीनमाननी गणाय छे. सर्व धातुओनी, रत्ननी, स्फटिकनी, अने प्रवालनी प्रतिमाओने अंगे प्रासादमाननो नियम होतो नथी. गमे ते मानना चैत्यमां गमे ते माननी ए प्रतिमाओ प्रतिष्ठित करी शकाय छे.

प्रासादमां प्रतिमानुं स्थान—

प्रासादगर्भगेहार्धे, भित्तितः पञ्चधाकृते ।
यक्षाद्याः प्रथमे भागे, देव्यः सर्वा द्वितीयके ॥८३॥

जिनाऽर्कस्कन्दकृष्णानां, प्रतिमाश्च तृतीयके ।
ब्रह्मा चतुर्थके भागे, लिङ्गमीशस्य पञ्चमे ॥८४॥

भा०टी०—प्रासाद गर्भगृहना भित्ति तरफना अर्धना ५ भाग करवा, तेमां भींत तरफना प्रथम भागमां यक्ष आदि देवो, बीजा भागमां सर्व देविओ, त्रीजामां जिन, सूर्य, स्कन्द तथा कृष्णनी प्रतिमाओ, चोथा भागमां ब्रह्मानी प्रतिमा अने पांचमा भागमां (गर्भ मध्यमां) शिवलिंगनी स्थापना करवी.

दृष्टिस्थाननो विवेक—

द्वारशाखाष्टभिर्भागै-रध एकद्वितीयकैः ।
मुक्त्वैकमष्टमं भागं, यो भागः सप्तमः पुनः ॥८५॥

तस्यापि सप्तमे भागे, [१]गजत्वात्तत्र पातयेत् ।
प्रासादे प्रतिमादृष्टिः, कर्तव्या तत्र शिल्पिभिः ॥८६॥

भा॰टी॰—प्रासादना द्वारनी शाखाना एक, बे, आ क्रमे नीचेथी उपर सुधी ८ भागो करवा तेमांथी उपरनो आठमो भाग छोडीने नीचेना सातमा भागना पण ८ भागो करी उपरनो आठमो छोडी मूल सातमाना सातमा भागमा गजाय होवाथी शिल्पिओए प्रासाद द्वारना ते स्थानमा प्रतिमानी दृष्टि पाडवी.

उपसंहार—

प्रतिमा लक्षणना संबन्धमा जेटलुं लखाय तेटलुं थोडुं छे, ए विषय ज एवो छे के एने वधु चर्चीये तेम ए वधारे गहन बनतो जाय छे, एथी सामान्य वाचनार माटे ए दुर्बोध वस्तु बनी जाय एवो भय छे, माटे हवे ए लेख पूर्ण करवो ज सारो छे.

प्रतिष्ठाकारक साधुओ, विधिकारक श्रावको अने मूर्तिकार शिल्पिओ, प्रतिमा सम्बन्धी शिल्पनो थोडो पण परिचय साधे अने नवी बनती प्रतिमाओमा एनो उपयोग करे एज आ प्रकरण लखवानो उद्देश छे



१ पुस्तकान्तरमा "गजायस्तत्र" एवो पाठ छे बन्नेनो भाव एक ज छे के सातमा भागमा "गजाय" छे

परिच्छेद १३ परिकर लक्षण—

प्रातिहार्यमयः पुण्य-विभूतिदर्शनात्मकः ।
जिन-परिकरः कार्यः, स्वरूप-लक्षणान्वितः ॥३३॥

भा०टी०—जिनेश्वरनी पुण्य विभूतिनुं दर्शन करावनार, अष्ट प्रातिहार्य युक्त, पोताना रूप अने लक्षणे करीने युक्त एवो श्री जिनने परिकर कराववो जोइये.

'परिकर' शब्दनो यौगिक अर्थ 'परिवार' एवो थाय छे, पण प्रस्तुत प्रकरणमां आ शब्द शुद्ध यौगिक रह्यो नथी, 'यौगिक मिश्र' बनी गयो छे. शास्त्रदृष्टिए कोई पण तीर्थंकरना साधु-साध्वी समुदायने ज तेमनो परिकर कही शकाय, पण शिल्पोक्त प्रस्तुत परिकरमां आ वस्तु नथी, अहिं परिकरनो रूढार्थ तीर्थंकरोने प्राप्त थयेल लोकोत्तर विशेषताओनो सूचक छे, आ लोकोत्तर विशेषताओनुं पारिभाषिक नाम 'प्रातिहार्य' छे. कह्युं छे के—

अशोकवृक्षः सुरपुष्पवृष्टि-र्दिव्यध्वनिश्चामर मासनं च।
भामण्डलं दुन्दुभिरातपत्रं, सत्प्रातिहार्याणि
जिनेश्वराणाम् ॥१॥

भा०टी०—आ पद्यमां सूचित अष्टप्रातिहार्योए तीर्थंकरोना अलोक भोग्य पुण्य परिपाकना फलरुपे वरेली सिद्धिओ छे, तेओ ज्यां जाय त्यां अशोकवृक्ष, पुष्पवृष्टि, दिव्यध्वनी, चामर, सिंहासन भामंडल, देव दुन्दुभि, अने छत्र; ए आठ वस्तुओ हाजर ज होय, प्रस्तुत परिकर लक्षणमां ए ज आठ वस्तुओनुं यथावस्थित मूर्तस्वरूप प्रदर्शित करायेलुं छे. जे नीचेना संक्षिप्त निरुपणथी समजाशे.

१-परिकरमां सर्व प्रथम तीर्थंकर प्रतिमाना आसन नीचेना पीठनुं 'सिंहासन' नामथी निरुपण कर्युं छे.

२. जिनप्रतिमानी बन्ने बाजुमा चमर ढालता चामरधारिओनुं स्वरुप बताव्युं छे

३ मस्तक उपर रहेल छत्राकार छत्रत्रयनुं निरुपण छे

४. दुन्दुभि वाद्य वगाडता देवोनु चित्र निरुपण कर्युं छे.

५. जिनध्वनिमा पोतानी दिव्यध्वनीने पूरता वंशधरो, वीणाधरो अने शंखधरनुं स्थान निरुपण छे.

६ पुष्पवृष्टि करता देवो मालाधरो बताव्या छे.

७. मस्तक पाछळ एकत्र थयेल तेजःपुंजना प्रतीकमना भामंडलनुं निरुपण छे अने

८. सर्वोपरि जिनसभावृक्ष–अशोकवृक्षनु स्वरुप चित्रित करीने पूर्वोक्त ८ प्रातिहार्योनो यथा स्थान समावेश एज 'परिकर' छे, ए वात सिद्ध करी छे, ए प्रमाणे 'परिकर'नो पारिभाषिक अर्थ बतावीने हवे आपणे एना प्रत्येक अंगनु निरूपण जयमहिता शास्त्रमा करेलु छे ते जोइशु त्या जय पूछे छे—

सिंहासन किं प्रमाण, किं मान बाहुयुग्मयो (कम्) ।
किं मान छत्रवृत्त च, शंखदुन्दुभिभागतः ? ॥२॥
एतत्सर्वं प्रमादेन, कथयस्व जगत्पते ? ।

विश्वकर्मा उवाच—

पूर्वोक्तमानतः कुर्या-दर्चां सर्वत्र शोभनाम् ॥३॥
यद्वर्णा मूलप्रतिमा, परिकरं तद्वर्णादयः ।
विवर्णादि महादोषाः, जायमानेषु सर्वतः ॥४॥
रत्नाद्यन्यान्येषु, मरकतस्फटिकादिषु ।
न दोषो विवर्णताकीर्णे, अर्चापरिकरादिके ॥५॥

भा०टी०—जये पूछ्यु सिंहासन शा मापनु होय ? बाहुयुग्मनुं

मान शुं होय ? छत्रोटो कया प्रमाणनो होय ? अने शंख दुन्दुभि वगाडनाराओ माटे केटला आंगलनुं मान छे ? हे सृष्टिना स्वामी ! कृपा करीने ए सर्व हकीकत कहो ! जवाबमां विश्वकर्माजीए कह्युं—

पूर्वे जणावेलां परिमाणोपेत प्रथम सुन्दर प्रतिमा तैयार करवी अने पछी जे वर्णना द्रव्यनी मूलप्रतिमा होय तेज वर्णना द्रव्यवडे तेनो परिकर बनाववो; प्रतिमाना वर्णथी विरुद्ध वर्णनो परिकर बनावतां सर्वत्र महादोषनी उत्पत्ति थाय छे. हां, जो प्रतिमा रत्ननी, मरकतमणिनी, अथवा तो स्फटिकनी होय तो प्रतिमाना परिकरमां विवर्णतानो दोष गणातो नथी.

आसनं च अतो वक्ष्ये, भंगान् वक्ष्यामि त्वं शृणु ।
अर्चाऽर्धोदयकं कार्यं, सिंहासनं त्रिदीर्घकम् ॥६॥
सर्वतः कप्पसंयुक्त-मंगुलादिकमुच्छ्रये ।
निर्गतमर्धोदयं चैव, उभयो र्वाम-दक्षिणे ॥७॥
द्वादशांगुलभवं रूपं, द्व्यंगुला छाद्यकी तथा ।
वेदाङ्गुलमुपरिष्टात्, कर्णकं चषकैस्तथा ॥८॥
उदयश्च समाख्यातो, दैर्घ्यं वै कथ्यतेऽधुना ।

भा०टी०—हवे आसन अने तेनी रचनाना प्रकारो कहुं छुं, ते सांभल ? प्रतिमाना उदय करतां सिंहासन उंचाईमां अर्धुं राखवुं अने उंचाईथी त्रणगुणुं दीर्घ करवुं, तेने सर्व तरफ कणीयुक्त करवुं, कणीनो उदय आंगलनो करवो, डावी-जमणी बाजुए सिंहासनना उदय थकी अर्ध निर्गम करवो, १२ आंगल परिमाणमां रुपक करवुं, २ आंगलनी छाजली अने ते उपर ४ आंगलमां कणी [१]करवी, आम उदय कह्यो, हवे विस्तार कहेवाय छे.

१ प्रत्येक ग्रन्थना विधाय प्रमाणे सिंहासननी उंचाई बेठी प्रतिमानी ५६ भागनी उंचाईथी अडधी २८ भागनी कही छे, ४ भागनी कणी, २

आदिशक्तिर्जिनैर्दृष्टा, आसने गर्भसंस्थिता ॥९॥
सहजा कुलजाऽधीना, पद्महस्ता वरप्रदा ।
अर्कमान विधातव्य-मुपाङ्गसहित भवेत् ॥१०॥
गर्भमध्ये विधातव्यं, धर्मचक्र च शोभनम् ।
चक्र सुदर्शन नाम, अधर्मक्षयकारकम् ॥११॥
मृगः सत्य चरन् धर्मं, दयादेवी मृगी मता ।
कुमुद-शखवर्णाख्यौ, द्वौ गजौ वामदक्षिणे ॥१२॥
भद्रजात्युद्भवौ कार्या-वंगुलदिक्षु विस्तरौ ।
शिवौ रौद्रमहाकायौ, जीवत्कोर्धौ च रक्षणे ॥१३॥
द्वादशागुलविस्तारौ, कर्तव्यौ विवृताननौ ।
केवलज्ञान मूर्तीना, सर्वेषा पादसेवकाः ॥१४॥
यक्षा श्चतुर्विंशति' प्रोक्ता, एकैक परिकल्पयेत् ।
भूतयक्षान् गजसर्प-निधिहस्तान् वरप्रदान ॥१५॥
स्तम्भमृणालसयुक्ता, मकरग्रासरूपकैः ।
शशिनिर्मलशोभाढ्य, चतुर्दशांगुलान् क्रमात् ॥१६॥
पद्मासना वाहनैर्युक्ता-श्चतुर्विंशतिः कुलशासनी ।
धर्मोन्नता शुभादेवी, अम्बिकाद्या' क्रमोद्भवा ॥१७॥
स्तम्भेमृणालसयुक्त-पूर्णादिविरालिकांविंदुः ।
आसनं कथित चैव, चामरधरानथ शृणु ॥१८॥

नी ऊंचाई अने १० भागना स्तम्भमां सिंहासननी ऊंचाईना १८ भागो रोकाय छे त्यारे १० भाग शेष रहे छे आ १० भागोनो शु करवु, एनो अहीं खुलासो मळतो नथी शिल्परत्नाकरमां आपेला परिकरलक्षणमां सिंहासनना नीचेना १० भागोमां पीठ बनाववानु विधान छे त्यारे वास्तुसारमां ठक्कुरफेरू नीचेना १० भागोमांथी २ भागनी कणी अने ८ भागनी गजपटी बनाववानु विधान करे छे अमने आ विधान योग्य लागे छे

भा० टी०—सहज, कुलीन अने स्वाधीन; एवी जे आदि शक्ति जिनोए पोताना आत्मामां जोई ते शक्तिने हाथोमां कमल अने वरद बतावीने आसनना मध्यगर्भमां स्थापन करवी. [१]ते आदि शक्तिनो विस्तार उपांग सहित १२ आंगलनो करवो, [२]आदि शक्तिनी नीचे आसनना गर्भमां सुन्दर धर्मचक्र बनाववुं, आ धर्मचक्र सुदर्शनचक्रनी जेम अधर्मनो क्षय करनारुं छे. ते धर्मचक्रनी एक तरफ सत्यरुपी 'मृग' अने बीजी तरफ दयारूपिणी 'मृगी' बनाववी, आ बंने जाणे धर्मचक्रनो आश्रय पामीने निर्भय थयां होय एम चित्रवां, ते पछी कुमुद अने शंखनिधिना प्रतिक समा बे हाथीओ डाबी-जमणी तरफ करवा. हाथी भद्रजातिना अने १०-१० आंगलना विस्तारमां बनाववा. हाथीओ पछी रौद्र रूपधारी अने महाकाय एवा २ [३]शिवो १२-१२ आंगलनां बनाववा. आ शिवोना

---

१ शिल्परत्नाकरना परिकरलक्षणमां आनो उल्लेख 'मध्यदेवी' ए नामथी कर्यो छे, त्यारे वास्तुसारमां एने 'चक्रधरी' 'गरुडीका' आवां नाम विशेषणो आप्यां छे. ठक्कुरफेरुना आ कथननी अपेक्षा समजी शकाती नथी. चक्रधरी एटले चक्रेश्वरी देवी प्रथम तीर्थंकरनी शासन यक्षिणी छे, एनुं रुपक दरेक तीर्थंकरना सिंहासन उपर शा माटे होवुं जोईए? अम्हारा मत प्रमाणे ए विषयमां 'जयसंहिता'नुं कथन युक्तियुक्त लागे छे.

२ आदि शक्तिनुं विस्तारमान अहिंया उपांग सहित १२ भागनुं कह्युं छे, शिल्प रत्नाकरमां २-२ भागनी २ थांभलीओ अने ८ भागमां देवीनो विस्तार राखवानुं विधान छे, त्यारे वास्तुसारमां ३-३ भागमां २ चमरधरो अने ६ भागनी देवी बनाववानुं विधान छे. आ देवीना रूपकनो निर्गम शिल्प रत्नाकरना परिकरलक्षणमां ५ आंगलनो बताव्यो छे.

३ वास्तुसारमां आ रूपकोनां 'केसरी' अने शिल्परत्नाकरोक्त परिकरलक्षणमां 'सिंह' नामो कह्यां छे. जयसंहितामां 'शिव' कहेलो आ 'शिव' कोण? ए विचारणीय छे. ज्योतिषशास्त्रमां प्रयाणमां 'शिव' कई दिशामां होय तो शुभ अने कई दिशामां अशुभ? आवा प्रसंगे "संमुखःस्थ शिवस्त्याज्यः" इत्यादि शब्दोमां 'शिव'नो उल्लेख छे. छतां "सर्वत्र भ्रमते रुद्रो,

मुख फाडेलां एटले के विकृत करवां, जाणे के जीवोने एनाथी बचाववा माटे जिनेश्वरे पोताना आसन नीचे दबावी दीधेला होवना मूर्तरुपो

सर्व केवलीतीर्थकरोना चरण-सेवको जे २४ यक्षो कह्या छे, तेमांथी १-१ यक्षनी मूर्ति बनाववी एटले के जे तीर्थंकरनी प्रतिमा होय तेना यक्षनी प्रतिमा जिनना जमणा हाथनी तरफना आसनमां शिवनी आगे बनाववी, यक्षो प्राणियोना मित्रो होय, तेवा सौम्य अने गज, सर्प आदि स्व स्व वाहनयुक्त, हाथोमां निधानवाला अने वर मुद्रावाला बनाववा. तेमनी बन्ने बाजु कमल युक्त स्तंभो बनाववा. स्तंभो मकरो अने ग्रासडाओना रूपको वडे शोभित करवा, अर्थात् आ बधी रचनावडे यक्षोने सुशोभित करवा आ यक्षो विस्तारमां १४ आगलना करवा जोईये वली २४ शासनदेवीओ, के जे पद्मासनादि वाहनो अने आयुधो धारवनारी छे, धर्मने निमित्ते प्रवृत्ति करनारी छे, एवी अंबिका आदि जे देवी जे तीर्थंकरनी शासनदेवी होय ते देवीनी शुभ मूर्ति ते तीर्थंकरनी प्रतिमाना आसनना डावे भागे शिवनी पछी बनाववी. एनो पण विस्तार १४ आगलनो राखवो, अने एनी पण बन्ने बाजुमां कमलयुक्त स्तंभो बनाववा, उपर विरालिकाओना मुखो करवा आ प्रमाणे सिंहासननी रचना कही, हवे चामरधरोने सांभल !—

चामरधरानतो वक्ष्ये, चामरेन्द्रा इति स्मृतान् ।
पृष्टपदोद्धचाः कार्या, वाह्यिकोभयमध्यत ॥१९॥

दुर्बलताना मन्मद" आवा शब्दोथी कश्यप ज्योतिषनो 'शिव' 'महादेव' ना रुद्ररूपना अर्थमां पण होय, प्रस्तुतमां शिवनुं जे स्वरुप लख्युं छे त्यां तो ए 'शिव' शब्दथी पण अधिक 'महाकाय' कोइ क्रूर हिंसक जीव होय एम ज जणाय छे अमरनी कल्पना प्रमाणे आ शिव ते रुद्रनुं महत्तर 'काल'रूप छे जेने श्री जिनेश्वरे आसन नीचे दबाव्युं छे

प्रतिमा-स्कन्धमुत्सेधाः, पृष्ठपादान्तबाहिका ।
स्तंभौ मृणाल संयुक्तौ, पूर्वादिर्विरालैर्विदुः ॥२०॥

वरालंकार संयुक्ताः, सुनेन्द्रा गुणपर्वताः ।
प्रह्लादोवक्रमस्यास्य (वामतश्चास्य) चामराधार
सौच्यते ॥२१॥

दक्षिणे बाहुसंस्थाने, अपीन्द्रो विष्णुनामतः
उदयः स्तंभिकाभिश्च, तिलकं शंवव्यालके ॥२२॥

मकरौ च प्रक्षोभाढयौ, कर्तव्यौ विवृताननौ ।
उच्छ्रयमंगुलाः पंचा-शद्विस्तारे द्वाविंशतिः ॥२३॥

व्यालउपांगसहितोऽगुलानां षट्कमेव च ।
मूलनायकस्तनगर्भे, दृष्टिमिन्द्रस्य कारयेत् ॥२४॥

नानाभरणशोभाढयं, नानारत्नोपशोभितम् ।
इन्द्रस्य लक्षणं चैव, चामरधारः प्रकथ्यते ॥२५॥

भा०टी०—हवे चामरेन्द्र नामथी प्रसिद्ध चामरधरोने कहीश.

चामरेन्द्रो मूलप्रतिमाना पगोनी पाछली फरके बंने बाही-ओना वचमां करवा, तेमनी उंचाई मूलप्रतिमाना स्कन्ध पर्यन्त करवी अने चामरेन्द्रोना पग पाछल बाहिका करवी.

चामरेन्द्रोनी बंने तरफ बाहिकामां कमलयुक्त थांभलिओ करवी, ते उपर विरालिकाओ करवी, इन्द्रोने सुन्दर अलंकारो वडे शोभित गुणोना पुंज जेवा बनाववा, आमां प्रतिमाना डावा हाथ तरफनो इन्द्र 'प्रह्लाद' अने दक्षिण विभागनो इन्द्र 'विष्णु' ए नामे ओलखाय छे.

चामरेन्द्रोनो उदय थांभलिओ जेटलो करवो, थांभलिओ उपर तिलकडा, शंवर, हाथी अने उंडाणमां फाडेल मुखवाला मगरो करवा.

ग्राहीओनो उदय ५० अने विस्तार २२ आगळनो करवो [1]हाथी उपांग सहित ६ आगलना करवा. चामरेन्द्रोनी दृष्टि मूल-प्रतिमाना स्तन सूत्रे मूकवी. इन्द्रोने अनेक आभूषणोथी अलंकृत अने अनेक रत्नालंकारो वडे सुशोभित करवा, अलंकृतविभूषितत्व एज चामरधर इन्द्रोनु लक्षण कहेवाय छे.

दोलाख्यं तोरणं कार्यं, मीनकाकाररूपिणम् ।
त्रिरथिकोर्ध्वं कार्यं, छत्रत्रयसमन्वितम् ।
अशोकपत्रोद्भव कार्यं, छत्र दण्डसमन्वितम् ॥२६॥

भा०टी०—ग्राहीओ उपर 'दोला' नामक तोरण करवु, तोरण मत्स्याकारे त्रण रथिकाओवाळुं अने त्रण छत्रो युक्त करवु तोरणमा आसोपालवना पत्रो देखाडवा अने छत्र दंड सहित करवुं.

अतस्ते (?) फणमंडपाख्य, मस्तकान्ते ततो भवेत् ।
त्रि-पंचफणः सुपार्श्वः, पार्श्वः सप्त नवस्तथा ॥२७॥
हीनफणो न कर्तव्यो-ऽधिको नैव प्रदुष्यते ।
छत्रत्रय नासाग्रेणो-त्सारे, सर्वोन्तिम भवेत् ॥२८॥
नासा-भालान्तयोर्मध्ये, कपाले वेधतः पुनः ।
चतुरशीत्यंगुला दीर्घ, उदयं पंचाशदंगुलम् ॥२९॥

---

[1] वास्तुसारमा ग्राहीओनो उदय ५१ आगळनो बताव्यो छे ज्यारे शिल्परत्नाकरोक्त परिकरलक्षणमां ४९ आगळनो आवे छे ८ गादी, ३१ काउस्सगिया अने १० तिलक मळी ८+३१+१०=४९ थाय. शिल्परत्नाकरना रूपगमा बाहुनो विस्तार पण १८ आंगळनो ज बतावेल छे पण एज वस्तु तेमा उभी प्रतिमानु 'परिकर' ए शीर्षक नीचे जुदा रूपे उपस्थित करी छे—"द्विताला विस्तरे कार्या बाहिः परिकरस्यतु"। आ श्लोकार्धमां बाहीनो विस्तार २ ताल एटले २४ आगळनो जणाये छे. आथी जणाय छे के शिल्परत्नाकरोक्त 'परिकरलक्षण'मा कोइ एक ज ग्रन्थनो आधार लीधो जणातो नथी. ए सिवाय वास्तुसारमां ग्राहीओनी जाडाई २६ आगळनी बतावी छे जे बीजे क्यां रूपी नथी

द्वंद्वास्तस्योर्ध्वे कर्तव्याः, सर्वलक्षणसंयुताः।

भा०टी०—मस्तकने अन्ते उपर फणा मण्डप करवो, सुपार्श्वनाथने ३ वा ५ अने पार्श्वनाथने ७ अथवा ९ फणवाला करवा, एथी ओछां फणो न करवां. अधिक करवामां दोष नथी. त्रण छत्रो पैकीना सर्वथी नीचेना छत्रनो उतार नाकना अग्रभागे होवो जोईये, जेथी अवलंबो उतारतां नाक अने ललाटना अंतभागे कपालनो वेध थाय.

दोला तोरणनी लंबाई ८४ आंगलनी अने उदय ५० [१]आंगलनो करवो. दोला-तोरण उपर जे जे रुपको करवानां होय ते सर्व द्वंद्वरूपे अर्थात् जे रुपक एक बाजुमां होय तेज तेनी सामे बीजी बाजुए पण करवुं, सर्व द्वंद्वो लक्षणोपेत करवां.

भामंडलं ततो मध्ये, तिलकं वाम-दक्षिणे ॥३०॥
अंगुलद्वादशं प्रोक्तं, तिलकं विस्तृतं भवेत्।
उदये षोडशं प्रोक्तं, तिलके चात्र रूपकम् ॥३१॥

उपरि छाद्यकी ज्ञेया, घंटा-कलशभूषिता।
नासिके स्तंभिकादौ च, मयूरं वाम दक्षिणे ॥३२॥

गायनस्तुंबरुः श्रेष्ठो, वंशवाद्यो रत्नशेखरः।
वीणा-वंशधराः प्रोक्ता, मध्यस्थाने इति स्मृताः ॥३३॥

---

१ वास्तुसारना परिकरलक्षणमां दोलाना उदयना अने दैर्घ्यना अंको नीचे प्रमाणे आप्या छे, उदय दोलाना प्रारंभथी २४ भागे छत्रनो प्रारंभ, छत्रनो उदय १२ भागे, शंखधरनो उदय भाग ८, वेणु पत्रवल्ली भाग ६, एम २४+१२+८+६=५० थशे, तथा दैर्घ्यमां छत्रार्ध भाग १०, कमलनाल भाग १, मालाधर १३, थांभली भाग २, वंशवीणाधरभाग ८, मध्यमां घंटा भाग २, मकरमुखसहित थांभली भाग ६, एवं १०+१+१३+२+८+२ +६=४२ थशे. आ दोलार्धनुं दैर्घ्य थयुं, पूर्ण दोलानुं दैर्घ्य आथी बमणुं ८४ भागनुं जाणवुं; वास्तुसारमां दोलानी जाडाई प्रतिमानी जाडाईथी अर्धी बतावी छे.

तिलकवाम-दक्षिणे, वसन्तराजो मालाधरः ।
अनुगो पारिजातश्च, दशांगुलप्रमाणतः ॥३४॥
भूर्लोक-भुवर्लोकाग्र-मग्रे छत्रं द्वितीयकम् ।
तृतीय लिंगमाकारं, ब्रह्मा देवाश्चतुर्थकम् ॥३५॥
दोला कनकदण्डच्छत्र-वृत्तार्धविंशांगुलम् ।
झल्लरी समौक्तिका चो-र्ध्वं कलशः सदीपिकः ॥३६॥
तत्पार्श्वयोर्गजकन्द-शुभयोर्वाम-दक्षिणे ।
कलशपल्लवयुक्त-मिन्द्रपत्रं च कारयेत् ॥३७॥
हिरण्येन्द्रद्वयं कार्यं, पुष्पाञ्जलिकलशे धृतम् ।
छत्रवृत्ते धरा इन्द्राः, शङ्ख-पूर्णा महोद्भवाः ।
कुर्वन्ति मंगलस्थानं, दुन्दुभि शङ्खमालिकाः ॥३८॥

भा०टी०—मध्यभागे भामंडल करवु अने तेनी डाबी-जमणी बने बाजुए चाहीओने मथारे चामरवाळी उपर तिलको करवां, आ तिलको विस्तारमां १२ अने उदयमां १६ आंगलना करवा अने तेमां १-१ रूपक करवु, तिलको उपर आमलसार अने कळशे करी युक्त सुशोभित एवी छाजली करवी अने नासिकमां स्तम्भिकाओनी उपली तरफ डाबी-जमणी बने तरफ मोटुं रूपक करवु, मोरना पूंछना निचला भागमां गायक, मृदंगधारी अने पावरी वगाडता श्रेष्ठ पुरुषने बनाववो अने वीणा वांसळी अने बांसरी वगाडनाराओने तिलकना मध्यस्थाने बनाववा

तिलकनी डाबी-जमणी बाजुमां (जमणा तिलकनी डाबी अने डाबा तिलकनी जमणी बाजुमां) अनुगत वसंतने मालाधररूपे आलेखवो, अने तेना अनुचर पारिजातने पण त्यां बनाववो. आ मालाधर अने पारिजात विस्तारमां १० आंगलनो करवो. आगे वीजु

छत्र भूर्लोकना लोकांशरूपे, त्रीजुं लिंगाकार छत्र ग्रहोरूपे अने चोथुं ऊर्ध्वलोक भव देवीशरूपे जाणवुं.

दोलाना सुवर्णमय दंडना छत्रनी गोलाई २० आंगलनी बनाववी.

छत्रनी निचली तरफ मोतीनी झालरी बनाववी, उपर देदीप्यमान कलश बनाववो, छत्रनी बंने तरफ शुंढमां कलश अने पल्लवोयुक्त बे हाथिओ बनाववा, पल्लवो इच्छा होय ते प्रमाणे देखाडवां, (मालाधरोनी उपर अने छत्रनी बंने तरफ शुंढमां कलशोवाला हाथियो बनावीने तेमनी उपरनी तरफ) बे हिरण्येन्द्रो (हरिणैगमेषिओ) बनाववा, तेमना हाथोमां पुष्पाञ्जलि अने कलश धारण कराववां, छत्रना उपरना भागे एक शंखधर अने तेनी बंने तरफ बे देवदुंदुभि वगाडनारा देवो बनावी तेओ शंख अने देवदुंदुभिना मांगलिक नादो करता होय तेम बताववा.

भामंडलं ततः कार्यं, छत्राधो द्वाविंशतिः ।
छत्रं दशांगुलं प्रोक्तं, द्वितीयं वसु चांगुलम् ॥३९॥

षडंगुलं तृतीयं च, चतुर्थं वेदमंगुलम् ।
एवं रथिकोद्भवं कार्यं, छत्राकारं भवेत्ततः ॥४०॥

दिव्यदेहधराः सर्वे, जिनेन्द्रभक्तिवत्सलाः ।
वादित्रैश्च समुत्पन्ना, नित्यं भूष्यंति मालिकाः॥४१॥

भामंडलं किरणं दिव्यं, तेजो मस्तके भूषितम् ।
सिद्धौ तीर्थंकराः सर्वे, ज्योतीरूपा व्यवस्थिताः ॥४२॥

दोलामस्तके कलशं, मुद्गरेव्यांल रूपकम् ।
गजशुंढासुशोभाढ्यं, अशोकपल्लवाकृति ॥४३॥

ऊर्ध्वदेशे ग्रहाः सर्वे, आदित्याद्याश्च दक्षिणे ।
परे बृहस्पत्याद्याश्च, ग्रहा धर्मं चयन्ति च ॥४४॥

भा०टी०—ते पछी छत्र नीचे २२ आगलनुं[1] भामंडल करवुं नीचेनुं छत्र निर्गमे १० आगलनु, बीजुं ८ आगलनु, त्रीजु ६ आगलनु अने चोथुं ४ आगलनुं करवु आम रथिकानी जेम उपरथी उपरनो ह्रास करवाथी छत्रनो आकार बनशे, परिकरमा आवता वंश धर-वीणाधर-शंखधरादि सर्वे दिव्य देहधारी-देवो जिनेन्द्र भक्तिमा प्रीतिरत होय छे, जाणे वादित्रोनी साथे ज जन्म्या होय तेम वादित्रो युक्त अने पुष्पमालाओथी नित्य भूषित रहे छे, माटे एमना रूपको पण एज प्रकारना करवा भामंडल एटले दिव्य तेज किरणोनो समूह के जे जिनेन्द्रना मुखने प्रकाशित करतो तेमना मस्तक पाछल एकत्रित करायेलो चमकी रह्यो होय छे ते छे, आजे सर्व तीर्थंकरो निर्वाण प्राप्त करी सिद्धिस्थानमा ज्योति स्वरूपी रहेला छे जाणे के ए वस्तुने ज सूचवतु होय तेम भामंडल दिव्य तेजःकिरणना प्रतीक समु छे.

दोलाना मस्तक भागमा कलश बनाववो, तेने मुद्गरो (मयूरो) अने हाथिओना शुंढाढडो वडे भरपूर शोभायुक्त करवो, अशोकवृक्षना पत्रो देखाडवा अने तेना ऊर्ध्वदेशमा जमणी तरफ सूर्यादि अने डाबा भागनी तरफ बृहस्पत्यादि सर्व ग्रहो देखाडवा, केमके ग्रहो पण तीर्थंकरोना धर्मप्रचारमा वृद्धि करनारा छे.

वास्तुसारोक्त परिकर-परिमाण—

सिंहासन—

१—बिंबना विस्तारथी सिंहासन दोढु, लंबु, अर्धु विस्तृत अने पाट भागनु जाडु करी तेमा ९ अथवा ७ रूपको करवा, ते वाडु

1 भामंडलनो पेमारो वास्तुसारमां ? आंगलनो जणाव्यो छे अने एनो उदय दिगम्बरग्रन्थना लक्षणमां २४ आंगलनो बतायो छे

यक्ष-यक्षिणी, बे केसरि, बे हाथी, बे चमरधारी अने वच्चे चक्रधरी ते १४-१२-१०-३-६-३-१०-१२-१४=८४ भाग सिंहासननी लंबाईना करी तेमां उक्त रूपको करवां.

२—चक्रधरी-गरुडांक देवीने नीचे धर्मचक्र, बंने बाजुमां २ हरिण अने गादीना मध्यभागे जिनलांछन.

३—सिंहासननी उंचाईना २८ भागमां कणी ४, छाजली २, हाथी १२, कणी २, अने अक्षरपट्टी ८, भाग प्रमाण उंची करवी.

पखवाडा—

१ गादी जेटला ८ भाग नीचे छोडी ३१ भाग उंचा चमरधारी वा काउस्सग्गिया करवा, ते उपर १२ भाग उंचुं तोरण-मस्तक करवुं, आ प्रमाणे पखवाडानी ऊंचाई ५१ भागनी करवी.

२ पखवाडानो विस्तार २२ भागनो करवो, जेमां १६ भागमां रूपक अने ६ भाग वरालिका समेत थांभली करवी.

३ पखवाडानी जाडाई भाग १६ नी करवी.

दोला—

१ अर्धछत्र १० भाग, कमलानाल १, मालाधर १३, थांभली २ भाग, वंश-वीणाधर ८ भाग, मध्यमां घंटा २ भाग अने मकरमुख सहित थांभली ६ भाग; एवं १०+१+१३+२+८+२+६=४२ भाग आ प्रमाणे दोलार्धनी लंबाई ४२ भागनी अने पूर्ण दोलानुं दैर्घ्य ८४ भागनुं जाणवुं.

२ छत्रभाग २४ भाग उपर, ते छत्रनो उदय १२ भाग, शंखधर ८ भाग अने वेणुपत्रवल्ली ६ भाग; आम दोलानी ऊंचाई २४+१२+८+६=५० पचास भागनी करवी.

३ छत्रत्रयनो विस्तार २० आंगल (भाग)नो अने तेनो निर्गम १० भागनो करवो.

४ भामडलनो विस्तार २२ भाग अने तेनो पेसारो ८ भागनो करवो.

५ मालाधर एक षोडशांशमा, ते उपर गजेन्द्र एक अष्टादशांशमा, बने दिशामा हरिणैगमेषी, ते पछी दुंदुभि अने शंखधर करवा, दोलानी जाडाई छत्रना निर्गम सहित बिंबथी (बिंबना विस्तारथी ?) अर्धी करवी

६ चामरधारियोनी दृष्टि स्तन सूत्र बराबर करवी जो पंचतीर्थी होय तो एज भागोथी २ काउस्सग्गिया, ते उपर २ बिंब, अने १ मूल नायक, १+२+२=५ परिकरनुं आ अर्वाचीन रूप छे, जे वास्तुसारमा संग्रहायेलु छे



परिच्छेद १४

जैनशासनदेव–लक्षणम्

यक्षाश्च यक्षदेव्यश्च, ग्रहा दिक्पतयस्तथा ।
एतेषां वाहनं रूप–मायुधादि निरूप्यते ॥३४॥

भा०टी०—यक्षदेवो, यक्ष देविओ, ग्रहो तथा दिक्पालो; आ देवोनां वाहन, रूप, आयुध आदिनुं आ परिच्छेदमां निरूपण कराय छे.

आ विषयमां १. यक्ष–यक्षिणीनो अर्थ. २. तीर्थंकरो साथे यक्ष–यक्षिणीनो संबन्ध. ३. तीर्थंकरोना मंदिरमां तेमने बेसाडवानुं कारण. ४. देवालयमां यक्ष–यक्षिणीने बेसवाने योग्य स्थान. ५. यक्ष–यक्षिणीनुं स्वरुप इत्यादि वातो आजे स्पष्टीकरण मागे छे.

पूर्वकालमां गमे तेम होय पण वर्तमान समयमां यक्ष–यक्षिणीना संबन्धमां घणुं अज्ञान अने भ्रमणाओ चाली रही छे. एटला माटे आ विषयने लगतुं थोडुंक स्पष्टीकरण करवुं आ स्थले प्रासंगिक गणाशे.

१—यक्ष ए नाम व्यंतर जातिना देव पैकी एक वर्ग विशेषनुं छे. ए वर्गना पुरुषो 'यक्ष' अने स्त्रीयो 'यक्षिणो' कहेवाय छे. आ व्यंतर जाति यद्यपि हलकी देव जातिमां परिगणित छे. छतां एना पिशाच राक्षस आदि विभागना देवो क्रूर प्रकृतिना होय छे. ज्यारे 'यक्ष' बीजा व्यंतरोनी अपेक्षाए सात्विक अने भद्रप्रकृतिवाला होय छे. पृथ्वीगत धनभंडारो, अमूल्य रत्नो अने धातुनी खाणोना द्रष्टा होवाना कारणे पूर्वे तांत्रिक युगमां घणा धनार्थी लोको आ यक्ष–यक्षिणीयोनी साधना करता हता. कल्पसूत्रना वर्णन उपरथी जणाय छे के भगवान वर्धमान स्वामी–महावीर, त्रिशला मातानी कूखे अव-

तर्पा तेज दिवसथी यक्षोए राजा सिद्धार्थना घरे धन–रत्न आदिनी वृष्टि करवा मांडी हती. उत्तराध्ययन आदि सूत्रगत "जक्खाउत्तर-उत्तरा" इत्यादि वर्णनोमा 'यक्ष' शब्दनो प्रयोग सर्वोत्तम जातिना देवोना अर्थमा करवामा आव्यो छे ए वस्तु पण आपणु ध्यान खेंचे छे

शास्त्रना वर्णनोमा ए वातनु पण निरुपण मले छे, के उत्तर दिशानो लोकपाल कुबेर के जे देवोनो भंडारी अने इन्द्रनो आज्ञा-पालक देव छे. अने "यक्षो" आ कुबेरनी आज्ञामा वर्तनारा देवो छे.

आ बधी वातोनो विचार करता आपणा हृदयमा ए वात सहजे उतरी जाय छे, के 'यक्ष' एक परोपकारी–सात्त्विक–धनाढय–कारुणिक अने क्रीडाशील देवजातिविशेषनु नाम छे, आ यक्षोनी मुखाकृति, वाहन, आयुध आदिना निरुपण उपरथी पण जणाई आवे छे के आ देव जाति भली अने क्रीडाप्रिय होवी जोईये

२ जैनोनी मान्यता प्रमाणे कोईपण तीर्थंकर केवलज्ञान पामे त्यारे तेमना पुण्यप्रकर्षना बले क्रोडो देवो तेमनी सेवामा उपस्थित थाय छे, तेमना समवसरणनु (उपदेश सभाना योग्य स्थाननु) निर्माण करे छे, अने तीर्थंकर भगवान् त्या बेसी जगत हितकारक जिन-प्रवचननो उपदेश करे छे, जे सांभळीने अनेक भव्यात्माओ प्रतिबोध पामी तेमना शासननु अनुकरण करे छे, सेंकडो स्त्री–पुरुषो ससारने त्यागी जिनेश्वर समुपदिष्ट त्यागमार्गनो स्वीकार करे छे, हजारो स्त्री-पुरुषो जिनोपदिष्ट गृहस्थ धर्मरुप त्यागमार्गमा दाखल थाय छे, ज्यारे लाखो देव मनुष्यो विरति परिणामना अभावे जिनदेवना प्रवचन उपर श्रद्धा विश्वास मात्र प्रगट करीने तेमना संघमा जोडाय छे तीर्थंकर देवोनी आ प्राथमिक सघ स्थापनामा एम तो क्रोडो देवो उपस्थित रहे छे. छता कोई एक देवयुगलने भगवन्त उपर अने तेमना शासन उपर अतिशय भक्तिभाव उभरी जता ते नित्य भग-

वंतना चरण सामीप्यमांज रही तेमना मुखदर्शनथी, तेमनी सेवाथी, तेमना धर्मशासननु वैयावृत्य करीने अने तेमना अनुयायियोने सहायता करीने पोताना जीवनने कृतार्थ करे छे. विशेष भक्त बनेल आ देवयुगलने शास्त्रकारो यक्ष-यक्षिणीना नामथी उल्लेखे छे. प्रत्येक तीर्थंकरना शासनमां आवुं यक्ष-यक्षिणीनुं युगल उत्पन्न थाय, आवुं जैनग्रन्थकारोनुं मन्तव्य छे.

३ तीर्थंकरोनी विद्यमानतामां यक्ष-यक्षिणीओनां आ युगलो तेमना चरणोमां रहेता हता. आथी तीर्थंकरनी मूर्तिओमां पण ए युगल बनाववानुं विधान चालु थयुं. १ अशोकवृक्ष, २ सुरपुष्पवृष्टि, ३ दिव्यध्वनि, ४ चामर, ५ सिंहासन, ६ भामंडल, ७ देवदुन्दुभि, अने ८ छत्र; ए प्रातिहार्यो तीर्थंकरोना समवसरणमां देवो द्वारा निर्मित थतां हतां, ते मूर्ति निर्माणमां पण कायम रह्यां, एज प्रमाणे यक्ष-यक्षिणीओ पण मूर्तिरचनामां तेना अंगरुपे मूर्तिना चरणसमीप जमणी-डावी बाजुमां बनाववानी पद्धति प्रचलित थई. जिनमूर्तिओ मंदिरोमां प्रतिष्ठित थई. त्यारथी आ यक्ष-यक्षिणी युगलो पण तेना परिकरना एकभाग तरीके देवालयमां प्रतिष्ठित थयां अने ज्यांसुधी मूर्तिओ परिकरवाली स्थापित थती हती, त्यांसुधी यक्ष-यक्षिणी युगल पण तेमना चरणसेवी तरीके मूर्तिनी साथे गर्भगृहमांज रहेतुं.

मुसलमानोना आक्रमण कालमां घणा स्थानोमां प्रतिमाओ जमीनमां भंडाराई हती, समयान्तरमां ठेकठेकाणे जमीनदोस्त थयेली ते प्रतिमाओ खोदकामो करतां बहार आवी पण त्यांसुधीमां भंडारनाराओ प्रायः परलोक पहोंची चुक्या हता. प्रतिमाओ निकले तो परिकर नहि अने कोई स्थले परिकर निकले तो ते योग्य प्रतिमा नहि, ते कालमां परिकर बनावनारा पण सारा रह्या नहि, वली परिकरना पखालमां पण मोटी महेनत; जो पुरुं ध्यान न रखाय तो

पाणी रही जाय, मेल जामी जाय, ए वधी अगवडोनो विचार करी तत्कालीन गीतार्थ पुरुषोए परिकर वगरनी प्रतिमाओनी बने तरफ १-१ तेथी न्हानी जिनप्रतिमा बेसाडीने परिकरनी अभाव पूर्ति करवा माडी घणा दीर्घकालथी ज्या प्रतिमाओ प्रतिष्ठित थयेली छे, ते वधी परिकर युक्तज छे, पण लगभग सोलमा सैका पछीना समयमा प्रतिष्ठित थयेल देवालयोमा परिकरना स्थाने त्रिगडा (३ प्रतिमाओ) स्थापन थयेला जोवाय छे, अने आज पर्यंत एज प्रथा प्रचलित छे.

ज्यारथी परिकरनुं स्थान त्रिगडे लीधु त्यारथी परिकरगत चमरधरादि अन्यदेवोनी साथे यक्ष-यक्षिणीना युगलो पण जैन-देवालयोमाथी अदृश्य थया सोलमीथी ओगणीसमी शताब्दी सुधीमां प्रतिष्ठित थयेल देवालयोमा तमने यक्ष-यक्षिणी युगलो भाग्येज नजरे पडशे. छेल्ला लगभग १०० वर्षनी अंदर तपागच्छना श्रीपूज्योए, यतिओए अथवा साधुओए प्रतिष्ठित करेल जैनदेवालयोमा माणि-भद्र अने चक्रेश्वरीनी स्थापना थवा माडी छे पछीथी धीरेधीरे मूल-नायकना यक्ष-यक्षिणीना युगलो पण जूदां स्थपावा माडया. खरतर-गच्छीय प्रतिष्ठाकारकोए प्रथम क्षेत्रपाल अने भैरवने जिनालयमा स्थान आप्यु अने पछी तेमगे पण मूलनायकना यक्ष-यक्षिणीने देवालयोमा स्वतन्त्र आसन आप्युं छे.

४ उपरना विवेचनथी जणाशे के जैनदेवालयोमा यक्ष-यक्षिणीनुं स्थान तेमा प्रतिष्ठित मूलनायक तीर्थंकरना सेवक तरीकेनुं छे, नहि के देवालयना अधिष्ठाता देव तरीकेनु, अथवा तो देवालयना रक्षक देव तरीकेनु, पण आजे आपणा समाजमा ए विषयनु घोर अज्ञान प्रवर्ती रह्यु छे घणा खरा प्रतिष्ठाकारक पुरुषो पण आ देवयुगलनी वास्तविक स्थिति न समजता एमने भगवन्त तीर्थंकरना तेमज एमना देवगृहना रक्षक रूपे मानी भगवन्तना स्थानथी अति दूर गूढमडपना

द्वारनी वहार वंने वाजुना आलाओमां वेसाडे छे. जाणे के भगवंतना द्वारपाल अने द्वारपालिका होय.

जिनप्रतिमा परिकरनी साथे राखवानो रिवाज हतो; त्यांसुधी आ देवयुगल भगवंतना चरणसमीपमां रहेतुं हतुं. पण आजे परिकर उठी गयुं छे, त्रण मूर्तिओ गभारामां वेसाडाय छे अने यक्ष-यक्षिणी जुदा वेसाडाय छे. एटलुं ज नहि, आ युगलनी मूर्तिओ परिकरगत एमनी मूर्तिओ करतां म्होटी होय छे. आ स्थितिमां एमने गभारामां वेसाडवा जेटलुं स्थान रहेतुं नथी. तेथी गभारानी वहार कोलीना आलाओमां गूढ मंडपमां, अने छेवटे तेनी वहार चोकि मंडपना आलाओमां वेसाडवानी रीति चाली नीकली छे. पण आनो अर्थ ए नथी के यक्ष-यक्षिणीने भगवंनथी दूर ज वेसाडवा, खरी रीते तो एओ जेटला भगवन्तनी पासे होय तेटला सारा; भगवन्तना सामीप्यमांज ए प्रसन्न रहेनारा छे.

५ यक्ष-यक्षिणीना युगलोनुं स्वरुप वर्णन तीर्थंकरोना चरित्रोमां, प्रतिष्ठा पद्धतिओमां अने शिल्पना आकार ग्रन्थोमां पण दृष्टिगोचर थाय छे.

तीर्थंकर चरित्रोक्त अने प्रतिष्ठा ग्रन्थोक्त यक्ष-युगलोनुं वर्णन लगभग सरखुं छे, पण शिल्पशास्त्रोक्त वर्णनमां घणो मतभेद छे, नामो आयुधो अने वाहनोने अंगे आ विषयमां प्रतिष्ठा कल्पो अने शिल्पग्रन्थो मौलिक मतभेद धरावे छे, तेथी अमो आ वंने पद्धतिओने अनुसारे आ यक्ष-यक्षिणीयोनुं स्वरुप वर्णन करशुं. अत्र एक वातनो निर्देश करवो अत्यावश्यक छे के अमोए आ युगलोना स्वरुप वर्णनमां प्रतिष्ठा पद्धतिओ पैकी श्री पादलिप्तसूरिनी निर्वाण कलिकाने अने शिल्पग्रन्थो पैकी अपराजितपृच्छाने मुख्य आधार ग्रन्थ मान्यो छे. आ ग्रन्थोमां करेल वर्णनानुसारे अमो २४ यक्षो अने यक्षिणीओनुं स्वरूप वे यंत्रकोमां आपीए छीए. आमां १ लुं यंत्रक निर्वाणकलिकानुसारी अने वीजुं यंत्रक अपराजित पृच्छानुसारी छे.

यक्ष-यक्षिणी यंत्रक १

१-आदिनाथ			२ अजितनाथ			३ संभवनाथ		
	यक्ष	यक्षिणी		यक्ष	यक्षिणी		यक्ष	यक्षिणी
नाम	गोमुख	अप्रतिचक्रा	नाम	महायक्ष	अजिता	नाम	त्रिमुख	दुरितारि
		(चक्रेश्वरी २)			(अजितबला)	मुख	३	१
मुख	वृषभ सदृश	१	मुखः	४	१	नेत्र	६	२
वर्ण	सुवर्णतुल्य	सुवर्णतुल्य	वर्ण.	श्याम	गौर	वर्ण	श्याम	गौर
वाहन	गज	गरुड	वाहनः	हस्ती	लोहासना	वाहन	मयूर	मेष
हस्त	४	८	हस्त	८	४			(महिष १)
दक्षिण-	वरद	वरद	दक्षिण	वरद				(मघवा २)
हस्तयोः	अक्षसूत्र	बाण	हस्तेषुः	मुद्गर	वरद	हाथ	६	४
		चक्र		अक्षसूत्र	पाश		नकुल	
		पाश		पाश		द. ह.	गदा	वरद
वाम	बीजपूर	धनु		बीजपूर	बीजपूर		अभय	अक्षसूत्र
हस्तयोः	पाश	वज्र	वाम-	अभय	अङ्कुश		बीजपूर	
		चक्र	हस्तेषुः	अङ्कुश		वा. ह.	नाग	फल
		अङ्कुश		शक्ति			अक्षसूत्र	अभय

४ अभिनन्दन			५ सुमतिनाथ			६ पद्मप्रभ		
	यक्ष	यक्षिणी		यक्ष	यक्षिणी		यक्ष	यक्षिणी
नाम	ईश्वर	कालिका (काली ?.२	नाम	तुंबरु	महाकाली	नाम	कुसुम	अच्युता (श्यामा)
वर्ण	श्याम	श्याम	वर्ण	श्वेत	सुवर्णवर्ण	वर्ण	नील	श्याम
वाहन	गज	पद्मासन			[illegible]	वाहन	मृग	नर
हाथ	४	४	वाहन	गरुड	पद्मासन २	हाथ	४	४
			हाथ	४	४			
द. ह.	मातुलिंग अक्षसूत्र	वरद पाश	द. ह.	वरद शक्ति	वरद पाश	द. ह.	फल अभय	वरद [illegible]
वा. ह.	नकुल अंकुश	नाग अंकुश	वा. ह.	गदा नागपाश	मातुलिंग अंकुश	वा. ह.	नकुल अक्षसूत्र	[illegible] अभय

७ सुपार्श्वनाथ			८ चन्द्रप्रभ			९. सुविधिनाथ		
	यक्ष	यक्षिणी		यक्ष	यक्षिणी		यक्ष	यक्षिणी
नाम	मातंग	शान्ता	नाम	विजय	भ्रुकुटि (ज्वाला २)	नाम	अजित	सुतारा
वर्ण	नील	सुवर्णसम	वर्ण	हरित	पीत	वर्ण	श्वेत	गौर
वाहन	गज	गज	नेत्र	३		वाहन	कूर्म	वृषभ
हस्त	४	४	वाहन	हंस	वराह (हंस) (निराल) (बिडाल १) (निराल जीव-२)	हस्त	४	४
द. ह.	वित्त (वज्र २) पाश (अहिपाश-२)	वरद अक्षसूत्र	हस्त	२	४	द. ह.	मातुलिंग अक्षसूत्र	वरद अक्षसूत्र
वा. ह.	नकुल अंकुश	शूल (त्रिशू-१) अभय	द. ह.	चक्र	खड्ग मुद्गर	वा. ह.	नकुल कुन्त	कलश अंकुश
			वा ह	मुद्गर	फलक परशु			

१०. शीतलनाथ	यक्ष	यक्षिणी
नाम	ब्रह्मा	अशोका
मुख	४	१
नेत्र	३	२
वर्ण	धवल	(नीलवर्णी-२) मुद्गवर्णी
वाहन	पद्मासन	पद्मवाहना
हस्त	८	४
द. ह.	मातुलिंग, मुद्गर, पाश, अभय	वरद, पाश
वा. ह.	नकुल, गदा, अंकुश, अक्षसूत्र	फल (कर), अंकुश

११. श्रेयांसनाथ	यक्ष	यक्षिणी
नाम	ईश्वर (मनुज—२)	मानवी (गोमेधा—१) (श्रीवत्सा-२)
वर्ण	धवल	गौर
नेत्र	३	२
वाहन	वृषभ	सिंह
हस्त	४	४
द. ह.	मातुलिंग, गदा	वरद, अंकुश-१, मुद्गर (वरद-१)
वा. ह.	नकुल (कलश—१), अक्षसूत्र (अंकुश—१)	कलश (कुलिश-२), मुद्गर—१, अंकुश (नकुल—१)

१२. वासुपूज्य	यक्ष	यक्षिणी
नाम	कुमार	प्रचण्डा (प्रवरा—२)
वर्ण	श्वेत	श्याम
वाहन	हंस	अश्व
हस्त	४	४
द. ह.	मातुलिंग, बाण	वरद, शक्ति
वा. ह.	नकुल, धनुष्य	पुष्प (धनु—२), गदा (नाग—२)

	१३ विमलनाथ		१४ अनन्तनाथ		१५ धर्मनाथ	
	यक्ष	यक्षिणी	यक्ष	यक्षिणी	यक्ष	यक्षिणी
नाम	षण्मुख	विदिता (विजया २)	पाताल	अङ्कुशा	किंनर	कन्दर्पा (पन्नगा २)
मुख	६	१	३	१	३	१
वर्ण	श्वेत	हरितालवर्णा	रक्त	गौर	रक्त	गौर
वाहन	मयूर	पद्मारूढा (पद्मासना-२)	मकर	पद्मवाहना (पद्मासना-२)	कूर्म	मत्स्य
हस्त	१२	४	६	४	६	४
द. ह.	फल, चक्र बाण, खड्ग पाश अक्षसूत्र	बाण पाश	पद्म खड्ग पाश	खड्ग पाश	बीजपूर गदा अभय	उत्पल अंकुश
वा. ह.	नकुल, चक्र, धनु,-फलक (फल-१) अङ्कुश अभय-	धनु नाग	नकुल फलक अक्षसूत्र	चर्मफलक अङ्कुश	नकुल पद्म अक्षमाला	पद्म अभय

१६. शान्तिनाथ	यक्ष	यक्षिणी
नाम	गरुड (किडिवा-१)	निर्वाणा (निर्वाणी-१)
वाहन	वराह	पद्मासना
मुख	वराह	
वर्ण	श्याम	गौर
हस्त	४	४
द. ह.	बीजपूर, पद्म	पुस्तक, उत्पल
वा. ह.	नकुल, अक्षसूत्र	कमंडलु, कमल

१७. कुन्थुनाथ	यक्ष	यक्षिणी
नाम	गन्धर्व	बला (अच्युता-२)
वर्ण	श्याम	गौर
वाहन	हंस	मयूर
हस्त	४	४
द. ह.	वरद, पाश	बीजपूर, शूल (त्रिशूल १)
वा. ह.	मातुलिंग, अंकुश	भुपुण्ढि, पद्म

१८. अरनाथ	यक्ष	यक्षिणी
नाम	यक्षेन्द्र	धारणी (धारिणी-२)
मुख	६	
नेत्र	३	
वर्ण	श्याम	कृष्ण नीलवर्णी
वाहन	शंबर (शंख-१-२)	पद्मासन
हस्त	१२	४
द. ह.	मातुलिंग, बाण, खड्ग, मुद्गर, पाश, अभय	बीजपूर, उत्पल
वा. ह.	नकुल, धनुष्य, चर्मफलक, शूल, अंकुश, अक्षसूत्र	पाश (पद्म-१-२), अक्षसूत्र

१९. मल्लिनाथ	यक्ष	यक्षिणी
नाम	कुबेर (कुमार-१) (कूबर-२)	वैरोट्या
मुख	४ गरुडसदृश	२
वर्ण	इन्द्रधनु व०	कृष्णवर्णा
वाहन	गज	पद्मासना
हस्त	८	४
द ह	वरद पाश (परशु १-२) चाप (शूल-१-२) अभय	वरद (मुक्ता-माला) अक्षसूत्र (वरद)
वा ह	बीजपूर शक्ति मुद्गर अक्षसूत्र	मातुलिंग शक्ति

२० मुनिसुव्रत	यक्ष	यक्षिणी
नाम	वरुण	वरदत्ता (१-२) (नर १) (अच्छुप्ता २)
मुख	४ जटामंडित शिर	१
नेत्र	२	२
वर्ण	धवल	गौर
वाहन	वृषभ	पद्मासनारूढा (भद्रासनारूढा १-२)
हस्त	८	४
द ह.	मातुलिंग गदा, बाण शक्ति	वरद अक्षसूत्र
वा. ह.	नकुल पद्म, धनु परशु (पाश-१-२)	बीजपूर कुंत (शूल-१ २)

२१ नमिनाथ	यक्ष	यक्षिणी
नाम	भृकुटि	गान्धारी
मुख	४	१
नेत्र	३	२
वर्ण	हेमवर्ण	श्वेतवर्ण
वाहन	वृषभ	हंस
हस्त	८	४
द ह	मातुलिंग शक्ति मुद्गर अभय	वरद खड्ग
वा॰ह	नकुल परशु वज्र अक्षसूत्र	बीजपूर (कुंत-२) कुंभ (फल-१)

२२. नेमिनाथ		
	यक्ष	यक्षिणी
नाम	गोमेध	(कुष्माण्डी) (अंबा-२)
मुख	३	१
वर्ण	श्याम	कनकवर्णा
वाहन	पुरुष	सिंह
हस्त	६	४
द. ह.	मातुलिंग, परशु, चक्र	मातुलिंग (आम्रलुंबि -१-३), पाश
वा.ह.	नकुल, शूल, शक्ति	पुत्र-(अं), अंकुश (पु.)

२३. पार्श्वनाथ		
	यक्ष	यक्षिणी
नाम	पार्श्व (वामन-२)	पद्मावती
मुख	गजसदृश (४ मु-२)	
मस्तक	सर्पफणा-मंडित	
वर्ण	श्याम	कनकवर्णा-२ (रक्तवर्णा-१)
वाहन	कूर्म	कुर्कुटसर्प
हस्त	४	४
द. ह.	बीजपूर, सर्प	पद्म, पाश
वा. ह.	नकुल, सर्प	फल (क.), अंकुश

२४. महावीर		
	यक्ष	यक्षिणी
नाम	मातंग	सिद्धायिका
वर्ण	श्याम	हरितवर्णा
वाहन	गज	सिंह (हंस-१) (सिंह २)
हस्त	२ (४-२-१)	४
द. ह.	नकुल	द. { पुस्तक, अभय
वा. ह.	बीजपूर	वा. { मातुलिंग, बाण (वीणा-२)

४ अभिनन्दन		
[illegible]	यक्ष	यक्षिणी
नाम	४ चतुरानन-	वज्रशृंखला
वाहन	हंस	हंस
हस्त	४	४
	नाग	नागपाश
	पाश	अक्षसूत्र
	वज्र	फल (क)
	अंकुश	वरद

५ सुमतिनाथ.		
	यक्ष	यक्षिणी
नाम	तुंबरु	पुरुदत्ता
वाहन	गरुड	श्वेतहस्ती
वर्ण		श्यामवर्णा
	स्वरूप-सर्पहार	
हस्त		४
	सर्प सर्प फल वरद	वज्र (च) चक्र (व) फल वरद

६ पद्मप्रभ.		
	यक्ष	यक्षिणी
नाम	कुसुम	मनोवेगा
वाहन	मृग	अश्व
वर्ण		कनकवर्णा
हस्त	२	४
	गदा	शक्ति (अशनि)
	अक्ष	शंख (चक्र) फल वरद

७ सुपार्श्वनाथ			८ चन्द्रप्रभ			९. सुविधिनाथ		
	यक्ष	यक्षिणी		यक्ष	यक्षिणी		यक्ष	यक्षिणी
नाम	मातग	कालिका	नाम	विजय	ज्वाला	नाम	अजित	महाकाली
वर्ण		कृष्ण श्वेतवर्णा			मालिनि		(जय)	
वाहन	मेषासन	पद्मासन	वर्ण		कृष्णवर्णा	वर्ण		कृष्णवर्णा
		वृषारूढा (महिष)	वाहन	कपोत	महामहिषस्था	वाहन	कूर्म	कूर्म
हस्त	२	४	हस्त	४	८	हस्त	४	४
		घंटा		परशु	त्रिशूल			
	गदा	त्रिशूल		पाश	पाश,		शक्ति (४ वज्र	वज्र,
	पाश	फल		अभय	अंकुश,		अक्ष गदा वर	मुद्गर,
		वरद		वरद	धनु,		फल अभय)	अभय
		हस्त ८			बाण, चक्र,		वरद	
		१ त्रिशूल, २			अभय, वरद,			
		पाश, ३ अंकुश			(४ हस्ता			
		४ धनु, ५ शर			घण्टा, त्रिशूल,			
		६ चक्र, ७			फर अने			
		अभय, ८ वरद			कर)			

१०. शीतलनाथ.			११. श्रेयांसनाथ.			१२. वासुपूज्य.		
	यक्ष	यक्षिणी		यक्ष	यक्षिणी		यक्ष	यक्षिणी
नाम	ब्रह्मा	मानवी	नाम	ईश्वर (यक्षेश) (किन्नरेश)	गौरी	नाम	कुमार	गान्धारी
वर्ण	श्वेत	श्यामवर्णा	वर्ण	श्वेत	कनकाभा	वर्ण		श्यामवर्णा
वाहन	हंस	शूकर	वाहन	वृषभ	कृष्णहरिण	वाहन	मयूर	नक्र
हस्त	४	४	हस्त	४	४	हस्त	४	२
	पाश	पाश		त्रिशूल	पाश		धनु,	अभय,
	अंकुश	अंकुश		अक्ष	अंकुश		बाण,	वरद.
	अभय	फल		फल	पद्म		फल,	(पद्म
	वरद	वरद		वरद	वरद		वरद,	फल)

१३ विमलनाथ

	यक्ष	यक्षिणी
नाम	षण्मुख	वैरोट्या
मुख	६	
वर्ण		श्यामा
वाहन		व्योमयानगा
हस्त	६	६
	वज्र, १ नर	१
	वज्र, २ खड्ग	२ अर्ग
	धनु, ३ खेटक	३ खड्ग
	बाण, ४ नर	४ खेटक
	फल, ५ धनु	५ धनुः
	वरद, ६ बाण	६ बाण

१४ अनन्तनाथ.

	यक्ष	यक्षिणी
नाम	पाताल (त्रिमुख)	अनंतागति (अनतमती)
वर्ण		सुवर्णा
वाहन		हंसासना
हस्त	६	४
	१ वज्र	धनु
	२ अकुश	बाण
	३ धनु	फल
	४ बाण	वरद
	५ फल	
	६ वरद	

१५ धर्मनाथ.

	यक्ष	यक्षिणी
नाम	किन्नर	मानवी
वर्ण		रक्तवर्णा
वाहन		व्याघ्र
हस्त	६	६
	पाश	त्रिशूल
	अकुश	पाश
	धनु	चक्र
	बाण	डमरुक
	फल	फल
	वर	वरद

१६. शान्तिनाथ.	यक्ष	यक्षिणी
नाम	गरुड	महामानसी
वर्ण		सुवर्णाभा
वाहन	शूक	पक्षिराज (गरुड ?)
हस्त	४	४
	पाश	शर
	अंकुश	धनुः
	फल	वज्र
	वरद	चक्र.

१७. कुन्थुनाथ.	यक्ष	यक्षिणी
नाम	धर्पक (गन्धर्व)	जया
वर्ण		कनकवर्णा
वाहन	कन्यासन (शुकासन)	कृष्णशूकर
हस्त	४	६
	पद्म	वज्र
	अभय	चक्र
	फल	पाश
	वरद	अंकुश
		फल
		वरद

१८. अरनाथ.	यक्ष	यक्षिणी
नाम	(यक्षेश) क्षेत्रयक्ष (मातंग)	विजया
वर्ण		स्वर्णवर्णा
वाहन	(खरासन) वगासन	सिंहासना
हस्त		४
	वज्र	वज्र
	चक्र	चक्र
	धनुः	फल
	बाण	सर्प
	फल	
	वरद	

१९. मल्लिनाथ		
	यक्ष	यक्षिणी
नाम	(कुबेर) कुम्बरी	अपराजिता
वर्ण		श्याम
मुख	चतुर्मुख	४
वाहन	सिंह	अष्टापद
हस्त		८
	पाश	खड्ग
	अंकुश	खेटक
	फल	फल
	वरद	वरद

२० मुनिसुव्रत		
	यक्ष	यक्षिणी
नाम	वरुण	नरुरुपिणी (पा)
वर्ण		स्वर्णवर्णा
वाहन		सर्प
हस्त		२
	पाश	खड्ग
	अकुश	खेटक
	धनु	
	बाण	
	सर्प	
	वज्रा	

२१ नमिनाथ.		
	यक्ष	यक्षिणी
नाम	भृकुटि	चामुण्डा
वर्ण		रक्तवर्णा
वाहन		मर्कट (वानर)
हस्त		८
	१ गज	त्रिशूल
	२ शक्ति	खड्ग
	३ वज्र	मुद्गर
	४ खेटक	पाश
	५ अभय	वज्र
	६ डमरु	चक्र
		डमरुक
		अक्षसूत्र

	२२. नेमिनाथ.			२३. पार्श्वनाथ.			२४. महावीर.	
	यक्ष	यक्षिणी		यक्ष	यक्षिणी		यक्ष	यक्षिणी
नाम	(गोमेध) गोमय	कूर्मी (अंबिका)	नाम	पार्श्व	पद्मावती	नाम	मातंग	सिद्धायिका
वर्ण		हरितवर्णा	वर्ण	सर्परूप श्याम	रक्तवर्णा	वर्ण		कनकवर्ण
वाहन		सिंहासने (सिंहसंस्था)	वाहन	कूर्म	पद्मासना कुर्कुटोपरिस्था।	वाहन	हस्ती	भद्रासन
हस्त	६	२	हस्त	६	४	हस्त	२	२
	धनु बाण मुद्गर फल वज्र वरद	अक्षफल वरद पुत्रोत्संगत		(धनुः बाण भुषुण्डि मुद्गर फल वर)	पाश अंकुश पद्म वरद		१ वरद २ फल	१ पुस्तक २ पुस्तक (पुस्तक-अभय)

खुलासो—

उपर्युक्त बे यक्ष यक्षिणी कोष्टको पैकीनुं कोष्टक पहेलुं निर्वाण-कलिकादि जैन विधि ग्रन्थोने अनुसारे छे, आ कोष्टकमा पण ग्रन्थान्तरना पाठान्तरो ( ) आ ब्रेकेटमा सूचव्या छे, वांचक गणे आ कोष्टकना मूल पाठ प्रमाणे ज यक्ष-यक्षिणीओना स्वरूप अने आयुधादि बनाववा जोइये.

कोष्टक बीजुं प्राचीन शिल्पग्रन्थोना आधारथी तैयार करेलुं छे, आ कोष्टक प्रमाणे आपणे आज काल यक्ष यक्षिणीओनी मूर्तिओ करावता नथी, छतां प्राचीन कालीन कोइ देव-देवीनी मूर्ति मली आवे तो तेने ओलखवा माटे आ कोष्टक पण उपयोगी थइ पडशे एम धारीने आ बीजुं कोष्टक आपेल छे, एम जाणवु

दशदिक्पाल–नवग्रहलक्षण

दशदिक्पालयन्त्रकम्						
					आयुधौ	
नं.	नाम	वर्ण	वाहन	हस्त	द. हस्ते	वामहस्ते
१	इन्द्र	पीत	ऐरावत	२	वज्र	वज्र
२	अग्नि	अग्निवर्ण सप्तशिख	मेष	२	शक्ति	(शक्ति)
३	यम	कृष्णवर्ण	महिष	२	दंड	(दंड)
४	निर्ऋति	हरित	शव	२	खड्ग	(खड्ग)
५	वरुण	धवल	मकर	२	पाश	(पाश)
६	वायु	सित	मृग	२	ध्वज	(ध्वज)
७	कुबेर	अनेकवर्ण	नवनिधि	२	निचुलक	गदा तुंदिल
८	ईशान	धवल	वृषभ	२	शूल	(शूल) त्रिनेत्र
९	नाग	श्याम	पद्मवाहन	२	उरग	(उरग)
१०	ब्रह्मा	धवल	हंस	२	कमंडलु	(कमंडलु)

नवग्रह यन्त्रकम्						
नं	नाम	वर्ण	वाहन	हस्त	आयुधौ	
					द० हस्त	वामहस्ते
१	आदित्य	हिंगुलवर्ण	ऊर्ध्वस्थित	२	कमल	कमल
२	सोम	श्वेतवर्ण		२	अक्षसूत्र	कुंडिका
३	मंगल	रक्तवर्ण		२	अक्षसूत्र	कुंडिका
४	बुध	पीतवर्ण		२	अक्षसूत्र	कुंडिका
५	गुरु	पीतवर्ण		२	अक्षसूत्र	कुंडिका
६	शुक्र	श्वेतवर्ण		२	अक्षसूत्र	कमंडलु
७	शनैश्चर	ईषत्कृष्ण	(लम्बकूर्च-किंचित् पीन)	२	अक्षमाला	कमंडलु
८	राहु	अतिकृष्ण	(अर्द्ध कायरहित)	२	अर्धमुद्रा	अर्धमुद्रा
९	केतु	धूम्रवर्ण		२	अक्षसूत्र	कुंडिका

षाडशविद्यादेवीलक्षणज्ञापकं यन्त्रकम्

नं.	नाम	वर्ण	वाहन	हस्त	आयुधे द.हस्तयोः		आयुधे : वामहस्तयोः	
१	रोहिणी	धवला	सुरभि	४	अक्षसूत्र	बाण	शंख	धनुः
२	प्रज्ञप्ति	श्वेतवर्णा	मयूर	४	वरद	शक्ति	मातुलिंग	शक्ति
३	वज्रशृंखला	शंखवर्णा	पद्मवाहना	४	वरद	शृङ्खला	पद्म	शृंखला
४	वज्रांकुशा	कनकवर्णा	गज	४	वरद	वज्र	मातुलिङ्ग	अंकुश
५	अप्रतिचक्रा	ताडद्वर्णा	गरुड़	४	चक्र	चक्र	चक्र	चक्र
६	पुरुषदत्ता	कनकावदात	महिषी	४	वरद	असि	मातुलिङ्ग	खेटक
७	काली	कृष्णा	पद्मासना	४	अक्षसूत्र	वरद (गदा)	वज्र	अभय
८	महाकाली	तमालवर्णा	पुरुष	४	अक्षसूत्र	वज्र	अभय	घंटा

९	गौरी	कनकाभा	गोधा	४	वरद्	मुसल कमल ता	अक्षमाला	कुवलय
१०	गान्धारी	नीलवर्णा	कमल	४	वरद हस्ता	मुसल (कमल ता)	अभय (अक्षमाला ता.)	कुलिश (कुवल ता)
११	सर्वास्त्र–महाज्वाला	धवलवर्णा	वराह	असंख्य	असंख्य प्रहरणयुत हस्ता (द्विभुजा)	खड्ग परशुयुक्त दक्षिणकरा	असंख्य प्रहरण युतवाम हस्ता च ता	
१२	मानवी	श्यामवर्णा	कमल	४	वरद्	पाश	अक्षसूत्र	विटप
१३	वैरोटया	श्यामा	अजगर	४	खड्ग	पादपती उरग	खेटक	अहि (असि.ता)
१४	अच्छुप्ता	तडिद्वर्णा	तुरग	४	खड्ग	बाण	धनुः (खेटक)	खेटक (असि)
१५	मानसी	धवला	हस	४	वरद्	वज्र	अक्षवलय	अशनि
१६	महामानसी	धवला	सिंह (ता. प हस)	४	वरद्	असि	कुण्डिका	फलक

भाव ए छे के देव अने पूजकना नक्षत्रोनी योनियो सर्प अने नोलिया जेवी जाति वेरवाली न होय, गणो देव-राक्षस अथवा मानव राक्षस जेवा वैरवाला न होय, राशियो-एक बीजीथी छठी-आठमी, नवमी-पांचमी, के बीजी-बारमी न होय; पूजक देवनो कर्जदार न होय, बेना नामना प्रथमाक्षरना वर्गो एक बीजाथी पांचमा न होय, अने बंनेना नक्षत्रो एक नाडिमां न होय; ते देव अने धनिकने धारणागति शुभ छे एम जाणीने ते नामना देवनी नवी प्रतिमा भराववी.

पूर्वोक्त श्लोकमां " नूतन बिम्ब विधाने " आम नवीन बिंब भरावतां षडवर्ग जोवानो निर्देश छे. पण प्राचीन प्रतिमा पण जेना घरमां अथवा जे गाममां प्रतिष्ठित करवी होय तेना नामथी अथवा ते गामना नामथी षड्वर्ग शुद्ध होय ते स्थापन करवी सारी छे, गणवैर, योनिवैर, नाडिवेध आदि दोषयुक्त प्रतिमाओ प्राचीन छतां घणे स्थाने हानिकर साबित थई छे, माटे मूर्ति भले प्राचीन होय तथापि षडवर्ग शुद्ध होय ते ज मूलनायकना स्थाने प्रतिष्ठित करवी. जे व्यक्तिनुं जन्मनक्षत्र जाणवामां होय तेनी योनि, गण, राशि अने नाडीवेध;-आ ४ बाबतो जन्मनक्षत्रथी जोवी, पण १ वर्ग अने २ लहेणुं आ बाबतो जिननी जेम धनिकनुं पण प्रसिद्ध नाम बीजुं होय तो ते प्रसिद्ध नामना नक्षत्रथी जोवी.

जेना जन्मनक्षत्रनी खबर न होय तेनी योनि, गण, आदि सर्व प्रसिद्ध नामना नक्षत्रथी ज जोवुं.

स्पष्टीकरण-कृत्तिकादि जन्मनक्षत्रानुसारी अजा आशा आदि नाम होय तेने यथासंभव " अआ " नीचेना पाछल आपीशुं ते पहेला बीजा अथवा त्रीजा कोष्टकमां लखेल जिन नामोनी साथे

मेल सारो छे अेम समजवुं. परतु जन्मनक्षत्र तो कृत्तिकादि छनां तेनुं नाम ते नक्षत्रना आ अक्षरोने अनुसारे नथी पण ' टोहो, कान्हा, चाचा ' आदि प्रसिद्ध छे, तेमाने त्रण कोष्टक लिखित नामो पैकी कोईनी साथे लहेणु, कोइनी साथे वर्ग, तो कोईनी साथे वने वातो पण मलती नथी, तेथी फरीथी ऋषभादि २४ जिननामोनी साथे जोता घणो ज विलंब थाय अे कारणे चोथा कोष्टकमां ते जिन-नामो लखेला छे, के जेमनी साथे मथारे लखेल अक्षरोना नक्षत्र-वाला माणस के नामनी साथे योनि, गण, राशि, अने नाडिनो मेल छे, जो तेना प्रसिद्ध नामाक्षर वर्गथी चोथा कोष्टकमां लखेल जिन नामो पैकीना कोइ नाम के नामोनी साथे लहेणुं मलतु होय अने वर्ग वैर न होय तो आ कोष्टकस्थित नाम अथवा नामो अनुकूल छे अेम कही शकाय अेटला माटे आ कोष्टकमां चतुर्वर्ग शुद्ध, अथवा शुद्ध प्रायः जिननामो लखेला छे.

वर्ग विरोध दोषना कारणे ' ऊव-मव ' (ऊव अेटले वर्गमेल नथी मव एटले धनिकनो वर्ग बलवान छे) इत्यादि संकेत करीने तृतीय प्रमुख कोष्टकोमां लखेला जिननामोनी साथे धनिकना प्रसिद्ध नामथी वर्ग मैत्री होय तो ते नामो प्रथमादि मार्गे जाणवां.

नाडिवेध तो सर्वत्र अवश्य टालवो ज जोईये

संज्ञा विवरण—

जेम क का, कि की, कु कू, के कै, को कौ, अेम 'क' व्यञ्जननी जोडे ह्रस्व-दीर्घ स्वरो लगाडी १० अक्षरो करवामां आव्या छे ते ज प्रमाणे 'ख' ने पण ह्रस्व-दीर्घस्वरो लगाडीने 'ख खा खि खी खु खू खे खै खो खौ' आ प्रमाणे १० अक्षरो बनाववा, ह्रस्वाक्षरो जे कोठामां होय तेना सवर्ण दीर्घ पण ते ज कोठामां समजवा, जेम 'गु-गि' ना

कोठामां 'गगा-गिगी', 'गु-गे' ना कोठामां 'गुगू-गे गै', तथा 'गो' ना कोठामां 'गो गौ' इत्यादि.

ज्यां 'घ' 'छ' आदि अेक ज अक्षर लखेल छे, त्यां १० नो आंक छे, एथी समजवानुं के आना 'घ घा घि घी घु घू घे घै घो घौ' आ दशे अक्षरो ए कोठामां छे ज्यां 'ऽता, ऽयो, ऽग, ऽव' इत्यादि छे, त्यां 'ऽ' ए निषेध अर्थमां लुप्त अकार छे 'ता' 'यो,' 'ग,' 'व,' अक्षरो अनुक्रमे धनिकनी 'तारा-योनि-गण अने वर्ग' वाचक छे. आ अक्षरोनी आदिमां आवेल 'ऽ' अर्थात् 'अकार' तारायोनि-गणवर्गना आनुकूल्यनो निषेध सूचवे छे. अर्थात् 'ऽता' एटले ताराबलनो अभाव, इत्यादि.

ज्यां 'ऽता' लखेल होय त्यां 'धनीकनी' अने ज्यां 'ऽदेता' होय त्यां 'देवनी तारा सारी नथी' एम समजवुं. 'ऽता' मां देवनी अने 'ऽदेता' मां धनिकनी तारा अनुकूल छे ए अर्थतः सिद्ध समजवुं, परंतु धारणागतिमां 'तारादोष' विचारातो नथी, बिंब निर्माणना अधिकारमां योनि आदि ६ वातो ज जोवानुं कथन छे. पूज्य श्री गुणरत्नसूरिजीए धारणायंत्रकोमां तारादोष लख्यो छे पण तेनो हेतु समजातो नथी, अहिं लखवानुं कारण तो तेमना यंत्रकनुं अनुसरण मात्र छे, एथी ज 'ऽदेता' इत्यादि 'तारादोष' जणावेल होवा छतां ते जिननामो प्रथम यंत्रोमां जणावेलां छे.

ज्यां देव तथा धनिकनुं नक्षत्र एक ज छे त्यां योनि आदि सर्व वातोनी शुद्धि होवाथी, तेमज घणा पूर्वाचार्योनी संमतिथी ग्राह्य होवा छतां आजकाल ए विषयमां केटलाको विवाद करे छे, ते विवादना निवारणार्थे प्रथम बीजां नामो ग्राह्य थाओ ए आशयथी तेवां नामो निर्दोष छतां प्रथम भागे लखेल बीजा नामोना अन्तमां लख्यां छे.

'प्री०६-८।प्री०२-१०' इत्यादि स्थले देव तथा धनिकना राशिपतियोने परस्पर प्रीति छे एम समजवु, ज्यां ७-७ आदिमा राशि मैत्री छे त्यां राशिपति मैत्रीनो विचार कर्यो नथी, पण ज्या षडष्टक, द्वीयाबारु, नवमपचममा राशि मैत्री नथी त्या ते राशियोना स्वामीयोनी मैत्री जोईने नाम ग्रहण करवुं जोइये एम धारी तेवा नामो बीजा भागा आदिना कोष्टकोमा लख्या छे तेमां पण प्रीति नव पंचमथी प्रीति द्वीयाबारु, अने तेनाथी पण प्रीति षडष्टक विशेष सारु होय छे तेमा पण ज्यां देवराशिथी धनिकराशि निकट अने धनिकराशि थी देवराशी दूर होय ते नव पंचमादि ग्रहण करवुं, बीजुं नहिं, तेवा प्रकारनुं न मळे तो क्वचित् तेनुं पण लेवुं. देवराक्षस रूप गणवैर पण लोकमा वर-कन्यादिकने विषे ग्राह्य कर्युं छे, 'ऽग' एटले देवराक्षसरूप गणवैर छे एम समजवुं 'ऽयो' 'ऽव' एटले धनिकने देवसंबंधी 'योनि' तथा 'वर्ग' अनुकूल नथी 'वग' 'वयो' 'वव' नो अर्थ धनिकनो गण, योनि, वर्ग, देवना गण योनि वर्ग करता बलिष्ठ छे एम जाणवु, अतिनिर्बलथी बलिष्ठनो पराभव थई शकतो नथी, ए अभिप्रायथी धनिकनो मार्जारादि बलिष्ट वर्ग देवना उंदुरादि अल्पबली वर्गथी पराजित थई शकतो नथी. तेथी आवा प्रकारनुं गणवैर अने वर्गवैर त्रीजे भागे ग्राह्य कर्युं छे.

'ऽवयो' 'ऽवव' एटले धनिकनी योनि तथा वर्ग निर्बल छे एम जाणवु, परतु ए विशिष्ट दोष नथी, केमके 'जातिवैर' नथी, शास्त्रमा योनि संबन्धी जातिवैर अने वर्गसम्बन्धी इतरेतर पंचम वर्गने ज वर्ज्यो छे. लोकमा पण ए विषयमा आवीज मान्यता छे.

आ यंत्रकमा बहुश्रुतोना विचारानुसार यथा शुद्ध अने यथा स्वल्पदोष जिननामो च्यारे कोष्टकोमा लख्या छे.

। इति धारणागतियंत्रकाम्नायः ।

जिननाम-वर्ण-लांछन-नक्षत्र-राशि

अंक	नाम	देहवर्ण	लांछन	नक्षत्र	राशि
१	ऋषभ	सुवर्णाभ	वृषभ	उत्तराषाढा	धनुः
२	अजित	सुवर्णाभ	गज	रोहिणी	वृष
३	संभव	सुवर्णाभ	अश्व	मृगशिरा	मिथुन
४	अभिनन्दन	सुवर्णाभ	वानर	श्रवण	मकर
५	सुमति	सुवर्णाभ	क्रौंच	मघा	सिंह
६	पद्मप्रभ	रक्तवर्ण	कमल	चित्रा	कन्या
७	सुपार्श्व	सुवर्णाभ	स्वस्तिक	विशाखा	तुला
८	चन्द्रप्रभ	धवलवर्ण	चन्द्र	अनुराधा	वृश्चिक
९	सुविधि	धवलवर्ण	मकर	मूल	धनुः
१०	शीतल	सुवर्णाभ	श्रीवत्स	पूर्वाषाढा	धनुः
११	श्रेयांस	सुवर्णाभ	गंडक	श्रवण	मकर
१२	वासुपूज्य	रक्तवर्ण	महिष	शतभिषा	कुंभ
१३	विमल	सुवर्णाभ	वराह	उत्तराभाद्रपदा	मीन
१४	अनन्त	सुवर्णाभ	श्येन	स्वाति	तुला

१५	धर्म	सुवर्णाभ	वज्र	पुष्य	कर्क
१६	शान्ति	सुवर्णाभ	मृग	भरणी	मेष
१७	कुन्थु	सुवर्णाभ	छाग	कृत्तिका	वृषभ
१८	अर	सुवर्णाभ	नन्दावर्त	रेवती	मीन
१९	मल्लि	प्रियंगुवर्ण	कलश	अश्विनी	मेष
२०	मुनिसुव्रत	कृष्णवर्ण	कूर्म	श्रवण	मकर
२१	नमि	सुवर्णाभ	नीलोत्पल	अश्विनी	मेष
२२	नेमि	कृष्णवर्ण	शंख	चित्रा	कन्या
२३	पार्श्व	प्रियंगुवर्ण	सर्प	विशाखा	तुला
२४	महावीर	सुवर्णाभ	सिंह	उत्तराफाल्गुनी	कन्या

ठि ठु ठे ठो	ठ	ठ १०	टो	टे	ट टि टु	झ १०
नेमि ॥ ड्ढेता	अजित २॥ ड्ढेता नमि ॥ डता धर्म ॥	आदि २॥ अनंत २॥ ड्ढेता अर २॥ धर्म ॥ डता	आदि२॥, धर्म ०॥ ड्ढेता, अनंत २॥डता, अर २॥	अजित २॥	अनंत २॥ श्री ६।८ ड्ढेता अर२॥श्री६।८ ड्ढेता.	महा १॥ डता
सुविधि २ श्री ६।८ वक्री वन	आदि २॥ श्री ६।८ डता अनंत २॥ श्री १।५ अर २॥	अजित २॥ श्री १।५ शंभव २ वन	अजित २॥ श्री १।५ शीतल २ वन	अनंत २॥, अर २॥श्री६।८डता धर्म॥ श्री२।१२ ड्ढेता शंभव २ डता वन	नमि श्री १।५ आदि २श्री १।५	नमि १ श्री २।१२ डता, मल्लि १॥ श्री २।१२ डता.
शांति २ वन वन डता		शीतल २ ड्ढेता वन, श्रेयांस २ श्री १।५ वन	शंभव २ डता वन श्रेयांस २ श्री १।५ वन	आदि२॥ श्री१।५,शांति२श्री १।५वन, शीतल २श्री १।५ वन		
पद्म ड्ढेता महा०वग ड्ढेता विमल श्री १।५ वग चंद्र श्री १।५डग	महा डता वर्द्ध डता मल्लि डता कुंथु डग डता	चन्द्रप्रभ डता विमल डता मुनिसुव्रत श्री १।५	विमल ड्ढेता चन्द्रप्रभ ड्ढेता महावीर- मुनिसुव्रत श्री १।५	चन्द्रप्रभ ड्ढेता विमल श्री ६।८ ड्ढेता, महावीर श्री २।१२	महावीर-वर्धमान श्री २।१२ मल्लि श्री १।५.	अभिनंदन–अनंत अर–अजित ड्ढेता, आदिडता, वर्धमानडता, विमल श्रेयांस ड्ढेता स्थो।

ह २०	ण २०	त	ति तु ते	तो	थ २०	द	दि	दु
आदि २।। अजित २।। स्ड्ता,अनंत २।। स्ड्ता अर २।।	आदि २।। अनंत २।। स्ता,अर २।। धर्म ।। स्ता	शांति १।। स्ड्ता,शांति १।। स्ड्रे-ता	सुविधि १।। स्ड्ता,पार्श्व सु पार्श्व १।।	पद्मप्रभ।। स्ड्ता, वासुपूज्य १ न्यो	महा ।। स्ता निमल १	शीतल १।। स्ता	श्रेयास१।।स्ड्रे ता,सुवि।।स ता, श्रेयास १।।स्ता,शी-तल१।।स्ता.	महा ।। स्ता निमल १
शीतल १ नव	श्रमन १ नव, शीतल १ स्ड्ता धन	महा ।। श्री २१२ स्ता श्रमन १।। श्री १।५	पद्म ।। श्री २१२ स्ड्ता	सुविधि १।। श्री २१२ स्ड्ता	नमि १।। श्री २१२ स्ता, मल्लि ।। श्री २१२ स्ता.	श्रेयास १।। श्री २१२स्ता, मु नि ।। श्री २१२ स्ता	निमल १ न्यो, धर्म ।। श्री १।५ न्यो	नमि १ श्री २१२, म-ल्लि।। श्री २१२स्ता.
नमि ।। श्री १।५	अजित २।। श्री १।५ श्रेयास २ श्री १।५ न न्यो	अभिनंदन २ श्री १।५ स्न	वासु १ श्री १।५ न्यो,शी तल १।। न्म स्ता,महा।। श्री २१२ न्यो न्म स्ड्ता. अभिनंदन २ श्री१।५ स्न स्न	महा ।। न्यो न्म स्ड्ता शीतल १।। श्री २१२ न्म स्ता	अभिनंदन २ स्न,अनंत-अर २स्न, अजित २ स्ड्ता स्न आदि २स्ता स्न, श्रेयासन्यो स्ड्ता	शांति १।।न्यो स्ता, श्रमन १।। श्री १।५ स्ड्ता आदि २ स्ड्ता स्न्यो, अजित २ स्ता स्न्यो,	शांति १।। श्री २१२ स्ता न्यो, आदि २ स्ड्ता स्न्यो अजित २ स्तास्न्यो	अभिनंदन २स्न, अनंत २ स्न, अर २ स्न,अजि त २ स्ड्ता स्न,श्रेयास १।। स्ड्ता
महावीर ३ वर्द्धमान मल्लि श्री १।५	निमल स्ता चंद्रप्रभ स्ता मुनि श्री१।५	धर्म स्ता,न-मि स्न्यो स्ता	नेमि श्री २१२ स्ड्ता	नेमि स्ड्ता		चंद्रप्रभ न्यो	चंद्रप्रभ श्री १।५ न्यो	

दे दो	ध १०	न नि नु ने	नो	प पि	पु	पे पो	फ १०
विमल १, शंभव १॥ ऽदेता महा ॥, शीत १॥ ऽता	शीतल १॥ वर्धमान १ महावीर ॥	मुनि ॥ ऽदे-ता, श्रेयांस १॥ ऽदेता, महा ॥ ऽता	सुमति १॥	शीतल १ वर्द्धं ॥ विमल ॥ ऽदेता शंभव १ ऽता	शंभव १ शीतल १ ऽदेता, विमल॥ ऽता	सुविधि १ ऽदेता	शीतल १ वर्द्धं ॥ महा १॥
नमि१प्री२।१२ मल्लि॥ प्री २।१२ शांति१॥प्रि२।१२ ऽता, धर्म॥ प्री९।५	नमि १, मल्लि ॥ प्री ९।५	मल्लि ॥ प्री ६।८ ऽता, नमि प्री ६।८ ऽता		श्रेयांस १ प्री ९ ५	श्रेयांस १ प्री ९।५	वासु ॥ प्री ६।८ पद्मप्रभ वयो	मल्लि १॥ प्री ९।५
अभि २ ऽदेता ऽव, अनंत २ऽव, अर २	आदि२ ऽव, अभिनंदन २ ऽदेता ॥ ऽव, अनंत २ ऽदेता, अर २ ऽदेता ऽव	अजित २ ऽदेता ऽव, आदि २ प्री २।१२ ऽता, ऽव अनंत २ प्री ९।५ ऽव अर २	शांति १॥ प्री ६।८ ऽता वग, शीतल १॥ प्री२।१२ ऽता वग, विमल१प्री९।५ वग. अजित२ऽता वग ऽव, आदि २प्री २।१२ ऽदेता वग ऽव			सुपार्श्व१प्री२।१२ ऽता, पार्श्व प्री २।१२ ऽता, वर्धं ॥ ऽदेता वयो वग.	
चंद्रप्रभ प्री ९।५		चंद्रप्रभ	कुंथु ऽदेता, नमि प्री ६।८ ऽग	आदि धर्म ऽदेता, चंद्र ऽदेता, अनंत ऽता, अर ऽता, महा- वीर अजित प्री ९।५मुनि प्री ९।५	आदि अनंत ऽदेता, अर धर्म ऽता, चंद्र ऽता, अजित प्री९।५ मुनि प्री ९।५	कुंथु प्री ९।५वयो ऽदेता, नेमि आदि वग ऽदेता, अजित प्री ९।५ वग मुनि प्री ९।५ ऽग	आदि अभि- नंदन ऽदेता अनंत ऽदेता अर—नमि प्री ९।५

न वि तु	वे धो	भ भि	मु	मे	भो	म मि मु मे	मो
विमल॥ ऽता	शभन १ श्री २।१२,मुनि १ श्री ९।५ श्रेया १ श्री ९।५	पार्श्व २॥ ऽता सुपार्श्व १ ऽता पद्म २॥ ऽता सुविधि १	महा ॥ वर्द्ध ॥ शीतल १	शीतल १ विमल ॥ ऽदेता महावीर ॥	शाति १ विमल ॥ ऽदेता मल्लि ॥ ऽदेता	वासु ॥ ऽदेता सुमति १	वर्धमान॥ श्री२।१२
शभन १ श्री २।१२	महा१,वर्द्ध॥ श्रा ९।५ ऽदेता	सुमति १ श्री ९।५	मल्लि॥ श्री ९।५	शभन १ नयो ऽदेता	महा॥ श्री ९।५ वर्द्ध ॥ श्री ९।५		मल्लि श्री९।५
महा १ श्री ९।५, वर्ध ॥ श्री ९।५	वासुपूज्य ॥ऽग	शीतल १ नग विमल ॥ नयो नग ऽदेता, शाति १श्री ९।५ न गण		शाति १ श्री ९।५ मल्लि ॥ श्री ९।५ ऽदेता		पद्म२ श्री २।१२ ऽता, सुविधि १ श्री ९।५, विमल श्री ६।८ वग ऽदेता,शाति श्री ९।५ वग, शीतल १ श्री ९।५ वग	
धर्म ऽता,चद्रप्रभ ऽता अजित	अजित अनत ऽदेता,अर अभिनदन श्री२।१२ ऽता	नेमिनाथ ऽता, आदिनाथ नग ऽता	आदिनाथ-अभिनदन ऽदेता अनतऽदेता,अर ऽदेता, नमि श्री ९।५	अभिनदन ऽता, धर्म श्री ६।८ ऽदेता॥,आदि चद्र श्री २।१२ ऽदेता, नमि श्री ९।५ ऽदेता	धर्मऽदेता नमि ऽदेता चंद्र ऽदेता अभिनदन श्री ६।८ ऽता	नेमि श्री २।१२ ऽता	अनन श्री ६।८ ऽदेता अरश्री ६।८ ऽदेता, नमि श्री९।५,आदि श्री ९।५

य यि यु	ये यो	र रि	रु रे रो	ल	लि लु ले लो	व वि वु	वे वो
सुमति ॥, कुंथु १॥ ऽदेता	सुपार्श्व ॥ ऽता सुविधि ॥	सुमति ॥ ऽदेता सुविधि ॥ ऽदेता सुपा ॥ ऽता	शांति॥ ऽदेता शीतल॥ ऽदेता	शांति ॥,श्रेयांस ॥ ऽदेता, शंभव ॥ ऽता	श्रेयांस ॥ ऽता शांति ॥	शंभव ॥ श्री २।१२	शंभव ॥ श्री २।१२
---	सुमति॥ श्री ९।५	कुंथु १॥ श्री ६।८ ऽदेता वयो	वर्द्ध१श्री २।१२ ऽता, शंभव ॥ श्री ९।५	विमल ॥ श्री २।१२ ऽदेता, शीतल ॥ श्री ९।५		विमल ऽता	श्रेयांस ॥ श्री ९।५
शांति श्री ६।८ ऽता वग	शीतल॥ व गण शांति ॥ श्री ९।५ वग	वासु१ श्री ९।५ वयो, वर्द्ध १ श्री २।१२ वयो ऽदेता वग		चंद्र २ श्री६।८ ऽदेता ऽव		चंद्र २ ऽता ऽव वर्द्ध श्री ९।५	वर्द्ध श्री ९।५ ऽदेता
धर्म श्री ९।५ ऽग,अजित वग ऽता, आदि श्री २।१२ वग ऽदेता, विमल श्री ९।५ वग	पार्श्व ऽता,नेमि ऽता, पद्म ऽता आदि वग ऽता विमल वयो वग ऽदेता	पार्श्व ऽता, पद्म श्री२।१२,नेमि श्री २।१२ अजित वग आदि ऽदेता वग	धर्म ऽता. महा श्री २।१२ ऽता अभिनंदन श्री ९।५ नमि वयो ऽता मल्लि वयो ऽता	धर्मऽदेता,मुनि ऽदेता,नमि मल्लि श्री २।१२, अनंत अर आदि श्री९।५ ऽता	नमि मल्लि अभिनंदनऽदेता, मुनि ऽता,अनंत अरश्री२।१२ ऽदेता,आदि श्री ९।५	धर्म ऽता, अजित महा श्री ९।५	अजित अनन्त ऽता, अर ऽता, मुनि श्री ९।५, अभिनंदन श्री २।१२ऽता,महा श्री ९।५ ऽदेता

ग १०	प १०	स सि सु	से सो	ह	हि	हु हे हो
अभिनदन ॥ अनत ॥ अर ॥ अजित॥ ऽदेता आदि ॥ ऽता	आदि ॥ अनत ॥ ऽदेता अर ॥ ऽदेता	कुथु १ ऽता	आदि ॥ ऽदेता अजित ॥ ऽता	गादि॥ऽदेता,शंभव ॥ऽदेता,अनत॥ऽता अर॥ऽता,शानि२॥ ऽता, शीतल २॥ ऽता,अभिनदन ॥	शाति २॥ ऽता अजित ॥ ऽता श्रेयास २॥ऽता	अजित॥ ऽदेता
	चद्र १॥ नग ऽता, अजित ॥ श्री ९।५	सुमति ऽता, सुपार्श्व श्री ९।५ ऽत्रयो	चद्र १॥ त्रयो	श्रेयास २॥ श्री ६। ८ ऽता, अजित ॥ श्री २।१२ ऽता	आदि ॥ श्री ६।८ ऽदेता, शीतल २॥ श्री ६।८ऽता	आदि॥श्री ६।८ ऽता,अनत॥श्री ९।६,अर॥ श्री ९।५
		अजित ॥ नग ऽदेता आदि ॥ नग ऽता			अनत॥श्री९।५ अर॥श्री९-५ ऽता	कुथु १ ऽगऽता
महावीर ऽता, विमल नमि श्री २।१२ ऽता,म ल्लि श्री २।१२ ऽता, श्रेयास ऽयो ऽदेता	शभव-शीतल ऽदेता,धर्म ऽता विमल ऽता,श्रे- यास श्री ९।५ मुनि श्रा ९।५	पद्मप्रभ श्री ६।८ ऽत्रयो,नेमि श्री ६।८ ऽत्रयो,वासुपूज्य पार्श्व श्री९।६ ऽत्रयो,शाति शीतल नग ऽदेता	शीतल ऽता, श्रेयास-मुनि- सुव्रत श्री२।१२ ऽता,शाति त्रयो ऽता,शभव श्री ९।६ ऽदेता	विमल – मुनिसुव्रत श्री ६,८ ऽता	चद्र १॥ श्री ९।६ धर्मनाथ मुनिसुव्रत ऽता, विमल श्री९।५	नमि ऽता, मल्लि ऽता महावीर वर्धमान–ऽता धर्म

जिननाम	आ०	अ०	शं०	अ०	सु०	प०	सु०	चं०	सु०	शी०	श्रे०
नक्षत्र	उषा०	रोही०	मृग०	पुन०	मघा०	चित्रा	विशा०	अनु०	मूल	पू०षा०	श्रव०
योनि	नकुल	सर्प	सर्प	मार्जार	उंदर	व्याघ्र	व्याघ्र	मृग	श्वान	वानर	वानर
गण	मानव	मानव	देव	देव	राक्षस	राक्षस	राक्षस	देव	राक्षस	मानव	देव
तारा	२१	४	५	७	१०	१४	१६	१७	१९	२०	२२
राशि	धनुः	वृष	मिथुन	मिथुन	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनुः	धनुः	मकर
राशि-स्वामी	गुरु	शुक्र	बुध	बुध	सूर्य	बुध	शुक्र	मंगल	गुरु	गुरु	शनि
आद्याक्षर	ऋ	अ	शं	अ	सु	प	सु	चं	सु	शी	श्रे
वर्गेश	गरुड १	गरुड १	मेष ८	गरुड १	मेष ८	उंदर ६	मेष ८	सिंह ३	मेष ८	मेष ८	मेष ८
वर्ग	अ	अ	श	अ	श	प	श	च	श	श	श

रा०	रि०	अ०	व०	शा०	कृ०	अ०	म०	मु०	न०	ने०	पा०	य०
शत०	उ०भा०	रेव०	पुष्य	भर०	कृत्ति०	रेव०	अश्वि०	श्रव०	अश्वि०	चित्रा	विशा०	उ०फा०
अश्व	छाग	हस्ती	छाग	हस्ती	छाग	हस्ती	अश्व	वानर	अश्व	व्याघ्र	व्याघ्र	गौ
राक्षस	मानव	देव	देव	मानव	राक्षस	देव	देव	देव	देव	राक्षस	राक्षस	मानव
२४	२६	२७	८	२	३	२७	१	२२	१	१४	१६	१२
कुंभ	मीन	मीन	कर्क	मेष	वृष	मीन	मेष	मकर	मेष	कन्या	तुला	कन्या
शनि	गुरु	गुरु	चंद्र	मंगल	शुक्र	गुरु	मंगल	शनि	मंगल	बुध	शुक्र	बुध
रा	रि	अ	व	शां	कृ	अ	म	मु	न	ने	पा	य
मृग ७	मृग ७	गरुड १	सर्प ५	मेष ८	मार्जार २	गरुड १	उदर ६	उदर ६	सर्प ५	सर्प ५	उदर ६	मृग ७
य	य	अ	त	श	क	अ	प	प	त	त	प	य

परिच्छेद सोलमो

—: मुहूर्त लक्षण :—

चैत्यसत्कमुहूर्तानि, भूम्यारम्भादिकानि हि ।
प्रतिमास्थापनान्तानि, वर्ण्यन्तेऽत्र समासतः ॥१७॥

भा०टी०—जिन चैत्य (प्रासाद) संबन्धी खात मुहूर्तथी मांडीने प्रतिमा स्थापन सुधीनां तमाम मुहूर्तो आ परिच्छेदमां संक्षेपथी वर्णन कराय छे.

मुहूर्तनो विषय अति विशाल छे, एना निरूपणमां शुं लेवुं अने शुं नहि ए विषय विचारणीय थई पडे छे, प्राचीन शिल्प संहिताओमां ज्योतिषनी सविस्तर चर्चा करेली छे, एथी समजाय छे के शिल्पकारो ज्योतिष विद्याने पण शिल्प विद्यानुं एक अंग गणता हता. मध्यम कालीन अने आधुनिक विद्वानोए पण पोताना ग्रन्थोमां ए वस्तुनुं स्मरण कर्युं छे, एटले अमो पण प्रासादनी साथे संबद्ध मुहूर्तोनी चर्चा करवी योग्य धारीये छीये.

'मुहूर्त' शब्दनो पारिभाषिक अर्थ दिन तथा रात्रि प्रत्येकनो पंदरमो भाग एवो थाय छे. पूर्वे ज्यारे पंचांग शुद्धि तथा लग्ननो प्रचार न हतो त्यारे प्रत्येक कार्य नक्षत्र अने मुहूर्त बलथी ज करातुं हतुं. आज मुहूर्तनो विशेष आदर नथी, छतां ज्योतिष शास्त्रमां आजे य मुहूर्तनुं नाम मोखरे छे, आ कारणथी ज अमोए 'मुहूर्त' शब्दने पसंद कर्यो छे.

दिवस-रात्रिना १५-१५ मुहूर्तो—पूर्वे अने आज काल पण ६० घडीना अहोरात्रना १ त्रिशांशने मुहूर्त कहेता अने कहे छे; पण आ मुहूर्तो २ घडीनां मनाय छे अने दिनमान अथवा रात्रिमान

नथवा घटवाथी दिनरात्रिना मुहूर्तों नधे घटे छे, पण प्रकृत मुहूर्तोने अंगे एम गणातुं नथी. "पञ्चदशाशो दिवसे, क्षणमानं तत् त्रियामाया" इत्यादि विधानो प्रमाणे दिन-रात्रिमानना वधवा घटवाथी तेओना क्षणोनुं मान पण वधारे ओछुं थाय छे

आ मुहूर्तो बधा शुभ अथवा अशुभ होता नथी, परंतु तेओना स्वामिओनी शुभाशुभ प्रकृतिने अनुसारे ते केटलाक शुभ अने केटलाक अशुभ पण होय छे

दिवस रात्रिना मुहूर्तोना स्वामीओ प्राचीन ज्योतिषमां नीचे प्रमाणे बताव्या छे—

शिव-सर्प-मित्र-पितरो, वसु-जल-विश्वा-ऽभिजिद्द्रुहिणाः।
सुरप-त्रिदेव-दनुजा, शम्बर नामाऽर्यमाख्य-भगाः ॥१॥

दिवसमुहूर्ताः कथिता, दशपञ्चमिता स्तथैव रात्रेश्च ।
रुद्राज एकपादेवाऽहिर्बुध्न्याख्यास्ततश्च पूषाख्यः ॥२॥

अश्वि-यम-वह्नि-धातृ-सुधाकरास्त्वदिति-सुरमन्त्री ।
हरि-ज्योतिष्कर-त्वष्टृ-प्रभञ्जनाश्चेति पञ्चदश ॥३॥

भावार्थ—१ शिव, २ सर्प, ३ मित्र, ४ पितृ, ५ वसु, ६ जल, ७ विश्वदेव, ८ अभिजित, ९ विधाता, १० इन्द्र, ११ इन्द्राग्नी १२ दानव, १३ शम्बर, १४ अर्यमा अने १५ भग, आ पंदर दिवस मुहूर्तोना स्वामी कह्या छे, एज रीते रात्रिमुहूर्तोना पण १५ छे जे आ प्रमाणे—

१ रुद्र, २ अजएकपाद, ३ अहिर्बुध्न्य, ४ पूषा, ५ अश्विनीकुमार, ६ यम, ७ अग्नि, ८ धाता, ९ चन्द्र, १० अदिति, ११ बृहस्पति, १२ विष्णु, १३ सूर्य, १४ त्वष्टा अने १५ वायु, ए पंदर रात्रि मुहूर्तोना स्वामी छे

मुहूर्तमान अने तेओनो कार्य प्रदेश-क्षणोनुं समय-मानुं अने तेओना कार्यप्रदेशनुं नीचेना श्लोकोमां निरूपण कर्युं छे—

पञ्चदशांशो दिवसे, क्षणमानं तत्त्रियामायाः ।
नक्षत्रेश्वरसदृशो, क्षणे च तन्नामधिष्ठायं तत् ॥ ४ ॥
यत्कर्म कथितमृक्षे, यस्मिंस्तत्कर्म तत्क्षणे कार्यम् ।
दिक्शूलादिकमखिलं, पारिघदण्डं च विज्ञेयम् ॥ ५ ॥

भा०टी०-दिवस मानना पंदरमो भाग ते दिवसक्षणनुं कालमान अने रात्रिमानानो पंदरमो भाग ते रात्रिक्षणनुं कालमान होय छे, नक्षत्र स्वामीने मलता स्वामीवाला मुहूर्तने तेना स्वामित्व वालुं नक्षत्र मानीने ते नक्षत्रनां सर्व कार्यो तेना ते क्षणमां करवां, दिशा-शूल, पारिघदण्ड, आदि सर्व नक्षत्र संबन्धी वातो तत्स्वामिक क्षणोमां करवां.

दिवस विभागना अशुभ-शुभ मुहूर्तो-दिवसना कया कया मुहूर्तो अशुभ होई शुभ कार्योमां वर्जवा अने कया शुभ होई शुभ कामोमां लेवा जोईये तेनुं निरूपण आ प्रमाणे छे—

निर्ऋति[१२]-पितृ[४]-सर्पाख्या[२], रौद्र[१]-इन्द्राग्नी[११]श्वराख्यभगाः[१५] ।
पापमुहूर्तास्त्वेते, शुभकर्मणि दुःख-शोकदा नित्यम् ॥६॥
सुमुहूर्तास्त्ववशिष्टाः, सौम्याः शुभदाश्च मङ्गले नूनम् ।
शान्तिक-पौष्टिक कर्मसु, विशेषतस्तत्प्रदाः सततम् ॥ ७ ॥

भा०टी०-निर्ऋति स्वामिक (१२मो), पितृ स्वामिक (४थो), सर्पस्वामिक (२जो), रुद्रस्वामिक (१लो), इन्द्राग्नि स्वामिक (११मो) अने भग स्वामिक (१५मो मुहूर्त); आ छ पाप मुहूर्तो छे, आ

मुहूर्तो शुभ कामोमा लेवाथी नित्य दुःख अने शोक आपनारा थाय छे, बाकी रहेला दिवस मुहूर्तो सौम्य छे अने मंगल कार्योमा निश्चितपणे शुभफल आपनारा निवडे छे, शान्तिक पौष्टिक कार्योमा आ मुहूर्तो लेवाथी ते निरंतर विशेष पणे शान्तिकपौष्टिकना आपनारा थाय छे.

रात्रिविभागना अशुभ-शुभ मुहूर्तो—

रात्रिमुहूर्तास्त्वजपाद्, रौद्राग्नेयाख्य याम्यसंज्ञाश्च ।
क्रूरनराश्चत्वार-स्त्वनिष्टदास्त्विष्टदास्त्वपरे ॥ ८ ॥

भा०टी०-रात्रि मुहूर्तो पैकीना अजपाद स्वामिक (२जो), रुद्र स्वामिक (१लो), अग्नि स्वामिक (७मो) अने यम स्वामिक (६ठो), आ ४ मुहूर्तो अतिक्रूर अने अनिष्ट दायक होय छे, अने शेष ११ मुहूर्तो शुभदायक होय छे.

वार परत्वे वर्जनीय मुहूर्तो-वार विशेषे पण मुहूर्त विशेष वर्जित करेल छे जेनुं स्पष्ट निरूपण निचेना पद्यमा कर्युं छे—

अर्यम्णस्त्वर्कवारे हिमकरदिवसे राक्षस-ब्राह्म संज्ञौ,
पित्र्याग्नीशौ क्षणौ द्वौ क्षितिसुतदिवसे सौम्यवारेऽभिजच्च ।
दैत्याप्यौ जीववारे भृगुतनयदिने ब्राह्मपित्र्यौ मुहूर्तौ,
सार्पेशौ तिग्मरोचिः प्रियसुतदिवसे वर्जनीया मुहूर्ताः ॥९॥

भा०टी०-रविवारे-अर्यमस्वामिक (१४ मो), सोमवारे-राक्षस अने ब्राह्म (१२मो अने ९मो), मंगलवारे-पित्र्य अने अग्निस्वामिक (४थो अने रात्रि विभागे ७मो), बुधवारे-अभिजित् (८मो), गुरुवारे-राक्षस अने आप्य (१२ मो अने १३मो), शुक्रवारे-ब्राह्म अने पित्र्य (९मो अने ४थो) अने शनिवारे-सार्प अने

शिवस्वामिक (२जो अने १लो) मुहूर्त वर्जित करवो; आम जे जे मुहूर्तो जे जे वारे वर्जनीय छे ते कह्यां.

फलितार्थ-उपर्युक्त निरूपणथी जे फलितार्थ निकले छे तेनो सार एटलो ज छे के दिवस-रात्रिनो अमुक समय शुभ अने अमुक अशुभ होय छे, शुभ समयमां आरंभेलुं शुभ कार्य सिद्ध थाय छे ज्यारे वर्जित समयमां आरंभेलुं कोई पण शुभ कार्य सिद्ध थतुं नथी. कोई पण दिवसे दिवसना १-२-४-११-१२-१५ मा क्षण सिवायनो शेप समय शुभ होय छे, ज्यारे काई पण रात्रिमां रात्रिनो १-२-६-७ मो, आ चार क्षणो सिवाय शेप समय शुभ होय छे, एम छतां ते दिवसे वार शो छे ए पण जोवुं अने वार परत्वे वर्जित क्षण होय तो ते शुभ होय तो य वर्जवो, रविवार होय तो १४मो, सोमवारे ९मो, बुधवारे ८मो, गुरुवारे ६ठो, अने शुक्रवारे ९मो क्षण शुभ छे छतां वर्जवो. वार परत्वे रात्रिनो ७मो क्षण वर्जित करेल छे अने ते आमे य रात्रिना ४ वर्जित क्षणो पैकीनो एक छे.

नक्षत्रनो प्रतिनिधि पण क्षण-उपर कहेवायुं छे के पूर्वे नक्षत्र अने मुहूर्तना वले सर्व कार्यो करातां हतां, अने अवसरे नक्षत्र वलना अभावे नक्षत्रनुं प्रतिनिधित्व पण मुहूर्तने अपातुं हतुं, द्रष्टान्त तरीके अश्विनी नक्षत्र विहित कार्य करवुं छे; पण अश्विनी आजथी पच्चीसमे दिवसे आववानुं छे, तो शुं त्यां सुधी ए कार्य बंध राखवुं के ते कोई उपायान्तरथी करवुं ? आवी परिस्थितिमां मुहूर्तनुं महत्व जणावनार ज्योतिःशास्त्रे मार्ग बतावतां कह्युं छे के विहित नक्षत्र नथी अने कार्य करवुं आवश्यक छे तो नक्षत्र आवे त्यां सुधी बेसी रहेवानी जरुरत नथी, नक्षत्र स्वामिक मुहूर्तमां ते कार्य करी लेवुं एटले ते ते नक्षत्रमां ज कर्युं गणाशे. मुहूर्तशास्त्र आवा नक्षत्र प्रतिनिधि मुहूर्तने ' क्षण नक्षत्र ' एटले के मुहूर्तरूप नक्षत्र कहे छे, वाचकगण

जाणीने आश्चर्य पामशो के लगभग बधा ज मुहूर्त स्वामियो नक्षत्रोना पण स्वामी छे अने आथी मुहूर्तोनुं नक्षत्र-प्रतिनिधित्व सहेतुक छे, मुहूर्तोना स्वामियोना नामो उपर अपाया छे, हवे नक्षत्र स्वामियोना नामो पण आपीये एटले विचारको बन्नेनी एक स्वामिकताने अनुभवे.

नक्षत्र स्वामिओनी क्रमिक नामावली—

नासत्या १ ऽन्तक २ वह्नि ३ धातृ ४ निशिपा
५ रुद्रो ६ ऽदिति ७ श्चाङ्गिराः ८,
यातागाः ९ पितरो १० भगो ११ ऽर्यम १२ रवी
१३ त्वष्टा १४ समीरः १५ क्रमात् ।
इन्द्राग्नी १६ त्सुहृपाश्च मित्र १७ सुरपौ
१८ क्रोणेश्वर. १९ शम्बर २०,
विश्वे २१ विष्णु २२ वसुदपा २३–२४ ऽज चरणा २५
ऽहिर्बुध्न्य २६ पूषोभिधा. २७ ॥ १० ॥

भा०टी०—अश्विनीकुमार १, यम २, अग्नि ३, ब्रह्मा ४, चन्द्रमा ५, रुद्र ६, अदिति ७, अङ्गिरा ८, सर्प ९, पितृ १०, भग ११, अर्यमा १२, सूर्य १३, त्वष्टा १४, वायु १५, इन्द्राग्नि १६, मित्र १७, इन्द्र १८, राक्षस १९, जल २०, विश्वदेव २१, विष्णु २२, वसु २३, जलपति २४, अजचरण २५, अहिर्बुध्न्य २६ अने पूषा २७, ए नामक देवो अनुक्रमे अश्विनी १, भरणी २, कृतिका ३, रोहिणी ४, मृगशीर्ष ५, आर्द्रा ६, पुनर्वसु ७, पुष्य ८, अश्लेषा ९, मघा १०, पूर्वाफाल्गुनी ११, उत्तराफाल्गुनी १२, हस्त १३, चित्रा १४, स्वाति १५, विशाखा १६, अनुराधा १७, ज्येष्ठा १८, मूल १९, पूर्वाषाढा २०, उत्तराषाढा २१, श्रवण

२२, धनिष्ठा २३, शतभिषा २४, पूर्वाभाद्रपदा २५, उत्तराभाद्रपदा २६ अने रेवती २७, नक्षत्रोना स्वामीओ छे.

वास्तुकर्ममां शुभ मुहूर्तो-गृहारंभ आदि वास्तुकर्मारंभमां कया मुहूर्तो लेवा ? ए विषयमां मात्स्यपुराण नीचे प्रमाणे कहे छे—

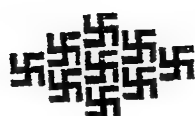
श्वेते मैत्रे च माहेन्द्रे, गन्धर्वाभिध-रौहिणे ।
तथा वैराज-सावित्रे, मुहूर्ते गृहमारभेत् ॥ ११ ॥

भा०टी०-श्वेत (२जुं), मैत्र (३जुं), माहेन्द्र (१३मु), गन्धर्व (७मुं), रौहिण (९मुं), वैराज (६ठुं) अने सावित्र (५मुं); आ सात मुहूर्तो पैकीना कोई पण शुभ मुहूर्तमां गृहारंभ करवो.

मुहूर्तोना संबन्धमां लल्लाचार्य कहे छे—

श्वेतो मैत्रो विराजश्च, सावित्र अभिजित्तथा ।
बलश्च विजयश्चैव, मुहूर्ताः कार्यसाधकाः ॥ १२ ॥

भा०टी०-श्वेत (२), मैत्र (३), विराज (६) सावित्र (५), अभिजित् (८), बल, (१०) अने विजय (११); आ मुहूर्तो सर्व कार्य साधक छे.



मुहूर्तयंत्रक

क्रमांक	ज्योतिषोक्त-दिवामुहूर्तों	ज्योतिषोक्त रात्रिमुहूर्तों	पौराणिक दिवामुहूर्तों	पौराणिक रात्रिमुहूर्तो
१	आर्द्रा	आर्द्रा	रौद्र	रौद्र
२	आश्लेषा	पू० भाद्र०	श्वेत	गंधर्व
३	अनुराधा	उ० भाद्र०	मित्र	अर्थप
४	मघा	रेवती	चारभट	चारभट
५	धनिष्ठा	अश्विनी	सावित्र	वायु
६	पू० षाढा	भरणी	वैराज	अग्नि
७	उ० षाढा	कृतिका	गन्धर्व	राक्षस
८	अश्विनी	रोहीणी	अभिजित्	धात
९	रोहिणी	मृगशिर्ष	रोहिण	सौम्य
१०	ज्येष्ठा	पुनर्वसु	बल	ब्रह्मा
११	विशाखा	पुष्य	विजय	जीव
१२	मूल	श्रवण	नैऋत	पौष्ण
१३	शतभिषा	हस्त	माहेन्द्र	विष्णु
१४	उ० फाल्गु०	चित्रा	वारुण	समीर
१५	पू० फाल्गु०	स्वाती	भग	नैऋत

दिनशुद्धि-मुहूर्त लक्षणने अंगे उपर थोडांक मुहूर्तोनुं स्वरूप आप्युं छे, पण वर्तमान समयमां मुहूर्तो उपर ज्योतिर्षीगणनो विश्वास नथी अने खरुं कहीये तो ए वस्तुने आजना ज्योतिर्षीओ घणे भागे भूली गया छे, एटले साधारण जनना तो जाणे ज क्यांथी ? आवी परिस्थितिमां मुहूर्तलक्षणमां आधुनिक रीतिए दिनशुद्धि तथा लग्न-शुद्धिनुं वर्णन कर्या विना ए विषय पूर्ण करी शकाय तेम नथी.

वर्षशुद्धि, अयनशुद्धि, मासशुद्धि, पक्षशुद्धि, गुरुशुक्रचन्द्रास्त बाल्य-वार्द्धक्य विचार, तिथि, वार, नक्षत्र, योग अने करणशुद्धि; ए सर्वनो दिनशुद्धिमां ज समावेश थाय छे, तेथी ए सर्वनी शुद्धिनो विचार करवो ए ज दिनशुद्धिनो उपाय छे.

गृहनिवेश, गृहप्रवेश, प्रतिष्ठा, परिणयन, यात्रा, आदि महत्त्व-पूर्ण कार्योमां अल्प दोषो कदापि न टले, छतां महादोषो तो वर्जवाथी ज दिनशुद्धि तेम लग्नशुद्धि पोतानो खरो प्रभाव पाडी शके छे. वसिष्ठ, नारद, आदि संहिताकारो महादोषोना संबन्धे घणुं लखी गया छे, ए विषयमां नारदजी कहे छे—

पञ्चाङ्गशुद्धिरहितो, दोषस्त्वाद्यः १ प्रकीर्तितः ।
उदयास्तशुद्धिहीनो, द्वितीयः २ सूर्यसंक्रमः ॥ १३ ॥

तृतीयः ३ पापषड्वर्गो, ४ भृगुः षष्ठः ५ कुजोऽष्टमः ६ ।
गण्डान्तं ७ कर्तरी ८ रिःफ-षडष्टेन्दुश्च ९, सग्रहः १० ॥१४॥

दम्पत्योरष्टमं लग्नं, राशे ११-र्विषघटी तथा १२ ॥
दुर्मुहूर्तो १३ वारदोषः १४, खार्जूरिके समाङ्घ्रिभम् ॥१५॥
ग्रहणोत्पातभं १६ क्रूर-विद्धर्क्षं १७ क्रूरसंयुतं १८ ॥
कुनवांशो १९, महापातो २०, वैधृतिश्चैकविंशतिः २१ ॥१६॥

भा० टी०-पञ्चाङ्गशुद्धिनो अभाव १, लग्ननी उदयास्तशुद्धिनो

अमास २, सूर्यसंक्रांति ३, पापषड्वर्ग ४, छठो शुक्र ५, आठमो मंगल ६, गंडांत ७, क्रूर कर्तरी ८, बारमो, छठ्ठो, आठमो चन्द्रमा ९, क्रूर ग्रह सहित चन्द्रमा १०, पति-पत्नीनी जन्मराशिथी आठमी राशिनुं लग्न ११, विषघटी १२, दुर्मुहूर्त १३, वारदोष १४, खार्जुरिक चक्रमां पाद विद्ध नक्षत्र १५, ग्रहणादि उत्पात विद्ध नक्षत्र १६, क्रूर विद्ध नक्षत्र १७, क्रूराधिष्ठित नक्षत्र १८, कुनवमांशक १९, महापात २०, अने वैधृति २१; आ एकवीश महादोषो छे. ए महादोषो प्रयत्नपूर्वक वर्जवा जोईये एम नारदजी नीचेना पद्यमां अनुरोध करे छे—

एते प्रोक्ता महादोषा, वर्जनीयाः प्रयत्नतः ।
यदि मोहात् कृत कर्म, तदा विघ्न भवेद्ध्रुवम् ॥ १७ ॥

भा०टी०—कहेला ए महादोषोने यत्नपूर्वक टालवा जोईए, जो कोईए मोहवश पण महादोषमां कंइ काम कर्युं तो अवश्य विघ्न थशे।

उक्त महादोषो पैकीना दोषो नंबर २-४-५-६-८-९-१० -११-१९ अने लग्न गंडांतनो संबंध लग्न साथे होई लग्नशुद्धिना प्रकरणमा निरूपण कराशे तथा दोषो नम्बर १-३-१२-१३-१४-१५-१६-१७-१८-१९-२०-२१ अने तिथि नक्षत्र गंडांतनो सम्बन्ध दिनशुद्धिनी साथे होवाथी तेना निरूपण प्रसंगे ते ते यथास्थान कहेवाशे

महादोषो उपरान्त बीजी पण केटलीक वातो मौहूर्तिके दर वखत ध्यानमां राखवा जेवी होय छे के जेनो अमो प्रथम निर्देश करीने मूल वात उपर आवशु

वर्ष, अयन, मास तथा पक्षनी शुद्धि, गुरु-शुक्र-चन्द्रास्तकाल, तथा एमनो बाल्य-वार्द्धक्यकाल, इत्यादि वातोनो विचार कर्या

पछी ज मौहूर्तिके मुहूर्तनी खास वातो उपर पोतानुं ध्यान केन्द्रित करवुं जोईये ।

वर्षशुद्धि–जे वर्षमां मासनो क्षय अने वृद्धि बंने आवतां होय ते वर्ष शुभ कार्योने माटे वर्जित गणाय छे. गुरु जे वर्षमां सिंह राशि पर भ्रमण करतो होय ते वर्ष पण शुभ कामने माटे वर्जित ज गणाय छे. मात्र अपवाद रुपे ते वर्षनो अमुक समय शुभ गणाय छे.

अयनशुद्धि–अयनो पैकी दक्षिणायन देवप्रतिष्ठादि अने गृहारंभादिमां सामान्य रीते वर्जित छे. अपवादे कर्क संक्रांतिनो समय गृहारंभ अने गृह प्रवेशमां ग्रहण करेल छे. ए ज प्रकारे वृश्चिकनो सूर्य थया पछी पण दक्षिणायननो दोष गणातो नथी, ते समय गृहारंभगृह–प्रवेशमां लेवाय छे.

मासशुद्धि–चैत्र मास सामान्य रीते गृहारंभादिमां वर्जित छे, छतां मेषनो सूर्य थया पछी चैत्रनो भाग जो रहेतो होय तो ते शुभ छे, वैशाख– गृहारंभप्रवेशादिमां शुभ छे, ज्येष्ठ गृहारंभमां वर्जित छे, प्रवेशादिकमां लीधेल छे. मिथुनार्क थया पछी आषाढ गृहारंभमां वर्जित छे. श्रावण–गृहारंभप्रवेशादिमां शुभ छे. भाद्रपद, आसोज, कार्तिक आरंभ प्रवेशादिमां वर्जित छे. मार्गशीर्ष अने पौष गृहारंभादिमां श्रेष्ठ छे. पण धनार्कमां पौषनो भाग पडतो होय तो तेटलो वर्जित गणवो. माघ गृहारंभमां वर्जित छे अने प्रवेशमां लीधेलो छे. फाल्गुन आरंभ प्रवेशादि बधा कार्योमां शुभ छे. आरंभसिद्धिग्रंथकार ए विषयमां कहे छे के सौर मासना हिसावे धनार्क, मीनार्क, मिथुनार्क, अने कन्यार्क; आ च्यार द्विस्वभाव राशिनी संक्रांतिओनो समय गृहारंभ अने प्रवेश बन्नेने माटे वर्जित गणाय छे, शेष राशिओनो सूर्य होय त्यारे दिशा परक विधान अने निषेध बंने करेल छे. उपरना निरूपणनो मूलाधार नीचे प्रमाणे छे—

पूर्वापरास्य गेहाद्यं, कर्के सिंहे मृगे घटे।
तुलाऽजालिवृषस्थेऽर्के, कुर्याद्याम्योत्तराननम् ॥ १८॥
युग्म कन्या धनुर्मीने, गतेऽर्के नैव कारयेत्।
वृषालि कुम्भसिंहेऽर्के, कुर्याद् गेहं चतुर्दिशम् ॥ १९ ॥

भा०टी०–कर्क, सिंह, मकर अने कुंभ, राशिना सूर्यमा पूर्वाभिमुख अथवा पश्चिमाभिमुख गृहादिनो आरंभ करवो, मेष, वृषभ, तुला अने वृश्चिकना सूर्यमा दक्षिणाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख घरनो आरभ करवो; मिथुन, कन्या, धनु अने मीन राशिओना सूर्यमा गृहादिनो आरम ज न करवो, ज्यारे वृषभ, सिंह, वृश्चिक, कुंभ आ स्थिर राशियो उपर सूर्य रहेलो होय त्यारे च्यारे दिशाना द्वार वाला घरनो कार्यारंभ करी शकाय छे

अधिकमास–अधिकमासमा शुभ कार्यो करवानो निषेध करेल छे पण अधिकमास कयो एनी पण आजना घनी बेठेला केटलाक ज्योतिषियोने खबर नथी. मासवृद्धिमा केटलाये अज्ञ ज्योतिषिओ प्रथमना शुक्ल पक्षने प्राकृतिक मासमा गणी बीजा आववाये मासने अधिकमा गणीने त्याज्य करे छे. ज्यारे बीजा अज्ञानिओ पहेला आववाये पूर्णान्त मासने वृद्ध गणीने बीजाने प्राकृतिक गणे छे, खरी रीते ए बन्ने प्रकार भूल भरेला छे वृद्ध वसिष्ठ–अधिक मासनुं लक्षण बतावता कहे छे—

यस्मिन् दर्शस्यान्ना–दर्वागेका परा परं दर्शम्।
उल्लङ्घ्य भवति भानोः, सक्रान्तिः सोधिमासः स्यात् ॥२०॥

भा०टी०–जेमा एक संक्रान्ति प्रथम अमावास्यानी पहेलां अने बीजी संक्रान्ति बीजी अमावास्या बीत्या पछी लागे छे, त्यारे अधिक मास पडे छे, आथी स्पष्ट छे के अमावास्याना अन्तथी

अर्थात् शुक्ल प्रतिपदाथी अधिक मास लागे छे अने ते पछीनी अमावास्या सुधी रहे छे. एनुं तात्पर्य ए छे के महीनो पूर्णान्त मानो चाहे अमान्त, पण अधिकमास तो अमान्त ज होय. पूर्णान्तमास माननार देशमां पहेला मासनो शुक्ल अने बीजानो कृष्णपक्ष मली ३० दिवसनो मल मास गणाशे।

क्षयमास—अधिकमास जेम शुभ कार्यमां वर्जित छे तेम क्षय मास पण शुभ कार्यो करवामां वर्जित करेल छे. मासक्षय कोई वार १९ वर्षे अने कोई वार १४१ वर्षे आवे छे; ज्यारे क्षयमास पडे छे त्यारे मासवृद्धि पण अनिवार्यपणे थाय ज छे, एटले ए वर्ष घणुं ज उथल-पाथल करनारुं निवडे छे. क्षयमासनुं लक्षण वसिष्ठ कहे छे के—

आद्यन्त दर्शयोर्मध्ये, तयोराद्यन्तयोर्यदा।
संक्रान्तिद्वितयं चेत् स्यात्क्ष्यूनमासः स उच्यते॥ २१॥

भा०टी०—पहेली अने बीजी अमावास्यानी वचमां ज्यारे बे सौर संक्रांतिओ थाय छे त्यारे ते (बे अमावास्या वच्चेनो) समय क्षयमास गणाय छे. क्षयमासना समयमां कर्तव्य कर्मने अंगे वसिष्ठ कहे छे के—

मासप्रधानाखिलमेव कर्म,
मुक्त्वाखिलं कर्म न कार्यमत्र।
यज्ञोपवासव्रततीर्थयात्रा,
विवाहकर्मादि विनाशमेति॥२२॥

भा०टी०—मास प्रतिबद्ध सर्व कार्यो छोडीने बीजां यज्ञ, उपवास, व्रत, तीर्थयात्रा, विवाह आदि सर्व कार्योने न्यूनमासमां करातां नाश पामे छे. क्षयमासनुं अशुभ फल कह्युं छे के—

क्षयमासो भवेद्यस्मिन्, तस्मिन् वर्षेऽतिविग्रहम्।
दुर्भिक्षं वाथवा पीडां, छत्रभंगं करोति वा॥

भा०टी०—जे वर्षमा क्षयमास होय ते वर्षमां घोर युद्ध, दुष्काल, प्रजा पीडा, अथवा छत्रभंग करे छे

पक्षशुद्धि—सामान्य रीते गृहारंभ, प्रवेशादि प्रत्येक शुभ कार्य शुक्लपक्षमा करवानुं विधान छे. शुक्लपक्षनी षष्ठीथी कृष्णपक्षनी पंचमी सुधीना १५ दिवसोने ज्योतिष शास्त्रकारो शुक्लपक्ष रूप गणे छे, केम के शुदि ५ सुधी चन्द्र कृश होय छे, अने वदि ५ पछी चन्द्र क्षीण थतो जाय छे; छता प्रतिपदानी साजे चन्द्रदर्शन थई जाय तो शुदि २ थी शुभ कार्यो करवामा हरकत जेवुं नथी, ए ज रीते वदि ८ मी सुधीमा चन्द्र विशेष क्षीण न थतो होवाथी कोई पण शुभ कार्य करवुं अयोग्य नथी. अष्टमीनो पूर्वार्ध पूर्ण थया पछी जो कोई आवश्यक कार्य करवु पडे तो चन्द्रबलनी साथे ताराबल पण अवश्य जोवुं अने त्रीजी, पांचमी अथवा सातमी तारा आवती होय तो कार्य जरूरतनुं होय तो पण करवुं नहिं, आ संबन्धमा ज्योतिषनो निम्न लिखित नियम अवश्य ध्यानमा राखवो—

कृष्णस्याष्टम्यर्धा-दनन्तर तारकाबल योज्यम् ।
प्रतिपत्प्रान्तोत्पन्न, सन्ध्याकालोदय यावत् ॥ २३ ॥

भा०टी०—कृष्णपक्षनी अष्टमीनो अर्धभाग व्यतीत थया पछी शुदि प्रतिपदाने अन्ते आवता सन्ध्याकाल पर्यंत ताराबलनो उपयोग करवो. आ विषयमा प्राचीन मत एवो छे के कृष्णपक्षनी दशमी पर्यंत सर्व कार्यो—चन्द्रबल जोईने करवा नक्षत्र समुच्चय ग्रंथमां लखे छे—

उदिते च तथा चन्द्रे, शुभयोगे शुभे तिथौ ।
कृष्णस्य दशमी यावत्, सर्वकार्याणि साधयेत् ॥ २४ ॥

भा०टी०—चन्द्र उदित होय त्यारे शुभयोग अने शुभतिथिमां कृष्णपक्षनी दशमी पर्यंत बधां कार्यो करवा.

भा०टी०—शुक्रनो बाल्य वार्द्धक्य काल वसिष्ठना मते ५ दिवसनो, शौनकना मते १ दिननो, गर्गना मते ३ दिननो अने यवनाचार्यना मते ५ मुहूर्तनो छे, जे वर्जवो जोईये. ए अंगे वसिष्ठ कहे छे के—

शुक्रे चास्तंगते जीवे, चन्द्रे चास्तमुपागते ।
तेषां वृद्धौ च बाल्ये च, शुभकर्म भयप्रदम् ॥ २८ ॥
वृद्धत्वमिन्दोस्त्रिदिनं दिनार्द्धं,
बालत्वमस्तत्व मह्नर्द्वयं च ॥
अस्ते विधौ मृत्युमुपैति कन्या,
बाल्येऽन्यसक्ता विधवा च वृद्धे ॥२९॥

भा०टी०—शुक्र गुरु चन्द्रना अस्तमां तथा तेमना वार्द्धक्य के बाल्य कालमां शुभकार्य करवुं भयकारक छे. चन्द्रनुं वृद्धत्व ३ दिवसनुं तेनुं बाल्यत्व अर्ध दिवसनुं अने अस्तत्व २ दिवसनुं होय छे. चन्द्रना अस्तमां परणनारी कन्या मृत्यु पामे चन्द्रना बाल्यमां परणनारी परपुरुषमां आसक्त थाय अने वार्द्धक्यमां परिणीता विधवा थाय.

गुरु-शुक्रास्तापवादे गर्गः—

नित्ययाने गृहे जीर्णे, प्राशने परिधानके ।
वधू प्रवेशे मांगल्ये, न मौढ्यं गुरुशुक्रयोः ॥ ३० ॥

भा०टी०—नित्यनी मुसाफरीमां, जूना घरना प्रवेशमां, अन्न प्राशनमां, वस्त्र परिधानमां, वधू प्रवेशमां तथा तात्कालीक मांगल्य कार्यमां गुरु शुक्रास्तनो दोष नथी.

गुरुवक्रत्वदोष—गुरु वक्रत्व अंगे शौनक, लल्लाचार्य आदि प्राचीन ग्रंथकारोए अमुक समय पर्यंत ते वर्जवानो निर्देश कर्यो छे. लल्ल कहे छे—

अतिचारे च वक्रे च, वर्जयेत्तदनन्तरम् ।
व्रतोद्वाहादि चूडाया-मष्टाविंशति वासरान् ॥३१॥

भा०टी०–गुरु अतिचारी अने वक्री थाय त्यारथी २८ दिवसो व्रत, विवाह, चौलकर्म, आदिमा वर्जवा जोईये.

टोडरानन्दकार लखे छे के—

अतिचारे सप्तदिनं, वक्रे द्वादशमेव च ।
नीचस्थितेऽपि वागीशे, मासमेकं विवर्जयेत् ॥ ३२ ॥

भा०टी०–गुरु अतिचारी होय त्यारे सात दिवस, वक्री थाय त्यारे बार दिवस अने नीचनो थाय त्यारे १ मास सुधी शुभ कार्यमा वर्जवो

मुहूर्तकल्पद्रुमकार लखे छे के—

वक्रे सुरेज्ये स्वगृहे दिनत्रयं,
वर्ज्यं मुनिन्द्रैरखिलेषु कर्मसु,
अन्यत्र राशौ मुनयस्त्यजन्ति,
ह्यष्टाधिकान्विंशति वासरान् हि ॥३३॥

भा०टी०—गुरु पोतानी राशिमा वक्री थाय त्यारे मुनिओ सर्व कार्योमा ३ दिवस वर्ज्य गणे छे, ज्यारे बीजी राशिमा गुरु वक्री थता २८ दिवसोने त्यागे छे

आम गुरु वक्रत्वने अंगे ज्योतिषिओमा एक वाक्यता नथी, कोई २८ दिवस, कोई १२ दिवस, अने कोई स्वराशिमा गुरु वक्रत्व-नो दोष ३ दिवस सुधी ज गणे छे, आथी समजाय छे के–गुरु वक्रत्व दोष प्रथमथी ज सर्व संमत न हतो, मुहूर्तचिन्तामणिना निम्नो-ल्लेखथी पण एज वात सिद्ध थाय छे—

अस्ते वर्ज्यं सिंहनक्रस्थजीवे, वर्ज्यं केचिद्वक्रगे चातिचारे ।
गुर्वादित्ये विश्वघस्रेऽपि पक्षे, प्रोचुस्तद्वद्दन्तरत्नादि भूषाम् ॥३४

भा०टी०–गुरुना अस्तमां जे वर्जित छे ते ज सिंहस्थ अने मकरस्थ गुरुमां पण वर्जवुं, कोई कही गया छे के–गुरुना वक्रत्वमां अतिचारमां, गुर्वादित्यमां अने १३ दिनना पक्षमां पण अस्तवर्जित कार्यो तथा दन्त–रत्नादिनां भूषणो वर्जवां.

चिन्तामणिकारना आ कथनानुसार खरे ज गुरु वक्रत्व अतिचारने दोष रूपे गणनारा 'केचित्' छे, 'सर्वे' नहि. ए ज कारण छे के गुर्वतिचार अने विश्वघस्रपक्षमां शुभ कार्यो न करवानी ज्योतिषीओमां चर्चा नथी. मुहूर्तकल्पद्रुमकार स्वराशिमां गुरुवक्रत्व होतां ३ दिवस वर्जवानुं कहे छे, पण स्वोच्चत्वमां गुरुवक्रत्व केटलुं वर्जवुं ए विषे मौन धारण करे छे. खरी रीते तो उच्चना गुरुवक्रत्वमां दोष ज नथी, एम ज कहेवुं जोईये, ज्यारे गुरु स्वोच्चांश अने स्ववर्गस्थित होय त्यारे पण वक्री, शत्रुक्षेत्री अथवा नीचनो होवा छतां शुभ गणाय छे, तो उच्चनो होय त्यारे तो गुरु वक्री छतां अशुभ गणाय ज केम ? ए संबन्धमां सुधीशृंगारवार्तिककार कहे छे के—

वक्रारिनीचराशिस्थः, शुभकृत् प्रोच्यते गुरुः ।
स्वोच्चांशस्थः स्ववर्गस्थो, भृगुणा ज्ञेन वा युतः ॥३५॥

भा०टी०–वक्री, शत्रुक्षेत्री, अथवा नीचराशिनो होवा छतां गुरु शुभकारक कहेवाय छे के जो ते पोताना उच्चांशनो, स्ववर्गनो, अथवा शुक्र वा बुधनी युतिमां होय, आ उपरथी सिद्ध ज छे के मकरना उच्चांशमां होवाथी पण गुरु जो शुभकारक छे, तो पोताना उच्चक्षेत्र–कर्कमां रहीने वक्री थतां ते दोषकारक केवी रीते बने ? ते विचारणीय वस्तु छे.

वक्रीग्रह बलवान के निर्बल ?–यद्यपि केटलाक ग्रन्थकारोए वक्रीग्रहने निर्बल अने मार्गस्थने बलवान गण्यो छे, तथापि

'आरम्भसिद्धि' आदि ग्रंथोमा " विपुलस्निग्धाश्च वक्रगाश्चान्ये " इत्यादि लेखोमां वक्रगामी ग्रहोने बलवान मान्या छे, पाकश्री नामक प्राचीन ज्योतिष ग्रन्थकार तो सर्व ग्रहोनी वक्रावस्थामां मूलत्रिकोण तुल्य बल बतावे छे, हर्षप्रकाशकारे " वक्री पावो बली सुभो सिग्घो " आ जे लख्युं छे तेनो कोई आधार मले तेम नथी, लखवुं तो एम जोईतुं हतुं के " सिग्घो पावो बली सुभो वक्की " अर्थात् पाप ग्रह शीघ्र होय त्यारे अने शुभ ग्रह वक्री होय त्यारे बलवान गणाय छे स्वरशास्त्रनी पण ए ज मान्यता छे ए विषयमां स्वरोदय शास्त्रनु वक्तव्य आ प्रमाणे छे—

क्रूरा वक्रा महाक्रूराः, सौम्या वक्रा महाशुभाः ।
बलिष्ठाः स्युः शुभा वक्राः, क्रूरा वक्रा बलोद्गताः ॥३६॥

भा०टी०—क्रूर ग्रहो वक्री थता महाक्रूर बने अने सौम्य ग्रहो वक्री होय त्यारे महाशुभ बने छे, वली सौम्य ग्रहो वक्री थता बलिष्ठ बने छे अने क्रूर ग्रहो वक्री थता बलहीन थई जाय छे. क्रूर छता शनि बलवान होय त्यारे कइक शुभ फल आपे छे, एथी विपरीत गुरु आदि सौम्य ग्रहो अतिचार गतिना थता अशुभ फल आपे छे, ज्यारे ते ज सौम्यग्रहो वक्री थता सुभिक्षता–समर्घतादि उत्पन्न करे छे, ए सर्व प्रतीत छे, आना परिणामे ज ज्योतिषीओए निम्नोक्त श्लोकगत फलनो निर्देश कर्यो छे—

अतीचारगते जीवे, वक्रे भौमे शनैश्चरे ।
हाहाभूतं जगत्सर्वं, रुण्डमुण्डा च मेदिनी ॥ ३७ ॥

भा०टी०—गुरु अतीचारी अने मगल तथा शनि वक्री होय त्यारे सर्वत्र जगतमा हाहाकार मचे छे ने पृथिवी धड–मस्तकथी छवाई जाय छे.

चक्रसंग्रह-दिनशुद्धिना विविध विभागोनुं निरूपण करी हवे अमो प्रासादादि मुहूर्तोपयोगी केटलांक उपयोगी चक्रो आपी पंचांग शुद्धि उपर आवीशुं.

नागवास्तुचक्र—मुहूर्तादित्यनिबन्धे—

इशाननः सर्पति कालसर्पो, विहाय सृष्टिं गणयेद् विदिक्षु।
पश्चाद्गतिस्थं मुखमध्यपुच्छं, त्रिकं त्रिकं वै वृषसंक्रमादौ॥३८॥

वेद्यां वृषाद् गृहे सिंहात, त्रिकं मीनात् सुरालये।
जलाश्रये मृगाद्याच्च, शेषनागस्य संस्थितिः॥३९॥

भा०टी०—शेषनाग वृषादि ३-३ संक्रांतिमां ईशान कोणथी सरके छे, विलोमक्रमथी पाछली तरफ गणतां वृष-मिथुन-कर्क संक्रांतिओमां ईशानमां मुख, वायव्यमां मध्य, नैर्ऋतमां पुच्छ अने अग्निकोण खाली होवाथी खात स्थान, ए ज रीते सिंह-कन्या-तुलामां एक विदिशा बदलतां अग्निकोणमां मुख, ईशानमां मध्य, वायव्यमां पुच्छ अने नैर्ऋते खातस्थान, वृश्चिक धनु, मकर, संक्रांतिमां नैर्ऋते मुख अग्निकोणे मध्य, ईशाने पुच्छ, वायव्ये खातस्थान अने कुंभ-मीन मेष संक्रांतिओमां वायव्ये मुख नैर्ऋते मध्य, अग्नेयीमां पुच्छ अने ईशानमां खातस्थान; आ क्रम प्रमाणे विवाहनी वेदीमां खातनो क्रम छे, घर, देवालय तथा जलाशयना खातने अंगे आ प्रमाणे जाणवुं-वृषथी वेदीमां, सिंहथी, गृहमां, मीनथी देवालयमां अने मकरथी जलाशयमां शेषनी स्थितिनो विचार करवो अर्थात् सिंह-कन्या-तुला आदि ३-३ संक्रांतियोथी गृहने अंगे, मीन-मेष-वृष आदि ३-३ संक्रांतियोना क्रमे देवालयने अंगे, मकर-कुंभ-मीन आदि ३-३ संक्रांतियोना क्रमे जलाशयने अंगे शेषनुं ईशानथी सर्पण सृष्टिक्रमथी गणी विलोम क्रमे मुख मध्य पुच्छ ज्यां आवतां होय ते विदिशाओने छोडी खाली पडेली विदिशामां खात करवुं.

उपर प्रमाणे मुंजादित्य निबन्धना श्लोकोनी व्याख्या करता शेष स्थिति शिल्पशास्त्रोक्त नागवास्तुना भ्रमणनी साथे बरोबर मळी रहे छे. "विहाय सृष्टिं" नो संबन्ध " गणयेद् " नी साथे न जोडता " सर्पति " क्रियापदनी साथे जोडी अर्वाचीन ज्योतिषिओए शेषनुं विलोम भ्रमण प्रचलित कर्युं छे जे आजकाल विशेष प्रचलित छे, आ बनी मान्यता प्रमाणे शेष स्थिति नीचे प्रमाणे मनाय छे, चिन्तामणौ —

> देवालये गेहविधौ जलाशये,
> राहोर्मुखं शंभुदिशो विलोमतः
> मीनार्के सिंहार्के मृगार्कतस्त्रिभे,
> खाते मुखात्पृष्ठविदिक् शुभा भवेत्॥ ४० ॥

भा०टी०—देवालय, गृह अने जलाशयना खात मुहूर्तमां अनुक्रमे मीनादि, सिंहादि तथा मकरादि ३-३ राशिना सूर्यमां शेषनुं मुख ईशानमां होय छे अने सव्य क्रमथी सरकता शेषनुं ते पछीनी ३-३ राशिना सूर्यमां वायव्यकोणमां, ते बादनी ३-३ राशिना सूर्यमां नैर्ऋत कोणमां अने छेल्ली धनुआदि, वृषादि अने तुलादि ३-३ राशिना सूर्यमां शेषनुं मुख आग्नेय कोणमां होय छे, शेषना मुखनी, पेटनी अने पुच्छनी विदिशा छोडीने तेना मुख पाछळनी विदिशा खातमां शुभ होय छे, मुख ईशानमां होय त्यारे आग्नेयी वायव्यमां होय त्यारे ईशान, नैर्ऋतमां होय त्यारे वायव्य अने आग्नेय कोणमां होय त्यारे नैर्ऋत कोण खात माटे शुभ जाणवो.

उक्त शेष स्थिति संबन्धी बने मान्यतानुसारी चक्रो नीचे प्रमाणे छे—

शिल्प शास्त्रानुसारी शेषस्थिति चक्र—

सूर्य राशि	विवाहे	देवालये	गृहारंभे	जलाशये	ईशाने	आग्नेये	नैर्ऋत्ये	वायव्ये
	२।३।४	१।२।१२	५।६।७	१०।११।१२	मुख	मध्य	पुच्छ	खात
	५।६।७	३।४।५	८।९।१०	१।२।३	खात	मुख	मध्य	पुच्छ
	८।९।१०	६।७।८	११।१२।१	४।५।६	पुच्छ	खात	मुख	मध्य
	११।१२।१	९।१०।११	२।३।४	७।८।९	मध्य	पुच्छ	खात	मुख

अर्वाचीन ज्योतिषग्रन्थानुसारी शेषस्थिति चक्र—

सूर्य राशि	विवाहे	देवालये	गृहारंभे	जलाशये	ईशाने	आग्नेये	नैर्ऋत्ये	वायव्ये
	२।३।४	१२।१।२	५।६।७	१०।११।१२	मुख	खात	पुच्छ	मध्य
	५।६।७	३।४।५	८।९।१०	१।२।३	खात	पुच्छ	मध्य	मुख
	८।९।१०	६।७।८	११।१२।१	४।५।६	पुछ	मध्य	मुख	खात
	११।१२।१	९।१०।११	२।३।४	७।८।९	मध्य	मुख	खात	पुच्छ

- शेषना अंगो पर खात करवानुं फल—

विदिक्त्रयं स्पृशंस्तिष्ठेत्, स्ववक्त्रनाभिपुच्छकैः ।
शेषस्तत्त्रितय त्यक्त्वा, भूखानकार्यमाचरेत् ॥ ४१ ॥
नाभौ च म्रियते भार्या, धनं पुच्छे मुखे पतिः ।
इति मत्वा शिलान्यासे, भूखाते तत्त्रय त्यजेत् ॥ ४२ ॥

भा०टी०—पोताना मुख नाभि पुच्छ वडे त्रण विदिशाओने स्पर्शीने शेष रहे छे माटे ते त्रणेनो त्याग करी शेष स्पर्श रहित विदिशामा भूमिने खोदवी नाभिस्थाने खोदवाथी स्त्री, पुच्छे खोदवाथी धन अने मुखभागे खोदवाथी गृहस्वामीनु मरण थाय छे, माटे खात अने शिलान्यासमा ते त्रणेनो त्याग करवो

दिशाओमां खात करवानो प्राचीनक्रम आरम्भसिद्धौ—

भाद्रादित्रित्रिमासेषु, पूर्वादिषु चतुर्दिशम् ।
वेद्वास्तोः शिरः पृष्ठ, पुच्छ कुक्षिरिति क्रमात् ॥४३॥

भा० टी०—भाद्रनादि ३–३ मास पूर्वादि ४ दिशाओमां वास्तुनु मस्तक, पृष्ठ, पुच्छ अने कुक्षि होय छे, एटले भाद्रपद आश्विन कार्तिकमां पूर्वमा मस्तक, दक्षिणमा पृष्ठ, पश्चिममा पुच्छ, उत्तरमा कुक्षि, मार्गशीर्ष पौष माघमा दक्षिणमा मस्तक पश्चिममा पृष्ठ उत्तरमा पुच्छ पूर्वमा कुक्षि, फाल्गुन चैत्र वैशाखमा पश्चिममा मस्तक, उत्तरमा पृष्ठ, पूर्वमा पुच्छ, दक्षिणमा कुक्षि, ज्येष्ठ, अषाढ, श्रावणमा उत्तरमा मस्तक, पूर्वमा पृष्ठ, दक्षिणमा पुच्छ पश्चिममा कुक्षि होय छे. मस्तक पृष्ठ पुच्छ छोडीने कुक्षि भागनी दिशामा खात करवु

आरम्भसिद्धिना उपर्युक्त विधानमा वास्तुभ्रमण जे अनुलोम गण्यु छे ए तो यथार्थ छे पण वास्तुनुं दक्षिणपार्श्वशयन मान्यु ए चिन्तनीय छे, प्राचीन ग्रन्थोमां वास्तुनुं अनुलोमभ्रमण मानवा साथे

तेने 'वामशायी' एटले डावे पडखे शयन करेल जणावे छे. अने कुक्षिभागे खात करवानुं विधान करे छे, वामशयन अने दक्षिणशयनमां कुक्षिनी दिशा एकबीजाथी तद्दन विपरीत आवे छे, आरंभसिद्धिनुं दक्षिण शयन शो आधार धरावे छे ते कही शकता नथी, पण आ उपरथी एक कल्पना थइ शके के अर्वाचीन ग्रन्थोमां नागवास्तुनुं विलोम सर्पण जे प्रचलित थयुं छे तेनुं कारण आ दक्षिणपार्श्वशयन पण होइ शके,

१ वृषभ वास्तु—

गृहारंभमां जेम शेषवास्तु जोवाय छे तेम " आरम्भे वृषभं वास्तुं " इत्यादि वचनानुसार आजकाल वृषभवास्तु जोवानुं पण आवश्यक थइ पडयुं छे, वृषभ वास्तुओ बे प्रकारनां जोवामां आवे छे, 'साभिजित्' अने 'निरभिजित्' प्राचीन ग्रन्थोक्त वृषभवास्तुओमां 'अभिजित्'नी गणना नथी ज्यारे अर्वाचीन ग्रन्थोक्त आ वास्तुमां अभिजित ग्रहण करेल छे, एम छतां बधां 'निरभिजित्' के बधां 'साभिजित्' वास्तुओनो पण आपसमां पूरो मेल मलतो नथी, अमो आ बंने प्रकारना वास्तुओमांथी नमूनारूपे बे बे वास्तुचक्रोनुं वर्णन आपीये छीये, आजकाल प्रचलित 'साभिजित्' वृषवास्तु-मिताक्षरवास्तु,

रविभात् सप्त नेष्टानि, शुभान्येकादशाष्टभात् ।
दशशेषाण्यनिष्टानि, साभिजिद् वृषवास्तुनि ॥४४॥

भा०टी०—अभिजित सहित वृषवास्तुमां सूर्य नक्षत्रथी ७ नक्षत्रो नेष्ट होय छे, आठमाथी १८ मा सुधीनां ११ श्रेष्ठ होय छे अने बाकीनां १९ माथी २८ सुधीनां १० अनिष्ट होय छे.

१–सूर्यभात् चन्द्रभं–७ नेष्ट, ११ श्रेष्ठ, १० नेष्ट.

२ साभिजित् वृषवास्तु वास्तुप्रकरणोक्त—

वृषवास्तु प्रवक्ष्यामि, यन्त्राणामुत्तमं स्मृतम् ।
यस्मिन् धिष्ण्ये स्थितः सूर्यस्तदादौ त्रीणि मस्तके ॥४५॥
क्रमाच्चत्वारि धिष्ण्यानि' वृषस्य पूर्वपादयोः ।
चत्वारि वामकुक्षौ च, दक्षिणे च चतुष्टयम् ॥४६॥
ऋक्षाणा च त्रयपुच्छे, चतुष्कं पश्चिमांघ्रियोः ।
शिरसि त्रीणिपृष्ठे च, विन्यसेत्त्रीणि पूर्ववत् ॥४७॥
मुखे च स्वामिनो मृत्युरुद्वासः पूर्वपादयो· ।
वामकुक्षौ दरिद्रत्व, दक्षिणे च धनागमः ॥४८॥
रोगव्याधिभय पुच्छे, स्थैर्यं पश्चिमपादयोः ।
मूर्ध्नि पृष्ठे श्रिय विन्द्यात्, फलं वृषभवास्तुके ॥४९॥

भा०टी०—यन्त्रोमा जे उत्तम गणाय छे ते वृषवास्तुने कहु छु, जे नक्षत्र सूर्यनुं होय तेने पहेलुं गणी ३ नक्षत्रो वृषभना मुखे, ते पछीना ४ वृषभना आगेना पगोए, ४ डाबी कुक्षिए, ४ जमणी कुक्षिए, ३ पुच्छ उपर, ४ पाछलना पगोए, ३ मस्तके अने ३ पीठ उपर देवा, पछी फल जोवु, चंद्र नक्षत्र वृषभना मुख पर होय तो वास्तुस्वामीनु मृत्यु, आगला पगोए होय तो वास्तु उज्जड थाय, डाबी कुक्षि उपर होय तो निर्धनता, जमणी कुक्षिए धनप्राप्ति, पुच्छ उपर रोग-व्याधि, पाछलना पगोए स्थिरता अने मस्तक तथा पृष्ठ भागे होय तो लक्ष्मीनी प्राप्ति थाय, ए वृषवास्तुनुं फल जाणवुं

२ सूर्यभान् चन्द्रभ–३ने ४ने. ४ने ४थे ३ने. ४थे. ३थे. ३थे

३ प्राचीननिरभिजित् वृषवास्तु–भूपालवल्लभे—
वृषाकार लिखेचक्र, सर्वावयवसुन्दरम् ।
गृहारम्भे मतिमान् प्रयत्नेन विलोकयेत् ॥५०॥
सूर्यभात् के त्रिभो राज्य, 'प्राक्पदोरब्धिभिर्गमः ।
पश्चिमाघ्रो· स्थितिर्वेदै·, पुच्छे रोग स्त्रिभिस्तु भैः ॥५१॥

कुक्षौ वामेऽब्धिभिर्नैःस्व्यं, दक्षिणेऽम्बुधिभिर्धनम् ।
राज्यलाभस्त्रिभिः पृष्ठे, द्वाभ्यां प्रान्ते प्रभोर्मृतिः ॥९२॥

भा०टी०—वृषभना आकारे सर्वावयवसुन्दर चक्र लखीने बुद्धिमाने गृहारंभमां प्रयत्नपूर्वक जोवुं. सूर्यनक्षत्रथी ३ नक्षत्रो वृषभना मस्तके लखवां, तेमां चंद्रनक्षत्र होय तो राज्यप्राप्ति करावे, ते पछीनां ४ वृषभना आगला पगोए लखवां, त्यां चंद्र होय तो गमन करावे, ४ पाछला पगोए देवां तेमां चंद्र होय तो स्थिरताकारक, वृषभना पुच्छ उपर ३ नक्षत्रो लखवां, तेमां चंद्रनक्षत्र होय तो रोग करे, ४ नक्षत्रो वृषभनी वामकुक्षिए लखवां, तेमां चंद्र होय तो निर्धनता करे, ४ नक्षत्रो जमणी कुक्षिए लखवां, त्यां चन्द्र होय तो धनप्राप्ति थाय, ते पछीनां ३ नक्षत्रो वृषभना पृष्ठभागे लखवां, त्यां चंद्र होय तो राज्यलाभ थाय अने छेल्ला २ नक्षत्रो वृषभना अंतभागे लखवां त्यां चंद्रनक्षत्र होय तो गृहस्वामीनुं मृत्यु थाय.

३. सूर्यभात्-चन्द्रनक्षत्र-३ श्रे. ४ ने. ४ श्रे. ३ ने. ४ ने. ४ श्रे. ३ श्रे. २ ने.

४-निरभिजित् वृषभवास्तु. चक्रावली संग्रहोक्त—

वह्नि ३ बाहु २ मुनि ७ वह्नि ३ कृत ४ नागा ८ श्च सूर्यभात् ।
क्रमात् शुभाशुभान्याहुर्गेहारम्ये मुनीश्वराः ॥९३॥

भा०टी०—सूर्यनक्षत्रथी चंद्रनक्षत्र ३ शुभ, २ अशुभ, ७ शुभ, ३ अशुभ, ४ शुभ, ८ अशुभ छे एम पूर्व मुनीश्वरो कहे छे.

४ सूर्यभात् चद्रभं-३ श्रे. २ ने. ७ श्रे. ३ ने. ४ श्रे. ८ ने.

५. वृषवास्तुचक्रं. स्वरशास्त्रे—

त्रिवेदाब्धित्रिवेदाब्धि-द्वित्रिभेष्वर्कतः शशी ।
श्री ऋद्धिः संस्थितिर्व्याधि-र्नैःस्व्यं श्रीः श्रीर्मृतिर्वृषे ॥९४॥

भा०टी०—सूर्यनक्षत्रथी चन्द्रमा वृषवास्तुमा पहेला ३ नक्षत्रोमा होय तो लक्ष्मीनी प्राप्ति, ते पछीना ४ नक्षत्रोमा होय तो ऋद्धि करे, ते पछीना ४ मा स्थितिकारक, ते पछीनां ३ मा होय तो व्याधि-रोग करे, ते पछीना ४ मा निर्धनताकारक, ते पछीना ४ मा लक्ष्मीकारक, ते पछीना ३ मा होय तो लक्ष्मीकारक अने छेल्लां ३ नक्षत्रो उपर होय तो मरणकारक थाय छे

५-सूर्यभात् चन्द्रर्क्षे-११ श्रे० ७ ने० ६ श्रे० ३ ने०

६. वृषवास्तुचक्र-मुजादित्यनिबन्धोक्त—

यद्दक्षे वर्ततेभानुस्तत्रादौ त्रीणि मस्तके।
त्रीणि मुखे प्रदेयानि, चत्वारि चाग्रपादयो. ॥५५॥

पश्चात्पदोश्च चत्वारि, पृष्ठे त्रीणि प्रदापयेत्।
चत्वारि दक्षकुक्षौ च, वामकुक्षौ चतुर्थकम् ॥ ५६ ॥
पुच्छे त्रीणि पुनर्दद्यात्, वृषचक्रे सदा बुधः।
गृहारंभे प्रयत्नेन, पश्यन्ति विबुधाः सदा ॥ ५७॥

भा०टी०-जे नक्षत्र उपर सूर्य रहेलो होय त्यांथी गणीने ३ नक्षत्रो वृषभना मस्तके देवा, ते पछीना ३ मुखे देवा, पछीना ४ आगलना पगोए देवा, ४ पाछला पगोए देवा, ३ पृष्ठभागे लखवा, ४ जमणी कुक्षिए ४ डाबी कुक्षिए अने ३ वृषभना पूछे लखवा, आ प्रकारे विद्वानो वृषभचक्र लखीने गृहारंभमा प्रयत्नपूर्वक ए चक्र जुए छे.

फल—

शिरःस्थे श्रियः संप्राप्ति-रुत्सं चाग्रपादयोः।
स्थिर पश्चिमपादस्थे पृष्ठदेशे धनागमः ॥ ५८ ॥
धनं तु दक्षिणे कुक्षौ, पुच्छे क्लेशकरो भवेत्।
वामकुक्षौ दरिद्रत्व, मुखे स्वामिविनाशनम् ॥ ५९ ॥

भा०टी०—वृषभना मस्तकस्थित नक्षत्रे चंद्र होय तो लक्ष्मीनी प्राप्ति थाय, आगला पगोना नक्षत्रे चंद्र होय तो उजड थाय, पाछला पगोमां चन्द्रनक्षत्रे स्थिरता, पृष्ठभागमां चंद्र होय तो धनप्राप्ति, जमणी कुक्षिए धनप्राप्ति, पूंछ उपर क्लेशकारी, वामकुक्षिए दारिद्र्य अने मुखना नक्षत्रे चंद्र होय तो गृहस्वामीनुं मरण थाय.

६ सूर्यभात् चन्द्रभं-३ श्रे. ३ ने. ४ ने. ४ श्रे. ३ श्रे. ४ श्रे. ४ ने. ३ ने. ३ श्रे. ७ ने. ११ श्रे. ६ ने.

७ वृषवास्तुचक्र चक्रावली संग्रहोक्त—

वह्नि ३ बाहु २ मुनि ७ वह्नि ३ कृत ४ नागा ८ श्च सूर्यभात् ।
क्रमात् शुभाऽशुभान्याहुर्गेहारम्भे मुनीश्वराः ॥ ६० ॥

भा०टी०—सूर्यनक्षत्रथी चंद्रनक्षत्र ३ शुभ, २ अशुभ, ७ शुभ, ३ अशुभ, ४ शुभ, ८ अशुभ छे एम पूर्वमुनिओ कहे छे.

७ सूर्यभात् चन्द्रभं-३ शु. २ अ. ७ शु. ३ अ. ४ शु. ८ अशुभ.

निशान्तचक्र-चक्रावली संग्रहोक्त

स्युः सप्तसप्ताऽनलभादुडूनि, प्राच्याश्चतुर्दिक्षु निशान्तचक्रे ।
पुरोगपृष्ठस्थमिहौषधीशं, त्यक्त्वा तदारंभणमिष्टमुक्तम् ॥६१॥

भा०टी०—पूर्वथी आरंभ करी कृत्तिकादि ७-७ नक्षत्रो पूर्वादि चारे दिशाओमां लखी चंद्रनक्षत्र जोवुं, जे दिशाना द्वार वाळुं घर होय ते ज दिशा द्वारवाला नक्षत्र उपर चंद्र होय अथवा घरना पृष्ठ भागना द्वारवाला नक्षत्रमां होय ते वखते ते घरना निर्माणनो आरंभ न करवो, डाबी-जमणी दिशाना कोई पण विहित नक्षत्र उपर होय त्यारे गृह निर्माण करवुं शुभकारक होय छे.

कूर्मचक्र–ज्योतिःसागरे—

तिथिस्तु पञ्चगुणिता, कृत्तिकाद्यृक्षसयुता।
तथा द्वादशमिश्रा च, नवभागेन भाजिता ॥ ६२ ॥
जले वेदा मुनिश्चन्द्रः, स्थले पञ्च द्वयं वसु ।
त्रिषट्क नव चाकाशे, त्रिविध कूर्मलक्षणम् ॥ ६३ ॥
जले लाभस्तथा प्रोक्त., स्थले हानिस्तथैव च ।
आकाशे मरण प्रोक्तमिद कूर्मस्य चक्रकम् ॥ ६४ ॥

भा०टी०—तिथिना आकने पाचगुणो करी कृत्तिकाथी गणता जे नक्षत्रनो अक आवतो होय ते तिथिना अकमा जोडवो अने ते अक राशिमा वली १२ नो अक मेलावीने तेने नवनो भाग देवो, भाग लागता शेष १।४।७ मानो कोई अक रहे तो कूर्म जलमा, २।५।८ रहे तो कूर्म स्थल उपर अने ३।६।०। शेष रहे तो कूर्म आ-काशमा जाणवो. जलमा कूर्म होय तो लाभ, स्थलमा होय तो हानि तथा आकाशमा कूर्म होय तो मरण थाय.

आ उपरथी कूर्मनो वासो जलमा जोई मुहूर्त आपवुं, कूर्म स्थलमा छे के आकाशमा ए जोवानुं महत्त्व नथी पण महत्त्व जलकूर्मनुं छे तेथी जलकूर्म जोवानो एक सुगम उपाय नीचे जणावीये छीए.

जलकूर्मचक्र—

नीचे आपेल १–थी १५ सुधीनी प्रत्येक तिथिना आंकनी सामे आपेल ९–९ नक्षत्रो पैकीनु कोइ पण नक्षत्र आवतु होय तो ते दिवसे कूर्मनो वास जलमा छे एम जाणवु.

जलकूर्म चक्र

तिथि	नक्षत्र								
१	रो	पुन	म	ह	वि	मू	श्र	पूभा	अश्वि
२	मृ	पु	पूफा	चि	अनु	पूषा	ध	उभा	भ
३	कृ	आर्द्रा	आश्ले	उफा	स्वा	ज्ये	उषा	श	रे
४	रो	पुन	म	ह	वि	मू	श्र	पूभा	अश्वि
५	मृ	पु	पूफा	चि	अनु	पूषा	ध	उभा	भ
६	कृ	आ	आश्ले	उफा	स्वा	ज्ये	उषा	श	रे
७	रो	पुन	म	ह	वि	मू	श्र	पूभा	अ
८	मृ	पु	पूफा	चि	अनु	पूषा	ध	उभा	भ
९	कृ	आ	आश्ले	उफा	स्वा	ज्ये	उषा	श	रे
१०	रो	पुन	म	ह	वि	मू	श्र	पूभा	अ
११	मृ	पु	पूफा	चि	अनु	पूषा	ध	उभा	भ
१२	कृ	आ	आश्ले	उफा	स्वा	ज्ये	उषा	श	रे
१३	रो	पुन	म	ह	वि	मू	श्र	पूभा	अश्वि
१४	मृ	पु	पूफा	चि	अनु	पूषा	ध	उभा	भ
१५	कृ	आर्द्रा	आश्ले	उफा	स्वा	ज्ये	उषा	श	रे

गृहद्वार शाखाचक्र—मुहूर्त चिन्तामणौ—

सूर्यक्षांद्युगमैः शिरस्यथ फलं लक्ष्मीस्ततः कोणभै,
नागैरुद्वसनं ततो गजमितैः शाखासु सौख्यं भवेत् ।
देहल्यां गुणभैर्मृति गृहपतेर्मध्यस्थितैर्वेदभैः ।
सौख्यं चक्रमिदं विलोक्य सुधिया द्वारं विधेयं शुभम् ॥६५॥

भा०टी०—सूर्यनक्षत्रथी ४ नक्षत्रो उत्तरंगे देवा, तेनुं फल लक्ष्मीप्राप्ति, ते पछीना ८ अनुक्रमे चार कोणोमां देवा, फल उद्वस एटले ते घर शून्युं रहे, ते पछीना ८ नक्षत्रो बे शाखाओमां देवां, फल सुखप्राप्ति, ते पछीना ३ नीचे उंबरा उपर देवा, फल गृहपतिनु मरण अने छेल्ला ४ शाखाओ वच्चे द्वार मध्ये देवा, फल सुखलाभ, आ प्रमाणे बुद्धिमाने चक्र जोईने द्वार शुभ कराववुं

शाखाचक्रनो सारांश—

सूर्यनक्षत्रथी ४ शुभ, ८ अशुभ, ८ शुभ, ३ अशुभ, ४ शुभ, आम शुभ स्थानीय नक्षत्रोमा द्वार मुहूर्त करवुं.

प्राकार-देवतायतनद्वार वत्सचक्र-चक्रावली सप्तर्षोक्त-
विकर्तनाक्रान्तभतो द्विपार्श्वभ,तन्मौलितो दिक्षु चतुष्टयं न्यसेत्।
द्वयं विदिक्षु त्रयमन्तरे क्रमाद्गोविदिक्स्थ न शुभं च मण्डलम् ६६॥
प्राकारदेवायतनाननेऽसौ भ्रमो भचक्रभ्रमणाग्यचिन्त्यः ।
सदैव पार्श्वभ्रमरीतिभेदो गृहादिकद्वार्युदितैश्च भागैः ॥६७॥

भा०टी०—सूर्याक्रान्त नक्षत्रथी ४ नक्षत्रो मस्तके, पछीना ४-४ शाखामा, अमणी शाखामा उंबरामा तथा डाबी २-२ चार कोणोमां अने ३ नक्षत्रो द्वार मध्यमा लग्ना कोट तथा देवालयमा, नीचेना उंबरानां ४ अने चार कोणना ८ नक्षत्रो अशुभ जाणवा, द्वारारोपणमा आ द्वार वत्सचक्रनो विचार करवो उत्तरंग, बे शाखाओ अने मध्यना नक्षत्रो द्वारारोपमा लेवां हंमेशा शाखा तथा कोण भाग गृहद्वार चक्रमा कह्या प्रमाणे ज आमां पण नक्षत्रो लखवानी रीति छे, नीचे ४ अने मध्यान्तरे ३ लखवानी आमा विशेषता छे.

सूर्यभात् चंद्रभ—८ श्रे. ४ ने. ४ श्रे ८ ने. ३ श्रे

देवालयद्वार चक्र—

अर्काच्चत्वारि ऋक्षाणि, ऊर्ध्वे चैव प्रदापयेत् ।
द्वे द्वे दद्याच्च कोणेषु, शाखायां च चतुश्चतुः ॥६८॥
अधश्चत्वारि देयानि मध्ये त्रीणि प्रदापयेत् ।
ऊर्ध्वे तु लभते राज्यमुद्वेगः कोणभेषु च ॥६९॥
शाखायां लभ्यते लक्ष्मीर्मध्ये राज्यपदं तथा ।
अधःस्थे मरणं पत्युर्द्वारचक्रे प्रकीर्तितम् ॥७०॥

कन्यादित्रित्रिगे सूर्ये, द्वारं पूर्वादिषु त्यजेत् ।
सृष्ट्या वत्समुखं तत्र, स्वामिनो हानिकृद् भवेत् ॥७१॥

भा०टी०—कन्या तुला वृश्चिक, धनु मकर कुंभ ३, मीन मेष वृष, ४ मिथुन कर्क सिंह—आ ४ राशित्रिकोना सूर्यमां अनुक्रमे पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर मुखवाला घरो के चैत्योनुं द्वारारोपण करवुं नहिं, कारण के आ त्रण त्रण संक्रांतियोमां सृष्टिक्रमे दिशाओमां वत्सवासो संमुख होय छे, जे वास्तु स्वामिने हानिकारक थाय छे.

ग्रन्थान्तरेवत्सचारने अंगे विशेष विधान मले छे जे नीचे प्रमाणे छे—

पञ्चमदिक् १० तिथि १५ सत्रिंश ३०,
तिथि १५ दिक् १० पञ्च ५ वासरान् ।
वत्सस्थितिर्दिक्चतुष्के, प्रत्येकं सप्तभाजिते ॥

भा०टी०—वत्सस्थिति चार दिशाओ पैकी प्रत्येक दिशामां ७–७ स्थाने होय छे, जे समये वत्स ज्यारे नवी दिशामां जाय छे, त्यारे ५ दिवस ते दिशाना कोणना छेडा पासे रहे छे, ते पछी कोणथी आगल वधी १० दिन दिशार्धना मध्यभागे अने त्यांथी सरकी १५ दिवस दिशामध्यनी बहार रहे छे, ते पछी दिशा मध्यमां जई ३० दिवस त्यां रहे छे त्यांथी आगे आगे चालतो

१५-१०-५ दिवसना क्रमे श्रीजो मास पूर्ण करी आगेनी दिशामां जाय छे अने त्यां पण जुदा जुदा भागोमां रहीने ३ मास पूरा करे छे, आम प्रत्येक दिशामा वत्सनी स्थिति रहे छे, आमा मध्यना ३० दिवसनी वत्सस्थितिमा ते सम्मुख के पाछल पडतो होय त्यारे द्वारारोप अथवा प्रतिमा प्रवेश कदापि न कराववो, वत्स थोडो पण डाबो जमणो दिशान्तरित होय त्यारे खास बाधो नथी एनो तात्पर्यार्थ ए थयो के तुला, मकर, मेष, कर्क आ चार राशिओमां अनुक्रमे पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर दिशाना घर आदिनुं द्वार न चढाववुं, वृश्चिक, कुंभ, वृषभ, सिंह राशिना सूर्यमा कोई पण दिशा संमुख द्वार चढाववामा वत्सनो दोष नथी. आ फलितार्थ रूपे ज ग्रन्थान्तरमा—

सिंहे चैव तथा कुम्भे, वृश्चिके वृषभे तथा ।
न वत्सदोषो कर्तव्य, द्वार चतुर्दिशा मुखम् ॥ ७२ ॥

आ श्लोक लखायो छे

कन्या, धन, मीन, मिथुन आ ४ द्विस्वभाव राशिना सूर्यमा कोई पण दिशा संमुख द्वारारोपण करातुं नथी, धन, मीन तो मलमास रूपे वर्जित छे ज अने मिथुन कन्या संक्रातिओ पण गृहकार्यमा वर्जित करेली छे.

वत्सस्थितियंत्रक—

	५	१०	१५	३०	१५	१०	५	
५		कन्या		तुला		वृश्चिक		५
१०	सिंह			पूर्वदिशा			धन	१०
१५								१५
३०	कर्क	उत्तर		वत्सचक्र		दक्षिणदिशा	मकर	३०
१५								१५
१०	मिथुन			पश्चिमदिशा			कुंभ	१०
५		वृष		मेष		मीन		५
	५	१०	१५	३०	१५	१०	५	

नीचे जणावेल कार्योमां वत्सदोष नडतो नथी.

द्वारस्याभ्यन्तरे द्वारे, प्रासादे च चतुर्मुखे
प्रतिष्ठामण्डपे होमस्थाने वत्सं न चिन्तयेत् ॥ ७३ ॥

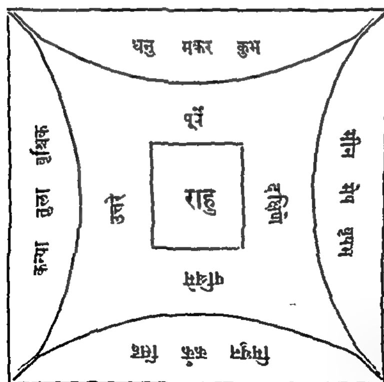
भा०टी०—वास्तुना बाह्य मुख्यद्वारनी अंदरना द्वारारोपणमां, चतुर्मुख प्रासाद अथवा घरप्रतिष्ठा मंडप के होमशालाने द्वारारोपणमां वत्सदोष विचारवानी आवश्यकता नथी.

राहुचक्रनुं निरूपण—

मागसर पोसह माह अंतर, पुविइं वसइ राहनिरंतर ।
फागुण चैत्र वैसाख संजुत्त, दक्षिण राह वसइ निरुत्त ॥१॥
जेठ आसाढ श्रावण मासिइं, पश्चिम राहु वसइ विलासिइं ।

भाद्रवइ आसो कार्तिक दइताणु उत्तर राहु करइ वियाणुं ॥२॥
कौमठ देउल आराम विहार, समुख राहु न कीजइ वार ॥
समुख राहु जइमंदिर थप्पइ, मरइ कलत्र कइ निर्धनअप्पइ॥३॥

आ प्राचीन भाषापद्योमा मागसर आदिथी पूर्वादिमा राहु भ्रमण जणाव्यु छे ज्यारे "मीनादित्रयमादित्यो" आ संस्कृत श्लोकमा "धन्वादित्रितये राहुः" आ वाक्यथी मीन, मिथुन कन्यादि ३-३ राशिना सूर्यमा वृश्चिकमथी पूर्वादि दिशाओमा राहुनो निवास जणाव्यो छे, आ घने कथनलुं तात्पर्य एक ज छे, प्रथम कथन अमान्त महीनानी अपेक्षावालुं छे ज्यारे बीजु विधान सौर मासनी अपेक्षावालुं छे



स्तंभचक्र—

सूर्याधिष्ठितभात् त्रयं प्रथमतो मध्ये तथा विंशतिः।
स्तम्भाग्रे शरसंख्यया मुनिवरैः प्रोक्तानि धिषणानि च।
स्तंभाधो मरणं भवेद् गृहपतेर्मध्येधनार्थं प्रदं ।
सौख्यं काञ्चनवर्धनं, प्रकुरुते स्तंभाग्रभं मृत्युकृत् ॥७४॥

भा०टी०—रविया नक्षत्रथी ३ नक्षत्रो प्रथम स्तंभमूले देवां, ए पछीनां २० स्तंभना मध्यमां देवां अने ५ स्तंभना मस्तके देवां, आम स्तंभचक्र लखी पछी फल जोवुं. स्तंभना नीचेना ३ नक्षत्रोमां स्तंभ उभो करे तो गृहपतिनुं मरण थाय, ते पछीनां मध्यस्थित २० नक्षत्रो धन धान्य-आपनारां, सुख तथा सुवर्णादिनी वृद्धि करनारां छे. स्तंभना मथाळे आवेल छेल्लां ५ नक्षत्रो पण गृहपतिनुं मृत्यु करनारां छे माटे टालवां. आ प्रमाणे स्तंभचक्रमां सूर्यभात ३ नेष्ट, २० श्रेष्ठ अने ५ नेष्ट छे.

स्तंभोच्छ्रायमां एथी अधिक कंइ जोवानुं नथी, पण उभो करवाना समये कुंकुम चंदनादिके स्तंभनुं पूजन जरूर करवुं, धूप उखेववो, माला पहेरावत्री अने पछी ते उभो करवो. वराह कहे छे—

"छत्रस्रग्गन्धयुतः, कृतधूपविलेपनः समुत्थाप्यः ।
स्तम्भस्तथैव कार्यो, द्वारोच्छ्रायः प्रयत्नेन ॥"

भा०टी०—छत्र, पुष्पमाला, गन्ध वडे युक्त करी धूप विलेपन करीने स्तंभने उभो करवो अने ए ज रीते यत्नपूर्वक द्वार पण चढाववो. स्तंभ उभो कर्या पछी अशुभ निमित्तोथी बचाववो. उत्पल कहे छे—

"स्तंभोपरि यदा घूक–काकगृध्रादिपक्षिणः ।
व्यालादयश्च तिष्ठन्ति, तदा फलं न शोभनम् ॥
तस्मात्स्तम्भोपरि छत्रं, शाखां फलवतीं तु वा ।
धारयेदथवा वस्त्रं, बुधे रत्नानि निक्षिपेत् ॥"

भा०टी०—स्तंभ उपर जो घूवड, काग, गृध्र आदि पक्षिओ के सर्प आदि बेसे तो करावनार माटे शुभ निमित्त नथी तेथी स्तंभोच्छ्राय करी ते उपर छत्र वा फलवाळी शुभ शाखा ढांकवी अथवा वस्त्रमां रत्न बांधी ते काठे बांधवुं

मोभचक्र—

मूले मोभे त्रिऋक्षं गृहपतिमरणं पञ्चमध्ये सुखं स्यात्,
मध्ये स्यादष्टऋक्षं धनसुतसुखदं पुच्छदेशेऽष्टहानिः ।
पश्चान्मोभे त्रिऋक्षं शुभफलमतुलं भाग्यपुत्रार्थदं च,
सूर्यर्क्षाच्चन्द्रऋक्षं प्रतिदिनमुडयान्मोभचक्रे विलोक्यम् ॥७५॥

भा०टी०—सूर्यनक्षत्रथी ३ मोभना मूलमां लखवा, तेमां जो चन्द्र होय तो गृहस्वामीनुं मरण थाय, ५ नक्षत्रो मोभना मध्य भागे लखवा, तेमां जो चंद्र होय तो सुखदायक थाय, ८ ते पछीना वली मध्ये लखवा त्यां चंद्र होय तो धन तथा पुत्रनुं सुख थाय. पुच्छ भागे ८ नक्षत्रो लखवा त्यां चंद्र होय तो हानि करे. मोभना छेल्ला भागे ३ नक्षत्रो लखवा तेमां जो चंद्र होय तो अतुल शुभ फल भाग्य पुत्र संपत्तिदायक थाय.

सूर्यभात् चंद्रभ–३ ने०, ५ श्रे०, ८०, ने०, ३ श्रे०,

घण्टाचक्र-आमलसारास्थापनचक्र—

घण्टाचक्रं विधायैवं, मध्यपूर्वदिशाक्रमात् ।
त्रीणि त्रीणि प्रदेयानि, सृष्टिमार्गेण चार्कभात् ॥७६॥
मध्ये चैव स्मृतो लाभः, पूर्वभागे जयो रणे ।
आग्नेय्यां चैव हानिः स्याद्, दक्षिणे पतिनाशनम् ॥७७॥
नैर्ऋत्यां पारणालाभः, पश्चिमे सर्वदा सुखम् ।
वायव्यामश्वलाभः स्यादुत्तरे व्याधिसम्भवः ।
ईशाने वस्त्रलाभश्च, घण्टाचक्रफलं स्मृतम् ॥७८॥

४ कलशचक्र-भूपालवल्लभे—

एकं मुखे गले त्रीणि, प्राच्यादौ षोडश क्रमात् ।
वेदा गर्भे त्रीणि गुदे, सूर्यभात् कलशं न्यसेत् ॥८४॥
शिरश्छेदो मृतिः स्थान-हानिर्लाभो धनागमः ।
दुःखं गर्भच्युतिर्मृत्यु-र्गृहेप्रविशतां क्रमात् ॥८५॥

भा०टी०—कलशचक्रे सूर्यनक्षत्रथी १ मुखे, ३ गले, ४-४ चार दिशाओमां, ४ गर्भमां, ३ गुदा स्थाने, आ स्थानमां नक्षत्रोनुं अनुक्रमे फल-१ शिरच्छेद, ३ मृत्यु, ४ स्थानहानि, ४ लाभ, ४ धनप्राप्ति, ४ दुःख, ४ गर्भस्राव, ३ मृत्यु. आ प्रमाणे प्रवेश करनाराओने फल मले.

सूर्यभात् चंद्रभं-८ ने०, ८ श्रे०, ११ ने०.



(१) तिथि

तिथिओ १५ छे, प्रतिपदादि पूर्णिमान्त, कृष्णपक्षनी अन्तिम तिथि अमावास्याना नामथी प्रसिद्ध छे, आ सर्व तिथिओना स्वामिओ छे, अने ते सकारण छे. पंदर तिथिओने ३ भागमा वहेंची ते नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता, पूर्णा आ नामोथी ओळखावी कई तिथिमा कयां कामो करवा ए बधी वातोनो पूर्वग्रन्थकारोए निर्णय आपेलो छे, जिज्ञासुओनी जिज्ञासा पूर्त्यर्थ अत्रे थोडुंक वर्णन करवु योग्य धारीये छीये.—

वह्निर्विधाताऽद्रिसुता गणेशः,
सर्पः कुमारो दिनपो महेशः ।
दुर्गा यमो विश्वहरी च कामः,
शिवो निशीशश्च पुराणदृष्टः ॥ ८५ ॥

भा०टी०—अग्नि, ब्रह्मा, गौरी, गणेश, सर्प, कार्तिकेय, सूर्य, महेश्वर, दुर्गा, यमराज, विश्वदेव, विष्णु, कामदेव, शिव, अने चन्द्रमा ए प्रतिपदादि तिथिओना पौराणिक स्वामिओ छे. संहिताओमा तिथिस्वामीओ अनुक्रमे नीचे प्रमाणे बतावेल छे—धाता १ विधाता २ विष्णु ३ यम ४ चन्द्र ५ कार्तिकेय ६ इन्द्र ७ वसु ८ नाग ९ धर्म १० शिव ११ सूर्य १२ काम १३ कलि १४ विश्वदेव १५ आ प्रतिपदादि पूर्णिमा पर्यन्त १५ तिथिओना स्वामिओ छे, शुक्लपक्ष–कृष्णपक्षना भेद नथी, मात्र अमावास्याना स्वामी पितरो छे.

नन्दा च भद्रा च जया च रिक्ता,
पूर्णेति सर्वास्तिथयः क्रमात्स्युः ।

शुक्लेऽधमा मध्यमकोत्तमास्ताः,
पक्षेऽसितेऽप्युत्तममध्यहीनाः ॥ ८६ ॥

भा०टी०—नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता अने पूर्णा आ नामनी अनुक्रमे सर्व तिथिओ होय छे, आमां शुक्लपक्षमां पहेली ५ अधम मध्यनी ५ मध्यम अने अन्तनी ५ अधम होय छे. अने कृष्णमां एथी उलट क्रमे ते उत्तम मध्यम अने अधम गणाय छे.

तिथि विधेय कार्यो—

नोद्वाहयात्रोपनयप्रतिष्ठा,
सीमन्तचौलाखिलवास्तुकर्म ।
गृहप्रवेशाखिलमंगलाद्यं,
कार्यं हि मासादितिथौ कदाचित् ॥ ८७ ॥
सप्ताङ्गचिह्नानि नृपस्य वास्तु,
व्रतप्रतिष्ठाखिलमंगलानि ।
यात्राविवाहाखिलभूषणं यत्,
कार्यं द्वितीयादितिथौ सदैव ॥ ८८ ॥
संगीतविद्याखिलशिल्पकर्म,
सीमन्त चौलान्नगृहप्रवेशम् ।
कार्यं द्वितीये दिवसे यदुक्तं,
सदा तृतीये दिवसेऽपि कार्यम् ॥ ८९ ॥
रिक्तासु शत्रोर्वधबन्धशस्त्र-
विषाग्निघातादि च याति सिद्धिम् ।
सन्मंगलं तासु कृतं च मूढै-
र्विनाशमायाति तदा तु नूनम् ॥ ९० ॥
शुभानि कार्याणि चरस्थिराणि,
चोक्तान्यनुक्तान्यपि यानि तानि ।

सिद्धिं प्रयान्त्याशु ऋणप्रदानं,
विना सदा नागतिथौ प्रभूतम् ॥ ९१ ॥

भा०टी०—विवाह, यात्रा, उपनयन, प्रतिष्ठा, सीमन्त, चूडाकर्म, सर्व वास्तुकर्म अने गृहप्रवेशादि सर्व मांगल्य कार्यो शुक्ल प्रतिपदाने दिवसे कदापि न करवा. राजाना सघळा चिह्नो, वास्तुकर्म, व्रत, प्रतिष्ठादिक सर्व मांगलिक कार्यों, यात्रा, विवाह, सर्व आभूषण आदि कार्य द्वितीयादि तीथिना दिवसे सदा करवा. संगीतविद्या, सर्व प्रकारनु शिल्पकर्म, सीमन्त, चूडाकर्म, अन्नप्राशन, गृहप्रवेश अने द्वितीया तिथिए करवाना जे कार्यो कह्या छे ए पण बधा कार्यो तृतीयाना दिवसे पण करवा.

रिक्ता तिथिओमा (चोथ-नवमी-चतुर्दशीमा) शत्रुनो वध, बन्ध, शस्त्र, अग्नि, विषप्रयोग, घातादि कार्यो सिद्धिने पामे छे आ रिक्ताओमा मूढ माणसो द्वारा करायेला मांगलिक कार्यो निश्चयथी नाश पामे छे. चर के स्थिर कहेल के न कहेल मात्र एक ऋणदान विना बधा शुभ कार्यो पंचमीए करवाथी जल्दी सिद्ध थाय छे.

अभ्यङ्गयात्रापितृकर्मदन्त
काष्ठं विना पौष्टिकमंगलानि ।
षष्ठ्यां विधेयानि रणोपयोग्य-
शिल्पानि वास्त्वम्बरभूषणानि ॥ ९२ ॥

द्वितीयायां तृतीयायां पञ्चम्यां सप्तमीतिथौ ।
उक्तानि यानि सिध्यन्ति, दशम्यां तानि सर्वदा ॥ ९३ ॥

भा०टी०—अभ्यंग (तैलमर्दन) यात्रा, पितृकर्म, दन्तधावन आ चार कार्यो सिवाय पौष्टिक, मांगलिक, युद्धोपयोगी शिल्पकर्म,

वास्तुकर्म, वस्त्रपरिधान, भूषण, धारण, ए कार्यो षष्ठीमां करवां. द्वितीया तृतीया अने पंचमीमां करवानां सर्व कार्यों सप्तमीमां करवाथी सिद्ध थाय छे. युद्धोपयोगी वास्तुकर्म, शिल्प, नृत्यना भेदो, स्त्री सेवा, रत्नविधि, सर्व भूषणो आ कामो अष्टमीमां करवां, द्वितीया, तृतीया, पंचमी अने सप्तमीए करवानां जे कार्यो कह्यां छे ते सर्व दशमीए करवाथी सिद्ध थाय छे.

व्रतोपवासाखिलधर्मकार्य-
सुरोत्सवाद्याखिलवास्तुकर्म ।
संग्रामयोग्याखिलवास्तुकर्म,
विश्वे तिथौ सिद्धयन्ति शिल्पकर्म ॥ ९४ ॥

पृथिव्यां यानि कार्याणि, कर्मपुष्टिशुभानि च ।
चरस्थिराणि द्वादश्यां यात्रान्नग्रहणं विना ॥ ९५ ॥

विधातृगौरीभुजग-भान्वन्तकदिनेषु च ।
उक्तानि तानि सिध्यन्ति, त्रयोदश्यां विशेषतः ॥ ९६ ॥

यज्ञक्रियापौष्टिकमंगलानि,
संग्रामयोग्याखिलवास्तुकर्म ।
उद्वाहशिल्पाखिलभूषणाद्यं,
कार्यं प्रतिष्ठाखिलपौर्णमास्याम् ॥ ९७ ॥

सदैव दर्शे पितृकर्म चैव,
नान्यत् विधेयं शुभपौष्टिकाद्यम् ।
मूढैः कृतं तत्र शुभोत्सवाद्यं,
विनाशमायात्यचिराद्ध्रुवं तत् ॥ ९८ ॥

भा०टी०—व्रत, उपवास, सर्व धार्मिक कार्य, देव सम्बन्धी उत्सवादि सर्व वास्तुकार्य, युद्धोपयोगी वास्तुकार्य अने शिल्पकर्म ए

सर्व कार्यो एकादशीमा करवाथी सिद्ध थाय छे पृथ्वी उपर यात्रा अने अन्नप्राशन सिवाय जे चर स्थिर शुभ अने पौष्टिक कार्यो छे, ते द्वादशीमा करवाथी सिद्ध थाय छे. द्वितीया, तृतीया, पचमी, सप्तमी, दशमीए करवानां कार्यो त्रयोदशीए करवाथी विशेष प्रकारे सिद्ध थाय छे यज्ञकर्म, पौष्टिक, मागलिक, युद्धोपयोगी सर्व वास्तुकर्म, विवाह, शिल्पकर्म, सर्व प्रकारना आभूषणो अने प्रतिष्ठाना कार्यो पूर्णिमाए करवा. अमावास्याना दिवसे पितृकर्म (श्राद्धादि) विना बीजु कर्म शातिक पौष्टिकादि कइ पण करवु नही. मूर्खो द्वारा अमावास्याना दिवसे जे शुभ उत्सवादि कराय छे ते अवश्य विनाश पामे छे.

चतुर्दश्यष्टमी कृष्णा, त्वमावास्या च पूर्णिमा ।
पुण्यानि पच पर्वाणि, सक्रान्तिर्दिनपस्य च ॥ ९९ ॥

पञ्चपर्वसु पाते च, ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ।
नरश्चाण्डालयोनिः स्यात्, तैलस्त्रीमांससेवनात् ॥१००॥

पञ्चपर्वसु नन्दासु, न कुर्याद्दन्तधावनम् ।
तत्र कुर्यादनादृत्य, स नरो विधिहन्तकः ॥ १०१ ॥

भा०टी०—वने चतुर्दशी कृष्णाष्टमी अमावास्या पूर्णिमा ए पुण्य पर्वो छे, तेम सूर्यसक्रान्ति पण पर्व छे. ए पाच पर्वोमा पातमा अने चन्द्र सूर्यना ग्रहणमा तैलाभ्यग, स्त्रीसेवन अने मास भक्षण करनार पुरुष भवान्तरमा चण्डालनी योनिमा उत्पन्न थाय छे, पाच पर्वो अने नन्दातिथिओमा दन्तधावन न करवु जोइये, जे मनुष्य आ वातनो अनादर करीने उक्त कामो करे छे, ते विधिहतक समजवो

नवमी त्रिविधा ज्ञेया, प्रवेशनवमी प्रयाणनवमी च ।
नवमदिन निर्गमत. प्रवेशनवमीति विख्याता ॥१०२॥

नवमदिनं प्रवेशाद् यत्, प्रयाणनवमी च नवमदिनम् ।
सततं नवमी त्रितयं, यात्रायां प्राणहानिदं यातुः ॥१०॥

भा०टी०—नवमी त्रण प्रकारनी जाणवी, रिक्तानवमी प्रयाण-नवमी अने प्रवेशनवमी, नवमी तिथिए रिक्तानवमी, प्रयाणनो-नवमो दिवस ते प्रवेशनवमी, प्रवेशथी जे नवमो दिवस ते प्रयाण नवमी. आ त्रण नवमीओ यात्रामां अवश्य वर्जवी, कारण के यात्रा करनारने प्राण हानि करनारी थाय छे.

भिन्न भिन्न कार्योना मुहूर्तोने अंगे भिन्न भिन्न तिथिओ विहित अने निषिद्ध होय छे. बंने पक्षनी, २-३-५-७-१०-११-१३ अने शुक्ल १५ अने कृष्णा १ आ तिथिओ प्रत्येक शुभ कार्यमां विहित छे, ज्यारे बंने पक्षनी ४-६-८-९-१२-१४ आ तिथिओने पक्षरंध्रा गणी शुभ कार्योमां वर्जित करेली छे.

ग्रहण करवा योग्य वर्जित तिथि आ अशुभ घटिकाओ व्यतीत थया पछीना तिथिभुक्तिकालमां मुहूर्त अपाय तो तेमां पण तिथि शुद्धि ज गणाय छे. आ निषिद्ध तिथिओ पैकीनी कइ तिथिनी केटली आदीनी घडीओ गया पछी ते शुद्ध गणाय ते नीचे प्रमाणे पद्यथी जाणी शकाशे.

कलि १४ वसु ८ गणपति ४ षणमुख ६
हरि १२ दुर्गा ९ तिथिषु पक्ष रन्ध्रासु ।
शरपूमनु १४ वसु ८ गो ९ दशभि १०
स्तत्व २५ विहीनान्त्यनाडिका शुभदाः ॥ १०४ ॥

भा०टी०—चतुर्दशी, अष्टमी, चतुर्थी, षष्ठी, द्वादशी, नवमी आ पक्षरन्ध्रातिथिओमां अनुक्रमे ५-१४-८-९-१०-२५ आदिनी घडीओ पछीनी घडीओ शुभदायक होय छे.

कुलोपकुल तिथिओ—

प्रतिपदा तृतीया, पचमी, सप्तमी, नवमी, एकादशी, त्रयोदशी पूर्णिमा आ आठ तिथिओ उपकुल छे. चतुर्थी अष्टमी द्वादशी चतुर्दशी कुल छे, अने द्वितिया षष्ठी, दशमी, आ ३ तिथियो कुलोपकुल सज्ञक छे उपकुल तिथिमा प्रयाण करनार युद्धमा जीते, कुलमा युद्ध थाय तो स्थायी जीते, कुलोपकुलमा सधी थाय.

तिथि वृद्धि तिथि क्षयः—

पक्षरन्ध्र तिथिओनी जेम ज तिथिवृद्धि अने तिथिक्षय पण शुभ कार्यमा वर्जित करेला छे. एनी व्याख्या नीचे प्रमाणे छे—

त्रीन् वारान् स्पृशती त्याज्या, त्रिदिनस्पर्शिनी तिथिः।
वारे तिथित्रयस्पर्शिन्यवमं मध्यमा च या ॥ १०५ ॥

भा०टी०—त्रण वारोने स्पर्शनारी तिथि त्रिदिन स्पर्शिनी कहेवाय छे एटले के त्रण वारो पैकीना वचला वारने स्पर्शती तिथि वर्जित छे एथी विपरीत एक वार ज्यारे त्रण तिथिओने स्पर्शे छे त्यारे तिथि क्षय थाय छे आ एक वारे स्पर्शेली त्रण तिथिओ पैकीनी वचली तिथि अवम एटले क्षीण तिथि गणाय छे आ वस्तु नीचेना उदाहरणोथी समजाशे

एक तिथि त्रण वारनो स्पर्श करे तेनुं उदाहरण—

संवत् २०१०ना चण्डमार्त्तण्ड पञ्चाङ्गमा ज्येष्ठ शुक्ला नवमी नी वृद्धि छे. ज्येष्ठ शुदी ८ शुक्रवारे अष्टमी घटी ५७ पल० छे—शनिवारे प्रथम नवमी घटी ६० पल छे अने द्वितिय ९ नवमी रविवारे घटी १ पल २६ छे ज्येष्ठ शुदि ८ नी ५७ घडीओ वीत्या पछी नवमी लागी एटले ३ घडी पर्यन्त अष्टमीना वार शुक्रनो नवमीए स्पर्श कर्यो, प्रथम नवमीना वार शनिनो नवमीए ६० घडी

पर्यन्त स्पर्श कर्यो अने द्वितीय नवमीना वार रविनो नवमीए १ घडी २६ पल पर्यन्त स्पर्श कर्यो, आ कारणथी आ त्रण वारो पैकीना वचला शनिवारनी नवमी वृद्धितिथि गणाइ.

एक वार त्रण तिथिओनो स्पर्श करे तेनुं उदाहरणः—

संवत् २०१०ना चण्ड मार्त्तण्डमां ज आषाढ (गुजराती जेठ) वदि २नो क्षय छे, वदि प्रतिपदाना दिवसे रविवार छे अने सूर्योदय उपरान्त १ घटी ५७ पल प्रतिपदा होवाथी रविवार तेनो स्पर्श करे छे ते पछी घटी ५७ पल ३५ सुधी रविवारमां द्वितिया भुक्त थइ छतां रविवारनो दिवस पूरो न थतां शेष भागमां तृतीया लागी, तृतीयानो आरंभ पण रविवारे ज थयो. आम एक रविवारे प्रतिपदा द्वितीया तथा तृतीयानो स्पर्श कर्यो तेथी वचली तिथि द्वितियानो क्षय थयो. प्रतिपदाना दिवसे १–५७ घटी पल पछी अवम लाग्युं अने ५७–३५ घटी पले समास थयुं, केटलाक ज्योतिषिओ वृद्धि प्रसंगे त्रीजा वारने स्पर्शती तिथिने वृद्ध गणे छे ते अशास्त्रीय छे. ए ज रीते क्षयतिथि तरीके पण त्रीजी तिथिने वर्जे छे ए पण शास्त्र विरुद्ध छे.

सूर्यदग्धा तिथिओ, प्रत्येक संक्रान्तिमां अमुक सम तिथि सूर्य दग्धा होय छे.

सूर्यदग्धा तिथिओ जाणवानो उपाय—

दग्धामर्केण संक्रान्तौ, राश्योरोजयुजोस्त्यजेत् ।
भूत ५ दृग् २ युक्तयोः शेषां, शोधिते भगणे तिथिम् ॥१०६॥

भा०टी०—विषम अने सम राशिओनी संक्रांतिमां विषम राशिमां ५ अने समसां २नो अंक जोडतां जे संख्या थाय तेमांथी १२ ओछा करतां जे संख्या रहे तेटलामी तिथि ते संक्रांतिमां

" सूर्यदग्धा " होय छे. तेने शुभ कार्यमा वर्जवी, आ नियमनुं फलितार्थ नीचेना श्लोकमा बतावेल छेः—

दग्धाऽर्केण धनुर्मीने, वृषकुंभेऽजकार्किणि ।
द्वन्द्वकन्ये मृगेन्द्रालौ, तुलैणे द्व्यादियुक्तिथिः ॥१०७॥

भा०टी०—धनु मीनमा २ वृष कुंभमा ४ मेष कर्कमा ६ मिथुन कन्यामां ८ सिंह वृश्चिकमा १० अने तुला मकरमा १२, आ द्वितीयादि समतिथिओ सूर्यथी दग्ध होय छे.

अर्वाचीन ज्योतिषी ग्रन्थोमा चन्द्रदग्धा तिथिओ पण बतावेली छे, अने शुभ कार्यमा तजवानुं कथन छे, पण आ चन्द्रदग्धा तिथिओना सिद्धान्तने अमे महत्त्व आपी शकता नथी, सूर्य दाहक होइ तिथिनुं दग्धपणु समजी शकाय तेम छे, पण चन्द्र जे दग्धने नव पल्लव करनार छे, तेथी तिथि केवी रीते दग्ध थइ शके एनो उत्तर तो चन्द्रदग्धाना सिद्धान्तनो आविष्कार करनारे ज आपवो रह्यो अमे आ सिद्धान्तने प्रमाणिक मानता नथी

क्रूर ग्रहाक्रान्त राशि स्वामिक तिथिओः—

तिथिओ पन्दर छे, अने तिथिओनी सञ्ज्ञा पांच छे नन्दा, भद्रा २ जया ३ रिक्ता ४ पूर्णा ५, प्रतिपदाथी पंचमी सुधीनी ५ तिथिओ अनुक्रमे नन्दादि संज्ञक छे. एज प्रमाणे षष्ठीथी दशमी अने एकादशीथी पूर्णिमा सुधीनी ५-५ तिथिओ पण नन्दादि संज्ञक छे आ पन्दर तिथिओ मेषादि बार राशिओना प्रभाव नीचे रहे छे. प्रतिपदाथी चतुर्थी सुधीनी अनुक्रमे मेष, वृषभ, मिथुन, कर्कना प्रभाव नीचे अने पंचमी आ चारेना प्रभाव नीचे होय छे. षष्ठीथी नवमी पर्यन्तनी अनुक्रमे सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिकना प्रभाव नीचे अने दशमी आ चारेना प्रभाव नीचे होय छे एज प्रमाणे एकादशीथी

चतुर्दशी पर्यन्तनी ४ तिथिओ अनुक्रमे धनु, मकर, कुंभ, मीन आ चार राशिओना प्रभाव नीचे होय छे. त्यारे पूर्णिमा आ चारे राशिओना प्रभाव नीचे रहे छे. जे तिथि जे राशिना प्रभाव नीचे होय ते राशि जो कोइ क्रूर ग्रहथी आक्रांत होय तो ते पोताना प्रभावनी तिथिने निर्बल बनावी दे छे, माटे तेवी तिथिने पण बने त्यां सुधी शुभ कार्यमां वर्जवी, अने एकथी अधिक क्रूर ग्रहाक्रांत राशिना अमल नीचेनी तिथि तो वर्जवी ज जोइये, अन्यथा ते तिथिमां करेलुं कार्य यशस्वी नहि नीवडे, राशिस्वामिक तिथिओ सम्बन्धी जे उपर विवेचन कर्युं छे, तेनो मूलाधार नीचे प्रमाणे छे—

त्रिशश्चतुर्णामपि मेष सिंह-
धन्वादिकानां क्रमशश्चतस्रः ।
पूर्णाश्चतुष्कत्रितयस्य तिस्र-
स्त्याज्या तिथिः क्रूरयुतस्य राशेः ॥ १०८ ॥

भा०टी०—मेष-सिंह-धनु आ जेओनी आदिमां छे, एवा त्रण राशि चतुष्कोना स्वामित्व नीचे अनुक्रमे प्रतिपदादि, षष्ठ्यादि, एकादश्यादि, आ त्रण तिथि चतुष्को छे, अने पंचमी दशमी पूर्णिमा आ त्रण पूर्णाओ अनुक्रमे प्रथम द्वितीय तृतीय राशि चतुष्क नीचे छे, जे राशि क्रूर ग्रहयुक्त होय ते राशि अथवा राशि चतुष्कना स्वामित्ववाली तिथि मुहूर्तमां वर्जवी जोइये.

विष घटिकाः—

तिथिओनी विष घटीओ, तेम वार अने नक्षत्रनी विष घटिकाओ नीचे लखेल कामोमां वर्जवानुं विधान कर्युं छे—

विवाहव्रतचूडासु-गृहारंभप्रवेशयोः ।
यात्रादिशुभकार्येषु, विघ्नदा विषनाडिकाः । १०९॥

भा०टी०—विवाह, व्रत, चूडाकर्म, गृहारंभ, गृह प्रवेश, यात्रा, अने एज प्रकारना बीजा शुभ कार्योमा विषघटिकाओ विघ्नदायक होय छे माटे विष घडीओ टालवी.

तिथि विष घटी—

तिथी १५ षु ५ नागा ८ द्रि ७ गिरी ७ षु ५ वारिधि-४
गजा ८ द्रि ७ दिक् १० पावक ३ विश्व १३ वासवाः १४।
मुनी ७ भ ८ संख्या प्रथमातिथेः क्रमात्,
परं विषाख्यं घटिकाचतुष्टयम् ॥ ११० ॥

भा०टी०—प्रतिपदाथी माडीने अनुक्रमे पन्दर तिथिओनी १५।५।८।७।७।५।४।८।७।१०।३।१३।१४।७। ८। आटली आदिनी घडीओ पछीनी ४-४ घडीओ विष घटिका होय छे. जे शुभ कार्यमा वर्जवी. ज्योतिर्निबन्धमा ए पत्र छे, जेमा ३ ठेकाणे पाठान्तर छे, षष्ठी तिथिए ११, बारसे १०, तेरसे १२, घडीओ पछीनी ४ घडीओ विष घडी आवे छे, आनु कारण मूल पाठमा इषु-ईश-विश्व-दिक्-वासव-भास्कर, आवो शब्दभेद छे, प्रथम शब्दो पीयूषधारोद्धृत दैवज्ञ मनोहरना छे, ज्यारे बीजा ज्योतिर्निबन्धमा उद्धृत ते श्लोको पाठान्तर छे

यन्त्रक नीचे प्रमाणे—

प्र.	द्वि.	तृ.	च.	प.	ष.	स.	अ.	न.	द.	ए.	द्वा.	त्र.	च.	पू.	ति.
१५	५	८	७	७	५ / ११	४	८	७	१०	३	१३ / १०	१४ / १२	७	८	घटि पछी

मास परत्वे शून्य तिथिओ—

अमुक मासनी अमुक तिथिओ शून्य तिथिओ तरीके वर्णवेली छे, एटले आवी शून्य तिथिओ पण शुभ कार्यमां वर्जवी जोइये. शून्य तिथिओनुं निरूपण नीचला पद्यमां करेलुं छे—

भाद्रे चन्द्र दृशौ नभस्यनल नेत्रे माधवे द्वादशी,
पौषे वेदशरा इषे दश शिवा मार्गेऽद्रिनागा मधौ ।
गोष्टौ चोभयपक्षगाश्च तिथयः शून्या बुधैः कीर्तिताः,
ऊर्जाषाढ तपस्य शुक्रतपसां कृष्णे शरांगाब्धयः ॥
शक्राः पंच सिते शक्राद्यग्निविश्वरसाः क्रमात् ॥१११॥

भा०टी०—भाद्रवाना बंने पक्षनी १।२, श्रावणनी बंने पक्षनी २-३ वैशाखना बन्ने पक्षनी १२, पोषना बंने पक्षनी ४-५, आसोजना बंने पक्षनी १०।११, मार्गशीर्षना बंने पक्षनी ७।८ अने चैत्रना बंने पक्षनी ९।८ तथा कार्तिक, आषाढ, फाल्गुन, ज्येष्ठ अने माघ आ पांच महीनाओना कृष्णपक्षनी यथाक्रम ५।६।४।१४।५ आ तिथिओ अने एज महीनाओना शुक्लपक्षनी अनुक्रमे १४।७।३।१३।६ आ तिथिओने विद्वानोए शून्य-तिथिओ कही छे. मास परक शून्य तिथिओनो परिहार—

तिथयो मासशून्याश्च, शून्यलग्नानि यान्यपि ।
मध्यदेशे विवर्ज्यानि, न दूष्याणीतरेषु तु ॥ ११२ ॥

भा०टी०—शून्य तिथिओ, शून्य मासो, अने शून्य लग्नो, ए मध्यदेशमां वर्जित छे, बीजा देशोमां दूषित नथी.

क्षण तिथिः—

तिथेः पञ्चदशो भागः, क्रमात् प्रतिपदादितः ।
क्षणसंज्ञा तदर्धनानि, तासामर्धप्रमाणतः ॥ ११३ ॥

भा०टी०—तिथिना पन्दरमा भागनुं नाम क्षणातिथि छे तिथिओ प्रतिपदाथी प्रारभ थाय छे तेम तिथिक्षणो पण प्रतिपदाथी ज शरु थाय छे. प्रतिपदाए पहेलो क्षण प्रतिपदानो, बीजो बीजनो, यावत् पन्दरमो क्षण पूर्णिमानो, एज प्रमाणे बीज तिथिए पहेलो क्षण बीजनो, बीजो त्रीजनो, यावत् पन्दरमो प्रतिपदानो. आ प्रमाणे जे तिथि होय तेना क्षणथी शरुआत करवी अने ते पछीना पंच दशांशो पछीनी तिथिओना पूरा करीने शेषक्षण पाछा प्रतिपदादि तिथिओमा समाप्त करवा आ रीते पूर्णिमाए पहेलो क्षण पूर्णिमानो अने बीजा क्षण प्रतिपदादि चतुर्दशी सुधीनी तिथिओना गणवा, तिथिभोग ६० घडीनो हशे तो एक तिथिक्षण ४ घडीनो थशे अने ६० घडीथी अधिक ओछा तिथि भोग हशे तो क्षणो पण अधिक ओछा प्रमाणवाला थशे, तिथि पूर्व दिवसथी चालु हशे अने औदयिक तिथि ते दिवसे अर्धी हशे तो क्षणो पण तिथिना प्रमाणमा अर्धा ज हशे, आवश्यक कार्य होय ते दिवसे के निकटमा ते कार्य करवा योग्य तिथि न होय त्यारे तिथिक्षण जोइने तेमा ते कार्य करी लेवु, एवु ज्योतिष शास्त्रनु विधान छे

तिथि विषयक अपवादः—

वारर्क्षचन्द्रोदयशुद्धिलाभे,
तिथिः सदोषापि भवेददोषा ।
सौरभ्यकान्त्यादिगुणैः सरोजं,
सकण्टकत्वेऽपि यतो गुणाढ्यम् ॥ ११४ ॥
विशुद्धमृक्षं सबलं च लग्नं,
यथा प्रयत्नेन विलोकयन्ति ।
तथा न योगं करणं तिथिं वा,
दोषो गुणो वापि तिथेर्यतोऽल्पः ॥ ११५ ॥

तिथिरेकगुणा प्रोक्ता, नक्षत्रं च चतुर्गुणम् ।
वारश्चाष्टगुणः प्रोक्तः, करणं षोडशान्वितम् ॥११६॥
द्वात्रिंशल्लक्षणो योग-स्तारा षष्टिगुणा स्मृता ।
चन्द्रः शतगुणः प्रोक्तो, लग्नं कोटिगुणं स्मृतम् ॥११७॥

भा०टी०—वार, नक्षत्र, लग्ननी शुद्धि, मले तो तिथि सदोष होय तोय निर्दोष गणाय छे. कमलमां सुगन्धसौन्दर्यादि गुणो होवाथी ते कांटालु होवा छतां गुणवान गणाय छे. जेटली काळजीथी शुद्ध नक्षत्र अने बलवान लग्ननी गवेषणा कराय छे तेटली योग करण के तिथिनी करातो नथी. केम के तिथिनो दोष वा गुण अल्प होय छे. तिथि एक गुण, नक्षत्र चार गुण, वार आठ गुण, करण शोल गुण, योग बत्रीस गुण, तारा षष्ठी गुण, चन्द्र सो गुण, अने लग्न क्रोड गुणवालुं कहेल छे.

गुणस्य दोषस्य च तारतम्यं,
विचारणीयं विदुषा प्रयत्नात् ।
कश्चिद् गुणो दोषशतं निहन्ति,
दोषो गुणानामपि हन्ति लक्ष्यम् ॥ ११८ ॥
पूर्वाऽपराभ्यां सहितस्तिथिभ्यां,
निहन्ति दर्शो निचयं गुणानां ।
तमेव हित्वाऽमृतसिद्धियोग-
स्तिथेरशेषानपि हन्तिदोषान् ॥ ११९ ॥

भा०टी०—विद्वानोए गुणदोषनुं तारतम्य यत्नपूर्वक विचारवुं जोइये, केम के कोइ गुण सो दोषोनो नाश करे छे, त्यारे कोइ दोष लाख गुणोनो घातक होय छे, पूर्व पछीनी बे तिथिओ सहित अमावस्या गुण समूहनो नाश करनारी छे, त्यारे अमृत सिद्धियोग एक अमावास्या सिवाय तिथिगत सर्व दोषोनो नाश करे छे.

(२) वार

दिनशुद्धिमां बीजो नंबर वारनो छे, वार नीचे प्रमाणे छे—

रवि चन्द्र मंगल बुधा, गुरु शुक्र शनैश्चरश्च दिनवाराः ।
रवि कुज शनयः क्रूराः, सौम्याश्चान्ये पदोनफलाः ॥१२०॥

भा०टी०—रवि, सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र अने शनैश्चर ए दिन वारो छे. आ वारो पैकीना रवि, मगल, शनैश्चर, ए क्रूर छे, अने बीजा सौम्य वार पोतानी होरा 'विना पोणु फल आपे छे.

होराः पुनरर्कसितज्ञ-चन्द्रशनिजीवभूमिपुत्राणाम् ।
सार्धघटीद्वयमानाः, स्ववारतस्तास्तु पूर्णफलाः ॥ १२१ ॥

भा०टी०—वार होरा अढी घडीनी होय छे, रविवारे रवि-शुक्र-बुध-सोम-शनि-गुरु-मगल, पुनः रवि-शुक्र-बुध-सोम-शनि आ क्रमथी होराओ प्रवर्ते छे. एज प्रमाणे सोमवारे सोम शनि गुरु मंगल, इत्यादि छट्ठा छट्ठा वारना क्रमे होराओ आवे छे, पोताना वारे होरा पूर्ण फल आपे छे वारनु कृत्य ते वारनी होरामा करी शकाय छे. वार प्रवृत्तिना समयथी होरानी प्रवृत्ति थाय छे. तेथी प्रथम वार प्रवृत्तिनो समय जाणवो आवश्यक छे. वारनी आदिने अंगे आरंभ सिद्धिकार लखे छे—

वारादिरुदयादूर्ध्वं, पलैर्मेषादिगे रवौ ।
तुलादिगे त्वधस्त्रिंशत्, तद्गुणानान्तरार्धजैः ॥१२२॥

भा०टी०—मेष वृष मिथुन कर्क सिंह कन्या आ राशिओमा सायन सूर्य होय त्यारे वारनो प्रारंभ सूर्योदय पछी अने तुला वृश्चिक धन मकर कुंभ मीन आ राशिओना सायन सूर्यमा वारनी प्रवृत्ति सूर्योदय पहेली थाय छे. मेषादिमा केटली पछी अने तुलादिमा केटली पहेली थाय ? ए जाणवानो उपाय आ छे. ज्यांनी

वार प्रवृत्ति जाणवी होय त्यांनुं ते दिवसनुं दिनमान जोवुं, तेनी घडी पलो होय तेनुं ३०थी अन्तर काढी तेने अर्ध करवुं, जेटली घडी पलो थाय तेटली घडी पलो मेषादिना सूर्यमां सूर्योदय थया बाद अने तुलादिना सूर्यमां सूर्योदय पूर्वे वारनी आदि थाय एटले पहेला दिननो वार समाप्त थइ नवो वार लागे छे. उदाहरण-संवत् २०१०ना आसोज शुदि ५ना दिवसे मारवाड प्रदेशनुं दिनमान २८-४४ घटी पलोनुं छे. आनुं ३०नी साथे १ घडी १६ पलनुं अन्तर थयुं, एनुं अर्ध ३८ पलो उक्त दिवसना सूर्योदय अने वार प्रवृत्ति वच्चेनुं अन्तर थयुं, एटले के ते दिवसे सूर्य तुला राशिनो होइ सूर्योदय थया पहेलां ३८ पले एटले १५ मिनिट १२ सेकंडे ते दिवसनो वार मंगल चालू थयो, अने तेज समयथी मंगलनी होरा चालू थइ. वार प्रवृत्तिने अंगे वसिष्ठ संहिताकार नीचे प्रमाणे कहे छे—

प्रभाकरस्योद्गमनात् पुरे स्या-द्वारप्रवृत्तिर्दशकन्धरस्य ।
चरार्धदेशान्तरनाडिकाभि-रूर्ध्वं तथाधोऽप्यपरत्र तस्मात्॥१२३॥

भा०टी०-रावणना नगर लंकामां सूर्यना उदयनी साथे वार प्रवृत्ति थाय छे ज्यारे बीजा स्थानोमां चरान्तर रेखान्तरनी घडी पलोना माने पछी पहेलां वार लागे छे. एज वातनुं ज्योतिःसारमां नीचेना श्लोकमां स्पष्टीकरण छेः—

देशान्तरचरार्धाभ्यां, सौम्ये गोले इनोदयात् ।
ऊर्ध्वं वारप्रवृत्तिः स्यात्, याम्ये चाधः प्रकीर्तिता ॥१२४॥

भा०टी०—उत्तर गोलमां सायन सूर्य होय त्यारे सूर्योदय पछी देशान्तर चरान्तरना अर्धमाने वार प्रवृत्ति थाय छे, अने दक्षिण गोलमां सूर्य होय त्यारे सूर्योदय पूर्वे तेटला ज समयना अन्तरे वार प्रवृत्ति थाय छे,

वारप्रवृत्ति जाणवानु प्रयोजन—

ए विषयमा ब्रह्मर्षि वसिष्ठ कहे छे—

चारप्रवृत्तिविज्ञान, क्षणवारार्थमेव हि ।
अखिलेष्वन्यकार्येषु, दिनादिरुदयाद् रवेः ॥ १२५ ॥

भा०टी०—वार प्रवृत्तिनु ज्ञान क्षणवार (कालहोराओ) ने माटे ज उपयोगी छे, बाकी बीजां सर्व वार प्रतिबद्ध कामोमां-अर्धयाम, कुलिक, उपकुलिक, कटक, राजयोग, कुमारयोग, स्थविर योगादिमां अने वारविहित कार्यारंभमा वारनी आदि सूर्योदयथी ज मानवानी छे.

वार भोग संबन्धी एक नवी परम्परा—

लल्लाचार्य, चण्डेश्वर आदि संक्रान्तिपरक वार भोग संबन्धी एक विशेषता जणावे छे, चण्डेश्वर कहे छे—

मीनालिमेषकलशेषु दिनान्तमात्र,
गोकर्ककार्मुकघटेष्वपि चार्धरात्रम् ।
स्त्रीयुग्मसिंहमकरेषु निशावसानं,
वारस्य भोगमिह यन्मुनयो वदन्ति ॥ १२६ ॥

भा०टी०—वृश्चिक कुंभ मीन मेषना सूर्यमा साज सुधी, वृषभ कर्क तुल धनुना सूर्यमा अर्धरात्रि पर्यन्त, मिथुन सिंह कन्या मकरना सूर्यमा रात्रिना अन्त सुधी दिनवारनो भोग होय छे एम मुनिओ कहे छे.

आ वार भोगना निवेदननो अर्थ अर्वाचीन ग्रन्थकारोए प्रथम वारनी समाप्ति अने नवा वारना प्रवेशना रूपमा लगाडी नीचे प्रमाणे सिद्धान्त प्रतिपादन कर्यो छे—

मृगस्त्रीमिथुयुग्मेश्वरस्तेऽजालिझषे निषे ।
तुलागोधन्विकर्केषु, निशार्धे वारसंक्रमः ॥ १२७ ॥

भा०टी०—मिथुन सिंह कन्या मकरना सूर्यमां प्रातः समयमां, वृश्चिक कुंभ मीन मेषना सूर्यमां सांजे अने वृषभ कर्क तुल धनुना सूर्यमां अर्धरात्रिमां वार संक्रांति थाय छे.

आ वार भोग अने वारसंक्रमण संबन्धी कथनोनुं तात्पर्य ए जणाय छे के संक्रान्ति विशेषमां दिनवारनो प्रभाव अमुक समय सुधी ज रहेतो होय अने ते पछी आगेना वारनी असर शरु थइ जती हशे. ए वस्तुने ज मलतुं नीचे प्रमाणे एक बीजुं पण निरूपण उपलब्ध कराय छे—

राम-रस-नन्द-बाणा, वेदाष्टा-सप्त-दशाहताः कार्याः।
मन्दादीनां दिनतः, क्रमेण भोगस्य नाड्यः स्युः ॥ १२८ ॥

भा०टी०—शनिथी शुक्र पर्यन्तना सात दिनवारोना भोगनी घडीओ अनुक्रमे ३०, ६०, ९०, ५०, ४०, ८०, ७० छे, आनो अर्थ पण एज छे के शनि दिने ३० घडी पछी शनिनो प्रभाव मटीने सूर्यनो प्रभाव शरु थइ जाय छे. सूर्यनी असर ६० घडीनी होइ शनि रात्रि अने रविना दिनना अन्तमां समाप्त थतां सोमवारनी असर चालु थाय छे, सोमनी असर ९० घडीनी छे एटले रविनी सांजथी चालु थइ सोमनी रात्रिना पर्यन्ते पूरी थाय छे, मंगलवारनो प्रभाव मंगलवारना प्रारंभथी चालु थइ मंगलनी पाछली १० घडी रात रहेतां पूरो थाय छे अने ते पछी बुधनो प्रभाव चालु थाय छे. बुधनो भोग ४० घडीनो होइ बुधनी सांजे पूरो थइ जाय छे अने बुधनी रात गुरुना प्रभाव नीचे आवे छे. गुरुनो प्रभाव ८० घडी रहेतो होवाथी गुरुवारनी पाछली १० घडी रात रहे त्यां सुधी चाले छे, ते पछी शुक्रनी छाया पडे छे. शुक्रनो भोग ७० होवाथी शुक्रवारनी रात्रिना अन्त सुधी तेनो ज भोग रहे छे, आम वारोनो प्रभाव पहेलां पछी पण रहे छे, पण एनो अर्थ ए न मानी

लेवो जोइये के वार संक्रम थयो एटले पहेलो वार पूर्ण थइ गयो अने तत्प्रतिबद्ध योग अपयोगो मटी गया वारनी समाप्ति तो लङ्काना सूर्योदय समये ज व्याप्त छे अने तज्जन्य शुभाशुभयोगो सूर्योदय वखते ज मटे छे.

ग्रहोनो स्वभाव प्रकृति—

रविः स्थिरः शीतकरश्चरश्च,
महीज उग्रः शशिजश्च मिश्रः ।
लघुः सुरेज्यो भृगुजो मृदुश्च,
शनिश्च तीक्ष्णः कथितो मुनीन्द्रैः ॥ १२९ ॥

पुंग्रहा जीवसूर्यारा, बुधमन्दौ नपुंसकौ ।
स्त्रीखगौ चन्द्रशुक्रौ च, सजलौ तौ च कीर्तितौ ॥ १३० ॥

भा०टी०— रवि स्थिर, सोम चर, मंगल उग्र, बुध मिश्र, गुरु हलवो, शुक्र कोमल अने शनि कठोर स्वभावनो छे. सूर्य, मगल, गुरु पुरुष, बुध शनि नपुंसक, अने सोम तथा शुक्र स्त्रीप्रकृतिना तथा जलार्द्र ग्रहो छे.

ग्रहोनु वर्णाधिपत्य—

जीवशुक्रौ तु विप्रेशौ, क्षत्रियेशौ कुजोष्णगू ।
ज्ञः शूद्राणां विशां चन्द्रो, ह्यन्त्यजाना शनिः स्मृतः ॥१३१॥

भा०टी०—गुरु शुक्र ब्राह्मणोना, रवि मगल क्षत्रियोना, चन्द्र वैश्योनो, बुध शूद्रोनो अने शनि अन्त्यजो (अस्पृश्यजाति) नो स्वामी छे

वार विधेय कार्यों :—

राजाभिषेकोत्सवयानसेवा-
गोवह्निमन्त्रौषधिशस्त्रकर्म ।
सुवर्णताम्रौर्णिकचर्मकाष्ठ-
सग्रामपण्यादि रवौ विदध्यात् ॥ १३२ ॥

शंखाब्जमुक्तारजतेक्षुभोज्य-
स्त्रीवृक्षकृष्यम्बुविभूषणाद्यम् ।
गीतक्रतुक्षीरविकारशृङ्गि-
पुष्पाक्षरारम्भणमिन्दुवारे ॥ १३३ ॥
भेदानृतस्तेयविषाग्निशस्त्र-
बन्धाभिघाताहवशाठ्यदम्भान् ।
सेनानिवेशाकरधातुहेम-
प्रवालकार्यादिकुजेऽह्नि कुर्यात् ॥ १३४ ॥

भा०टी०—राज्याभिषेकोत्सव, यानकर्म, सेवाकार्य, गोकर्म, अग्निकर्म, मंत्रकर्म, औषधिकर्म, शस्त्रकर्म, सुवर्णकर्म, ताम्रकर्म, और्णिककर्म, चर्मकर्म, काष्ठकर्म, संग्रामकर्म अने पण्यकर्म आदि रविवारे करवुं. शंख, जलजमौक्तिक, रजत, शेलडी, भोज्यपदार्थ, स्त्री, वृक्ष, कृषि, जल, आभूषणादि संबन्धी कार्य, गीत, यज्ञ, पायस शृंगी पशु पुष्प अने लिपि संबन्धी कार्यो सोमवारे करवां. भेद, जूठ, चोरी, विष, अग्नि, शस्त्रबन्धन, प्रहार, युद्ध, शठता, कपट, सैन्यनिवेश, खाण, धातु, सुवर्ण, प्रवाल संबन्धी कार्य मंगलना दिवसे करवां.

नैपुण्यपण्याध्ययनं कलाश्च,
शिल्पादिसेवालिपिलेखनानि ।
धातुक्रियाकाञ्चनयुक्तिसंधि-
व्यायामवादाश्च बुधे विधेयाः ॥१३५॥
धर्मक्रियापौष्टिकयज्ञविद्या-
माङ्गल्यहेमाम्बरवेश्मयात्रा ।
रथाश्वभैषज्यविभूषणाद्यं,
कार्यं विदध्यात् सुरमन्त्रिणोऽह्नि ॥१३६॥

स्त्रीगीतशय्यामणिरत्नगन्ध-
वस्त्रोत्सवालंकरणादिकर्म ।
भूपण्यगोकोशकृषिक्रियाश्च,
सिध्यन्ति शुक्रस्य दिने समस्तम् ॥१३७॥
लोहाश्मसीसत्रपुरस्त्र(वास्तु)दास-
पापानृतस्तेयविषासवाद्यम् ।
गृहप्रवेशो द्विपबन्ध दीक्षा,
स्थिरं च कर्मार्कसुतेऽह्नि कुर्यात् ॥१३८॥

भा०टी—चातुर्य, व्यापार, अध्ययन, कलाभ्यास, शिल्पग्रहण, लिपि आरंभ, लेखन, धातुक्रिया, सुवर्णयुक्ति, सधि, व्यायाम अने शास्त्रार्थवाद ए कार्यो बुधना दिवसे करवा. धर्मकार्य, पौष्टिक-कर्म, यज्ञ, विद्याध्ययन, मांगल्यकार्य, सुवर्णभूषण, वस्त्रपरिधान, गृहकार्य, यात्रा, रथ, अश्व, औषध, विभूषण आदि कार्य गुरुवारे करवा. स्त्री-गीत-शय्या सम्बन्धी कार्य, मणि, रत्न, सुगन्धी, वस्त्र, उत्सव, आभूषण आदिनुं कार्य, भूमि, व्यापार, गौ, कोश अने कृषि-कर्म ए बधा कार्यो शुक्रवारे करवाथी सिद्ध थाय छे. लोह, पत्थर, सीसु, जसद, गृहकर्म, दास, पाप, असत्य, चौर्य, विष, मदिरा आदिना कामो तेमज गृहप्रवेश, हस्तीबन्धन, दीक्षा, अने स्थिर कार्य शनिवारना दिवसे करवुं. वार कर्तव्योना अगे साराश ए के—

लाक्षाकौसुम्भमाञ्जिष्ठ-राग-काञ्चनभूषणे ।
प्रशस्तौ भौम-मार्तण्डौ, रविजो लोहकर्मणि ॥१३९॥

सोम सौम्यगुरुशुक्रवासराः,
सर्वकर्मसु भवन्ति सिद्धिदाः ।
भानुभौमशनिवासरेषु तु,
प्रोक्तमेव खलु कर्म सिध्यति ॥१४०॥

भा०टी०—लाक्षा रंग, कौसुंभ रंग अने माञ्जिष्ठ रागनां कार्यो अने सुवर्णभूषणना कार्योमां भौम तथा रविवार श्रेष्ठ छे अने लोहकार्यमां शनिवार श्रेष्ठ छे. सोम बुध गुरु अने शुक्रवार सर्व कामोमां सिद्धिदायक थाय छे, ज्यारे रवि मंगल शनिवारना दिवसोमां विहित कार्य ज सिद्ध थाय छे.

क्षीणेन्दुसौरिकुजवक्रिदिने न शस्तं,
शस्तं च कर्म यदि चोपचयस्थिताः स्युः ।
अस्तंगतस्य विकृतस्य च नेष्टमह्नि,
सर्वं प्रशस्तमिह शेषदिनेश्वराणाम् ॥१४१॥

भा०टी०—क्षीणचन्द्र होय त्यारे सोमवारे, शनि मंगल वक्री होय त्यारे शनि मंगलवारे विहित कार्य करवुं पण सारुं नथी, जो ए ग्रहो उपचयस्थित होय तो ज विहित कार्य पण करवुं, अस्त पामेल अने विकार पामेल ग्रहना द्वारे पण कार्य करवुं श्रेष्ठ नथी, शेष ग्रहोना(पूर्ण चन्द्र, मार्गी शनि मंगल, अविकृत अने उदित मंगल बुध, गुरु, शुक्र, शनिना) वारे कोइ पण कार्य करवुं सारुं छे, आ विषयमां वसिष्ठ कहे छे—

बलप्रदस्य ग्रहवासरे यच्चो-
द्दिष्टकार्यं समुपैति सिद्धिम् ।
सुदुर्बलस्य ग्रहवासरे तत्,
प्रयत्नपूर्वं त्वपि नैव साध्यम् ॥१४२॥

भा०टी०—बल आपनार ग्रहना वारे आरंभेलुं कार्य सिद्धिने पामे छे, ज्यारे अतिनिर्बल ग्रहना वारे आरंभायेल कार्य प्रयत्न करवा छतां ये सिद्ध थतुं नथी.

वारदोषो—

जे वारो जे कार्यो करवाने योग्य जणाव्या छे ते वारोमां पण

अमुक समय दूषित होइ विहित कार्यो करवाने अयोग्य गणाया छे समयने दूषित करनारा दोषो ६ छे-अर्धप्रहर १ कालवेला २ कण्टक ३ यमघण्ट अपर नाम उपकुलिक ४ कुलिक ५ मुहूर्तकुलिक ६ ।

आ वार दोषोनु ज्योतिषशास्त्रमां नीचे प्रमाणे निरूपण छे—

त्याज्योऽर्धयामो वेदाद्रि–द्विपञ्चाष्टत्रिषण्मितः ।
सूर्यादौ कालवेलार्धयामाङ्कात् सैकपञ्चमी ॥१४३॥
कण्टकोपि दिनाष्टांशे, स्ववारान्मङ्गलावधौ ।
बृहस्पत्यवधौ चोपकुलिकस्त्यज्यते परैः ॥१४४॥
सूर्यादौ शैलतर्काक्ष–वेदाग्निपाणिभूमयः ।
प्रहरार्धप्रमाणास्ते, कुलिकाः स्युर्भयावहाः ॥१४५॥
कुलिको विघ्नशन्यन्त–मिते त्याज्यः स्ववारतः ।
मुहूर्तेऽह्नि निशि क्येके, भागः पञ्चदशस्तु सः ॥१४६॥

भा०टी०—रवि–सोम–मंगल–बुध–गुरु–शुक्र–शनिवारना दिवसे अनुक्रमे ४थो, ७मो, २जो, ५मो, ८मो, ३जो अने ६ट्ठो अर्ध प्रहर जे 'अर्धयाम' संज्ञक छे ते शुभ कार्यमां त्याज्य छे, अने प्रत्येक अर्धयामना छेल्ला अंकथी गणता पांचमो अंक ते वारनी कालवेलानो जाणवो, जेम के रविवारनो अर्धयाम ४थो छे तो चोथाथी गणता पांचमो अंक ८ ए आव्यो एटले रविवारनी कालवेला ८मी थइ, एज रीते दरेक वारनी कालवेला जाणी लेवी. कंटक पण दिनमानना आठमा भागनो अर्थात् अर्धप्रहर परिमित होय छे अने दिनवारथी मंगलवार जेटलामो आवे तेटलामो कंटक दोष जाणवो, जेमके रविथी मंगल त्रीजो छे तो रविवारे ३जो अर्ध प्रहर कंटक जाणवो, सोमवारे २जो, मंगलवारे १लो, बुधे ७मो, गुरुए ६ट्ठो, शुक्रे ५मो, शनिए ४थो केटलाकोए उपकुलिक दोष त्याज्य कर्यो छे, तेनी गणना दिनवारथी गुरु सुधी करवी एटले

संख्यामां अनुक्रमे कुलिक, कालवेला, यमघंट अने कंटक नामना दूषित क्षणो आवशे.

अर्धयाम विषयक चिन्तामणिनुं विधान नीचे प्रमाणे छे—

वारस्त्रिघ्नोऽष्टभिस्तष्टः, सैकः स्यादर्धयामकः ॥

भा०टी०—वारने त्रणे गुणी आठे भांगी शेषांकमां एक उमेरतां जे संख्या थाय ते संख्यावालो ते वारे अर्धयाम जाणवो. रविवारना अंकने त्रणे गुणो एटले ३ थया, भाग लागतो नथी, १ युक्त कर्यो एटले ४ थया, एटले रविवारे ४थो अर्धयाम दोष आव्यो. ए प्रमाणे सोमवारे ७मो, मंगलवारे २जो, बुधवारे ५मो, गुरुवारे ८मो, शुक्रवारे ३जो अने शनिवारे ६ट्ठो अर्धयाम आवशे.

कालवेला संबन्धी अपरिहार्य मतभेद—

कुलिकादि दोष विषयक प्राचीन ग्रन्थकारो अने मुहूर्तचिन्तामणिकारना कथननो समन्वय तो थइ शके छे पण 'कालवेला' विषयक निरूपणनो मेल मलतो नथी; रामदैवज्ञे कालवेलाने पण दिनमाननो सोलमो भाग मानी रवि आदि वारोना दिवसे अनुक्रमे ८।६।४।२।१४।१२।१० मा मुहूर्तोने 'कालवेला' बतावी छे, ज्यारे बीजा सर्व ग्रन्थकारो रवि आदि वारोमां ८।३।६।१।४।७।२। आटलामी कालवेला गणावे छे. आ अंको अर्धप्रहरोना छे के मुहूर्तोना, आनो कोइ प्राचीन ग्रंथकारे खुलासो जणाव्यो नथी. यद्यपि नारचन्द्र टिप्पणककारे "कालवेलामुहूर्तं घटिकाद्वयप्रमाणम् ।" आ वचनथी कालवेलाने बे घडीनुं मुहूर्त जणाव्युं छे, पण मुहूर्तचिन्तामणि सिवाय कोइ पण ग्रन्थ कालवेलानो अंक '८' उपरान्त जणावतो नथी. दैवज्ञमनोहर ग्रन्थमां यमघंट, कंटकादि दोषोनी साथे ज 'कालवेला' नो पण 'विरुद्धगजांश' रूपे निर्देश

कर्यो छे. आ उपरथी अमो पण 'कालवेला' दिनमानने अष्टमांश होवाना अभिप्राय उपर आवीये छीये.

दुर्मुहूर्त-दोष

उपर्युक्त वार दोषो उपरान्त अमुक वारे अमुक मुहूर्त अथवा मुहूर्तो 'दुर्मुहूर्त' होइ निषिद्ध करेल छे कोइ पण शुभ कार्य-करण-काले आ पैकीनुं कोइ मुहूर्त आवतुं होय तो वर्जवुं जोइये. आनुं विशेष वर्णन मुहूर्त लक्षणना प्रारंभमां ज मुहूर्तोना प्रसंगे कर्युं छे, अत्र आ दुर्मुहूर्तोनो नाम निर्देश करीने ज आ वस्तुने समाप्त करशुं रविवारे १४मुं, सोमवारे ९मुं १२मुं, मंगले ४थुं (अने रात्रिनुं ७मुं), बुधवारे ८मुं, गुरुवारे ६ठुं १२मुं, शुक्रवारे ४थुं ९मुं, शनिवारे १लुं २जुं, आ मुहूर्तो दिवसना पंदरमा भाग जेटला शुभ कार्यमां अवश्य टालवा जोइये.

प्राचीन संहितोक्त वारदोषज्ञापक यन्त्रकम्—

दिनाष्टमांशा	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
अर्धयाम	४	७	२	५	८	३	६
कालवेला	८	३	६	१	४	७	२
कंटक	३	२	१	७	६	५	४
यमघंट-उपकुलिक	५	४	३	२	१	७	६
कुलिक	७	६	५	४	३	२	१
दिवामुहूर्तकुलिक	१४	१२	१०	८	६	४	२
रात्रिमुहूर्तकुलिक	१३	११	९	७	५	३	१

टिप्पण-कोष्ठकोक्त दिवारात्रिना कुलिक मुहूर्तोनुं परिमाण दिनमान रात्रिमानना पंदरमा भाग जेटलुं गणवुं, शेष अर्धयामादि दिनगत दोषोनुं कालपरिमाण दिनमानना आठमा भाग बरोबर लेवुं.

वारदोषोनी दिवसे प्रबलता—

ए विषयमां वसिष्ठ कहे छे—

निधनं प्रहरार्धे तु, निःस्वत्वं यमघण्टके ।
कुलिके सर्वनाशः स्याद्रात्रावेते न दोषदाः ॥१४९॥

भा०टी०—अर्धयामथी मरण, यमघंटथी निर्धनता अने कुलिक दोषथी सर्वनाश थाय छे, पण रात्रिमां ए दोषो-दोषकर्ता नथी. आ संबन्धमां ज्योतिर्निबन्धकार कहे छे—

न वारदोषाः प्रभवन्ति रात्रौ,
देवेज्यदैत्येज्यदिवाकराणाम् ॥
दिवा शशांकार्कजभूसुतानां,
सर्वत्र निन्द्यो बुधवारदोषः ॥१५०॥

भा०टी०—गुरु, शुक्र, सूर्यवारने दिवसे वारदोषो रात्रिमां फल आपवाने समर्थ थता नथी अने सोम मंगल शनिवारे वार गत दोषो दिवसे विशेष समर्थ थता नथी, बुधवार गत दोष सर्वत्र 'निन्द्य' छे, माटे सर्वत्र वर्जवो.

न वारदोषाः प्रभवन्ति रात्रौ,
विशेषतो भौमशनैश्चराणाम् ।
मध्याह्नकालादुपरि प्रवृत्ताः,
फलं न दद्युः करणानि चैवं ॥१५१॥

भा०टी०—रात्रिमां वार दोषो समर्थ थता नथी, विशेष करीने मंगळ अने शनि गत दोषो रात्रिमां लागता नथी, अने मध्याह्न काल-

पछी चालु थता वार दोषो फल आपता नथी, एज प्रमाणे अशुभ करणोना सम्बन्धमा पण जाणवुं

देशभेदे वारदोषोनी विशेषता विषे गर्ग कहे छे—

विन्ध्यस्योत्तरकूले तु, यावदातुहिनाचलम् ।
यमघण्टकदोषोऽस्ति, नान्यदेशेषु विद्यते ॥१५२॥
मत्स्यागमगधान्ध्रेषु, यमघण्टस्तु दोषकृत् ।
काश्मीरे कुलिक दुष्ट-मर्धयामस्तु सर्वतः ॥१५३॥

भा०टी०—विन्ध्याचलना उत्तर तटथी हिमालय पर्यंत यमघण्ट दोष होय छे. बीजा देशोमा होतो नथी. मत्स्य, अग, मगध, आन्ध्र देशोमा यमघण्टनी विशेष दुष्टता गणाय छे. काश्मीरमा कुलिकनी दुष्टता गणाय छे. ज्यारे अर्धयाम सर्वत्र दुष्ट गणाय छे

वारगत दोषोनु फल वसिष्ठ आ प्रमाणे कहे छे—

कुलिके मरणं विन्द्यात्, यमघण्टेऽर्थनाशनम् ।
यामार्धे कार्यनाशः स्यात्, कालवेला भयप्रदा ॥१५३॥

भा०टी०—कुलिकमा मरण, यमघण्टमा धननाश, यामार्धमा कार्यनाश अने कालवेला भय देनारी जाणवी.

वार दोषोनो परिहार—

वारेशे सबले चन्द्रे-बलाढये लग्नगे शुभे ।
कुलिकोदयदोषस्तु, विनश्यति न संशयः ॥१५४॥
वाराधीशे बलोपेते, विधौ वा बलसयुते ।
अर्धप्रहरसंभूतो, दोषो नैवाऽत्र विद्यते ॥१५५॥
अर्धप्रहरपूर्वार्धं, मध्यन्तु यमघण्टके ।
कुलिकान्ते घटीं त्यक्त्वा, शेषेषु शुभमाचरेत् ॥१५६॥

भा०टी०—दिनवारनो स्वामी ग्रह बलवान् होय, चन्द्र बल-

वान् होय अने लग्नमां शुभ ग्रह रहेल होय तो कुलिकथी उत्पन्न थता दोषनो नाश थाय ए निःसंशय छे. वारस्वामी बलिष्ठ होय, वा चन्द्र बलवान होय तो अर्धयामनो दोष टकी शकतो नथी. अर्धयामनो पूर्वार्धभाग यमघण्टनो मध्य भाग, अने कुलिकना अन्तनी घटिकानो त्याग करी शेष कालांशोमां शुभ काम करी शकाय छे.

वार गत शुभ समय—

वार गत दोषोना वर्णन उपरथी जणाशे के प्रत्येक वारना दिवसे अधिकांश समय कोइने कोइ दोषवालो होय छे. जे भागोमां दोष नथी होतो ते भागोने पूर्वाचार्योए " शुद्ध अर्धप्रहर " अथवा तो-' शुद्ध चतुर्घटिक ' ए नामथी नीचेना पद्यमां जणाव्यो छे—

भानावादिमयुग्मषट्परिमिताश्चन्द्रेऽष्टमश्चादिमः,[१]
अङ्गारे च तुरङ्गतुर्यवसवः सौम्ये षडष्टत्रयः ।
जीवे सप्त शरद्विका भृगुसुते वेदाष्टषष्ठैककाः,
मन्दे पञ्चमसप्तमाष्टशिखिनश्चैतेऽर्धयामाः शुभाः ॥१५७॥

भा॰टी॰—रविवारे १।२।६, सोमे १।८, मंगले ४।७।८, बुधे ३।६।८, गुरुए २।५।७, शुक्रे १।४।६।८, अने शनिए ३।५।७।८, एटला अर्धप्रहरो शुद्ध होय छे.

---

१. नारचन्द्रमां 'पञ्चादिम' पाठ छे, छतां सोमदिने पांचमा अर्ध प्रहरमां 'दुर्मुहूर्त' आवतो होइ अमोए ए अर्धप्रहर ओछो कर्यो छे.

नव्यमतानुसारी मुहूर्तचिन्तामण्युक्तवारदोषज्ञापकयन्त्रम् ।

मुहूर्त	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
१							दु
२			क	का	य		कुदु
३			अ				
४		क	अकादु	य		कुदु	
५						अ	
६	क	का	य		कुदु	अ	
७	अ						
८	अका	य		कुदु			कं
९		दु		अ		दु	
१०	य		कु	अ		कं	का
११							अ
१२		कुदु			कदु	का	अय
१३		अ					
१४	कुदु	अ		क	का	य	
१५					अ		
१६					अ		

टिप्पण-अ-अर्धयाम, का-कालवेला, कु-कुलिक, क-कटक, य-यमघटनो सूचक अक्षर छे आ मुहूर्तो दिनमानना सोलमा भाग जेटला जाणवा दु-दुर्मुहूर्तो दिनमानना पन्दरमा भागना लेवा

आधुनिक चोघडिया क्याथी आव्या ?

आजकाल अतिपरिचित थयेला आपणा—उद्वेग, अमृत, रोग, लाभ, शुभ, चर, काल—ए वारगत चोघडियाओ क्याथी आवी चढ्यां ए एक विचारणीय प्रश्न छे प्राचीन संहिताओमा तो शु पण लल्लथी

रामदैवज्ञ सुधीना प्राचीन अर्वाचीन कोइ विद्वान ज्योतिषीए पोताना ग्रन्थमां आ उद्वेगादि अर्धप्रहरोनो नामनिर्देश सुद्धां कर्यो नथी. अमारी मान्यता प्रमाणे जुना ग्रन्थो पैकीना कोइ ग्रन्थे आ चोघडियानुं नाम निर्देश्युं होय तो ते शूर महाशिवराज संग्रहीत 'ज्योतिर्निबन्ध' छे. आ ग्रन्थना वार प्रकरणना अन्तमां नीचे प्रमाणे श्लोक दृष्टिगोचर थाय छे—

उद्वेगाऽमृतनामा च, रोगा लाभा शुभा चला।
कलिर्नामानि वेलानां, होरावत् सूर्यतः क्रमात् ॥१५८॥

भा०टी०—उद्वेगा, अमृता, रोगा, लाभा, शुभा, चल अने कलि आ सूर्यादि ७ वारोनी वेलानां नामो छे. आ वेलाओ गणवानो क्रम होराओनी जेम जाणवो. उक्त श्लोक पहेलां २ पद्योमां अर्धयाम, कुलिक, कंटक अने जीवकुलिक (उपकुलिक) नुं वर्णन छे. आ पद्योना प्रारंभमां एना कर्ता तरीके 'भूपालः-' नाम निर्देश छे, आथी जणाय छे के आ बंने पद्यो 'भूपालवल्लभ' ग्रन्थना छे, पण ए पछीनो 'उद्वेगाऽमृतनामा च' आ श्लोक के जे वार प्रकरणनो छेल्लो छे, भूपालनो ज छे के कोइ लेखकनो प्रक्षेप छे ए कहेवुं कठिन छे, रोगा, लाभा, चला, ए शब्दो जणावे छे के आ श्लोक 'भूपालवल्लभ' जेवा ग्रन्थनो भाग्ये ज होय, विद्वान् ज्योतिषीओ ए आ चोघडियाओना संबन्धमां उहापोह करवो जोइये, आ चोघडियाओनी गणनाए लोको शुभ समय जाणी कोइ कार्य करे छे अने ते समय अर्धयाम, काल-वेलादि अनेक अशुभ योगोथी दूषित होवाथी कार्य निष्फल जाय छे, उदाहरण रूपे रविवारे पहेलुं 'उद्वेग' अने बीजुं 'चल' गणी बंने चोघडियां जतां करे छे अने त्रीजुं 'लाभ' अने चोथुं 'अमृत' चोघडियुं जाणी तेमां शुभ कार्य आरंभे छे, खरी रीते रविवारनां पहेलुं बीजुं आ बंने चोघडियां निर्दोष छे ज्यारे त्रीजामां 'कंटक'

अने चोथामा 'अर्धयाम' नामक दुष्ट अपयोगो होय छे. एज रीते बुधवारे त्रीजुं 'अमृत' नुं चोघडीयुं जाणी अपाय छे ज्यारे ते चोघडियामा 'यमघंट' नामक वार दोष होय छे तेनो कोइ विचार करतुं नथी, ते दिवसे त्रीजु चोघडियुं 'काल' जाणी त्यजी देवाय छे ज्यारे चोथुं शुभ जाणी लेवाय छे वस्तुस्थिति आथी उलटी छे बुधवारे त्रीजु चोघडियुं निर्दोष-शुद्ध होय छे ज्यारे चोथामा 'कुलिक' 'मुहूर्तकुलिक' अने 'दुर्मुहूर्त' नामना त्रण दुष्ट योगो होय छे, आम प्रत्येक वारे 'शुभ' गणातां आ चोघडियाओमा 'अशुभयोगो' आवे छे, माटे आ चोघडियाओ उपर अवश्य विचार करवो घटे छे.

नक्षत्र

नक्षत्र २७ छे ए सर्वसमत विषय छे, क्वचित् नक्षत्र सख्या २८ नी जणावी छे तेनु कारण 'अभिजित्'नी गणना छे, पण अभिजित्नो उपयोग वेध, लत्ता आदि जोवा पूरतो मर्यादित होवाथी नक्षत्रमालामा तेनी गणना नथी तेम नक्षत्र विधेय कार्यनी चर्चामा पण अभिजित्नु विधान नथी, उत्तराषाढाना चतुर्थ चरण अने श्रवणना प्रथम चरणनी आदि ४ घडीओ आ लगभग १९ घटिकापरिमित नक्षत्रभोगने 'अभिजित्' नाम आपेलु छे, आरंभसिद्धिकार ए विषयमा कहे छे—

> उत्तराषाढमन्त्याह्निं, चतस्रश्च श्रुतेर्घटोः ।
> वदन्त्यभिजितो भोगं, वेधलत्ताद्यवेक्षणे ॥१५९॥

भा०टी०—उत्तराषाढाना अतिम चरण अने श्रवणनी ४ घडीओने 'अभिजित्'नो भोग कहे छे, जेनो उपयोग वेध लत्ता आदिना जोवामा थाय छे, खरी रीते अभिजित् पेटा नक्षत्र छे.

नक्षत्रोनां नामो—अश्विनी १ भरणी २ कृत्तिका ३ रोहिणी ४ मृगशिरा ५ आर्द्रा ६ पुनर्वसु ७ पुष्य ८ आश्लेषा ९ मघा १० पूर्वाफाल्गुनी ११ उत्तराफाल्गुनी १२ हस्त १३ चित्रा १४ स्वाति १५ विशाखा १६ अनुराधा १७ ज्येष्ठा १८ मूल १९ पूर्वाषाढा २० उत्तराषाढा २१ अभिजित् २२ श्रवण २३ धनिष्ठा २४ शतभिषा २५ पूर्वाभाद्रपदा २६ उत्तराभाद्रपदा २७ रेवती २८ आ प्रमाणे छे.

नक्षत्रोना अक्षरो—

चू चे चो लाऽश्विनी प्रोक्ता, ली लू ले लोभरण्यथ ।
आ ई ऊ ए कृत्तिका तु, ओ वा वी वू च रोहिणी ॥१६०॥
वे वो का की मृगशिर आर्द्रा कु घ ङ छाः पुनः ।
के को हा हि पुनर्वस्वो-र्हू हे हो डा तु पुष्यभे ॥१६१॥
डी डू डे डोभिराश्लेषा, मा मि मू मे मघा मना ।
मो टा टी टू फल्गुनी प्राक्, टे टो पा पीभिरुत्तरा ॥१६२॥
हस्तः पु ष ण ठैर्वर्णै श्चित्रा पे पो ररिः पुनः ।
रु रे रोताःस्मृताःस्वातौ, ती तू ते तो विशाखिका॥१६३॥
अनुराधा न नी नू ने, स्याज्ज्येष्ठा नो य यी युभिः ।
स्याद्ये यो भा भिभिर्मूलं, पूर्वाषाढा भु धा फ ढैः ॥१६४॥
भे भो जा ज्युत्तराषाढा, जु जे जो खा ऽभिजिन्मता ।
श्रवणे स्युः खि खू खे खो, धनिष्ठायां ग गी गु गे ॥१६५॥
गो सा सी सूः शतभिषक्, प्राक् से सो द दि भद्रपात् ।
दु श झ थो त्तराभद्रा, दे दो चा ची तु रेवती ॥१६६॥

भा० टी०—चूचेचोला-अश्विनी, लीलूलेलो-भरणी, आ इ उ ए-कृत्तिका, ओ वा वी वू-रोहिणी, वे वो का कि-मृग-

शिर,कु घ ङ छ–आर्द्रा, के को ह हि–पुनर्वसु, हुहेहोडा–पुष्य, डीडूडे डो–आश्लेषा, मा मी मू मे–मघा, मो टा टी टु–पूर्वाफाल्गुनी, टे टो प पी–उत्तराफाल्गुनी, पु ष ण ठ–हस्त, पे पो र रि–चित्रा, रु रे रो ता–स्वाति, ती तू ते तो–विशाखा, न नी नू ने–अनुराधा, नो य यी यु–ज्येष्ठा, ये यो भा भि–मूल, भु ध फ ढ–पूर्वाषाढा, भे भो जा जी–उत्तराषाढा, जु जे जो खा–अभिजित्, खी खू खे खो–श्रवण, ग गी गु गे–धनिष्ठा, गो सा सी सु–शतभिषा, से सो द दि–पूर्वाभाद्रपदा, दु श झ थ–उत्तराभाद्रपदा, दे दो च ची–रेवती, ए २८ नक्षत्रोना ११२ चरणोना ११२ अक्षरो छे, जे नक्षत्रना जे चरणमा कोइनो जन्म थाय त्यारे ते चरणना अक्षर प्रमाणे तेनु नाम–करण थाय, अश्विनीना प्रथम चरणनो अक्षर 'चु' छे तो अश्विनीना ते चरणमा जन्मनारनु नाम 'चु चू' आ अक्षर आदिमां हशे ते अपाशे, आम सर्वत्र समजी लेवु, बतावेल अक्षरोमा ह्रस्व होय त्या दीर्घ के दीर्घ होय त्या ह्रस्व पण समजी लेवो, एज रीते एक मात्रावाला जोडे द्विमात्रावालो के द्विमात्रावाला जोडे एकमात्रावालो वर्ण पण जाणवो, ज्या घङछ, षणठ, धफढ, शझथ, ए केवल अवर्णान्त व्यञ्जनो छे त्या अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ, आ दश स्वरो लगाडीने नाम पाडवा, 'ब' ने वने सरखा गणवा, 'ऋ' आद्याक्षरवालानु नक्षत्र 'रि' प्रमाणे समजवु. जो के 'ङञण' अक्षरो कोइना नामनी आदिमा होता नथी छतां चरणवेधादिनु फल ते चरणमा जन्मनारने भले छे तेथी प्रत्येक चरणाक्षरनी उपयोगिता छे.

नक्षत्रोना स्वामिओ—

प्रत्येक नक्षत्रनो भिन्न भिन्न स्वामी होय छे, जेनो उपयोग नक्षत्र क्षण जोवामा थाय छे तेथी मुहूर्त प्रकरणने अने नक्षत्र स्वामिओ बताव्या छे अहिया पुनरुक्ति करता नथी

नक्षत्र तारा संख्या—

त्रि ३ त्र्य ३ ङ्ग ६ भूत ५ जगदि ३ न्दु १ कृत ४ त्रि ३ तर्क ६-
र्थ ५ क्षि २ द्वि २ पञ्च ५ कु १ कु १ वेद ४ युगा ४ग्नि ३ रुद्रैः ११ ।
वेदा ४ ब्धि ४ राम ३ गुण ३ वेद ४ शत १०० द्विक २ द्वि २-
दन्तैश्च ३२ तत्समतिथिर्न शुभा भतारैः ॥१६७॥

भा०टी०—नक्षत्रोनी तारा संख्या आ प्रमाणे छे--अश्विनी ३, भरणी ३, कृत्तिका ६, रोहिणी ५, मृगशिर ३, आर्द्रा १, पुनर्वसु ४, पुष्य ३, आश्लेषा ६, मघा ५, पूर्वाफाल्गुनी २, उत्तराफाल्गुनी २, हस्त ५, चित्रा १, स्वाति १, विशाखा ४, अनुराधा ४, ज्येष्ठा ३, मूल ११, पूर्वाषाढा ४, उत्तराषाढा ४, अभिजित् ३, श्रवण ३, धनिष्ठा ४, शतभिषा १००, पूर्वाभाद्रपदा २, उत्तराभाद्रपदा २, अने रेवती ३२. ए नक्षत्रोनी साथे आपेल संख्यापरिमित ताराओ छे, नक्षत्र तारा संख्यावाली तिथि तेनी साथे शुभ गणाती नथी, जेम अश्विनीनी तारा ३ छे अने तृतीया तिथिनी संख्या पण ३ नी छे तो शुभ कार्यमां अश्विनी तृतीयानो योग सारो गणातो नथी, ज्यां तारा १५ थी अधिक होय त्यां तेने १५ भांगीने शेष संख्याने तारासंख्या गणवी एटले रेवतीनी २ अने शतभिषानी तारासंख्या १० रहेशे, अन्य ग्रन्थकारोए तारा संख्यानुं अन्य प्रयोजन पण जणाव्युं छे, वराह लखे छे—

नक्षत्रमुद्वाहे, फलमब्दैस्तारकामितैः सदसत् ।
दिवसैर्ज्वरस्य नाशो, व्याधेरन्यस्य वा वाच्यः ॥१६८॥

भा०टी०—विवाहमां नक्षत्र संबन्धी शुभ, अशुभ फल तेनी तारा संख्यापरिमित वर्षोए मलशे एम कहेवुं, ज्यारे ज्वर अथवा बीजो रोग जे नक्षत्रमां उत्पन्न थयो होय ते तेनी तारासंख्याना दिवसोमां मटशे एम कहेवुं.

नक्षत्रमुहूर्तौ—

मेषु क्षणान् पञ्चदशैन्द्ररौद्र-
वायव्य सर्पान्तकवारुणेषु ।
त्रिघ्नान् विशाखादितिभ ध्रुवेषु,
शेषेषु तु त्रिंशतमामनन्ति ॥१६९॥

भा०टी०—ज्येष्ठा, आर्द्रा, स्वाति, आश्लेषा, भरणी, शतभिषा ए ६ नक्षत्रोमा चन्द्रमानो भुक्तिकाल १५ मुहूर्तनो, विशाखा पुनर्वसु, रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदामा ४५ मुहूर्तनो अने शेष -अश्विनी, कृतिका, मृगशिर, पुष्य, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, अनुराधा, मूल, पूर्वाषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, पूर्वाभाद्रपदा, रेवती आ १५ नक्षत्रोनो ३० मुहूर्तोनो भोग होय छे. आ मुहूर्तोनो उपयोग नव्य चन्द्रोदय अने सक्रान्तिनु फल जोवामा थाय छे.

पूर्वयोगी आदि नक्षत्रो—

युज्यन्ते षड् द्वादश, नव चेति निशाकरेण धिष्ण्यानि ।
प्राङ् मध्यपश्चिमार्धैः, पौष्णैशाखण्डलादीनि ॥१७०॥

भा०टी०—रेवती अश्विनी, भरणी, कृतिका रोहिणी, मृगशिर आ ६ नक्षत्रो चन्द्रनी साथे पूर्वयोगी छे, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य आश्लेषा मघा पूर्वाफाल्गुनी उत्तराफाल्गुनी हस्त, चित्रा स्वाति विशाखा अनुराधा ए १२ नक्षत्रो मध्ययोगी छे अने ज्येष्ठा मूल पूर्वाषाढा उत्तराषाढा श्रवण धनिष्ठा शतभिषा पूर्वाभाद्रपदा उत्तराभाद्रपदा आ ९ नक्षत्रो पश्चिमयोगी छे, विवाहमा तेमज चातुर्मासमा वृष्टिनु भविष्य जोवामा आ पूर्वादि योगनो उपयोग थाय छे.

नक्षत्रोना भ्रमणमार्ग—

दक्षिणमार्गेऽश्लेषा १,

ब्राह्मत्रय ४ करयुगे ६ द्विपतिषट्कम् १३।
उत्तरतः पुनरभिजि,
त्रय ३ मश्वित्रय ६ यौनयुगलानि ८ ॥१७१॥
आजपादद्वयं १० स्वात्या ११
दित्ये १२ चेति भ्रमन्ति खे
मध्यमार्गे शतभिषक् १,
पुष्य २ पौष्ण ३ मघा ४ इति ॥१७२॥

भा०टी०—आश्लेषा रोहिणी मृगशिर आर्द्रा हस्त चित्रा विशाखा अनुराधा ज्येष्ठा मूल पूर्वाषाढा उत्तराषाढा आ बार नक्षत्रो मध्याकाशथी दक्षिण तरफना मार्गे भ्रमण करे छे. अभिजित् श्रवण धनिष्ठा अश्विनी भरणी कृत्तिका पूर्वाफाल्गुनी उत्तराफाल्गुनी पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा स्वाति पुनर्वसु आ १२ नक्षत्रो उत्तर तरफ आकाशमां भ्रमण करे छे ज्यारे शतभिषा पुष्य रेवती मघा आ ४ नक्षत्रो मध्य मार्गमां भ्रमण करे छे. शुभाशुभ समय समर्घता महर्घता अने वृष्टि ज्ञानने अंगे नक्षत्रोना भ्रमण मार्गनो उपयोग छे दक्षिणमार्गी नक्षत्रोथी चन्द्र उत्तर तरफ चाले तो शुभ अन्यथा महा अशुभ, ए ज रीते उत्तरागामि नक्षत्रोथी उत्तरमां चाले तो महाशुभ दक्षिणमां चाले तो साधारण, मध्यमार्गी नक्षत्रोथी चन्द्र उत्तरमां चाले तो शुभ अन्यथा अशुभ छे.

मुखपरक नक्षत्रगणो अने विधेय कार्यो—

पूर्वात्रयाग्निमूलाहि-द्विदैवत्यमघान्तकम् ।
अधोमुखं तु नवकं, भानां तत्र विधीयते ॥१७३॥
बिलप्रवेश-गणित-भूतद्यूतविलेखनम् ।
खननं शिल्प-कूपादि-निक्षेपोद्धरणादि यत ॥१७४॥

भा०टी०—पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद, कृत्तिका,

मूल, आश्लेषा, विशाखा, मघा, भरणी आ नव नक्षत्रोनो गण अधोमुख छे, ते नक्षत्रगणमा बिलमा प्रवेश, गणित, भूतसाधन, जुगार, छोलवु, खणवु, शिल्पारंभ, कूपादिखनन, गाडवुं, अक्षरथी काढवु आदि ए प्रकारना कामो करवाथी सफलता थाय छे.

मित्रैन्द्र त्वाष्ट्र हस्तेन्द्वादित्यान्त्याश्विनवायुभम् ।
तिर्यङ्मुखाख्यं नवकं, भानां तत्र विधीयते ॥१७५॥
हलप्रवाह-गमन, गन्त्रीयन्त्रखरोष्ट्रकम् ।
खरगोरथनौयान,-लुलाय ह्यकर्म च ॥१७६॥

भा०टी०—अनुराधा, ज्येष्ठा, चित्रा, हस्त, मृगशिर, पुनर्वसु, रेवती, अश्विनी, स्वाति आ नवनक्षत्रोनो गण तिर्यट्मुख छे आमा हल चलावुं, गमन करवु, गाडु चलावुं, यत्र चलावु गधेडा अने उटोनो समूह चलाववो गधेडा बलद रथ नाव अने अन्य यान वाहनो नवेसर चलाववा, अने पाडा, घोडाओने दमवा आदि कामो करवा.

ब्रह्मविष्णुमहेशार्य-वसुपाश्युत्तरात्रयम् ।
ऊर्ध्वास्य नवकं भाना, तेषु कर्म विधीयते ॥१७७॥
पुरहर्म्यगृहाराम-वारणध्वजकर्म च ।
प्रासादवेदिकोद्यान-प्राकाराद्य च सिध्यति ॥१७८॥

भा०टी०—रोहिणी, श्रवण, आर्द्रा, पुष्य, धनिष्ठा, शतभिषा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा आ नक्षत्र नवक गण ऊर्ध्वमुख छे. आ नक्षत्रोमा नगरनिवेश, महेलनिर्माण, गृहचयन, आरामरोपण गजारोहण, ध्वजारोप, प्रासाद, वेदिका, उद्यान, कोट आदिनु निर्माण करवाथी सिद्ध थाय छे

स्थिरादि नक्षत्रगणो अने विहित कार्यो—

स्थिरसञ्ज्ञ भचतुष्टय-मम्बुजयोन्युत्तरात्रितयम् ।
नरपतिपत्तनसदनं प्रवेशबीजादि सिध्यते तत्र ॥१७९॥

दारुणभानि पुरन्दर–कोणपशिवसर्पदेवतानि स्युः।
दारुणवधनदहनप्रहरणकर्माणि सिद्धतां यान्ति॥१८०॥
पूर्वात्रितयं पैतृभ–मुग्राख्यमिदं पञ्चकं ग्राम्यम्।
मारणभेदनबंधनविषदहनं पञ्चके कार्यम् ॥१८१॥
सुरसचिवाश्विनिहस्त–ताराः स्युः क्षिप्रसंज्ञितास्ताश्च।
औषधपण्यविभूषण-शिल्पलताज्ञानकर्मसिद्धिःस्यात ॥१८२॥
मृदुवृन्दं भचतुष्टय–मन्त्यत्वाष्ट्राख्यसौम्यमित्रर्क्षम्।
मङ्गलवनिताभूषणमन्दिरगीतादि सिध्यते तत्र ॥१८३॥
भद्वितयं श्वसनसखं चेन्द्राग्निभं मिश्रसंज्ञं तत्।
निखिलानि च साधारण–कार्याण्युग्राणि कार्याणि ॥१८४॥
अदिति श्रुतिभात्त्रितयं, चरसंज्ञं पञ्चमं मरुद्भं च।
वाहनकर्म विभूषण–चरकार्योद्यानमन्त्रसिद्ध्यै तत् ॥१८५

भा०टी०—रोहीणी, उत्तराफाल्गुनी उत्तरापाढा, उत्तराभाद्रपदा आ ४ नक्षत्रो 'स्थिर' संज्ञावालां छे, राजधानीनो निवेश तथा राजाना महेलनु निर्माण प्रवेश अने बीजवपन आदि कार्यो आमां सिद्ध थाय छे. ज्येष्ठा, मूल, आर्द्रा, आश्लेषा आ नक्षत्रोनु नाम 'दारुण' छे, आमां कठोर कार्य, बन्धन, मारण, दहन, आयुध चलाववां आदि कार्यो सिद्ध थाय छे. पूर्वाफाल्गुनी पूर्वाषाढा पूर्वाभाद्रपदा मघा भरणी आ नक्षत्रोनी 'उग्र' ए संज्ञा छे आ उग्रपंचकमां मारण, भेदन, बन्धन, विषप्रयोग, अग्निदहनादि कार्यो करनार सफल थाय छे.

पुष्य, अश्विनी, हस्त, आ 'क्षिप्र' संज्ञक नक्षत्रोमां औषध ग्रहण, क्रयाणक संग्रह, अलंकारपरिधान शिल्पाध्ययन लतारोपण, ज्ञानाभ्यास आदि कार्योनी सिद्धि थाय छे.

रेवती, चित्रा, मृगशिर, अनुराधा आ ४ नक्षत्रो 'मृदु' संज्ञक छे.

आमां दरेक मंगलकार्यों स्त्री विषयक कार्यो, अलंकार, मंदिर, गीत आदि कार्यो सिद्ध थाय छे.

स्वाति, विशाखा आ बे नक्षत्रो 'मिश्र' संज्ञक छे, आमां सर्व साधारण तेम ज उग्र कार्यो करवां

पुनर्वसु, श्रवण, घनिष्ठा, शतभिषा, स्वाति आ पांच नक्षत्रो 'चर' संज्ञक छे, आमां यान-वाहन कार्यो, विभूषा, उद्यान कार्य, मन्त्रादि चरकार्यो सिद्धिने पामे छे

कथितान्यपि लघुवृन्दे, चरसञ्ज्ञे तानि कार्याणि ।
चरधिष्ण्ये कथितान्यपि, कार्याणि लघुगणे नूनम् ॥१८६॥

यद्यद्दारुणभोक्तं, तत्तत्कर्म त्वथोग्रभे कार्यम् ।
साधारणमिश्राख्य, क्रूरोग्र तीक्ष्णदारुणं तुल्यम् ॥१८७॥

साधारणवृन्दोक्तं, यत्कर्माद्य क्रूरभे सदा कार्यम् ।
ध्रुवमचल क्षिप्रलघु, चर चलं मैत्रमृदुसञ्ज्ञे ॥१८८॥

निखिलेष्वपि धिष्ण्येष्विह, सामान्यं कार्यमित्युक्तम् ।
तत्तत्प्रकरणकथितं, तदेव मुख्यं विजानीयात् ॥१८९॥

भा०टी०—लघुगणमा कहेल कार्यो चर संज्ञक नक्षत्रोमां अने चर नक्षत्र गणमा कहेल कार्यो लघुगणमां करवां, जे जे कार्य दारुण नक्षत्रमां करवानुं कहेल छे ते उग्र नक्षत्रमां पण करवुं, साधारण–मिश्र, क्रूर, उग्र अने तीक्ष्ण–दारुण ए तुल्यस्वभावना नक्षत्रो छे, साधारणमां करवानां कार्यो क्रूर नक्षत्रोमां करवां, ध्रुव अचल, क्षिप्र लघु, चर चल, मैत्र मृदु, साधारण मिश्र, क्रूर उग्र अने तीक्ष्ण दारुण, ए एक बीजाना नामान्तरो छे, एकमा कहेल काम बीजामां करी शकाय छे, आ प्रमाणे तमाम नक्षत्र विषेय सामान्य कार्य कह्युं, आगल ते ते प्रकरणमां कहेल कार्य तेनु मुख्य कार्य जाणवुं.

प्रत्येकनक्षत्र विधेय कार्यो—

यात्राभेषजभूषण-विद्याऽश्वेभाजशिल्पवस्त्राद्यम् ।
उत्सवमंगलकार्यं, कर्त्तव्यं दस्रनक्षत्रे ॥१९०॥

साहसदारुणशत्रु-प्रशमननिक्षेपकूपकृष्याद्यम् ।
विषवधबन्धनदहन-प्रहरणकार्याणि भरणीषु ॥१९१॥

अग्निपरिग्रहसाहस-रिपुवधदहनास्त्रशस्त्रकर्माद्यम् ।
धातुवादविधानं, विवादलोहाश्मबहुलायाम् ॥१९२॥

भा०टी०—यात्रा. औषध, भूषण, विद्या, अश्वकर्म, गजकर्म, अजकर्म, शिल्प वस्त्रादि, उत्सवकार्य अने मांगलिक कार्य अश्विनीमां करवुं. साहसकर्म, भयंकरकर्म, शत्रुने शान्त करवो, जमीनमां गाडवुं, कूपखनन, कृषिकार्य, विषदान, वध, बन्धन, बालवुं, प्रहरणकार्य इत्यादि उग्र कार्यो भरणीमां करवां, अग्निस्थापन, साहसकर्म, शत्रु-वध, दहन, अस्त्र-शस्त्रकर्मादि, धातुक्रिया (रसायनसिद्धि). विवाद, लोहकर्म, पाषाणकर्म ए कामो कृत्तिकामां करवां.

सुरनरसद्माद्यखिलं, विवाहधनधान्यसंग्रहोपनयम् ।
उत्सवभूषणमङ्गल-मजभे कार्यं सपौष्टिकं कर्म ॥१९३॥
शान्तिकपौष्टिकशिल्प-व्रतकर्मोद्वाहकमंगलाद्यखिलम् ।
सुरसंस्थापनवास्तु-क्षेत्रारम्भादि सिध्यते सौम्ये ॥१९४॥
प्रहरणदारुणबन्धन-विग्रहविषसंधिवह्निकर्माद्यम् ।
छेदनदहनोच्चाटन-मारणकृत्यं च रौद्रभे कुर्यात् ॥१९५॥

भा०टी०—देवालय, घर आदि सर्व, विवाह, धन्यधान्य-संग्रह, उपनयन, उत्सव, आभरण, मांगल्य अने पौष्टिक कार्य रोहिणी नक्षत्रमां करवां, शांतिक, पौष्टिक, शिल्पकर्म, व्रतकर्म, विवाह, मांगल्यादिक सर्व शुभकार्य, देवप्रतिष्ठा, वास्तुक्षेत्रारंभादि मृगशिरमां सिद्ध थाय छे. आयुध कार्य, उग्रकार्य, बन्धन, लडाइ,

विषप्रयोग, सधि, अग्निकर्म आदि छेदन, दहन, उचाटन अने मारण-कर्म आर्द्रा नक्षत्रमा करवां.

शान्तिकपौष्टिकयात्रा-व्रतप्रतिष्ठा नृपाहवाद्यखिलम् ।
वनिताकरसंग्रहण, त्यक्त्वान्यत्कर्म सिद्ध्यते पुष्ये ॥१९६॥
उद्धतरिपुमदभञ्जन-साहसवाणिज्यकपटकर्म ।
अनलायससग्रह-क्ष्वेड-स्तेयादि सर्पभे कार्यम् ॥१९७॥
युवतीकरसग्रहं, वापीकूपतडागोत्सवाद्यं च ।
क्षितिपत्याहवसर्वं, पित्र्यधिष्ण्ये च पैतृकं कर्म ॥१९८॥

भा०टी०—शांतिक, पौष्टिक कर्म, यात्रा, व्रत, प्रतिष्ठा, राजयुद्धादि सर्व, स्त्री पाणिग्रहण सिवाय बीजा सर्व कार्यो पुष्यमां सिद्ध थाय छे, अभिमानी शत्रुनु मदभंजन, साहसिककार्य, वाणिज्य कर्म, कपटकर्म, अग्निकार्य, लोहसंग्रह, विषप्रयोग, चोरी आदि आश्लेषामा करवा. स्त्रीनुं पाणिग्रहण, वाव कुआ तलाव आदिनुं खोदवु, उत्सव आदि, राजाओनां युद्ध आदि सर्व अने पितृकर्म ए मघा नक्षत्रमां करवां

शिल्पप्रहरणबन्धन-दारुणचित्रकापटं कर्म ।
नटनद्रुमासवाद्य, भाग्ये कुड्यप्रहरणं च ॥
उपनयन करपीडन मखिल स्थिरशिल्पभूषणं त्वखिलम् ।
पुरसदनमारभण-मम्बरग्रणकार्यमर्यमर्क्षेषु ॥
भेषजयात्राविद्या-विवाहशिल्पवनाम्बराभरणम् ।
सुरसंस्थापनमखिलं, वास्तुप्रारम्भमर्कनक्षत्रे ॥

अर्थात्—शिल्प, आयुध, बन्धन, कठोरकर्म, चित्र, कपटकार्य, नाटक, वृक्षारोप, आसव, भित्तिचयन अने प्रहरण पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रमां करवां. उपनयन, विवाह, सर्वस्थिर कार्य, शिल्प, सर्व भूषणकर्म,

पुरनिवेश, गृहनिवेश, वस्त्रकर्म, रणकर्म ए उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमां करवां, औषध, यात्रा, विद्या, विवाह, शिल्प, व्रत, वस्त्र, आभूषण, सर्वदेवप्रतिष्ठा, वास्तुप्रारंभ ए कार्य हस्तनक्षत्रमां करवां.

शान्तिकपौष्टिकमखिलं, स्थिरकार्यं वस्त्रभूषणं शिल्पम् ।
उपनयनं वास्तुकृषि-क्षितिपतिकार्यं च चित्रायाम् ॥१९९॥
सुरनरसद्मविधानं, भूषणवैवाहमंगलाद्यखिलम् ।
बीजारोपणशस्त्र-क्षितिपतिसमरं विभूषणं स्वातौ ॥२००॥
उपचयवस्तुग्रहणं, भूषणनववस्त्रचित्रकार्यं च ।
भेषजशकटप्रहरण-शिल्पविचित्रं द्विदैवभे कार्यम् ॥२०१॥

भा०टी०—सर्वप्रकारनां शांतिक अने पौष्टिक कार्यो, स्थिरकार्य, वस्त्र, भूषण, शिल्प, उपनयन, वास्तु, कृषि, राजकार्य ए कार्यो चित्रामां करवां. देवालय, मनुष्यालयनुं निर्माण, भूषण, विवाह संबन्धी सर्वमंगल कार्य, बीजारोपण, वस्त्र, राजयुद्ध, विभूषण ए सर्व स्वातिमां करवां. धान्यादिवस्तु संग्रह, भूषण, नवीन वस्त्र चित्रकार्य, औषध, शकटवहन, प्रहरण, शिल्प, विचित्र कार्य ए विशाखा नक्षत्रमां करवां.

करमर्दनमुपनयनं, यात्रासुरसद्मसंनिवेशाद्यम् ।
स्थिरचरकार्यं त्वखिलं, भूषणमश्वेभकर्म मित्रर्क्षे ॥२०२॥
रिपुवधभेदनदहन-प्रहरणवह्निलोहकार्याद्यम् ।
स्तेयविधानं विविधं, शिल्पं चित्रं सुरेशभे कार्यम् ॥२०३॥
कृषिभवनविपिनकार्यं, वापीकूपादिबीजनिर्वापम् ।
समरविभूषणशिल्पं, विग्रहसंधिश्च मूलनक्षत्रे ॥२०४॥

भा०टी०—विवाह, उपनयन, यात्रा. देवालयनिवेश आदि, सर्व स्थिर तथा चर कार्य, भूषण, अश्वकर्म गजकर्म अनुराधा नक्षत्रमां करवुं. शत्रुनाश, भेदन, दहन, प्रहरण, अग्निकार्य लोहकार्य

आदि, सर्व प्रकारनुं चौर्यकर्म, शिल्प, चित्र ए ज्येष्ठा नक्षत्रमां कराय छे. कृषिकार्य, भवननिर्माण, वनकार्य वापी कूपादिकार्य बीजवपन, युद्ध, विभूषण, शिल्प, युद्ध, संधि आदि कार्यो मूल नक्षत्रमा करवां.

शम्बरबन्धनमोक्षण-वापीकूपादि निग्रहं हननम् ।
द्रुमखण्डनवनचारिण पक्षिगां च यत्कार्यमम्बुभे कार्यम् ॥२०५॥
स्थापनमुण्डनमण्डन-वास्तुनिवेश प्रवेशनाद्य च ।
बीजारोपणवाहन-भूषणवस्त्रं च वैश्वभे कार्यम् ॥२०६॥
शान्तिकपौष्टिकमङ्गल-विचित्रकृपिशिल्पमम्बराद्यम् ।
धामविधानस्थापन-मुपनयनं विष्णुभे कार्यम् ॥२०७॥
उपनयन चौलविधिं, जलतुरगोष्ट्रेभदेवनिर्माणम् ।
कृषिभवनाहवमम्बर-विपिनोद्यानाश्म भूषण वसुभे ॥२०८॥

भा०टी०—जल बाधवुं, जल छोडवु, वापी-कूपादि, निग्रह, मारण, वृक्षच्छेदन, वनचर पक्षिओ सबन्धी कार्य ए सर्व पूर्वाषाढामां कराय छे. प्रतिष्ठा, क्षौरकर्म, अलंकरण, वास्तुनिवेश, वास्तुप्रवेशादि, बीजारोपण, वाहन, भूषण, वस्त्रकर्म ए उत्तराषाढामा करवा, शान्तिक, पौष्टिक, माङ्गल्य, विचित्रकार्य, कृषि, शिल्प, वस्त्रादि, गृहनिर्माण, प्रतिष्ठा, उपनयन ए श्रवण नक्षत्रमा करवां. उपनयन, चूडाविधि-जल, अश्व, उष्ट्र, गजसम्बन्धी कार्य, देवमूर्ति निर्माण, कृषि, भवन, युद्ध, वस्त्र, वननिवेश, उद्यान, पाषाणकर्म भूषण ए धनिष्ठामा करवा.

समरारम्भविभूषण-गज बलतुरगोष्ट्रशस्त्रनावाद्यम् ।
मुक्ताफलरजतमय, वरुणर्क्षे वास्तुकर्माद्यम् ॥२०९॥
अजचरणर्क्षे कुर्यात्, सारसजलयन्त्रशिल्पकर्माद्यम् ।
मृद्धातुर्वादच्छेदन कृषिमहिषोष्ट्राजेभविक्रयणम् ॥२१०॥
परिणयनं व्रतबन्धन-सुरनरसदनप्रतिष्ठा च ।
आहिर्बुध्न्ये भूषण मम्बरवास्तुप्रवेशमभिषेकम् ॥२११॥

स्थलजलभूषणमखिलं, धामविधानं त्वमर्त्यमर्त्यानाम् ।
करपीडनमुनपयनं, मङ्गलमखिलं च पौष्णभे कार्यम् ॥२१२॥

भा०टी०—युद्धारंभ, विभूषण, गजसैन्य, अश्व, उष्ट्र, शस्त्र-नानादि, मुक्तामय-रजतमय आभरण, वास्तुकर्मादि, शतभिषामां करवुं. साहसकर्म जलयंत्र शिल्पकर्मादि, मृत्तिकाकर्म, धातुवाद, छेदन, कृषि, महिष, उष्ट्र, अज-गजनो विक्रय ए पूर्वा भाद्रापदामां करवां, विवाह, व्रतग्रहण, देवालयप्रतिष्ठा, गृहप्रवेश, भूषण, वस्त्र, वास्तुकर्म, प्रवेश, राज्याभिषेक ए कार्यो उत्तराभाद्रपदामां करवां. स्थल, जल संबंधी कार्य, सर्वभूषण, गृहनिर्माण, देवालयनिर्माण, विवाह, उपनयन, सर्व जातनां मांगलिक कामो रेवतीमां करवां.

नक्षत्रोनी कुलादिसंज्ञा—

पितृवसुतिष्येन्द्वनलत्र्युत्तरभाग्यद्विदैवचित्राणि ।
दैवचिकित्सककोणपसहितान्येतानि कुलभानि ॥२१३॥

अजचरणादितिपूषाधातृमरुद्विष्णुवारीशशाक्राणि ।
अहियमधातृजलान्युपकुलान्यन्यानि कुलोपकुलानि ॥२१४॥

उपकुलभेषु च याता, विजयं प्राप्नोत्यसंशयं क्षिप्रम् ।
कुलभेषु च भङ्गः स्याद्यातुः संधिस्तयोः कुलोपकुलभेषु ॥२१५॥

कुलभेषु च जातास्ते मनुजा भवन्ति कुलमुख्याः ।
उपकुलभे परिविभवं भोक्तारस्त्वन्यभेषु सामान्याः ॥२१६॥

भा०टी०—मघा, धनिष्ठा, पुष्य, मृगशिरा, कृत्तिका, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, पूर्वाफाल्गुनी, विशाखा, चित्रा, अश्विनी, मूल एटलां 'कुल' नक्षत्रो छे. पूर्वाभाद्रपदा, पुनर्वसु, रेवती, अभिजित्, स्वाति, श्रवण, शतभिषा, ज्येष्ठा, आश्लेषा, भरणी, रोहिणी पूर्वाषाढा ए 'उपकुल' नक्षत्रो छे अने बाकीनां आर्द्रा, अनुराधा, हस्त,

ए 'कुलोपकुल' संज्ञक छे.[1] 'उपकुल' नक्षत्रोमां 'पापी' निःसंदेह जल्दी विजयी थाय छे, 'कुल' नक्षत्रोमां 'पापी' हारे छे अने 'कुलोपकुल'मां युद्ध थाय तो बंने सरखा उतरी संधि करे छे. कुल नक्षत्रमा जन्मेल कुल नायक थाय छे, उपकुलमा जन्मेल परधनने भोगवनार थाय छे ज्यारे कुलोपकुलमां जन्मनार साधारण होय छे.

नक्षत्रोनी अन्धादिसंज्ञा—

अन्धकमथ मन्दाख्य, मध्यमसंज्ञं सुलोचनं पश्चात् ।
पर्यायेण च गणयेच्चतुर्विधं ब्रह्मधिष्ण्यतः ॥२१७॥

अन्धे सद्यो वस्तु नष्टं हृतं यल्लभ्यं दूरान्मन्दनेत्रे च कष्टात् ।
श्राव्य द्रव्यं मध्यनेत्रे सुनेत्रे,
नैव श्राव्य नैव लभ्यं कदाचित ॥२१८॥

मघाद्यैरन्धैर्दिशं पूर्वां, केकरैर्दक्षिणां पुनः ।
पश्चिमां चिपिटैर्धिष्ण्यै,-र्दिव्यदृष्टिभिरुत्तराम् ॥२१९॥

भा०टी०—नक्षत्रो अन्ध, मन्दनेत्र, मध्यनेत्र अने सुनेत्र संज्ञक होय छे रोहिणीथी अन्धादि ४-४ नक्षत्रो गणी लेवा, रोहिणी अंध, मृगशिरा मंदनेत्र, आर्द्रा मध्य अने पुनर्वसु सुनेत्र, एज रीते २८ नक्षत्रो जाणी लेवा, अन्धमां वस्तु जाय तो जल्दी मले, मन्दनेत्रमां लांबा टाइमे मले, मध्यनेत्रमा पत्तो लागे पण मले नहि अने सुनेत्रमां पत्तो य न लागे अने मले य नहिं, अन्धनक्षत्रमा गुमायेल

---

[1] मुहूर्त चिन्तामणिमा 'अनुराधा' उपकुलमा अने वसिष्ठ संहिता तथा आरम्भसिद्धिमा कुलोपकुलमा परिगणित छे 'मूल'ने वसिष्ठ तथा आरम्भसिद्धिकारे कुलमा अने मुहूर्तचिन्तामणिकारे 'कुलोपकुलमा गण्यु छे' 'शतभिषा'ने वसिष्ठे कुलमा अने आरंभ सि० कारे मुहूर्त चि० कारे 'कुलोपकुल गण्यु छे 'हस्त'ने वसिष्ठे 'कुलोपकुल' अने आं० सि०-मु० चि० कारे 'उपकुल' तरीके गणेल छे.

प्रभुः पण्याङ्गना मित्रं, देशो ग्रामः पुरं गृहम् ।
एकनाडोस्थितं भव्यं, विरुद्धं वेधवर्जितम् ॥२२८॥

चक्रे त्रिनाडिके धिष्ण्य-मेकनाडीगतं शुभम् ।
गुरुशिष्यवयस्यादे-र्न वधूवरयोः पुनः ॥२२९॥

भा०टी०—त्रण त्रण नक्षत्रोनी आवृत्तिओथी क्रम अने उत्क्रमे करी अश्विनी आदि नक्षत्रो गणतां आदि मध्य अन्त्य, अन्त्य मध्य आदि, आदि मध्य अन्त्य, नाडीओमां वधां नक्षत्रो आवी जशे, अश्विनी हृदयभागे आदि नाडीमां, भरणी मध्यनाडीमां, कृत्तिका पृष्ठभागे अन्त्यनाडीमां, ते पछी रोहिणी अन्त्यनाडीमां, मृगशिरा मध्यमां अने आर्द्रा आद्यनाडीमां आवशे. आम क्रमोत्क्रमे ३-३ नक्षत्रो गणतां नव आवृत्तिओ वडे २७ नक्षत्रो ३ नाडीओमां समाइ जशे, आम गणतां अश्विनी. आर्द्रा, पुनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, ज्येष्ठा मूल, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा आ ९ नक्षत्रो आद्य नाडीमां, भरणी, मृगशिरा, पुष्य, पूर्वाफाल्गुनी, चित्रा, अनुराधा. पूर्वाषाढा, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपदा आ ९ नक्षत्रो मध्यनाडीमां अने कृत्तिका, रोहिणी, आश्लेषा, मघा, स्वाति, विशाखा, उत्तराषाढा, श्रवण रेवती आ ९ नक्षत्रो अन्त्यनाडीनां छे, जो वरवधु बन्नेनां नक्षत्रो एक नाडीमां होय तो ते अत्यन्त अशुभ छे. जो ते मध्यनाडीमां होय तो पुरुषनुं अने ते पासेनी नाडीमां होय तो कन्यानुं मरण निपजावे, एक नाडीगत बंनेनां नक्षत्रो पासे पासे होय तो एक वर्षमां अशुभ फल करे अने आंतरे होयतो त्रण वर्षे अशुभ करे.

ज्यां ऋषि, मंत्र अने देवता त्रणे एक नाडीगत होय त्यां अनुक्रमे द्वेष, रोग अने मरण फल कहेवुं

स्वामी, पण्यांगना, मित्र, देश, ग्राम नगर, घरनां नक्षत्रो एक नाडीगत होय तो श्रेष्ठ छे अने भिन्ननाडीमां होय तो विरुद्ध जाणवां.

एक नाडीगत नक्षत्रो, गुरु शिष्यो, मित्रो आदिने माटे शुभ छे पण वरकन्याने माटे शुभ नथी.

नाडीदोषापवाद -ज्योतिश्चिन्तामणौ—

रोहिण्यार्द्रामृगेन्द्राग्नि-पुष्यश्रवणपौष्णभम् ।
अहिर्बुध्न्यर्क्षमेतेषां नाडीदोषो न विद्यते ॥२३०॥

भा०टी—रोहिणी, आर्द्रा, मृगशिरा, ज्येष्ठा, कृत्तिका, पुष्य, श्रवण, रेवती, उत्तराभाद्रपदा, आ नक्षत्रोने नाडी दोष होतो नथी.

नक्षत्रोनी राशिओ—

राशिस्थ तत्र मेषोऽश्विनी च भरणी च कृत्तिकापादः ।
वृषभस्तु कृत्तिकांह्रि-त्रयान्विता रोहिणी समार्गार्धी ॥२३१॥
मिथुनोऽमृगार्धमार्द्रा, पुनर्वसोश्चांह्रयस्त्रयः प्रथमे ।
कर्की च पुनर्वस्वोः, पादः पुष्यस्तथाऽऽश्लेषा ॥२३२॥
सिंहस्तु मघापूर्वा फाल्गुन्यः पाद उत्तराणां च ।
कन्योत्तरात्रिपादी, हस्तश्चित्रार्धमाद्य च ॥२३३॥
तौली चित्रान्त्यार्धं, स्वातिः पादत्रय विशाखायाः ।
स्याद् वृश्चिको विशाखा चतुर्थपादोनुराधिका ज्येष्ठा ॥२३४॥
धन्वी मूल पूर्वा षाढाऽपि च पाद उत्तराषाढः ।
स्यान्मकर उत्तराषाढांह्रित्रितयं श्रुतिर्धनिष्ठार्धम् ॥२३५॥
कुंभोऽन्त्यधनिष्ठार्धं, शततारापूर्वभाद्रपात्रिपदी ।
मीनो भाद्रपदांह्रिस्तथोत्तरा रेवती चेति ॥२३६॥

भा०टी—अश्विनी भरणी कृत्तिका प्रथम पाद-मेष १. कृत्तिका पादत्रय रोहिणी मृगशिरअर्ध वृष २. मृगशिर अर्ध आर्द्रा पुनर्वसु पादत्रय-मिथुन ३. पुनर्वसुअन्त्यपाद-पुष्य आश्लेषा कर्क-४. मघा. पूर्वाफाल्गुनी उत्तराफाल्गुनी प्रथमपाद सिंह ५. उत्तराफाल्गुनी पादत्रय हस्त चित्रार्ध कन्या-६, चित्रान्त्यार्ध स्वाति विशाखापादत्रय तुला

७. विशाखा अन्त्यपाद, अनुराधा ज्येष्ठा-वृश्चिक ८, मूल. पूर्वाषाढा. उत्तराषाढा प्रथमपाद-धनु ९. उत्तराषाढापादत्रय, श्रवण, धनिष्ठार्ध-मकर १०, धनिष्ठार्ध शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदापादत्रय कुंभ ११. पूर्वाभाद्रपदा अन्त्यपाद, उत्तराभाद्रपदा, रेवती मीन-१२. आम सवा बे बे नक्षत्रोनी १-१ राशि थाय छे एटले २७ नक्षत्रोनी १२ राशिओ थाय छे, राशिओ उपरथी पदार्थो उपर पडतो ग्रहोनो शुभ अशुभ प्रभाव जोवाय छे, तेमज राशिओनो बीजो पण घणो उपयोग छे.

शूल नक्षत्रो—

ऐन्द्राजपादाऽजभार्यमाणि, शूलानि भानि क्रमतश्च दिक्षु॥
न यातियाता यदि शूलभेषु, सुरेशतुल्यः समरे बलेन॥२३७॥

भा०टी—ज्येष्ठा, पूर्वाभाद्रपदा, रोहिणी, उत्तरा फाल्गुनी आ ४ नक्षत्रो पूर्वादि ४ दिशाओमां अनुक्रमे शूलरूप छे। गमन करनार युद्धमां बलवडे इन्द्रतुल्य होय तोपण ज्येष्ठादि शूलमां पूर्वादि दिशामां प्रयाण करतो नथी.।

सर्वद्वारिक नक्षत्रो—

सर्वद्वारिक धिष्ण्यान्य-मरेज्यादित्यमैत्रदस्रसंज्ञानि।
तत्र तु यायान्नियतं, धनकीर्तिर्लभ्यतेऽप्यचिरात्॥२३८॥

भा०टी—पुष्य, हस्त, अनुराधा, अश्विनी नामक नक्षत्रो सर्वद्वारिक छे, आ नक्षत्रोमां प्रयाण करनार अवश्य धन तथा कीर्तिने अविलम्बे प्राप्त करे छे.

समयविशेषे गमनाऽयोग्यनक्षत्रो—

स्थिर-साधारणधिष्ण्यैः, पूर्वाह्णे नैव गमनं सत्।
गमनं तु दारुणर्क्षै-, र्दिनदलसमये न कार्यमनवरतम्॥२३९॥
क्षिप्रैर्नापरवासर-समये मृदुमिश्रैर्न रात्रिमुखे।
उग्रगणैर्निशि समये-चरधिष्ण्यैरुषसि न श्रेष्ठम्॥२४०॥

भा०टी—रोहिणी, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तरा भाद्रपदा, स्वाति, विशाखा, आ ६ नक्षत्रोमा मध्याह्न पहेला गमन करवुं शुभ नथी, ज्येष्ठा, मूल, आर्द्रा, आश्लेषा, आ चार नक्षत्रोमां मध्याह्नकाले कदापि गमन न करवु, पुष्य, अश्विनी, हस्त, आ नक्षत्रोमा मध्याह्न पछीना दिवसमा प्रयाण न करवु । रेवती, चित्रा, मृगशिर, अनुराधा, स्वाति, विशाखा, आ नक्षत्रोमा साजे रात्रिना प्रारंभ समयमा गमन न करवुं । भरणी, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपदा, आ नक्षत्रोमा रात्रिना समयमा गमन न करवुं अने पुनर्वसु, स्वाति, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, आ नक्षत्रोमा उषःकालमा गमन न करवुं.

सर्वकाले गमनयोग्य नक्षत्रो—

सर्वस्मिन्नपि समये, सर्वासु च दिग्विदिक्ष्वेव ।
सर्वं द्वारिकधिष्ण्या न्यपि शुभदान्यतुलमखिलनृणाम् ॥२४१॥

भा०टी—अश्विनी, पुष्य, हस्त, अनुराधा, आ सर्व द्वारिक नक्षत्रोमा सर्वकाले सर्व दिशा विदिशाओमा गमन करवु सर्व मनुष्यो ने माटे अति शुभ फलदायक होय छे.

पुष्यनी विशिष्टता—

परकृतदोष निखिलं, निहन्ति पुष्यः परो न पुष्यकृतम् ।
द्वादशनैधनगेन्दौ, बलवान् पुष्यस्त्व भीष्टदः सततम् ॥२४२॥
प्रत्यरिनैधनसंज्ञो विपत्करो वापि जन्मसंज्ञो वा ।
पाणिग्रहणं मुक्त्वा, नूनं सर्वार्थसिद्धिदः पुष्यः ॥२४३॥
मृगगणमध्ये सिंह, उडुगणमध्ये तथैव पुष्यश्च ।
निजबल सहितोऽप्येवं, त्रिविधोत्पातैर्न शक्तिमान् निहतः

भा०टी—परकृत सर्व दोषोनो पुष्य नाश करे छे, पण पुष्य-

क्रूर गुण दोषनो बीजाथी नाश थइ शकतो नथी. चन्द्र बारमो के आठमो होय तो पण बलवान् पुष्य हंमेशां अभीष्टफल आपे छे. पुष्य जन्म, विपत्. प्रत्यरि के ५ मा तारा रूप होय तोये विवाहने छोडी शेष सर्वकार्यनो सिद्धि करनारो छे. हरिणगणमां जेम सिंह छे तेवोज नक्षत्र गणमां पुष्य बलवान् छे. आम स्वपराक्रमे सहित छतां पण दिव्य भौम आन्तरिक्ष उत्पातो वडे हणायेल पुष्य कार्य साधक शक्तिमान् थतो नथी.

ज्योतिष तत्त्वकार पुष्यने अंगे लखे छे—

ग्रहेण विद्धोप्यशुभान्वितोऽपि,
विरुद्धतारोऽपि विलोमगोऽपि ।
करोति पुंसां सकलार्थसिद्धिं,
विहाय पाणिग्रहणं हि पुष्यः ॥२४५॥

भा०टी—ग्रहवडे विद्ध होय, अशुभ ग्रहाक्रान्त होय, विरुद्ध तारात्मक होय, वक्रिग्रहाध्यासित होय तो पण पुष्य एक विवाह सिवाय मनुष्योना सर्वकार्योनी सिद्धि करनारो छे.

वसिष्ठ पुष्यने अंगे यात्रा विषे कहे छे—

सर्वदिक्षु प्रशस्तोऽपि, पुष्यः सर्वार्थसाधकः ।
प्रतीच्यां गमने त्याज्यः, सौख्यसंपदमिच्छता ॥२४६॥

भा०टी—सर्व कार्य साधक पुष्य सर्व दिशाओना गमनमां शुभ होवा छतां सुख संपत्तिना इच्छुके पश्चिमदिशाना गमनमां एनो त्याग करवो ।

नक्षत्र पञ्चक—

नक्षत्र गणमां धनिष्ठादि पांच नक्षत्रो विषे प्राचीन ज्योतिषीओ-वांचकगणनुं खास ध्यान खेंचे छे, आ पांच नक्षत्रो पैकीनां पूर्वभाद्रपदा सिवायनां बधां शुभकार्य करवाने योग्य छे छतां अमुक कार्यो

माटे ए अयोग्य छे. एम संहिताकारोनु कथन छे.

वसिष्ठ कहे छे—

वस्वपरार्धात् पञ्चक-धिष्ण्ये गेहस्य गोपनं नैव ।
दक्षिणदिङ्मुखगमनं, दाहं प्रेतस्य काष्ठसंग्रहणम् ॥२४७॥

भा०टी—धनिष्ठानो उत्तर भाग, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती आ नक्षत्र पंचकमा घर छाववुं (ढाकवु) नहि दक्षिण दिशा संमुख गमन (यात्रा) करवो नहि, मृतकनो अग्निदाह करवो नहि, काष्ठ संग्रह करवो नहिं ।

दैवज्ञ वल्लभ ग्रन्थमा लखे छे—

कुर्यान्न दारु-तृणसंग्रह-मन्तकाशा—
यानं मृतस्य दहनं गृहगोपनं च ।
शय्याचितानमिह वासवपञ्चके च—
केचिद्वदन्ति परतो वसुदेवतार्धात् ॥२४८॥

भा०टी—धनिष्ठा पचकमां काष्ट-तृण सग्रह, दक्षिण दिशामां गमन, शब दाह, गृहगोपन, अने शय्या वणवी एटलां कार्यो करवां नहिं, कोइ कहे छे धनिष्ठाना प्रथमार्ध पछी ए कार्यो न करवां

ज्योति.सागरमां लखे छे—

छेदनं सग्रहं चैव, काष्ठादीनां न कारयेत् ।
श्रवणादौ बुधः षट्के, न गच्छेद् दक्षिणां दिशम् ॥२४९॥
अग्निदाहो भय रोगो, राजपीडा धनक्षयः ।
सग्रहे तृणकाष्ठानां, कृते वस्वादिपचके ॥२५०॥

भा०टी०—विद्वान् धनिष्ठा पचकमां काष्ठादिकनुं छेदन-संग्रहण न करावें । श्रवणादि नक्षत्र षट्कमा दक्षिण दिशामा गमन न करे, पचकमा तृण काष्ठादिकनो संग्रह करवाथी अनुक्रमे अग्निदाह १ भय २ रोग ३ राजपीडा ४ अने धननो क्षय थाय छे ।

आ सम्बन्धमां गर्ग कहे छे—

धनिष्ठापञ्चके चन्द्रे, सूर्ये पैत्र्यादिपञ्चके।
छेदनादि न कर्तव्यं, गृहार्थं तृणकाष्ठयोः ॥२५१॥
पूर्वार्धं नातिदोषाय, दारुतक्षणसंग्रहे।
यानगोपनशय्यायां, संपूर्णं वासवं त्यजेत् ॥२५२॥
केऽप्याहुः संकटे घोरे, पञ्चके पञ्च नाडिकाः।
क्रमात्तृतीयपादाद्या, अन्त्यपादावसानगाः ॥२५३॥

भा०टी—धनिष्ठादि पंचक उपर चन्द्र होय अने मघादि पंचक उपर सूर्य होय त्यारे गृह छाववा निमित्ते तृणो-काष्ठोनुं छेदन-संग्रहादि न करवुं, काष्ठ छेदन-संग्रहमां धनिष्ठानो पूर्वार्धं बहु दोषकारक नथी पण दक्षिण गमन, गृहगोपन अने शय्या वणवामां तो सम्पूर्ण धनिष्ठानो त्याग करवो, कोइ कहे छे-अत्यन्त संकट कालमां पंचकनी पांच घडिओ छोडीने काम करी लेवुं, धनिष्ठाना तृतीय चरणनी, शतभिषाना प्रथम चरणनी, पूर्वाभाद्रपदाना द्वितीय चरणनी, उत्तराभाद्रपदाना तृतीय चरणनी अने रेवतीना चतुर्थ चरणनी पांच घटिकाओ संकट काले त्यजवी।

व्यवहारसारमां पंचकनुं फल—

धनिष्ठा धननाशाय, प्राणघ्नी शततारका।
पूर्वायां दण्डयेद्राजा, उत्तरा मरणं ध्रुवम् ॥२५४॥
अग्निदाहश्च रेवत्यामित्येतत्पंचके फलम्।

भा०टी—धनिष्ठा धननो नाश करे, शतभिषा प्राणघात करनारी थाय, पूर्वाभाद्रपदामां राजा दण्ड करे, उत्तराभाद्रपदामां निश्चय मरण थाय अने रेवतीमां अग्निदाह थाय, आ प्रमाणे पंचकमां वर्जित कार्य करवानुं फल थाय।

आरंभ सिद्धिकार ए विषे लखे छे—

पञ्चकं श्रवणादीनि, पञ्च ऋक्षाणि निर्दिशेत्।

केचित्पुनर्धनिष्ठादि, पञ्चकं पञ्चकं विदुः ॥२५५॥

भा०टी०—श्रवण आदि पाच नक्षत्रोने पंचक कहेलुं. कोइ कहे छे-धनिष्ठादि पाचने पंचक कहेलु, वसिष्ठादिना मते धनिष्ठादि पंचक कहे छे. ज्यारे नारचन्द्र तथा आरंभसिद्धिकारना विचारमा श्रवणादि पंचक वर्जित छे।

नक्षत्र विषघटी—वसिष्ठ—

खाक्षा ५० जिना २४ व्योमगुणाः ३० खवेदा ४०,
इन्द्राः १४ कुदस्राः २१ खगुणा ३० नग्वाश्च २०।
दन्ताः ३२ खरामाः ३० खयमाः २० पुराणाः १८,
क्षमाद्वयो २१ विंशति २० रन्धि-चन्द्राः १४॥२५६॥
इन्द्रास्तु १४ काष्ठा १० मनवः १४ षडक्षाः ५६,
वेदाश्विनो २४ व्योमभुजा २० दशा १० ऽऽशाः १०।
नागेन्दवो १८ भूपतयो १६ ऽब्धिदस्रा २४,
व्योमाग्नयो ३० दस्रमुखर्क्षकाणाम् ॥२५७॥

आभ्यः परस्माद्विषनाडिकाख्या-
स्त्याज्या श्चतस्रः खलु शोभनेषु।
विषाख्यनाडीषु कृतं शुभ यद्,
विनाश मायात्यचिराच्च सर्वम् ॥२५८॥
कुर्वन्ति नाशं विषनाडिकास्ता,
लग्नाश्रितानंशगुणानशेषान्।
जन्तून् यथा कुष्ठभगन्दरार्शो—
व्याघातशूलक्षयवातरोगाः ॥२५९॥

कुर्वन्त्युद्वाहिता कन्या, विधवां वत्सरत्रयात्।
अन्यस्मिन्मङ्गले ताश्च, निधन याथ निर्धनम् ॥२६०॥

भा०टी—अश्विनीनी ५० भरणीनी २४ कृत्तिकानी ३०

रोहिणीनी ४० मृगशिरनी १४ आर्द्रानी २१ पुनर्वसुनी ३० पुष्यनी २० आश्लेषानी ३२ मघानी ३० पूर्वा फाल्गुनीनी २० उत्तराफाल्गुनी १८ हस्तनी २१ चित्रानी २० स्वातिनी १४ विशाखानी १४ अनुराधानी १० ज्येष्ठानी १४ मूलनी ५६ पूर्वाषाढानी २४ उत्तराषाढानी २० श्रवणनी १० धनिष्ठानी १० शतभिषानी १८ पूर्वाभाद्रपदानी १६ उत्तराभाद्रपदानी २४ रेवतीनी ३० आदिनी घडीओ पछीनी प्रत्येक नक्षत्रनी ४-४ घडीओ 'विष' घटिकाओ छे, आ विष घटिकाओ शुभकार्यमां त्यागवी जोइये। विष घटिकाओमां करेल सर्व शुभकार्यनो सत्वर नाश थाय छे, आ विष घटिकाओ लग्न अने नवांश संबन्धि सम्पूर्ण गुणोनो नाश करे छे, जेम कुष्ठ भगन्दर, अर्श, पक्षाघात, शूल, क्षय अने वात व्याधिओ प्राण धारियोनो नाश करे छे,

ज्योतिःसागरमां विष घटीनो विषय नीचे प्रमाणे लख्यो छे-

> विवाहव्रतचूडासु, गृहारंभप्रवेशयोः।
> यात्रादिशुभकार्येषु, विघ्नदा विषनाडिकाः ॥२६१॥

भा०टी०—विवाह, व्रत, चूडाकर्म, गृहारंभ, गृहप्रवेश, अने यात्रा आदि शुभ कार्योमां विष नाडीओ विघ्नदायक छे,

विषघटी दोषापवाद दैवज्ञमनोहरे—

> चन्द्रो विषघटीदोषं, हन्ति केन्द्रत्रिकोणगः।
> लग्नं विना शुभैर्द्रष्टः, केन्द्रे वा लग्नपस्तथा ॥२६२॥

भा०टी०— चन्द्र लग्न विनाना केन्द्र स्थानमां अथवा त्रिकोणमां स्थित होय अने ते शुभ ग्रहोनी द्रष्टिमां होय तो 'विषघटी'ना दोषनो नाश करे छे, तथा लग्नपति केन्द्रमां पडयो होय अने शुभनी द्रष्टिमां होय तो पण विष घटीजन्य दोष विलीन थाय छे.

फलप्रदीपकार विषघटीदोषनो अपवाद कहे छे—

विषनाड्युत्थित दोषं, हन्ति सौम्यर्क्षगः शशी।
मित्रदृष्टोऽथवा स्वीय-वर्गस्थो लग्नपो भवेत् ॥२६३॥

भा०टी०—सौम्य राशिगत चन्द्र विष नाडीथी उत्पन्न दोषनो नाश करे छे, अथवा लग्नपति मित्रनी दृष्टिमां होय अने स्ववर्ग स्थित होय तो पण विषघटी जन्य दोषनो नाश थाय छे.

दूषितनक्षत्रो—

जे जे नक्षत्रोमा जे जे कार्यो विधेय रूपे लख्यां छे, ते नक्षत्रोनी अदूषित अवस्थामा करवानां छे, क्रूरग्रहाक्रमण, वेध, उत्पात, ग्रहण, आदिथी दूषित थयेल नक्षत्रोमा विहित कार्यो पण सिद्ध थतां नथी, तेथी कार्यमा लेवातुं नक्षत्र कोइ पण प्रकारे दूषित तो नथी ? ए वातनो मुहूर्त आपनारे प्रथम विचार करीने समय बतावबो, दूषित नक्षत्रो वसिष्ठना मते नीचे प्रमाणे छे,

आरार्कार्क्यहिकेतुभि राक्रान्त विद्धभ च तत्सर्वम् ।
मङ्गलकार्ये सतत, त्याज्य चोत्पातदूषितं धिष्ण्यम् ॥२६४॥
निहतं त्रिविधोत्पातैः, क्रूराक्रान्तं च विद्धभ निखिलम् ।
त्याज्य तच्छुभकर्मणि, नोपादतः पातधिष्ण्यम् च ॥२६५॥

भा०टी०—मगल, सूर्य, शनि, राहु, केतु वडे आक्रान्त एटले आ ग्रहो पैकीना कोइपण ग्रह वडे अध्यासित अने विद्ध तथा उत्पातथी दूषित नक्षत्र मगल कार्यमां सम्पूर्ण त्याज्य करवुं, दिव्यभौम आन्तरिक्ष उत्पातो वडे हणायेलुं, क्रूर ग्रहोवडे आक्रान्त तथा विद्ध थयेलुं अने पात नक्षत्र ए नक्षत्रो शुभ कार्यमा पाद मात्र नहिं पण सम्पूर्ण छोडी देवा.

आ संबन्धमां आरम्भसिद्धिकारकनो मत—

क्रूरेण भुक्तमाक्रान्त, भोग्यं ग्रहणभ तथा ।
दुष्ट ग्रहोदयास्ताभ्या, ग्रहैर्भिन्नं च भं त्यजेत् ॥२६६॥

भा०टी०—क्रूर ग्रह वडे भोगवीने मूकेलुं, भोगवातुं अने भोगववानुं, ग्रहणदुषित, ग्रहोना उदयास्त वडे दूषित अने ग्रहोवडे भिन्न तथा विद्ध नक्षत्र शुभ कार्यमां न लेवुं. ।

दूषितनक्षत्रविषे श्रीपति—

क्रूरैर्भुक्तं क्रूरगन्तव्यमृक्षं, क्रूराक्रान्तं क्रूरविद्धं च नेष्टम् ।
यच्चोत्पातैर्दिव्यभौमान्तरिक्षै-
दुंष्टं तद्वत् क्रूरलताहतं च ॥२६७॥

भा०टी०—क्रूर ग्रहो वडे भोगवीने छोडेल, क्रूर ग्रह जे उपर जनार छे. अथवा क्रूर वडे आक्रान्त, अने क्रूरना वेधे विद्ध नक्षत्र शुभ काममां लेवुं इष्ट नथी, वली दिव्य, भौम, आन्तरिक्ष उत्पातोथी दूषित अने क्रूरनी लत्ता वडे हणायेल नक्षत्र पण दूषित ज गणवुं ।

कश्यपना मते पीडित नक्षत्रो—

रव्यङ्गारकभास्करि, भोगापन्नं विधूमितं शिखिना ।
ग्रहभिन्नं ग्रहयुद्धं, सोपप्लुतमुल्कयाऽभिहतम् ॥२६८॥
ग्रहणगतं चैव तथा, पश्चात्संध्यागतं च विद्धर्क्षम् ।
विविधोत्पातै दुंष्टं, पीडितमृक्षं विजानीयात् ॥२६९॥

भा०टी०—रवि मंगल शनि वडे आक्रान्त, केतुनी शिखावडे धूमित थयेलुं. ग्रहवडे भिन्न, ग्रहयुद्ध वडे पीडित उपप्लवो वडे दूषित उल्कापातथी ताडित, ग्रहणमां आवेल, पश्चिम सन्ध्यागत, विद्ध, दिव्य-भौमादि उत्पातो वडे दूषित, ए नक्षत्रोने पीडित नक्षत्रो जाणवां.

'दुष्टं ग्रहोदयास्ताभ्यां' एटले जे नक्षत्रमां ग्रहोनुं उदयास्तमन थयुं होय ते नक्षत्रने दूषित नक्षत्र आरंभ सिद्धिकारे कह्युं छे, पण आ मान्यताने कोइ संहितानुं अथवा अन्य ग्रन्थनुं समर्थन मलतुं जणायुं नथी. ।

संहिताप्रदीपकार ए विषयमां लखे छे—

विद्धं[1] व्योमचरैर्विभिन्नमपि[2] यल्लत्ताहतं[3] राहुणा,
युक्तं[4] क्रूरयुतं[5] विमुक्तमथयद्[6] भोग्यं[7] तथोपग्रहैः ।
दुष्टं[8] यद् ग्रहणोपगं पशुपतेश्चण्डायुधेनाऽऽहतं,[10]
घोरपात[11]ग्रहयुद्ध[12]पीडितमथो यद्धूमितं[13] केतुना ॥२७०॥
पश्चात् सन्ध्यागत[14] चोल्काऽभिहत[15] पापदूषित[16] ।
यच्चैकार्गलविद्धं[17] तत्, पीडितं भं विनिर्दिशेत् ॥२७१॥

भा०टी०—ग्रहोनडे वींधायेल, भेदायेल, अथवा लत्तावडे हणायेल, राहु सहित, क्रूरयुत, क्रूरमुक्त, अथवा क्रूर भोग्य, उपग्रह वडे दुष्ट, ग्रहण वडे दूषित, महापात वडे ताडित, उत्पात तथा ग्रहयुद्ध वडे पीडित, केतु वडे धूमित, पश्चिममां सन्ध्या समये देखातुं, उल्कापात वडे हणायेलुं, पाप ग्रहोथी दूषित अने एकार्गलमां विद्ध थयेल नक्षत्रने 'पीडित नक्षत्र' कहेवुं.

दूषित नक्षत्र या पीडित नक्षत्रनी शुद्धि विषे संहिता प्रदीपकार.

दोषैरमीभिर्यदुपद्रुतं तत,
तावन्न दृष्टं शुभकर्मणीष्टम् ।
यावन्न भुक्त्वा शशिना विमुक्तं,
ततो भवेन्मङ्गलकर्मणीष्टम् ॥२७२॥

भा०टी०—आ बधा दोषो वडे अभिभूत थयेल नक्षत्र त्यां सुधी शुभ कार्यमां इष्ट गणातुं नथी ज्यां सुधी चन्द्रमा एने भोगवीने न छोडे, चन्द्रे भोगव्या पछी ते नक्षत्र शुभ कार्य माटे योग्य गणाय छे,

आम छतां आ विषयमां विद्वानोमां एक मत न होवाथी संहिताप्रदीपकार पोतानी व्यवस्था आपे छे–

इत्थं मिथो भिन्नमतं यथोभि-
र्विसंवदन्ति व्यवहारदक्षाः ।

प्रशाम्यते येन च यश्च दोष-
स्तं पूर्वशास्त्रानुमतेन वक्ष्ये ॥२७३॥
पश्चात्सन्ध्यासंस्थितं खेटयुद्धो-
त्पातैर्दुष्टं धूमितं केतुना च ।
उल्कापातादुदुष्टमुल्काहतं वा,
भिन्नं चैषां चन्द्रभोगेण शुद्धिः ॥२७४॥

सक्रूरचन्द्रयोगेन, शुद्धमुत्पातदूषितम् ।
सूर्यभूक्तं सदा शुद्धं, धिष्ण्यभोगं विना विधोः ॥२७५॥

भा०टी०—आ प्रमाणे व्यवहारचतुर पुरुषो आपसमां भिन्नमत अने वचनो वडे विसंवादनुं प्रदर्शन करे छे. माटे जे कारणे जे दोषनी शान्ति थाय ते कारण पूर्वशास्त्रानुसारे कहुं छुं. पश्चिम सन्ध्या गत १ ग्रहयुद्ध दूषित २ केतुवडे धूमित ३ उल्कापात दूषित ४ वा उल्का पातवडे ताडित ५ आ बधां दूषित नक्षत्रो चन्द्रना भोगव्या पछी शुद्ध थाय छे, उत्पात दूषित नक्षत्र क्रूर सहित चन्द्रना योगथी शुद्ध थाय छे, ज्यारे सूर्याक्रान्त नक्षत्र सूर्यथी भुक्त थतां ज सदा शुद्ध होय छे. तेने चन्द्रभोगनी जरूर नथी.

राहुभुक्तं त्रिभिर्भोगैः, शुद्धं षड्भिर्ग्रहोपगम् ।
चतुर्भिः शनिभोगेन, दुष्टं द्वाभ्यां कुजेन च ॥२७६॥

भा०टी०—राहु भुक्त नक्षत्र चन्द्रना त्रण भोगोथी, ग्रहणगत छ भोगोथी, शनि भोगथी दुष्ट चार भोगोथी, अने मंगलभुक्त चन्द्रना बे भोगोथी शुद्ध थाय छे ।

वक्री खगश्चेत् पुनरेति दग्धं,
तत्पूर्वमृक्षं नहि धूमितं स्यात् ।
तदप्यतिक्रम्य यदैति पूर्वं,
सक्रूरदोषोऽपि च नास्ति तस्य ॥२७७॥

पक्षान्तरेण ग्रहणद्वयं स्याद्,
यदा तदाद्य ग्रहणोपभङ्गम् ।
पश्चाद्धि रुद्धं भवति द्वितीयं,
ग्रहोपगं शुध्यति भोगषट्कात् ॥२७८॥

भा०टी०—वक्री क्रूर ग्रह पाछो पूर्वना दग्ध नक्षत्र उपर जाय छे त्यारे तेथी पूर्वनु नक्षत्र धूमित थतु नथी. अने तेनुं पण अतिक्रमण करी तेनी पण पहेलानां नक्षत्र उपर जाय छे त्यारे ते नक्षत्र सक्रूर होवा छतां ते क्रूर दूषित गणातु नथी । पन्दर दिवसने आतरे जो बे ग्रहण थाय तो प्रथम ग्रहण गत नक्षत्रना दोषनो भग थाय छे. अने पछीना ग्रहणनु नक्षत्र दूषित थाय छे जे छ वार चन्द्रना भोग थया पछी शुद्ध थाय छे.[1]

पीडित नक्षत्रापवादः—

एकस्मिन्नपि धिष्ण्ये, भिन्ने राशौ खलग्रहे शशिनि ।
तच्चन्द्रर्क्षे कुर्याद्विवाह-यात्रादिकं कर्म ॥२७९॥

भा०टी०—एक नक्षत्र उपर क्रूर ग्रह अने चन्द्र बन्ने होय छता ते नक्षत्र द्विराशिक होइ क्रूराधिष्ठित चरणनी राशि जुदी होय अने चन्द्राधिष्ठितनी जुदी तो ते नक्षत्रमा विवाह यात्रादिक करवा ।

उदाहरण—मृगशिरा नक्षत्रना प्रथम अथवा द्वितीय चरणमा चन्द्र छे. अने त्रीजा या चोथा चरणमां क्रूर ग्रह छे, आवी स्थितिमां मृगशिरना प्रथम द्वितीय चरणमां चन्द्र होय त्यां सुधी मृगशिरमां शुभकार्य करवामां दोष नथी ।

ज्योतिष्प्रकाशमा लखे छे,

---

१ जो सपूर्ण ग्रहण होय तो छ भोगे, अर्ध ग्रहण होय तो ३ भोगे अने पाद ग्रास होय तो १ भोग पछी ग्रहण नक्षत्र शुद्ध थाय छे, एम ग्रन्थान्तरोमा कहेल छे ।

दोषैर्मुक्तं तु नक्षत्रं, कर्मयोग्यं च तद्भवेत्।
भानुना शशिना वापि-भुक्तं सौम्यग्रहैरपि ॥२८०॥

भा०टी०—क्रूराक्रान्तादि दोषोथी मुक्त थया पछी सूर्य वडे चन्द्र वडे अथवा अन्य कोइ पण सौम्य ग्रह-बुध, गुरू, शुक्र वडे भोगवाया पछी ते शुभ कर्मने योग्य थाय छे.

ग्रहण तथा उत्पात दूषित नक्षत्रनी शुद्धिविषे नारद—

ग्रहणोत्पातभं त्याज्यं. मङ्गलेषु ऋतुत्रयम्।
यावच्च रविणा भुक्त्वा, मुक्तं तद्दग्धकाष्ठवत् ॥२८१॥

भा०टी०—ग्रहणनक्षत्र तथा उत्पातनक्षत्र ३ ऋतु पर्यन्त मंगलकार्योमां त्यागवुं, ज्यां सुधी सूर्ये भोगवीने मूकेलुं ते दग्ध काष्ट तुल्य छे.

विवाहवृन्दावनमां लखे छे—

यस्मिन्धिष्ण्ये वीक्षितौ राहुकेतु,
भेदस्तारा खेटयोर्यत्र च स्यात्।
आषण्मासाँस्तत्र लग्नेन्दुभाजि,
भ्राजिष्णु स्यान्नो शुभं कर्म किञ्चित् ॥२८२॥

भा०टी०—जे नक्षत्र उपर राहु अथवा केतु देखाया होय एटले के जे उपर ग्रहण थयुं होय, अथवा केतु (पूछडियो तारो) उग्यो होय अने जे नक्षत्रमां कोइ ग्रहे नक्षत्रना भेद कर्यो होय ए त्रणे नक्षत्रोमां चन्द्र या लग्न होय त्यारे करेलुं कंइ पण कार्य सफल थतुं नथी.

अन्य ग्रन्थकारोनो ए विषे अभिप्राय—

भुक्तं भोग्यं च नो त्याज्यं, सर्वकर्मसु सिद्धिदम्।
यत्नात्त्याज्यं तु सत्कार्ये, नक्षत्रं राहुसंयुतम् ॥२८३॥

भा०टी०—क्रूर भुक्त एटले क्रूरे भोगवीने छोडी दीधेलुं अने क्रूरवडे हजी भोगववानुं होय ए बंने प्रकारना नक्षत्रो सर्व कार्योमां

सफलता आपनारा छे माटे त्यागवानी आवश्यकता नथी, जे नक्षत्र उपर राहुनु भ्रमण चालु होय ते नक्षत्र यत्न पूर्वक शुभकार्योमां वर्जित करवुं जोइये ।

नक्षत्रसन्धि अने नक्षत्रगण्डान्त—

यदन्तराल पितृसार्पयोश्च, मूलेन्द्रयोरश्विनपौष्णयोश्च ।
भसधिगण्डान्तमिति त्रयं तद्‌यामप्रमाण शुभकर्महन्तृ॥२८४॥
अहिवासव पौष्णाना-मन्त्ययामार्धमृक्षसंधिः स्यात् ।
पितृमूलाश्विनभाना-मादौ यामार्धमृक्षगण्डान्तः ॥२८५॥

भा०टी —आश्लेपा तथा मघा, ज्येष्ठा तथा मूल अने रेवती तथा आश्विनी नक्षत्रोनी सधियो ते याम प्रमाणवाला त्रण गण्डान्तो शुभ कार्यनो नाश करनारा छे एटले आश्लेपा ज्येष्ठा रेवतीना अन्तिम यामार्धो याने नवा भोगना पोडशाशो नक्षत्र सन्धिओ अने मघा मूल अश्विनीना आद्य यामार्धो नक्षत्रगण्डान्तो छे

नक्षत्र गण्डान्त विषे श्रीपति रत्नमालामा कहे छे—

पौष्णाश्विन्योः सार्पपित्र्याख्ययोश्च,
यच्च ज्येष्टामूलयोरन्तरालम् ।
तद् गण्डान्तं स्याच्चतुर्नाडिक हि,
यात्राजन्मोद्वाहकालेष्वनिष्टम् ॥२८६॥

भा०टी०—रेवती-अश्विनी, आश्लेषा-मघा, अने ज्येष्ठा-मूल वच्चेलुं ४ घडीनु जे अन्तराल ते गण्डान्त छे, आ गण्डान्त यात्रा, जन्म, विवाह, आदिना समयमा होय तो अनिष्ट फल आपे छे.

सूर्यसिद्धान्तमां आ नक्षत्रोना अन्त्य-आदिना अर्धं अर्ध चरणो, लल्लना मते अन्त्य-आद्यपडशोने गण्डान्त जणाव्या छे, ज्यारे ज्योतिः-सागरमा एनी नीचे प्रमाणे व्यवस्था छे—

अश्विनी-पित्र्य-मूलादौ, त्रि वेद नव नाडिकाः ।

रेवती-शाक्र-सार्वान्ते-मास-शक्र-शिवास्त्यजेत् ॥२८७॥

भा०टी०—अश्विनी ३ मघा ४ अने मूलनी ९ आदिनी अने रेवती आश्लेषा ज्येष्ठाना अन्तनी अनुक्रमे १२-१४-११ घडीओनो गण्डान्त तरीके त्याग करवो।

आ विषे राजमार्त्तण्डनुं कथन—

यामं यवनाधिपति-स्तदर्धभागं च भागुरिः प्राह।
दण्डप्रमितं गण्डे, पूर्वापरतोऽङ्गिरामीशः ॥२८८॥

भा०टी०—यवनाचार्य १ प्रहरपरिमित नक्षत्र गण्डान्त माने छे, भागुरि ऋषि अर्ध प्रहर प्रमाण नक्षत्र गण्डान्त माने छे, ज्यारे बृहस्पति १ घडी नक्षत्रान्तनी अने १ घडी नक्षात्रादिनी गण्डान्त रूपे त्याज्य गणे छे.

गण्डान्त विषे आरंभसिद्धि—

गण्डान्तं च त्यजेत् त्रेधा, लग्नतिथ्युडुषु त्रिषु।
प्रत्येकं त्रित्रिभागान्तर-र्धैकद्विघटीमितम् ॥२८९॥

भा०टी०—लग्न, तिथि, नक्षत्र, आ त्रणेना त्रीजा त्रीजा भागने आंतरे अनुक्रमे अर्ध घटी, एक घटी, अने बे घडी प्रमाणनो समय गण्डान्त होय छे, त्रणे प्रकारना गण्डान्तने शुभ कार्यमां त्यागवो, भावार्थ ए छे के १२ लग्नोनो, १५ तिथिओनो अने २७ नक्षत्रोनो त्रीजो त्रीजो भाग अनुक्रमे ४ लग्नो, ५ तिथिओ अने ९ नक्षत्रोनो थाय छे, कर्क ने सिंह वृश्चिक ने धन, मीन ने मेष वच्चेनी अर्धी घडी लग्न गण्डान्त छे, पांचम ने छट्ठ, दशम ने अग्यारस, पूनम ने एकम वच्चेनी १ घडी तिथि गण्डान्त अने आश्लेषा ने मघा, ज्येष्ठा ने मूल रेवती ने अश्विनी वच्चेनी बे घडीओ नक्षत्र गण्डान्त छे, जे शुभ कार्यमां अवश्य त्याज्य छे।

गण्डान्त विषे नारद—

सार्पैन्द्रपौष्णधिष्ण्यान्ते, षोडशांशा भसन्धयः ।
तदग्रभेष्वाद्यजाताः, पापा गण्डान्तसञ्ज्ञकाः ॥२९०॥

भा०टी०—आश्लेषा ज्येष्ठा अने रेवतीना अन्तिम षोडशांशनु नाम ' भसंधि ' एटले नक्षत्र संधि छे, अने आ त्रणे नक्षत्रोनी आगे ना मघा, मूल, अश्विनीना आद्य षोडशांशो घणा अशुभ छे, ते गण्डान्त संज्ञक छे ।

गण्डान्तविषयक भिन्न वाक्योनी ज्योतिःसागरमां व्यवस्था—

कथयति वराहमिहिरो, विलोक्य वाक्यानि गण्डविषये च ।
गण्ड दण्डप्रमितं, पूर्वं पश्चात्तयोर्मध्यात् ॥२९१॥

भा०टी०—वराहमिहिर गण्डान्त विषयक विविध वचनोने जोइने कहे छे-गण्डान्त बे वच्चेना आंतरामां घडी १ पूर्वनी घडी १ पछीनी गणी नक्षत्र गण्डान्त २ घडीनो वर्जवो ।

नक्षत्र, योग, तिथि, संधि विषे विवाहवृन्दावन—

नक्षत्र योग तिथि संधिषु नाडीकैका, ।
तिथ्यष्टविंशतिपलैः सहितांमयत्र ॥२९२॥

भा०टी०—कोई पण त्रे नक्षत्रो-योगो तिथिओनी संधिओमां बने तरफनी १-१ घडी साथे अनुक्रमे ३०-१६-४० पलो संधिगत छोडवी, अर्थात्-नक्षत्र संधि २ घडी ३० पलनी, योग संधि २ घडी १६ पलनी तिथि संधि २ घडी ४० पलनी शुभ कार्यमा त्याग करवी. ।

ज्योतिर्निबन्धमां भसंधि-भगण्डान्त अने तेनु फल—

सार्पेन्द्रपौष्णभेष्वन्त्य-षोडशांशा भसंधयः ।
तदग्रभेष्वाद्यपाद्-जाता गण्डान्तसंज्ञिताः ॥२९३॥

उग्रं च संधित्रितयं, गण्डान्तत्रितयं महत् ।
मृत्युप्रदं जन्म-यान-विवाह-स्थापनादिषु ॥२९४॥

भा०टी०--आश्लेषा-ज्येष्ठा-रेवती नक्षत्रोना अन्तिम षोडशांशो नक्षत्रसंधिओ कहेवाय छे. अने आ नक्षत्रोनी आगेना मघा-मूल-अश्विनी नक्षत्रोना आद्यषोडशांशो भगण्डान्त कहेवाय छे. आ त्रण उग्रभ संधिओ अने त्रण महान् नक्षत्र गण्डान्तो जन्म, यात्रा, विवाह, प्रतिष्ठा आदिमां मृत्युदायक छे ।

च्यवनऋषि गण्डान्तदोषनो परिहार कहे छे—

तिथ्यादीनां संधिदोषं, तथा गण्डान्तसंज्ञितम् ।
हन्ति लाभगतश्चन्द्रः, केन्द्रगा वा शुभग्रहाः ॥२९५॥

भा०टी०—तिथि आदिना संधि दोष तथा गण्डान्त नामक दोषने लाभस्थानमां रहेलो चन्द्र अथवा केन्द्र स्थानमां रहेला शुभ ग्रहो नष्ट करे छे ।

सर्व गण्डान्तदोषोनो वसिष्ठे आपेलो परिहार —

गण्डान्तदोषमखिलं, मुहूर्तोऽभिजिदाह्वयः ।
हन्ति यद्वन्मृग व्याधः, पक्षिसंघमिवाखिलम् ॥

भा०टी०—'अभिजित्' नामक मुहूर्त गण्डान्त दोषनो सम्पूर्ण नाश करे छे, जेम शिकारी सर्व पक्षि समुदायनो नाश करे छे.

उपग्रहो

वसिष्ठसंहितायाम्—

दिनकरभात् सप्तमभं, भूकम्पं पञ्चमर्क्षमिति विद्युत् ।
शूलोपग्रहमष्टमभं, दशमर्क्षं चाशनिं च विज्ञेयम् ॥२९६॥
केतुरुपग्रहदोष-स्त्वष्टादशमं च दंडसंज्ञश्च ।
पञ्चदशं दशनवमं, चोल्कापातं चतुर्दशं पातः ॥२९७॥

मोघोपग्रहदोषो, निर्घातकम्पवज्रपरिवेषाः ।
एकोत्तरविंशतिभा-द्युक्ताः क्रमशो ह्युपग्रहा दोषाः ॥२९८॥
हिमकिरणे त्वेषु युते, शुभकार्यं मृत्युदं नृणाम् ।
उद्वाहादिषु सततं, विचार्य लग्नं वदेद् धीमान् ॥२९९॥

भा०टी०—सूर्यं नक्षत्रथी सातमु भूकम्प, पाचमुं विद्युत्, आठमु शूल उपग्रहवालुं अने दशमु अशनि उपग्रह सहित होय छे. चउदमु पात, पन्दरमु दण्डपात, अढारमु केतु अने ओगणीशमु उल्कापात उपग्रहना दोषे दूषित होय छे। एकवीश बावीश त्रेवीश चोवीश अने पचीशमु आ पांच नक्षत्रो अनुक्रमे मोघ, निर्घात, कम्प, वज्र अने परिवेष नामक उपग्रहोना दोषे दूषित होय छे। आ उपग्रह दोषवाला नक्षत्र उपर चन्द्रमा होय ते वखते करातुं कोइ पण शुभकार्य मनुष्योने मृत्युदायक थाय छे माटे बुद्धिमाने विवाह आदिनु लग्न आपता आ उपग्रहोनो सदाय विचार करीने लग्न बतावबु

वसिष्ठ तेमज एमना पछीना हुल, श्रीपति विगेरे विद्वानोए वसिष्ठने अनुसारे दशमा नक्षत्रने अशनि उपग्रहवालु कह्युं छे. ज्यारे नारदजी नीचे प्रमाणे नवमा नक्षत्रने अशनि उपग्रह कहे छे--

भूकम्पः सूर्यभात सप्त-मर्क्षे विद्युच्च पञ्चमे ।
शूलोऽष्टमे च नवमे-ऽशनिरष्टादशो ततः ॥३००॥

भा०टी०—सूर्यना नक्षत्रथी सातमा नक्षत्रने भूकम्प, पाचमा उपर विद्युत्, आठमा उपर शूल, नवमा उपर अशनि, अने ते पछी अढारमा नक्षत्रे केतु उपग्रह होय छे

उपग्रहो विषे उदयप्रभदेवसूरि—

नोपग्रहास्तुभर्त्यं, भूपा ५ द्वि ७ फणी ८-
न्द्र १४ तिथि १५ धृति १८ युगले १९ ।

रविभात्तथैकविंशा-दिषुपञ्चसु २१-२२
२३-२४-२५-चरति भेष्विन्दौ ॥३०१॥

भा०टी०—सूर्य नक्षत्रथी ५ मा ७ मा ८ मा १४ मा १५ मा १८ मा १९ मा २१ मा २२ मा २३ मा २४ मा २५ मा नक्षत्र उपर चन्द्र भ्रमण करतो होय त्यारे ते दिन नक्षत्र उपर उपग्रह होय छे, उपग्रह दोप दूषित नक्षत्र शुभकार्यमां कल्याणकारी थतुं नथी, माटे तेनो त्याग करवो.[१]

उपग्रहनो विषय अने फल—

गृहप्रवेशे दारिद्र्यं, विवाहे मरणं भवेत्।

---

१ पूर्वोक्त ब्राह्मण विद्वानो अने जैनाचार्यें लखेल उपग्रहोनी संख्याना संबन्धमां विद्वानोए लक्ष्य आपवा जेवुं छे, वसिष्ठ, नारदादि संहिताकारो अने लल्ल श्रीपति आदि प्रसिद्ध ग्रन्थकारो १३ उपग्रहोनो निर्देश करे छे, ज्यारे जैनाचार्य १२ उपग्रहो ज बतावे छे. वसिष्ठ आदि विद्वानो १० मा अने नारद ९ मा नक्षत्रने अशनि नामक उपग्रह दोषदुष्ट बतावे छे, त्यारे जैनाचार्यो ९ मा १० मा बंने चन्द्र नक्षत्रोने (रवियोग) रूपे शुभ गणे छे आनुं कारण ए छे के जैनाचार्यो घणा पूर्व कालथी रवियोग, कुमारयोग, राजयोग, स्थविरयोगोने जाणता हता लगभग छट्ठा सैका पहेलांना पाकश्री ग्रन्थमां रवियोग, राजयोग, कुमारयोग आदिनुं वर्णन मले छे, ज्यारे ब्राह्मण विद्वानोने घणो ज मोडो आ जैनयोगोनो परिचय मल्यो, ब्राह्मण विद्वानोना मध्यकालीन ग्रन्थो रत्नकोष, रत्नमाला, आदिमां रवियोगोनी चर्चा नथी, मात्र मुहूर्तचिन्तामणिमां के एना निकट कालीन ग्रन्थोमां पहेल वहेलां रवियोग दर्शन दे छे. ज्यारे तेमां के ते पछीना ग्रन्थोमां पण कुमारयोग आदि शुभयोगोनां क्यांये दर्शन थतां नथी, एनो मतलब एज छे के उक्त ४ योग जैनोना घरना छे. जैनाचार्यो हजारो वर्षोथी सूर्यनक्षत्रथी ९ मा १० मा नक्षत्रोने शुभ रवियोगोमां गणता हता. अने तेमां शुभकार्यो करता हता, एज कारणथी उदयप्रभदेवसूरि आचार्यें उपग्रहो बार लख्या छे, अने जैनेतर विद्वानोए तेर लख्या छे.

प्रस्थाने विपदः प्रोक्ता, उपग्रहदिने यदि ॥३०२॥

भा०टी०–उपग्रहथी दूषित नक्षत्रमा गृह प्रवेश करे तो धनहानि थाय, विवाह करे तो मरण थाय, प्रयाण करे तो विपत्तिमा पडे.
उपग्रहो पैकीना ८ विशेष अशुभ उपग्रहो अने तेनु फल–

विद्युन्मुख ५ शूला ८ ऽशनि १४ केतू १८–
रुका १९ वज्र २२ कम्प २३ निर्घाताः २४ ।
ङ-ज-ढ-द-ध-फ-न-म सख्ये रवि
पुरत उपग्रहधिष्ण्ये ॥३०३॥
फल मङ्गज १ पति मरणे २,
दश मदिनान्तस्तथाऽशनिपातः ३ ।
सानुजपति ४ धननाशौ ५
दौःशील्यं ६ स्थान ७ कुलघातौ ८ ॥३०४॥

भा०टी०—सूर्य नक्षत्रथी आगेना ५ मा ८ मा १४ मा १८मा १९ मा २२ मा २३ मा अने २४ मा नक्षत्र उपर अनुक्रमे विद्युन्मुख, शूल, अशनि, केतु, उल्का, वज्र, कम्प अने निर्घात नामक उपग्रहो होय छे, आ उपग्रहमां विवाह थाय तो अनुक्रमे पुत्र मरण १, पति मरण २, दस दिवसमा अशनि (वज्रपात) ३, देवर सहित पति मरण ४, धननाश ५, दुराचारिता ६, स्थानहानि ७, अने कुलहानि ८, रूप फल थाय छे

फलप्रदीपमा उपग्रहोनु फलनिरूपण—

विद्युत्पुत्रविनाशिनी विधवता शूलेऽशनिर्मृत्युदा,
निर्घातेऽपि च कम्पने च नितरां कम्पे च केतौ क्षतिः ।
वज्रे वा परिवेषकेऽन्यनिरता निर्घातपाते मृतिः,
दण्डोल्का विगते भवेद्भिमनिनी चैवं फलं सस्मृतम् ॥३०५॥

भा०टी०—विद्युत्मा पुत्रनु मरण, शूलमां वैधव्य, अशनिमां

बन्धुमरण, निर्घात-कम्पन-कम्प अने केतुमां क्षय, वज्र तथा परि-वेषमां परिणीता दुराचारिणी, निर्घात तथा पातमां मृत्यु, दण्ड तथा उल्का उपग्रह गत नक्षत्रमां परणेल स्त्री धन रहित थाय छे. आ उपग्रहोनुं फल बताव्युं छे।

गर्ग केटलाक उपग्रहोनो परिहार कहे छे—

पूर्वाह्णे दण्डदोषः स्या-दपराण्हे तु मोघकः।
उल्कास्यादर्धरात्रे तु, कम्पोऽहोरात्रदूषकः ॥३०६॥
कम्पोल्कादण्डमोघानां, स्वरमासदशर्तवः।७।१२।१०।६।
आदितो घटिकास्तेषु, वर्जनीयाः पराः शुभाः ॥३०७॥
उपग्रहेषु लत्तायां, तथा चण्डायुधादिषु।
ग्रहोऽस्ति यत्प्रमाणांशे, विद्धोंशस्तत्प्रमाणकः ॥३०८॥

भा०टी०—दण्ड उपग्रहनो दोष मध्याह्न पहेलां होय छे. मोघनो दोष बपोर पछी लागे छे. उल्का अर्धरात्रे दोषकारिणि होय छे. अने कम्प रात दिनने दूषित करनार होय छे.

कम्पादि च्यार उपग्रहोनो आद्यघटिकाओना त्यागे परिहार कहे छे—कम्पनी पहेली ७ घडी, उल्कानी १२, दण्डनी १० अने मोघनी ६ आदिनी घडीओ वर्जवी ते पछीनी घडिओ शुभ छे. उपग्रहोमां, लत्तामां तथा चण्डीश चण्डायुध आदिमां नक्षत्रना जे चरण उपर ग्रहो होय तेना प्रमाणणां नक्षत्र चरणनो वेध करे छे.

वसिष्ठ उपग्रहनो देश भेदे परिहार कहे छे—

उपग्रहर्क्षं कुरुबाल्हिकेषु, कलिंग बंगेषु च पातितं भम्।
सौराष्ट्रशाल्वेषु च लत्तितं भं,
देशेषु वर्ज्यं शुभविद्धभं च ॥३०९॥

भा०टी०—उपग्रह युक्त नक्षत्र कुरु तथा बल्ख देशमां, पात नक्षत्र वंग तथा कलिंगमां, लातवालुं नक्षत्र सौराष्ट्र तथा राजस्थानमां

अने विद्ध नक्षत्र सर्वदेशोमा शुभकामोमां वर्जवु

नक्षत्र-ग्रह कूटः—

यस्मिन् धिष्ण्ये यः प्रभवति, तदेव तज्जन्मभं विजानीयात् ।
दशमर्क्षं कर्माख्यं, संघाताख्यं च षोडशं धिष्ण्यम् ॥३१०॥
समुदाय ष्ठिनवमभ, यदैनाशं त्रयोविंशम् (धिष्ण्यं) ।
पञ्चोत्तरविंशं च, मानससंज्ञं महादुष्टम् ॥३११॥
षड् भानि च शुभकर्मण्येतानि विनाशदानि जन्तूनाम् ।
राज्ञा विशेषभानि तु, देशोद्भवजातिपट्टबन्धानि ॥३१२॥
नव धिष्ण्यानि नृपाणां, विनाशदान्येव सर्वकार्येषु ।
अत एवाखिलविषये, नूनं वर्ज्यानि सर्वदात्यर्थम् ॥३१३॥
कृतमखिलं जन्मनि भे, विनाशमायाति तत्कार्यम् ।
कर्मणि कर्म विनाशं, संघातर्क्षे शरीरनाशः स्यात् ॥३१४॥
रोगभयं समुदाये, वैनाशिकभेऽपि (कार्य) नाशः स्यात् ।
हृदयभ मानसभे, देशजभे राजपीडा स्यात् ॥३१५॥
जात्यर्क्षे जातिभय-मभिषेकर्क्षे च राजनाशः स्यात् ।
क्रूराम्बरचरनिहते ष्वेषु च भेषु प्रभूतपीडा स्यात् ॥३१६॥

भा०टी०—जेनो जे नक्षत्रमा जन्म थाय छे. तेनुं ते जन्म नक्षत्र जाणवुं, जन्म नक्षत्रथी दशमु 'कर्म', सोलमुं 'संघात', अढारमुं 'समुदाय', त्रेवीशमु 'वैनाश' अने पचीसमुं 'मानस' नामक दुष्ट नक्षत्र होय छे. सर्व प्राणियोने आ ६ नक्षत्रो शुभ कार्योनो विनाश करनारा छे, देश नक्षत्र, जाति नक्षत्र, तथा पट्टबन्ध नक्षत्र एटले राज्यारोहण नक्षत्र आ ३ अने सर्व साधारण ६ मली ९ नक्षत्रो राजाओने सर्व कामोमा विनाश देनारां छे. एटला माटे राजाओए तमाम कार्योमां आ ९ नक्षत्रो सदाय वर्जवा जोइये, जन्म नक्षत्रमा करेल कोइ पण कार्य नाश पामे छे, कर्म नक्षत्रमां कार्य

करतां ते कर्म नाशक निवडे छे, संघात नक्षत्रमां कोइ कार्य करतां शरीरनो नाश करे छे, समुदायमां कार्य करतां रोगनो भय थाय अने वैनाशिक नक्षत्रमां करेल कार्य विनाशकारी थाय छे. मानस नक्षत्रमां कार्य करे तो मनमां भय उत्पन्न करे छे. देश नक्षत्रमां कार्य करतां राजाने पीडा थाय, जाति नक्षत्रमां कार्य करतां जातिने भय अने राज्याभिषेक नक्षत्रमां कार्य करे तो राजानो नाश थाय, उक्त नक्षत्रो क्रूर ग्रहो वडे उपहत (आक्रान्त, विद्ध लत्तित, धूमित,) होय तो घणी ज पीडा उत्पन्न करे छे.

यस्य नरस्य हि जन्मनि,
जन्मनि धिष्ण्ये निपीडिते खचरैः।
अतिदुःखामय शोकं,
भयं प्रवासः शत्रोर्भयं भवति ॥३१७॥

यस्मिन् धिष्ण्ये, विपदि, प्रत्यरिभे स्थाननाशनं भवति।
निधनं नैधनधिष्ण्ये, बन्धनमथवा स्थिते पापे ॥३१८॥
शुभखचरेषु स्थितेषु, नक्षत्रेषु त्वल्पहानिः स्यात्।
मध्यमफलदाः सौम्याः, पापाश्चोक्तभेषु भीतिकराः॥३१९॥

भा॰टी॰—जे मनुष्यनुं जन्म नक्षत्र एटले जन्म तारा क्रूर ग्रहोवडे पीडित थाय छे तेने अतिशय दुःख, रोग, शोक, भय, प्रवास, अने शत्रुनो भय प्राप्त थाय छे. विपद् वा प्रत्यरि नक्षत्रना पीडित थवाथी स्थाननो नाश थाय छे. नैधन नक्षत्र उपर क्रूर ग्रह आववाथी मरण अथवा बन्धन करावे छे, शुभ ग्रहो उक्त ताराओ उपर होय छे त्यारे अल्प हानि थाय छे, केमके सौम्य ग्रहो मध्यम फलदायक होय छे. पण पाप ग्रहो उक्त नक्षत्रो उपर आवे त्यारे घणा भयंकर निवडे छे.

ए विषयमां भूपाल वल्लभकार कहे छे—

केत्वर्कार्कियुतं भौम-वक्र भेदेन दूषितम्।

हतमुल्कोपरागाभ्यां, स्वभावान्यत्वमागतम् ॥३२०॥
पीडिते जन्मभे मृत्युः, कर्मनाशश्च कर्मणि ।
सघाते मृत्युपीडा स्यात्, सामुदाये सुखक्षयः ॥३२१॥
वैनाशिके देहनाशो, मनस्तापस्तु मानसे ।
कुलदेशश्रियां नाशो, जाति देशाभिषेक भे ॥३२२॥

भा०टी०—केतु, सूर्य, शनि युक्त होय के भौमना चक्रवडे अथवा भेद वडे दूषित होय, उल्का के ग्रहणथी हणायेल होय, स्वभावथी ज नियर्यास पामेल होय ते नक्षत्र पीडित गणाय छे, जन्म नक्षत्र पीडित थतां मृत्यु थाय, कर्म नक्षत्र पीडित थतां कर्मनो नाश थाय छे, सघात नक्षत्र पीडित थता मरण पीडा थाय, सामुदाय नक्षत्र पीडित थता सुखनो क्षय थाय, वैनाशिक नक्षत्र पीडित थाय त्यारे देहनो नाश थाय, मानस पीडित थता मन सताप, अने जाति, देश अभिषेक नक्षत्रो पीडित थवाथी अनुक्रमे कुल, देश, तथा लक्ष्मीनो नाश थाय छे.

लत्तादोष—
श्रीपतिः

ऋक्ष द्वादशमुष्ण रश्मिरवनीसूनुस्तृतीयं गुरुः,
षष्ठ चाष्टममर्कजश्च पुरतो हन्ति स्फुटं लत्तया ।
पश्चात्सप्तममिन्दुजश्च नवमं राहुः सितः पञ्चम,
द्वाविंश परिपूर्णमूर्तिरुडुपः सताडयेन्नेतरः ॥३२३॥

भा०टी०—सूर्य पोतानी आगेनु १२ मुं, मगल ३ जुं, गुरु ६ ठु अने शनि ८ मु नक्षत्र लातवडे हणे छे, ज्यारे बुध पाछलनु ७ मु राहु ९ मु, शुक्र ५ मुं अने पूर्णिमानो चन्द्र २२ मु नक्षत्र लत्तावडे ताडित करे छे, पूर्णिमानो चन्द्र ज नक्षत्रने लत्तावडे ताडन करे छे बीजी तिथिनो चंद्र नहि.

विवाह वृन्दावनकार सर्वंग्रहोनी लत्ता आगेना नक्षत्र-ना हिसावे लखे छे---

रविनखैर्मितमर्कविधुन्तुदौ, मुनिभिरिन्दुरखण्डलमण्डलः।
हुतवहाकृतिषड्जिनदन्तिभिः
क्षितिसुतादभिलत्तयतिग्रहः ॥३२४॥

भा०टी०—सूर्य पोताना नक्षत्रथी आगेना १२ मा अने राहु २० मा नक्षत्रने लत्तावडे ताडन करे छे, अखण्डमण्डलवालो चन्द्र ७ माने अने मंगल ३ जा बुध २२ मा, गुरु ६ ठ्ठा, शुक्र २४ मा, अने शनि ८ मा नक्षत्रने लातवडे ताडन करे छे. आमां राहु २०मा, पूर्णचन्द्र ७ मा, बुध २२ मा, शुक्र २४ मा नक्षत्रने सामेथी लात मारवानुं कथन छे ज्यारे बीजा ग्रन्थोमां एज ग्रहोनी संमुख लत्तानुं नक्षत्र अनुक्रमे २१ मुं, ८ मुं, २३ मुं, २५ मुं लखेल छे.

लत्ता विषे मतान्तर—

आरंभसिद्धिकार कहे छे—

अग्रतो नवमे राहोः, सप्तविंशे भृगोस्तु भे ।
केचिद्ज्योतिर्विदः प्राहु-र्लत्तां तामपि वर्जयेत् ॥३२५॥

भा०टी—केटलाक ज्योतिषीओ राहुनी आगेना ९ मा नक्षत्र उपर अने शुक्रनी आगेना २७ मा नक्षत्र उपर लात कहे छे ते पण वर्जवी जोइये.

कोइना मते अशुभ ग्रहनी लत्ताज वर्जनीय छे, ए विषे त्रिविक्रम कहे छे—

नक्षत्रं द्वादशं भानु-स्तृतीयं क्षितिनन्दनः ।
नखसंख्यं तमो हन्ति, लत्तया शनिरष्टमम् ॥३२६॥

भा०टी०—सूर्य १२ माने, मंगल ३ जाने, राहु २० माने अने शनि ८ मा नक्षत्रने लत्ताथी हणे छे.

लत्ता विषे केशवार्कनो मत—

इति सति शुसदामभिलत्तने, यदनुलत्तनमुक्तमृषिव्रजैः।
तदुडुपश्चिमपूर्वविभागयो-
रनधिकाधिकदोषविवक्षया ॥३२७॥

भा०टी०—आ परिस्थितिमां ग्रहोनी लत्ताने अंगे ऋषिगणे जे अनुलत्ता एटले सामेथी लात कही छे ते नक्षत्रना पाछला अने पूर्वेला भागोनी अपेक्षाए अल्प अने अधिकफलनी अपेक्षाए छे, जे ग्रह नक्षत्रना पाछलना भागने लत्ता वडे ताडित करे छे ते ओछु असरकारक होय छे ज्यारे सामेनी लत्ता अधिक पीडाकारी होय छे सामेनी अने पाछली लातनो ए तात्पर्यार्थ छे.

शुभाशुभलत्ताना फलतारतम्य विषे केशवार्क कहे छे—

उडुनि निर्दलिते शुभलत्तया,
न फलमस्ति बलस्य गलत्तया।
अशुभ लत्तियमस्ति तदूढयो-
र्धनसुता न सुतापकर परम् ॥३२८॥

भा०टी०—शुभ ग्रहनी लत्तावडे हणायेल नक्षत्र बलहीन होइ तेनु शुभ फल नथी अने अशुभ ग्रहवडे लत्तित नक्षत्र तो तेमां परणनाराओना धन अने पुत्रोनो नाश करे छे अने प्राणोने संपात करावे छे.

वराह प्रत्येक ग्रहनी लत्तानु फल कहे छे—

रविलत्ता वित्तहरी, नित्यकौजी विनिर्दिशेन्मरणम्।
चान्द्री नाश कुर्याद् बौधी नाशं वदत्येव ॥३२९॥
सौरी मरण कथयति, बन्धुविनाश बृहस्पतेर्लत्ता।
मरण लत्ता राहोः, कार्यविनाशं भृगोर्वदति ॥३३०॥

भा०टी०—सूर्यनी लत्ता धननो नाश करनारी छे, मंगलनी

लत्ता नित्य मरणनो निर्देश करे छे, चन्द्रनी लत्ता कार्यनो नाश करे, बुधनी लत्ता पण कार्य नाशनी सूचक छे, शनिनी लत्ता मरणने कहे छे, बृहस्पतिनी लत्ता बंधु-कुटुंबिओना नाशने सूचवे छे, राहुनी लत्ता मरणकारक छे ज्यारे शुक्रनी लत्ता कार्यनो विनाश कहेनारी छे.

लत्तानो परिहार—

सौराष्ट्र साल्वदेशेषु, लातितं भं विवर्जयेत् ।

भा०टी०—सौराष्ट्र (काठियावाड) अने साल्व (राजस्थान) मां लात वडे हणायेल नक्षत्र वर्जवुं जोइये.

'लत्ता मालवके देशे' 'एटले लत्ता दोप मालवा देशमां वर्जवो' विवाह पटलनुं ए वचन पण लत्तानो अपवाद सूचवे छे.

पातदोष—

रविभादहिपितृ मित्र, त्वाष्ट्रभहरिपौष्णभेषु गणितेषु ।
आश्विनभादीन्दुयुतौ, तावति यै पतति गणनया पातः॥२३१॥

भा०टी०—सूर्य नक्षत्रथी आश्लेषा १ मघा २ अनुराधा ३ चित्रा ४ श्रवण ५ रेवती ६ आ छ नक्षत्रो गणवां जे जे संख्या आश्लेषा आदिनी आवे तेटली तेटली संख्यामां अश्विनीथी गणतां जे चंद्र नक्षत्र होय ते उपर पात छे एम जाणवुं-उदाहरणरुपे सूर्य भरणी नक्षत्र उपर छे, तेथी आश्लेपा ८ मुं, मघा ९ मुं, चित्रा १३ मुं अनुराधा १६ मुं, श्रवण २१ मुं अने रेवती २६ मुं नक्षत्र छे माटे अश्विनीथी ८, ९, १३, १६, २१, २६, आ संख्याना नक्षत्र उपर चन्द्र होय तो ते नक्षत्र पातवाळुं होइ शुभ कार्यमां वर्जित करवुं.

पातने सुगमताथी जाणवानो उपाय नीचे प्रमाणे छे—

पातं शूलस्य गण्डस्य, हर्षण-व्यतिपातयोः ।
साध्यवैधृतयोश्चान्ते, धिष्ण्यं यत्तत्र वर्जयेत् ॥३३२॥

भा॰टी॰—पंचागमां अपाता २७ योगो पैकीना शूल, गंड, हर्षण, व्यतिपात, साध्य, वैधृत आ योगोना अन्तमां जे नक्षत्र होय छे ते उपर पातदोष होवाथी तेनो त्याग करवो ज्योतिषीओ आ 'पात' ने 'चण्डीशचण्डायुध' अथवा, शिवना आयुध तरीके वर्णवे छे, केशवार्क कहे छे—

यदन्तग हर्षणसाध्यशूल-गण्डव्यतीपातकवैधृतीनाम् ।
तत्रैव चन्द्रोडुनि चण्डमेश-मस्त्रं पतेन्मङ्गलभङ्गलक्ष्म ॥३३३॥

भा॰टी॰—हर्षण, साध्य, शूल, गण्ड, व्यतीपात, वैधृति, आ योगोना अन्तमां जे चन्द्र नक्षत्र होय, एटले जे नक्षत्रमा आ योगोनी समाप्ति थाय तेज चन्द्र नक्षत्र उपर शिवनु 'चण्डास्त्र' पडे छे जे मंगल कार्यना नाशनुं चिह्न छे.

ज्योतिषीओनी दृष्टिमां पातनी भयंकरता—

पातेन पतितो ब्रह्मा, पातेन पतितो हरिः ।
पातेन पतितो रुद्रस्तस्मात्पातं विवर्जयेत् ॥३३४॥

भा॰टी—पातवडे ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर जेवा पडया छे माटे पातने विशेष करीने वर्जवो.

देशविशेषे पातनी व्यवस्था—

चित्रागतः पात विचित्रदेशे, मैत्रे मघा मालवके-निषिद्धः ।
पौष्णश्रुती चोत्तरदेशजातः, सर्वत्र वर्ज्यश्च भुजगपातः ॥३३५॥

भा॰टी॰—चित्रागत पात विचित्र देशमा, अनुराधा मघागत पात मालवामां अने रेवती श्रवण ज्ञापित पात उत्तर देशमां निषिद्ध छे. ज्यारे आश्लेषामित नक्षत्रपात सर्वत्र वर्जनीय छे

पातनो अपवाद वसिष्ठ कहे छे-

चण्डायुधं सचण्डीश, हन्ति सिद्धा तिथिर्यथा ।
आन्त्रघृद्धिर्यथा कार्यं, निखिल सुदृढं यथा ॥३३६॥

भा०टी०—चण्डीश चण्डायुधापरनाम पातने सिद्धा तिथि नष्ट करे छे, जेम संपूर्ण मजबूत शरीरने आन्त्रवृद्धि (सारण गांठ) नाश करे छे.

सप्तशलाका चक्र

आरंभ सिद्धिमां—

वेध ऊर्ध्वतिरः सप्त-रेखे पूर्वादितोऽग्निभात्।
भस्य रेखाग्रगे खेटे, हेयश्चेन्न पदान्तरम् ॥३३७॥

भा०टी०—सात उर्ध्व सात आडी रेखावाला सप्तशलाका चक्र-मां पूर्वादि दिशाओमां कृत्तिकाथी प्रारंभ करीने अभिजित् सहित २८ नक्षत्रो लखवां, कार्य नक्षत्रनी रेखाना बीजा छेडा उपर कोइ ग्रह होय तो ते पोतानी सामेना नक्षत्रनो वेध करे छे माटे जो वेधमां पादान्तर न होय एटले पादवेध होय तो ते शुभ कार्यना मुहूर्तमां वर्जवो.

सप्तशलाका चक्रन्यास

उपर: कृ रो मृ आ पु पु आ

डाबी बाजु (उपरथी नीचे): भ अ रे उ पू श ध

जमणी बाजु (उपरथी नीचे): म पू उ ह चि स्वा वि

नीचे: श्र अ उ पू मू ज्ये अ

सप्त शलाकामां कया कया नक्षत्रनो परस्पर वेध थाय छे एनुं स्पष्टीकरण रामदैवज्ञ कहे छे—

शाक्रेज्ये शतभानिले जलशिवे पौष्णार्यमर्क्षे वसु-
द्वीशे वैश्वसुधाशुभे हयभगे सार्पानुराधे तथा।
हस्तोपान्तिमभे विधातृविधिभे मूलादितीत्वाष्ट्रभा-
ऽजांघ्री याम्यमघे कृशानुहरिभे विद्धेऽद्रिरेखे मिथः ॥३३८॥

भा०टी०—सप्तशलाका चक्रमा ज्येष्ठा पुष्य, शतभिषा-स्वाति, पूर्वाषाढा-आर्द्रा, रेवती-उत्तराफाल्गुनी, धनिष्ठा-विशाखा, उत्तराषाढा मृगशिर, अश्विनी-पूर्वाफाल्गुनी, आश्लेषा-अनुराधा, हस्त-उत्तराभाद्रपदा, रोहिणी-अभिजित्, मूल-पुनर्वसु, चित्रा-पूर्वाभाद्रपदा, भरणी-मघा, कृत्तिका-श्रवण, आ बे बे नक्षत्रोनो परस्पर वेध थाय छे.

सप्तशलाका वेधनुं फल—दीपिकामां—

यस्याः शशी सप्तशलाकभिन्नः, पापैरपापैरथवा विवाहे।
उद्वाहवस्त्रेण तु सद्वृतांगी, श्मशानभूमिं रुदती प्रयाति॥३३९॥

भा०टी०—जे कन्याना विवाहमा सप्तशलाकामा चंद्र विद्ध थाय छे. पापग्रहोवडे अथवा सौम्यग्रहोवडे, ते स्त्री विवाहना वस्त्रमां ज रडती छती श्मशानभूमिमा जाय छे,

सप्तशलाका वेध क्यां वर्जवो अने पंचशलाका क्यां ए विषे लल्ल—

चक्रे सप्तशलाकाख्ये, वेधः सर्वेषु कर्मसु।
त्याज्य एव विवाहे च, तथैव पञ्चरेखजः ॥३४०॥

भा०टी०—सप्तशलाका चक्रमा थतो नक्षत्र वेध सर्व कार्योमां वर्जवो जोइये, तथा पंचशलाकाथी थतो वेध विवाहमा अवश्य वर्जवो जोइये,

पञ्चशलाका वेधचक्र नारदीये-

तिर्यक् पञ्चोर्ध्वगाः पञ्च, रेखे द्वे द्वे च कोणयोः।
द्वितीयशंभुकोणेऽग्नि-धिष्ण्यं चक्रे च विन्यसेत्॥
भान्यतः साभिजित्त्वेके रेखाकोणे च विद्भम् ॥३४१॥

भा०टी०—तिर्यक् (आडी) ५ अने उभी ५ रेखा खेंची खूणाओमां २+२ रेखाओ खेंचवाथी पंचशलाका चक्र बनशे, चक्रना ईशान कोणनी बीजी रेखा उपर कृत्तिका लखी ते पछीनी प्रत्येक रेखा उपर रोहिणी आदि १-१ नक्षत्र लखवुं, नक्षत्रो अभिजित् सहित लखवां, एक रेखा के एक कोणमां कोइ ग्रह होय तेथी रेखाना बीजा छेडा उपरनुं नक्षत्र विद्ध थाय छे.

कोनो कोनो परस्पर वेध थाय छे?

वेधोऽन्योन्यमसौ विरञ्च्यभिजितोर्याम्यानुराधर्क्षयोः।
विश्वेन्द्वोर्हरिपित्र्ययोर्ग्रहकृतो हस्तोत्तराभाद्रयोः।
स्वाती वारुणयोर्भवेन्निऋतिभादित्योस्तथोफाल्गयोः।
खेटे तत्रगते तुरीयचरणाद्योर्वातृतीयद्वयोः ॥३४२॥

भा०टी०—पंचशलाका चक्रमां विवाह नक्षत्रोनो वेध परस्पर आ प्रमाणे थाय छे—रोहिणी-अभिजितनो, भरणी-अनुराधानो, मृगशिर-उत्तराषाढानो, मघा-श्रवणनो, हस्त-उत्तराभाद्रपदनो, स्वाति-शतभिषानो, पुनर्वसु-मूलनो तथा उत्तराफाल्गुनी-रेवतीनो परस्पर ग्रहकृतवेध थाय छे, एटले के रोहिणी उपर रहेल शुभाशुभ ग्रह अभिजित्नो अथवा अभिजित् उपर रहेल रोहिणीनो वेध करे छे ए ज प्रमाणे उपर्युक्त नक्षत्रोनो वेध जाणवो, क्रूर ग्रह विद्ध नक्षत्र तो संपूर्ण त्याज्य गणाय छे, पण सौम्य ग्रहविद्धनो विद्ध चरण त्याज्य होवाथी चरण वेधनो प्रकार कहे छे के-ग्रह प्रथम चरण उपरथी संमुख नक्षत्रना

चोथा चरणनो, बीजाथी त्रीजानो, त्रीजाथी बीजानो अने चोथाथी पहेला चरणनो वेध करे छे.

पंचशलाका वेध विवाहमा वर्जित छे अने उपर बतावेल ८ नक्षत्र युग्मोमां विवाहोपयोगी बधा नक्षत्रो आवी जाय छे तेथी उपरोक्त काव्यमा बीजा नक्षत्र युग्मोनो निर्देश कर्यो नथी.

वेधफलं-फलप्रदीपे—

अर्कवेधे च वैधव्यं, चन्द्रवेधे वियोगिनी ।
पुत्रशोकातुरा भौमे, बुधे शोकाकुला भवेत् ॥३४३॥
गुरौ वन्ध्या विजानीयात्, शुक्रे स्याद् व्यभिचारिणी ।
मृतवत्सा शनौ ज्ञेया, राहौ च कुलटा भवेत् ॥
केतुवेधे सर्वनाशो, एवं वेधस्य लक्षणम् ॥३४४॥

भा०टी०—सूर्यवेधथी वैधव्य, चन्द्रवेधथी वियोग, मंगल वेधथी पुत्रशोक, बुधवेधथी शोक, गुरुवेधथी वन्ध्यापणुं, शुक्रना-वेधथी व्यभिचार, शनिना वेधथी मृतवत्सापणुं राहुना वेधथी कुल-टापणुं अने केतुना वेधथी सर्वनाश थाय छे. ए वेधनु लक्षण छे.

पंचशलाका वेधनु गर्ग फल कहे छे—

यस्मिन् शशी पञ्चशलाकभिन्नः पापैरपापैरथवा विवाहे ।
तेनैव वस्त्रेण विरोदमाना, स्मशानभूमिं प्रमदा प्रयाति ॥३४५॥

भा०टी०—जे विवाहमा चन्द्र पापग्रहो वडे अथवा सौम्यग्रहो-वडे पचशलाका चक्रमां विद्ध थाय छे ते विवाहमा विवाहिता स्त्री विवाहना ज वस्त्रमां रडती स्मशानभूमिमा जाय छे. तात्पर्य ए छे के तेना पतिनुं जल्दी मरण थाय छे.

विवाहवृन्दावने पादवेध फल—

तस्मिन्नभिन्नाग्रगते भिनत्ति,
ग्रहो विवाहर्क्षमशेपमेव ।

स्त्रीपुंसयोरायुरसौम्यवेधः,
सौम्यव्यधो हन्ति सुखानि शश्वत् ॥३४६॥

भा०टी०—ते पंचशलाकाना अभिन्न अग्रभाग पर रहेल ग्रह संपूर्ण विवाह नक्षत्रनो वेध करे तो क्रूरवेध स्त्रीपुरुषना आयुष्यनो नाश करे छे अने सौम्यनो संपूर्ण (पाद) वेध तेमना सुखोनो नाश करे छे.

वेध अने तेनो अपवाद—

वसिष्ठनो मत—

पाद एव न शुभः शुभग्रहै-र्विद्ध इत्यखिलशास्त्रमतं हि ।
क्रूरविद्धमशुभं न शोभनं शोभनेषु सकलं न पादतः ॥३४७॥

भा०टी०—शुभ ग्रहोथी वेधायेल नक्षत्रनो एकपाद ज शुभदायक नथी ए सर्वशास्त्रोनो मत छे, ज्यारे क्रूरविद्ध नक्षत्र संपूर्ण अशुभ होइ शुभ कार्योमां पादमात्र नहि पण पूरुं नक्षत्र त्याज्य छे.

वैद्यनाथ कहे छे—

वेधमाद्यन्तयोरङ्घ्र्यो-रन्योन्यं द्वितृतीययोः ॥
क्रूरैरपि त्यजेत्पादं, केचिदूचुर्महर्षयः ॥३४८॥

भा०टी०—केटलाक ऋषिओ कहे छे के प्रथम अने चतुर्थ तथा बीजा अने त्रीजा चरणनो क्रूरग्रह वेध करतो होय तो पण विद्ध चरणनो ज त्याग करवो संपूर्ण नक्षत्रनो नहिं.

वसिष्ठ वेध दोषनो भंग कहे छे—

लग्ने शुभो सोम्ययुतेक्षितो वा,
लग्नाधिनाथो भवगस्तथा वा।
कालाख्यहोरा च तथा शुभस्य,
भवेधदोषस्य तदा विभंगः ॥३४९॥

भा०टी०—लग्नमां शुभग्रह होय, लग्नपति सौम्ययुत या सौम्यदृष्ट होय, अथवा लग्नपति अग्यारमा भवनमां बेठो होय अने शुभग्रह

संबन्धी कालहोरा लग्नकाले आवती होय तो 'नक्षत्रवेध' दोषनो भग थाय छे

उद्वाहतत्त्वमा पण ए ज वात कहे छे-

सद्युग्दृक्तनुगे शुभे व्यधभयं नो चाप्यगे लग्नपे,
होरायां च शुभस्य वा व्यधभयं नास्तीति पूर्वे जगुः।

भा०टी०—लग्नपति अग्यारमे होय, लग्नमां शुभग्रह होय, लग्न शुभयुक्त तथा शुभदृष्ट होय तो वेधदोषनो भय नथी, अथवा लग्नकाले शुभनी कालहोरा होय तो पण वेधनो भय नथी एम पूर्वग्रन्थकारो कही गया छे.

मार्तण्डकार पण कहे छे-

लग्नेशे भवगेऽथवा शशिनि सद्‌दृष्टे शुभे वाङ्गगे।
होरायां च शुभस्य वा व्यधभयं नास्तीति पूर्वे जगुः॥३५०॥

भा०टी०—लग्नपति अग्यारमा स्थानमां, अथवा चन्द्रमा अग्यारमा स्थानमा शुभदृष्ट होय, अथवा लग्नमां बुध, गुरु, शुक्र, पैकीनो कोइ शुभग्रह पड्यो होय, अथवा शुभग्रह संबन्धिनी होरा आवती होय तो वेधनो भय नथी एम पूर्वग्रन्थकारो कही गया छे.

एकार्गल योग दोष-

वसिष्ठ, नारद, कश्यप, श्रीपतिः आदि एकार्गल योगमां अभिजित्‌ने लेता नथी, वसिष्ठनुं विधान नीचे प्रमाणे छे.—

रेखामेकामूर्ध्वगां सप्त च सप्त,
तिर्यक्कृत्वाऽप्यत्र खार्जूरि चक्रे।
तिर्यग्रेखा संस्थयोश्चन्द्रभान्वो-
र्दुस्सपातो दोष एकार्गलाख्यः॥३५१॥

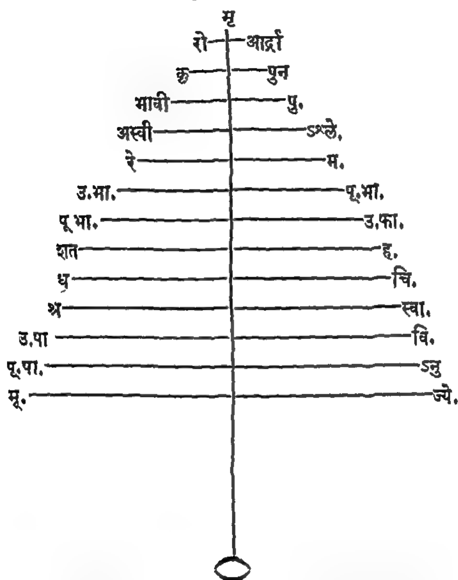
भा०टी०—एक रेखा उभी खेंचवी अने तेर रेखाओ उभी रेखाने कापती आडी खेंचवी एटले खजूरना जेवुं खार्जूरिक चक्र

बनशे, आडी कोइपण एक रेखाना बे छेडाओ उपर सामसामे चन्द्र सूर्य आवतां तेमनो एकबीजा उपर दृष्टिपात थशे तेनुं नाम 'एकार्गल' योग छे, उर्ध्व रेखाए कयुं नक्षत्र धरीने बाकीनां नक्षत्रो खार्जूरिकमां धरवां ए विषे बसिष्ठ कहे छे—

अन्त्यातिगण्ड परिघ व्यतिपात पूर्व-
व्याघात गण्ड वरशूल महाशनिषु।
चित्रानुराधपितृपन्नगदस्त्रभेषु,
सादित्य मूल शशि सूरिषु मूर्ध्नि भेषु॥३५२॥

भा०टी०—जे दिवसे वैधृति, अतिगण्ड, परिघ, व्यतिपात, विष्कुम्भ, व्याघात, गण्ड, शूल, वज्र, आ ९ अशुभ योगो पैकीनो कोइ अशुभयोग होय तो एकार्गलनी तपास करवी, वैधृति होय तो चित्रा, अतिगण्डमां अनुराधा, परिघमां मघा, व्यतिपातमां आश्लेषा, विष्कुंभमां अश्विनी, व्याघातमां पुनर्वसु, गण्डमां मूल, शूलमां मृगशिर अने वज्रमां पुष्य नक्षत्र खार्जूरिक चक्रना मस्तके उर्ध्व रेखा उपर लखी ते पछीना नक्षत्रो अनुक्रमे आडी रेखाओ उपर उपरथी नीचे लखवां, बीजी तरफ नीचेथी उपर लखता जवुं अने २७ नक्षत्रो पूरां करी सूर्य चन्द्र जे जे नक्षत्र उपर होय त्यां लखवा, जो सूर्य चन्द्र एक रेखामां सामसामे आवता होय अने नक्षत्रोना वेधक चरणो उपर रहीने एक बीजा उपर दृष्टिपात करता होय तो ते दिवसे ते चन्द्र नक्षत्र शुभ कार्यमां अवश्य वर्जवुं। एकार्गल योग दर्शक खार्जूरिक चक्र—

खार्जुरिक चक्र—



उदयप्रभदेव, त्रिविक्रम, आदि मध्यकालीन विद्वानो खार्जूरिक चक्रमा अभिजित्‌नी गणना करे छे. परन्तु प्राचीन संहिताकारो अभिजित्‌ने वर्जित करे छे, नारदजी तो एना स्पष्ट शब्दोमां निषेध करे छे, ते नीचे प्रमाणे—

भान्येकरेखास्थितयोः, सूर्याश्चन्द्रमसोर्मिथः ।
एकार्गलो द्रष्टिपात-श्चाभिजिद्वर्जितानि वै ॥३५३॥

भा०टी०—नक्षत्रो अभिजित् रहित लखवां एक रेखास्थित सूर्य चन्द्रनो परस्पर द्रष्टिपात तेनुं नाम 'एकार्गल' छे. कश्यप पण अभिजित् रहित नक्षत्रो कहे छे,—

एकार्गलो द्रष्टिपात-श्चाभिजिद्रहितानि वै ।

भा०टी०—खार्जूरिक चक्रमां परस्पर द्रष्टिपात थवो ते एकार्गल योग छे. अने खार्जूरिक चक्रमां नक्षत्रो अभिजित् रहित लेवां,

आ सम्बधमां अभिजितने अंगे लखे छे.

लांगले कमठे चक्रे, फणिचक्रे त्रिनाडिके ।
अभिजिद् गणना नास्ति, चक्रे खार्जूरिके तथा ॥३५४॥
तारायां ग्रहचक्रे च, संघाते लोहपातके ।
अभिजिद् गणना नास्ति, लाते पाते च कण्टके ॥३५५॥

भा०टी०—हल चक्रमां, कूर्म चक्रमां, त्रिनाडिक फणिचक्रमां तथा खार्जूरिक चक्रमां अभिजित्नी गणना नथी.

तारामां, ग्रहचक्रमां, संघातचक्रमां, लोहपातमां, लत्तामां, पातमां अने कंटकमां पण अभिजित्नी गणना नथी.

एकार्गल योगनो विषय—

विवाहे प्रथमे क्षौरे, सीमन्ते कर्णवेधने ।
व्रतेऽन्नप्राशने चैव, खार्जूरं परिवर्जयेत् ॥३५६॥

भा०टी०—विवाहमां, पहेला क्षौरमां, सीमन्तमां, कर्णविंधवामां व्रतग्रहणमां, अन्न प्राशनमां, एकार्गल दोष वर्जवो,

एकार्गलयोगनुं फल नीचे प्रमाणे छे.

खरकरतुहिनांशोर्द्रष्टिसंपातजात-
स्त्वनलमयशरीरश्चोद्गिरन् वह्निसंघान् ।

भुवि पतति जनानां, मंगलध्वसनाय,
गुणगणशतसघैरप्यवार्योऽग्निकोपः ॥३५७॥

भा०टी०—सूर्य चन्द्रना एकार्गल दृष्टिपातना योगथी भूमि उपर अग्निमयशरीरधारी अग्निज्वालाओने वमतो सेंकडो गुणो वडे पण न रोकाय एवो मनुष्योना आरब्ध मगल कार्योना नाश-माटे अग्नि कोप उतरे छे. ।

राम मते दश योग दोष–

शशाङ्कसूर्यर्क्षयुते भशेषे,
खं भू युगाङ्कानिदशेशतिथ्यः ।
नागेन्दवोऽङ्केन्दुमिता नखाश्चेद्,
भवन्ति चैते दशयोगसञ्ज्ञाः ॥३५८॥

भा०टी०—सूर्य नक्षत्र तथा चन्द्र नक्षत्रनी अश्विनीथी गणना करतां जे सरूया आवे ते बंने सख्यांकोने जोडीने २७ नो भाग देवो शेष ०।१।४।६।१०।११।१५।१८।१९।२०। आ पैकीनो अंक वधे तो दशयोग नामनो दोष जाणवो, आ सिवायनो शेष अंक आवे तो दशयोग नथी ए अर्थात् समजवानुं छे. ।

दशयोग दोषनो विषय–

विवाहादौ प्रतिष्ठायां, व्रते पुसवने तथा ।
कर्णवेधे च चूडायां, दशयोगं विवर्जयेत् ॥३५९॥

भा०टी०—विवाह आदि कार्योमा, प्रतिष्ठामां, व्रतग्रहणमां पुंसवनमां, कर्णवेधमां अने चूलाकर्ममा, दशयोगने वर्जवो ।

दशयोगनु फल लल्ल कहे छे—

मरुन्मेघाग्निभूपाल-चौरमृत्युरुजोऽशनिः ।
कलिर्हानिर्दशोद्वाहे, दोषास्त्याज्या सदा बुधैः ॥३६०॥

भा०टी०—दशयोगोनु अनुक्रमे फल-वायुथी नुकशान, मेघ-

थी नुकशान, अग्निथी नुकशान, राजाथी नुकशान, चौरथी नुकशान, मृत्युभय, रोगभय, वीजलीनो भय, कलह, धनहानि, आम शून्य एक आदि दशयोगोनुं आ फल छे, माटे विवाहमां तो विद्वानोए दशयोगनो सदा त्याग ज करवो ।

दश योगनो परिहार-ज्योतिःसागरमां-

योगाङ्के विषमे सैके, समे स वसुलोचने ।
दलीकृतेऽश्विनी पूर्वं, दशयोगमुदाहृतम् ॥३६१॥
दशयोगे महाचक्रे, प्रमादाद्यदि विध्यते ।
क्रूरैः सौम्यग्रहैर्वापि, दम्पत्योरेकनाशनम् ॥३६२॥

भा०टी०—दश योगनो अंक विषम होय तो तेमां १ जोडवो अने सम होय तो तेमां २८ जोडवा, पछी तेने अर्ध करतां जे अंक रहे ते अश्विनी आदि नक्षत्र जाणवुं, पछी १४ आडी रेखाओ खेंची प्रत्येक रेखाग्रे आवेल नक्षत्रथी मांडीने अभिजित् सहित २८ नक्षत्रो लखवां अने जे जे ग्रह जे जे नक्षत्र उपर होय ते ते ग्रह त्यां लखवो, चन्द्र नक्षत्र जे रेखा उपर होय ते रेखाना बीजा छेडा उपर आवेल नक्षत्र उपर क्रूर या सौम्य ग्रह होय अने चन्द्राधिष्ठित नक्षत्रनो वेध करतो होय तो ते नक्षत्रमां विवाह करवाथी पति पत्नीमांथी कोइ एकनुं मरण थाय, पण ते नक्षत्रनो ग्रह वेध न करतो होय तो ते दशयोगकारक नथी ।

भारद्वाज दशयोग दोषोनो बीजो परिहार कहे छे-

गुरौ लग्नाधिपे शुक्रे, सवीर्ये लग्नकेन्द्रगे ।
दशदोषो विनश्यन्ति, यथाग्नौ तूलराशयः ॥३६३॥

भा०टी०—गुरु लग्नपति थइ लग्नमां या केन्द्रमां होय अथवा शुक्र बलवान थइ लग्न अथवा केन्द्रमां रहेल होय तो दशयोगना दोषनो नाश करे छे. जेम अग्निमां तूलना ढगला बलीने भस्म थाय छे तेम ।

क्रान्तिसाम्यापरपर्यायो महापातः, आरम्भसिद्धौ-
अर्केन्द्वोर्भुक्तांशक-राशियुतौ क्रान्तिसाम्यनामायम्।
चक्रदले व्यतिपातः, पातश्चक्रे च वैधृतस्त्याज्यः ॥३६४॥

भा०टी०—सूर्य चन्द्र स्पष्ट करी तेनेमां अयनांशो जोडीने तेओना राश्यंशादिने एकत्र करवा, राश्यंक जो ६ आवे तो ते समयमां 'व्यतिपात' नामक महापात छे एम जाणवुं अने राश्यंक जो १२ नो होय तो ते वखते 'वैधृत' महापात छे एम निश्चयथी जाणवुं, जो ६ अथवा १२ ना राश्यंक उपर अंश के कला विकलाओ व्यतीत थइ होय तो गणित वडे घडी पलो बनाववी अने महापात वीत्याने एटली घडी पलो थइ एम कहेवु अने ६ अथवा १२ ना राश्यंकमां अमुक घडी पलो घटती होय तो महापातमां आटली घडी पलो घटे छे एम कहेवुं. जे समये राश्यंक ६ के १२ नो होय अने अंश कला विकलादिना स्थाने शून्य आवता होय त्यारे महापातनो मध्यकाल जाणवो. आ महापात शुभ कार्यमां अवश्य वर्जवो जोइये, आ महापातने ज ज्योतिर्विदो 'क्रान्तिसाम्य' दोष तरीके वर्णवे छे.

महापातने अंगे सूर्यसिद्धान्तनु स्पष्टीकरण—

एकायनगतौ स्यातां, सूर्याचन्द्रमसौ यदा ।
तद्युतौ मण्डले क्रान्त्यो-स्तुल्यत्वे वैधृताभिधः ॥३६५॥
विपरीतायनगतौ, चन्द्राकौं क्रान्तिलिप्सिकाः ।
समास्तदा व्यतीपातो, भगणार्धे तयोर्युतौ ॥३६६॥
तुल्यांशुजाल संपर्कात्, तयोस्तु प्रवहाहतः ।
तादृक्क्रोधोद्भवो वह्नि-र्लोकाभावाय जायते ॥३६७॥

भा०टी०—सूर्य तथा चन्द्र बने ज्यारे एक अयनमां होय अने तेमना राशि अंको जोडता १२ नी संख्या थाय त्यारे बनेनी क्रान्ति बरोबर थवाथी 'वैधृति' नामक महापात उत्पन्न थाय छे, अने सूर्य चन्द्र एक बीजाथी विपरीत अयनोमां होय, तेमनी क्रान्तिनी

पलो समान होय अने तेमनी राशिओनो अंक राशिमंडलथी अर्ध भागनो अर्थात् ६ नो होय त्यारे 'व्यतीपात' नामक महापात उपजे छे. समान क्रान्तिना योगथी सूर्य चन्द्र बंन्नेना किरणजालना परस्पर संघट्टनथी प्रवाहित थतो अग्निप्रवाह–जाणे के तेमना ते प्रकारना क्रोधथी ज प्रकट्यो होय– लोकना अभावने माटे थाय छे, तात्पर्यार्थ ए छे के क्रान्तिसाम्यमां शुभ कार्य करवाथी करनारने अग्नि जन्य भयनो सामनो करवो पडे छे.

एज वस्तुने रामदैवज्ञ दृष्टान्तद्वारा समजावे छे–

पञ्चास्याजौ गोमृगौ तौलिकुम्भौ,
कन्यामीनौ कर्क्यली चापयुग्मे ।
तत्रान्योन्यं चन्द्रभान्वोर्निरुक्तं,
क्रान्तेः साम्यं नो शुभं मंगलेषु ॥३६८॥

भा०टी०—सिंह–मेष, वृषभ–मकर, तुला–कुम्भ, कन्या–मीन, कर्क–वृश्चिक अने धनु–मिथुन आ छ राशियुग्मोमां सायन सूर्य चन्द्र आवे त्यारे १२ राशिमित अथवा ६ राशिमित महापात उपजे छे, सायन सूर्य चंद्र पैकीनो एक सिंह अने बीजो मेष उपर आवी समक्रान्तिमां आवे त्यारे ६ राशिपरिमित 'व्यतीपात' वृषभ–मकर राशिमां सायन–सूर्यचन्द्र होइ समक्रान्तिमां आवे त्यारे १२ राशिपरिमित 'वैधृत' तुला–कुंभ उपर होय त्यारे 'व्यतीपात' कन्या–मीन उपर बे होय त्यारे 'व्यतीपात' कर्क–वृश्चिक उपर होय त्यारे 'वैधृत' धनु–मिथुन उपर होय त्यारे पण 'वैधृत' नामक 'महापात' उत्पन्न थाय छे. आ बंने प्रकारनुं क्रांतिसाम्य मंगलकार्योमां वर्जवुं जोइये. आ क्रान्तिसाम्य नियत होतुं नथी, विवाह वृन्दावनना निर्माणकालमां ए महापात "ध्रुव" योगनुं प्रथम चरण वीत्ये तेमज "ऐन्द्र" योगनुं चतुर्थ चरण शेष रहेतां

उत्पन्न थतो हतो, पण आज ए नियम प्रमाणे महापात पडतो नथी, आज माट आ महापातो प्रायः 'गंडवृद्धि' अने 'शूल-ब्रह्मा' आ ज्यारे योगोमां आव्या करे छे आ संबन्धमां 'आरम्भसिद्धिवार्तिक' कारे एक नियामक श्लोक आपीने कह्युं के ज्या योगोमां महापातनी तपास करवी ते निश्चितरूपे जणाव्युं छे, ते श्लोक नीचे प्रमाणे छे-

गण्डोत्तरावाच्छुक्रादेः, क्रान्तिसाम्यस्य संभवः ।
सार्वपञ्चसु योगेषु तन्त्र्यहं परिवर्जयेत् ॥३६९॥

भा०टी०—गंडनो उत्तरार्ध, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण, वगेरे ए मादा पाच योगोमां तेमज शूल, ब्रह्मा, ऐन्द्र, वैधृत, विष्कंभ अने प्रीतिपूर्वार्ध आ मादा पांच योगोमां महापातनो संभव होइ तपास करवी अने प्रथम पछीना दिवसो सहित क्रान्तिसाम्यनो त्याग करवो.

ग्रन्थान्तरमां पण महापात संबन्धी ३ दिवसो वर्जवानुं विधान दृष्टिगोचर थाय छे. जेम के-

गत १ मेष्य २ वर्तमान ३, सुख १ लक्ष्मी २ युषां ३ क्रमात्।
क्रान्तिसाम्यं भुजेत्वानि, त्र्यहं तेनात्र वर्जयेत् ॥३७०॥

भा०टी०—गयेल आवतुं अने वर्तमान क्रान्तिसाम्य अनुक्रमे सुख लक्ष्मी अने आयुष्यनी हानि करे छे माटे तत्प्रतिबद्ध ३ दिवसो वर्जवा जोइए, पण तथा केटलाक आचार्यो क्रान्तिसाम्यवाळो एक ज दिवस अने केटलाक क्रान्तिसाम्यवाळाने ज दुष्ट गणी त्यागवानो आदेश करे छे, कहे छे के

विषमदिवसेन हतस्य पत्रिण., मृगस्य मांसं मृग्यद्रं भवनादते।
यथा तथैव व्यतिपातयोगे, शुभोऽप्यवर्ज्यो न निश्चिनंदार ॥३७१॥

भा०टी०—जेम झेरवाळा बाणवडे मारेल मृगनुं मांस ज्यां मना स्थाने ज मात्र दोष छे तेम क्षीण्ना भागनु ते दुष्ट होतुं नथी

एज रीते महापातनो वर्तमान समय ज वर्जवो, आखी तिथि के आखो वार वर्जवानी जरूरत नथी.

गमे तेम होय पण महापातनी महादोषोमां गणना छे अने ए अवश्य वर्जनीय छे, ए विषे लल्ल कहे छे-

खड्गाऽऽहतोऽग्निना दग्धो, नागदष्टोऽपि जीवति।
क्रान्तिसाम्यकृतोद्वाहो, म्रियते नाऽत्र संशयः ॥३७२॥

भा०टी०-खड्गवडे हणायेल, अग्निद्वारा बळेल अथवा सर्पे डशेल जीवे छे पण क्रांतिसाम्यमां परणेल मरे छे एमां शंका नथी.

महापात यंत्रक—

निम्नोक्त राशियुग्मस्थितसूर्यचन्द्रयोः क्रान्तिसाम्ये.

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	कन्या	तुला
१	२	३	४	६	७
सिंह	मकर	धनु	वृश्चिक	मीन	कुंभ
५	१०	९	८	१२	११

वज्रपञ्चक—

तिथिं वारं च नक्षत्रं, नवभिश्च समन्वितम्।
सप्तभिश्च हरेद्भागं, शेषांके फलमादिशेत् ॥३७२॥
त्रिशेषे तु जलं विन्द्यात्, पञ्चशेषे प्रभञ्जनः।
सप्तशेषे वज्रपातो, ज्ञेयं वज्रस्य लक्षणम् ॥३७३॥

भा०टी०--तिथि वार, नक्षत्रना आंक भेगा करी तेमां नव जोडवा पछी तेने सातनो भाग देवो, शेष अंक रहे तेनुं फल कहेवुं

३ शेष रहे तो जल जाणवुं, पांच शेष रहे तो पवन अने ७ अथवा ० शेष रहे तो वज्रपात जाणवो ए वज्रनु लक्षण छे

कोइ वज्रनुं लक्षण आ प्रमाणे कहे छेः—

सूर्यात् पञ्चदश ऋक्ष-मष्टादशं च राहुणा ।
त्रयोविंशति केतुश्च चतुर्विंशति भूसुतः ।
पञ्चविंशति मन्दश्च, विवाहे वज्रपञ्चकम् ॥३७४॥
व्याधिः सूर्येऽग्नी राहौ च, केतौ नृपभयं तथा ।
भौमे चोरभय विन्द्यान्मरणं च शनैश्चरे ॥३७५॥

भा०टी०—लग्न नक्षत्रथी १२ मु नक्षत्र सूर्यनुं, १८ मुं राहुनुं, २३ मुं केतुनुं, २४ मुं मंगलनुं अने २५ मु शनैश्चरनु होय तो विवाह मां ए पाच वज्र छे, सूर्यमा रोग, राहुमा अग्नि भय, केतुमां राजभय, मंगलमां चोरभय, अने शनैश्चरमां मरण जाणवु.

बाणपञ्चक—

लग्ने नाड्या यात तिथ्योङ्क तष्टाः
शेषे नागद्व्यब्धि तर्केन्दुसख्ये ।
रोगो वह्निराजचौरो च मृत्यु-
र्बाणश्चायं दाक्षिणात्या प्रसिद्धाः ॥३७६॥

भा०टी०—लग्न तिथि युक्त गत तिथिओने ९ नवे भागतां शेष ८।२।४।६।१। आ पैकीनो अंक रहे तो अनुक्रमे रोग, अग्नि, राज, चोर, मृत्यु, नामनां बाण होय छे. ए पाच बाणो दाक्षिणात्योमा प्रसिद्ध छे.

विवाह-पटलोक्त पांच बाणो—

गततिथियुतलग्न पञ्चधा स्थापनीयं,
तिथि १५ रवि १२ दश १० नागै ८ र्वेद ४ युक्त क्रमेण ।

बन्ने सन्ध्याओमां सदा वर्जवो, तेमां पण ज्यां लग्न बलवान् होय त्यां पंचकनो दोष नथी निष्फल थइ जाय छे.

योग

योगो अनेकविध छे, सूर्य चन्द्र नक्षत्रोना योगथी बनता विष्कंभादि २७ योगो, वार नक्षत्रना योगथी बनता आनंदादि २८ योगो, ए उपरांत एकार्गल, दृष्टियोग, तिथि नक्षत्रोथी बनता शुभाशुभ योगो, वार नक्षत्रोथी बनता शुभाशुभ योगो, तिथिवार नक्षत्रोना संबन्धथी बनता योगो, आ सर्वयोगोनो संक्षेपमां परिचय अने ते योगोमां विधेय कार्योनो निर्देश कराववो ए आ प्रकरण लखवानो उद्देश छे.

विष्कंभादि योगा नयनोपाय—

यस्मिन्नृक्षे स्थितो भानु-र्यत्र तिष्ठति चन्द्रमाः ।
एकीकृत्य त्यजेदेकं, योगा विष्कंभकादयः ॥३८४॥

भा०टी०—जे नक्षत्र उपर सूर्य रहेल होय अने जे नक्षत्रमां चंद्रमा होय ते बंने नक्षत्रोनी अंक संख्या एकत्र करीने तेमांथी एक ओछो करवो, शेष जे अंक रहे तेटलामो विष्कंभादि योग जाणवो अंक राशि जो २७ थी अधिक होय तो तेमांथी २७ बाद करी शेष अंकमांथी एक ओछो करवो ने शेषांकने योगनो अंक जाणवो-

उदाहरण—

सूर्य अश्विनी उपर रहेल छे अने चंद्रमां पण ते उपर आव्यो छे तो ते दिवसे सूर्य चंद्र नक्षत्रांक युतिनी संख्या २ थइ, एमांथी १ बाद करतां शेषांक १ रह्यो आथी जणायुं के ते दिवसे १ लो विष्कंभ योग छे. बीजुं उदाहरण-सूर्य अश्विनी उपर अने चंद्र रेवती उपर छे बंनेनो नक्षत्रांक २८ थयो, १ ओछो करतां शेष

२७ रह्या एटले ते दिवसे २७ मो वैघृतयोग छे ए सिद्ध थयुं ए ज प्रमाणे सर्वत्र सूर्य—चंद्र नक्षत्रो उपरथी विष्कंभादि दिन योगो काढवा.

योगानयननो बीजो प्रकार—

गर्गेणोक्तास्त्विमे योगा आनन्दाद्या निमित्तजाः ।
विष्कंभाद्यास्तथा नित्या, अन्ये नैमित्तिकाः पुनः ॥३८५॥
वाक्यते रर्कनक्षत्रं, श्रवणाच्चान्द्रमेव च ।
गण्यते तद्युतिं कुर्याद्, योगः स्याद्दक्षशेषितः ॥३८६॥

भा०टी०—गर्गाचार्ये आनंदादि निमित्त ज विष्कंभादि नित्य अने बीजा नैमित्तिक योगो कह्या छे, विष्कभादि योगो लाववानी प्रक्रिया ए छे के पुष्यथी सूर्य नक्षत्र अने श्रवणथी चंद्र नक्षत्र गणता जे अंको आवे ते बंनेने जोडी २७ नो भाग देवो जे शेष रहे तेटलामो ते दिवसे विष्कभादि योग छे एम जाणवुं. जो जोडेला अंकने २७ नो भाग न लागे तो जोडेला अंक परिमित ज ते दिवसे योग जाणवो.

विष्कभादि २७ योगो—

विष्कम्भः प्रीतिरायुष्मान्, सौभाग्यः शोभनाह्वयः ।
अतिगण्डः सुकर्माख्यो, धृतिः शूलोऽथ गण्डकः ॥३८७॥
वृद्धिर्ध्रुवाख्यो व्याघातो, हर्षणो वज्रसंज्ञकः ।
सिद्धियोगो व्यतीपातो वरीयान् परिघः शिवः ॥३८८॥
सिद्धः साध्यः शुभः शुक्ले ब्रह्मैन्द्रो वैधृताह्वयः ।
सप्तविंशति योगास्ते, स्वनामफलदाः स्मृताः ॥३८९॥

भा०टी०—विष्कभ १ प्रीति २ आयुष्मान् ३ सौभाग्य ४ शोभन ५ अतिगंड ६ सुकर्मा ७ घृति ८ शूल ९ गड १० वृद्धि ११ ध्रुव १२ व्याघात १३ हर्षण १४ वज्र १५ सिद्धि १६ व्यतीपात १७ वरीयान् १८ परिघ १९ शिव २० सिद्ध २१ साध्य २२ शुभ २३

शुक्ल २४ ब्रह्मा २५ ऐन्द्र २६ वैधृत २७. आ २७ योगो पोताना नाम प्रमाणे फल आपनारा छे.

अशुभयोगोनी वर्ज्य घडीओ—

विरुद्धयोगेषु य आद्यपादः,
शुभेषु कार्येषु विवर्जनीयः ।
सवैधृताख्यो व्यतिपातयोगा,
सर्वोऽपि नेष्टः परिघार्द्धमाद्यम् ॥३९०॥
तिस्रस्तु नाड्यः प्रथमे च वज्रे,
गण्डेऽतिगण्डेऽपिच षट् च षट् च ।
व्याघातयोगे नव पञ्चशूले,
शुभेषु कार्येषु विवर्जनीयाः ॥३९१॥

भा०टी०—विरुद्ध योगोनो प्रथम चरण शुभ कार्योमां वर्जवो जोइये, व्यतीपात तथा वैधृत योगो संपूर्ण वर्जनीय छे, परिघनो प्रथम अर्धभाग वर्जवो, विष्कंभ-वज्रनी ३-३, गंड-अतिगंडनी ६-६, व्याघातनी ९ अने शूलयोगनी ५ घडीओ शुभ कार्योमां वर्जनीय छे.

योगेश-वसिष्ठमते—

सूर्याचन्द्रमसोर्धिष्ण्य-योगाज्जाता यतस्ततः ।
ऋक्षेशा एव योगेशा, ज्ञातव्याः सर्वकर्मसु ॥३९२॥

भा०टी०—योगो सूर्य चंद्र नक्षत्रोना योगथी बने छे तेथी नक्षत्रोना स्वामीओ ज योगोना स्वामीओ जाणवा, सर्व कार्योमां नक्षत्रेशोनो ज योगेश रुपे उपयोग करवो.

नारदना मते योगेशो आ प्रमाणे छे—

योगेशा यम-विष्णिवन्दु-धातृ-जीव-निशाकराः ।
इन्द्र-तोया-ऽहि-वह्नयर्क-भू-मरुद्-भग-तोयपाः ॥३९३॥

गणेश-रुद्र-धनद,-त्वष्ट-मित्र -षडाननाः।
सावित्री कमला गौरी, नासत्यौ पितरो दितिः ॥३९४॥

भा०टी०—यम, विष्णु, चन्द्रमा, धाता, बृहस्पति, चन्द्रमा, इन्द्र, जल, सर्प, अग्नि, सूर्य, भूमि, मरुत्, भग, वरुण, गणेश, रुद्र, धनद, त्वष्टा, मित्र, कार्तिकेय, सावित्री, कमला, गौरी, अश्विनीकुमार, पितर, दिति, आ विष्कंभादि २७ योगोना स्वामिओ छे.

तिथिकरणादिना स्वामियोना प्रयोजन विषे वराहः—
यत्कार्यं नक्षत्रे, तद्दैवत्यासु तिथिषु तत्कार्यम्।
करण मुहूर्तेष्वपि तत्, सिद्धिकरं देवतासदृशम् ॥३९५॥

भा०टी०—जे नक्षत्रमा जे कार्य करवानु होय ते नक्षत्र स्वामि तिथिमा करवाथी सिद्ध थाय छे, एज प्रमाणे नक्षत्र स्वामि समस्वामिक करण तथा मुहूर्तोमां पण कार्य करवु सिद्धिदायक थाय छे

विष्कभादि विधेय कार्यो—

चौल च बीजरोपं च, स्त्रीसंगं दन्तकल्पनम्।
काष्ठकर्म रिपूचाट, विष्कभे तु प्रकारयेत् ॥३९६॥
मित्रत्वं लेपन चैव, भूषण भूपरिग्रहम्।
राजवश्यं महोत्साहं, प्रीतियोगे प्रकारयेत ॥३९७॥
बीजवापं धनग्राह-मायुरारोग्यकर्म च।
विवाहं व्रतबन्ध च, ह्यायुष्मति च कारयेत् ॥३९८॥
वस्त्रबन्ध-मलंकार, सौभाग्य लेपकर्म च।
सोमपानं सुरापान, सौभाग्ये तु प्रकारयेत् ॥३९९॥
विवाहदानकर्माणि, भूषण भूपरिग्रहम्।
राजाभिषेकमायुष्य, शोभने च प्रकारयेत् ॥४००॥

भा०टी०—चूडाकर्म, बीजवापन, स्त्रीसग, दन्तशोधन, काष्टकार्य, शत्रुनुं उचाटन, ए कार्यो विष्कंभमा कराववा, मित्रता,

विलेपन, भूषणधारण, भूमिनी खरीदी, राजवशीकरण अने महोत्साहजनक कार्य ए सर्व कार्य प्रीतियोगमां कराववां. बीजवपन, द्रव्यसमादान, आयु तथा आरोग्यवर्धक कार्य, विवाह, व्रतग्रहण ए कार्यों आयुष्मान् योगमां कराववां. वस्त्रपरिधान, अलंकार कार्य, सौभाग्यकर्म, लेपकर्म, सोमवल्लीरसपान, मदिरापान ए सौभाग्य योगमां कराववां. विवाह, दान, भूषणकर्म भूमिग्रहण, राजाभिषेक अने आयुष्यवर्धक कर्म शोभनयोगमां कराववां.

विग्रहं निग्रहं चैव, रोदनं वधबन्धनम् ।
छेदनं वञ्चनं क्षुद्र-मतिगण्डे प्रकारयेत् ॥४०१॥
चित्रकर्म गृहस्थापं, कल्याणं भूपरिग्रहम् ।
राजाभिषेककर्माणि, सुकर्मणि च कारयेत् ॥४०२॥
प्राकारं तोरणादीनि, देवालयगृहाणि च ।
सेतुबन्धं गजारोहं, धृतियोगे तु कारयेत् ॥४०३॥
क्रूरकर्म रिपूच्चाटं, मारणं दाहनं तथा ।
बन्धनं चावमानं च, शूलयोगे प्रकारयेत् ॥४०४॥
शत्रुघातं रिपूच्चाटं, तडागं सेतुबन्धनम् ।
क्षेत्रसेवां गदायुद्धं, गंडयोगे प्रकारयेत् ॥४०५॥

भा०टी०—लडाइ, दंड करवो, रोवरावबुं, वध-बन्धन, कापवुं, ठगवुं, अने हलकटकाम अतिगंडयोगमां कराववां, चित्रकारी, गृहस्थापन, मंगलकार्य, भूमिग्रहण, राजाभिषेक क्रिया ए कामो सुकर्मा योगमां कराववां. किल्लेबन्धी, तोरणादिकार्यो, देवालयो, घरो, पुलो बांधवा, हाथी उपर चढवुं ए कार्यो धृतियोगमां कराववां. क्रूर कार्य, शत्रुनुं उच्चाटन, मारण, बालवुं, बंधन अने अपमान ए कार्यो शूलयोगमां कराववां. शत्रुनो घात, शत्रुनुं उच्चाटन, तलावखणवो, पुलबांधवो, क्षेत्रकर्षण करवुं अने गदायुद्ध ए कामो गंडयोगमां कराववां.

बीजवापं धनग्राहं, विवाहं वस्त्रबन्धनम् ।
तडाग सेतुबन्धं च, वृद्धियोगे प्रकारयेत् ॥४०६॥
वस्त्रबन्ध गृहस्थाप, तडागं सेतुबन्धनम् ।
भूषणं बहुरत्नं च, ध्रुवयोगे प्रकारयेत् ॥४०७॥
बन्धन रोधन चैव, घातनं छेदनं तथा ।
क्रूराणि बहुकर्माणि, व्याघाते तु प्रकारयेत् ॥४०८॥
वस्त्रबन्ध गजारोहं, विवाहं भूपरिग्रहम् ।
राजाभिषेकमायुष्यं, हर्षणे तु प्रकारयेत् ॥४०९॥
शस्त्रकर्म रिपूच्चाटं, शस्त्राणां च परिग्रहम् ।
सेनाधिपत्यं सौम्य च, वज्रयोगे प्रकारयेत् ॥४१०॥

भा०टी०—बीजवपन, धनग्रहण, विवाह, वस्त्रपरिधान, तडाग खनन, पुल बांधवो आदि कामो वृद्धियोगमां कराववा. वस्त्रपरिधान, गृहस्थापन, तलावबन्धन, पुलबंधन, भूषणपरिधान, अनेकविध रत्नधारण ए ध्रुवयोगमां कराववा, बन्धन, अवरोध, घातन, छेदन, अनेकविध क्रूर कर्मो व्याघातयोगमां कराववा वस्त्र बन्धन, हस्त्यारोहण विवाह, भूमिग्रहण, राजाभिषेक आयुष्यपोषक कर्म ए सर्व हर्षणयोगमां कराववा. शस्त्रप्रयोग, शत्रु उच्चाटन, शस्त्रोनो संग्रह, सेनापतित्वनो स्वीकार अने सौम्यकर्म वज्रयोगमां कराववां

हारकाञ्चीकलापं च, हस्ताभरणमेव च ।
अंगुलीभूषणं चैव, सिद्धियोगे प्रकारयेत् ॥४११॥
दान वेदविदे दद्यान्छ्राद्धासंकल्पनं तथा ।
रिपूच्चाटं विषादीनि, व्यतीपाते तु कारयेत् ॥४१२॥
हारकाञ्चीकलापं च, हस्ताभरणमेव च ।
अंगुलीभूषण चैव, वरीयसि च कारयेत् ॥४१३॥

बन्धनं छेदनं चैव, भेदनं विषदीपनम् ।
तथाऽन्यक्रूरकर्माणि, परिघे तु प्रकारयेत् ॥४१४॥
मालिकां कटिसूत्रं च, घ (क)ण्ठाभरणमेव च ।
कर्णयोर्भूषणं चैव, शिवयोगे प्रकारयेत् ॥४१५॥

भा०टी०—हार, कटिमेखला, हस्तभूषण, अंगुलीभूषण ए सर्व सिद्धियोगमां कराववां, वेद पाठी दान देवुं, श्रद्धापूर्वक संकल्प-करवो, शत्रुनुं उच्चाटन, विषदान आदि कार्यो व्यतीपातमां कराववां, हार, कटिसूत्र, हस्तभूषण, अंगुलीभूषण ए कामो वरीयस् योगमां कराववां, बंधन, छेदन, भेदन, विषप्रयोग तथा बीजां क्रूर कर्मो परिघ योगमां कराववां, माला (मौक्तिकमाला) कटिसूत्र, गलानुं भूषण, कानोनां भूषण इत्यादि शुभ कार्यो शिवयोगमां कराववां.

प्रतिष्ठा देवतानां च, गृहाणि नगराणि च ।
प्राकारतोरणादीनि, सिद्धयोगे प्रकारयेत् ॥४१६॥
देवतागुरुपूजां च, विद्यापूजां तथैव च ।
मन्त्रपूजान्यनेकानि, साध्ययोगे प्रकारयेत् ॥४१७॥
बीजवापं गृहोत्साहं, धनधान्यादिसंग्रहम् ।
सर्वरत्नमहीग्राहं, शुभयोगे प्रकारयेत् ॥४१८॥
लेपनं भूषणं चैव, राजसंदर्शनं तथा ।
कन्यादानं महोत्साहं, शुक्लयोगे प्रकारयेत् ॥४१९॥
शान्तिकं पौष्टिकं चैव, तडागं सेतुबन्धनम् ।
चौलोपनयनं क्षौरं, ब्रह्मयोगे प्रकारयेत् ॥४२०॥

भा०टी०—देवताओनी प्रतिष्ठाओ, गृहनिवेश, नगर निवेशो, प्राकारनिर्माण, तोरणनिवेश आदि कार्यो सिद्ध योगमां

कराववां, देवतापूजन, गुरुपूजन, सरस्वतीपूजा अने अनेकविध मंत्र-पूजनो साध्ययोगमा करावबां, बीजवाप, गृहोत्सवो, धन-धान्य संचय सर्वरत्नसंग्रह, भूमिग्रहण आदि कार्यो शुभयोगमा करावनां विलेपन, भूषण, राजदर्शन, कन्यादान, उत्साहप्रेरक कार्यो शुक्ल-योगमां करावरां, शान्तिक-पौष्टिककर्म, तलावबंधन, पुलबधन, चूडाकर्म, उपनयन, क्षौर ए सर्व ब्रह्मयोगमा कराववा.

कन्यादान गजारोह, स्त्रीसग वस्त्रबन्धनम् ।
काव्यगायनवाद्यानि, योगे चैन्द्रे प्रकारयेत् ॥४२१॥
घातनं परराष्ट्राणां, वञ्चनं दाहनं तथा ।
छेदनं क्रूरकर्माणि, वैधृतौ तु प्रकारयेत् ॥४२२॥

भा०टी०—कन्यादान, गजारोहण, स्त्रीसंग, वस्त्रपरिधान, काव्याभ्यास, गानाभ्यास वाद्यकलाभ्यास ए कार्यो ऐन्द्रयोगमां करावबां, बीजा राष्ट्र उपर चढाइ, ठगवुं, बालवुं, छेदवु अने बीजां क्रूरकर्मो वैधृति योगमां कराववा.

क्षणयोगो

जेम एक तिथिमां बधी तिथिओ, एक वारमा बधा वारो पोत-पोताना क्षणो भोगवे छे ते प्रमाणे एक योगमां पण बधा योगो पोताना क्षणो भोगवे छे, ए विषयमां ब्रह्मर्षि वसिष्ट कहे छे—

योगस्य सप्तविंशांशो, योगमान भवेदिह ।
एकस्मिन्नपि योगेऽपि, सर्वे योगा भवन्ति हि ॥४२३॥

भा०टी०—एक योगमा पण सर्व योगो होय छे अने आ क्षणयोगोनो भोगकाल इहां योगमानमां सत्तावीसमा भाग जेटलो होय छे, उदाहरण—विष्कभ योगना आरभनी २ घडी १३ पलो सुधी विष्कम योगनी भुक्ति जाणवी पछी २ घडी १३ पल सुधी प्रीतियोगनी ते पछी आयुष्माननी इत्यादि.

आनन्दादि २८ उप-योगो

आनन्दाख्यः-कालदण्डश्च धूम्रो,
धाता सौम्यो ध्वांक्ष-केतू क्रमेण ।
श्रीवत्साख्यो वज्रकं मुद्गरश्च,
छत्रं मित्रं मानसं पद्म-लुम्बौ ॥४२४॥
उत्पात-मृत्यू किल काण-सिद्धी,
शुभोऽमृताख्यो मुसलो गदश्च ।
मातंग-रक्षश्चरसुस्थिराख्याः,
प्रवर्धमानाः फलदाः स्वनाम्ना ॥४२५॥

भा०टी०—१ आनंद २ कालदंड ३ धूम्र ४ धाता ५ सौम्य ६ ध्वांक्ष ७ ध्वज ८ श्रीवत्स ९ वज्र १० मुद्गर ११ छत्र १२ मित्र १३ मानस १४ पद्म १५ लुंबक १६ उत्पात १७ मृत्यु १८ कांण १९ सिद्धि २० शुभ २१ अमृत २२ मुशल २३ गद २४ मातंग २५ राक्षस २६ चर २७ स्थिर अने २८ वर्धमान, आ आनन्दादि २८ योगो दिनयोगोना साहचर्यमां रहेता होवाथी उपयोगो गणाय छे.

आ योगो मुहूर्तचिन्तामणिकारे नारदना मत प्रमाणे लख्या छे, आरंभसिद्धिमां लखेल नामोनी साथे आ नामो ए ठेकाणे जुदां पडे छे, नंबर ३।४।१३।१४।१५।१६।१८।२०।२३ ना योगोनां नामो आरंभसिद्धिमां अनुक्रमे प्राजापत्य, सुरोत्तम मनोज्ञ, कंप, लुंपक, प्रवास, व्याधि, शूल अने गज ए प्रमाणे छे, आ योगोनुं फल नाम प्रमाणे होय छे.

आनन्दादि योगो जाणवानो उपाय-

दास्रादर्के मृगादिन्दौ, सार्पाद् भौमे कराद् बुधे ।
मैत्राद् गुरौ भृगौ वैश्वाद्, गण्या मन्दे च वारुणात् ॥४२६॥

भा०टी०—रविवारे अश्विनीथी, सोमे मृगशिराथी, भौमे आश्लेषाथी, बुधे हस्तथी, गुरुवारे अनुराधाथी, शुक्रे उत्तराषाढाथी, शनिवारे शतभिषाथी गणता दिननक्षत्र जेटलामुं थाय तेटलामो ते दिवसे आनन्दादि योग छे एम जाणवुं, प्रश्न–आश्विन शुदि १० गुरुवारे श्रवण नक्षत्र छे तो ते दिवसे आनन्दादि योग कयो होवो जोइए? उत्तर–गुरुवार होवाथी अनुराधाथी अभिजित् सहित गणतां श्रवण ७ मुं छे माटे ते दिवसे आनन्दादि पैकीनो ७ मो 'ध्वज' योग छे एम जाणवुं. ए ज प्रमाणे दरेक वारे उपर्युक्त नियतनक्षत्रथी दिननक्षत्र पर्यन्त गणीने आनन्दादि योगो जाणी शकाय छे

आनन्दादि योगो पैकीना अशुभयोगोनी वर्ज्य घडी

ध्वाङ्क्षे वज्रे मुद्गरे चेषु नाड्यो।
वर्ज्या वेदाः पद्मलंबे गदेऽश्वाः।
धूम्रे काणे मौसले भूर्द्वयं द्वे।
रक्षोमृत्यूत्पातकालाश्च सर्वे॥ ४२७॥

भा०टी०—ध्वांक्ष, वज्र अने मुद्गरनी पहेली ५ घडीओ वर्जवी, पद्मलुंबकनी ४-४ घडीओ, गदनी ७ घडीओ, धूम्रनी १, काणनी २, अने मुसलनी २ घडीओ वर्जवी ज्यारे राक्षस मृत्यु, उत्पात, अने कालदण्ड आ योगो संपूर्ण वर्जवा

आरंभसिद्धिकार अशुभयोगोनो परिहार कहे छे–

सिद्धियोगः कुयोगश्च, जायेता युगपद्यदि।
कुयोगं तत्र निर्जित्य, सिद्धियोगो विजृम्भते॥४२८॥

भा०टी०—सिद्धियोग (रवि, राज, कुमार, अमृतसिद्धि आदि कार्यसाधक योगो पैकीनो कोइ पण एक) अने कुयोग (मृत्यु, उत्पात राक्षस, यमघंट आदि वर्जित योग) जो एक साथे आवे

तो त्यां कुयोगना प्रभावने दूर करी सिद्धियोग पोताना प्रभावने प्रगट करे छे.

प्रकीर्णक शुभयोगो

१ रवियोग

योगो रवेर्भात् कृततर्कनन्द-दिग्विश्वविंशोडुषु सर्वसिद्ध्यै
आद्येन्द्रियाऽश्वद्विपरुद्रसारी- राजोडुषु प्राणहरस्तु हेयः
॥ ४२९ ॥

भा०टी०—रविनक्षत्रथी ४।६।९।१०।१३।२० एटलामुं चन्द्रनक्षत्र आवतां सर्व कार्य सिद्धिकारी रवियोग बने छे अने सूर्य नक्षत्रथी जो १।५।७।८।११।१५।१६ आटलामुं चन्द्रनक्षत्र होतां जे रवियोग बने छे ते प्राणहानि करे छे, जे त्याज्य छे

रवियोग फल—

इक्कस्स भये पंचाणणस्स, भज्जंति गयघडसहस्सं ।
तह रवि जोगपणट्ठा, गयणंमि गहा न दीसंति ॥ ४३० ॥
एआण फलं कमसो, विउलं सुक्खं जओ य सत्तूणं ।
लाभो य कज्जसिद्धी, पुत्तुप्पत्ती य रज्जं च ॥ ४३१ ॥

भा०टी०—एक सिंहना भयथी जेम हजार हाथीओनी घटा भागे छे तेम रवियोगथी आकाशमां भागेला ग्रहो दृष्टिगोचर थता नथी. आ रवियोगोनुं फल अनुक्रमे आ प्रमाणे छे-४ था रवियोगथी थतुं सुख, ६ ट्ठाथी शत्रुओनो विजय, ९माथी लाभ—धनप्राप्ति, १० माथी इष्ट कार्य सिद्धि, १३ माथी पुत्रोत्पत्ति अने २० मा रवियोगथी राज्यप्राप्ति सुधिनुं फल मले छे.

२ कुमारयोग—

योगः कुमारनामा, शुभः कुजज्ञेन्दुशुक्रवारेषु ।
अश्वाद्यैर्द्व्यन्तरितैर्नन्दा—दश पञ्चमीतिथिषु ॥४३२॥

भा०टी०—मंगल, बुध, सोम, शुक्र पैकीनो कोइ वार, अश्विनी, रोहिणी, पुनर्वसु, मघा, हस्त, विशाखा, मूल, श्रवण, पूर्वाभाद्रपदा आ नक्षत्रो पैकीनुं कोइ नक्षत्र अने नन्दा (१।६।११) पांचम, दशम आ तिथिओ पैकीनी कोइ तिथी, आ त्रणना योगे कुमारयोग उपजे छे, कुमारयोग धार्मिक अने मांगलिक कार्योमां शुभ गणाय छे.

कुमारयोगफल

बंगालमुनिप्रोक्तः कुमारयोगो दिने सदोषेऽपि ।
अस्मिन् कार्यं कार्यं, दीक्षायात्राप्रतिष्ठादि ॥४३३॥

भा०टी०—कुमारयोग बंगाल देशीय मुनिओए कहेलो छे, दोषवाला दिवसे पण आ कुमारयोगमां दीक्षा, यात्रा, प्रतिष्ठा आदि कार्यो करवां, मूलमां आवेल 'आदि' शब्दथी विद्याग्रहण, मैत्री, प्रतिमाप्रवेश, गृहप्रवेश आदि दरेक स्थिर कार्यो कुमारयोगमां करवाथी कार्य सिद्धि थाय छे अने कर्त्ताने यश मळे छे.

३ राजयोग–

राजयोगो भरण्यादौ, द्व्यन्तरैर्भैः शुभावहः ।
भद्रातृतीयाराकासु, कुजज्ञभृगुभानुषु ॥ ४३४ ॥

भा०टी०—भरणीथी मांडी बे बेने आंतरे रहेल नक्षत्रो अर्थात् भरणी, मृगशिरा, पुष्य पूर्वाफाल्गुनी, चित्रा, अनुराधा, पूर्वाषाढा, धनिष्ठा उत्तराभाद्रपदा आ नक्षत्रो, भद्रा तिथि अर्थात् द्वितीया सप्तमी, द्वादशी, तृतीया अने पूर्णिमा आ तिथिओ अने मंगल बुध, शुक्र अने सूर्यवार, आ त्रण पैकीनु कोइ पण नक्षत्र कोइ पण तिथि अने कोइ पण वार आवता राजयोग बने छे.

राजयोग फल–

रविजोगराजजोग-कुमारजोगेसु सुद्धदिअहे वि ।
जं सुहकज्जं कीरइ, तं सव्वं बहुफलं होइ ॥ ४३५ ॥

भा०टी०--रवियोग राजयोग अने कुमारयोगोमां अने शुद्ध दिवसे जे शुभ कार्य कराय छे ते सर्व घणुं ज सफल थाय छे, अहियां शुभ कार्य तरीके लघु-क्षिप्र नक्षत्रोमां करवानां कार्यो, मांगल्य कार्यो, धार्मिक क्रियाओ, पौष्टिककार्यो, क्षेत्रारंभ, गृहारंभ-निर्माण, भूषणपरिधान आदि कार्यो करवां.

४ अमृतसिद्धियोग-

हस्त-सौम्याश्विनीमैत्र-पुष्य-पौष्ण विरश्चिभैः ।
भवत्यमृतसिद्ध्याख्यो, योगः सूर्यादिवारगैः ॥४३६॥

भा०टी०—रविवारे हस्त, सोमवारे मृगशिर, मंगलवारे अश्विनी, बुधवारे अनुराधा, गुरुवारे पुष्य, शुक्रवारे रेवती अने शनिवारे रोहिणी वडे अमृतसिद्धिनामनो योग बने छे.

अमृतसिद्धिनुं बल-

भद्रासंवर्तकाद्यैश्च, सर्वदुष्टेऽपि वासरे ।
योगोऽस्त्यमृतसिद्ध्याख्यः, सर्वदोषक्षयस्तदा ॥ ४३७ ॥

भा०टी०—भद्राकरण, संवर्तकादि अशुभ योगोथी सर्वप्रकारे दूषित थयेल दिवसे पण जो अमृतसिद्धि योग छे तो सर्व दोषोनो क्षय थइ जाय छे.

आ वचन अमृतसिद्धिनुं प्राशस्त्य बतावे छे, वास्तवमां भद्रा, व्यतिपात, वैधृत जेवा सर्वघातक योगोनुं बल हटाववानी शक्ति अमृतसिद्धिमां पण नथी, आ संबंधमां ग्रन्थान्तरमां कह्युं छे-

हन्त्यमृताख्यो योगः, सर्वाण्यशुभानि लीलया नियतम् ।
न भवति पुनरिह शक्तो, वैधृतिविष्टिव्यतीपाते ॥४३८॥

भा०टी०—अमृतसिद्धियोग नियमपूर्वक सर्व अशुभ योगोनो विनाश करे छे पण वैधृति, विष्टि (भद्रा) अने व्यतिपातना दोषने हणवाने ए पण समर्थ थतो नथी.

५ सिद्धियोग

मूलश्रुत्युत्तराभाद्र-कृत्तिकादित्यभाग्यभैः ।
सस्वातिकैः क्रमात् सिद्धि-योगाः सूर्यादिवारगैः ॥४३९॥

भा०टी०—मूल, श्रवण, उत्तराभाद्रपदा, कृतिका पुनर्वसु, पूर्वाफल्गुनी अने स्वाति ए नक्षत्रो अनुक्रमे रवि, सोम, मगल, बुध, गुरु शुक्र शनिवारे आवे तो सिद्धियोग उपजे छे, रविए मूल, सोमे श्रवण, मंगले उत्तराभाद्रपदा, बुधे कृतिका, गुरुए पुनर्वसु, शुक्रे रेवती, शनिए रोहिणीथी बनता सिद्धियोगो बीजे नंबरे अमृत-सिद्धि जेवा छे.

६ स्थिरयोग-

स्थिरयोगः शुभो रोगो-च्छेदादौ शनिजीवयोः ।
त्रयोदश्यष्टरिक्तासु, द्व्यन्तरैः कृत्तिकादिभैः ॥४४०॥

भा०टी०—शनि, गुरुवार, तेरस, अष्टमी, चोथ, नोम, चौदश तिथि अने कृतिका, आर्द्रा, आश्लेषा, उत्तराफाल्गुनी, स्वाति, ज्येष्ठा, उत्तराषाढा, शतभिषा, रेवती, आ नक्षत्रोना योगथी स्थिर योग बने छे, आ योग रोगनिवृत्ति आदिना कामोमां शुभ गणाय छे

स्थिरयोगनो विषय-

पुनःकरण येषा-मनशन-सग्राम-वैरमुख्यानाम् ।
अर्थास्त एव कार्या, विबुधैरनिश स्थविरयोगे ॥ ४४१ ॥

भा०टी०—जे कामो फरीथी करवा जेवा न होय तेज कामो विद्वानोए स्थविर (स्थिरयोगनुं बीजु नाम) योगमा करवा, जेवां के अनशन (अन्त समयनो आहार त्याग) युद्ध, वैरभाव प्रमुख,

ए विषयमां पाकश्री ग्रन्थमां आ प्रमाणे लखेल छे.

अणसण-खिल-वाहि--रिण रिउ रण-दिव्व-जलासए बंधो ।
कायव्वो थिरजोगे, जस्स य करणं पुणो णत्थि ॥ ४४२ ॥

भा०टी०—अनशन, क्षेत्रशोधन, व्याधिनो प्रतिकार, शत्रुनो प्रतिकार, रिण चुकाववुं, युद्ध, दिव्य-कोशपानादि करवुं, जलाशय बांधवो ए सर्व कार्यो अने जे कार्यो फरी करवानां न होय तेवां सर्व कार्यो स्थिर योगमां करवां.

उक्त कार्यो के ते प्रकारनां ज बीजां कार्योमां ज आ योग लेवो पण बीजा कार्योमां-खास करीने शुभ कार्योमां-जे वार वार करवानां होय तेवां विवाह, प्रतिष्ठा, दीक्षा. आदिमां ए योग वर्जवो आ स्थविर योग शुभ नथी तेम अशुभ पण नथी तेथी शुभयोगोना अन्ते अने अशुभ योगोना प्रारंभ पूर्वे लख्यो छे.

प्रकीर्ण अशुभ योगो-

उत्पात--मृत्यु-काण-योगो-

राधाव्यवासवात् पौष्ण-ब्राह्मेज्यार्यमभात् क्रमात् ।
त्रिपुत्रिष्वर्कतो योगा, उत्पात--मृत्यु--काणकाः । ४४३ ॥

भा०टी०—विशाखा, पूर्वाषाढा, धनिष्ठा, रेवती, रोहिणी, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, आ सात नक्षत्रोथी शरु थतां त्रण त्रण नक्षत्रो अनुक्रमे रवि सोम मंगल बुध, गुरु, शुक्र, शनिवारे आवतां क्रमेण उत्पात मृत्यु काण, ए त्रण त्रण योगो उपजे छे. जेम के रविवारे विशाखा होय तो उत्पात, अनुराधा होय तो मृत्यु, ज्येष्ठा होय तो काण, सोमवारे पूर्वाषाढाए उत्पात, उत्तराषाढा ए मृत्यु, अभिजिते काण, मंगलवारे धनिष्ठाए उत्पात, शतभिषाए मृत्यु, पूर्वाभाद्रपदाए काण. एज प्रमाणे बुधवारे रेवतीथी उत्पातादि त्रण, गुरुवारे

रोहिणीथी उत्पातादि त्रण, शुक्रवारे पुष्यथी उत्पातादि त्रण अने शनिवारे उत्तराफाल्गुनीथी उत्पातादि त्रण योगो थाय छे ते स्वयं जाणी लेवा.

यमघण्टयोग—

मघा-विशाखार्द्रामूल-कृत्तिका-रोहिणी-करैः ।
रव्यादिवारसंयुक्तै-र्यमघण्टो भृशाऽशुभः ॥ ४४४ ॥

भा०टी०—मघा विशाखा आर्द्रा मूल कृत्तिका रोहिणी हस्त आ नक्षत्रो अनुक्रमे रवि सोम मंगल बुध गुरु शुक्र शनिवारे आवे तो यमघंट नामक योग बने छे जे घणो ज अशुभ होय छे.

वज्रमुसल योग—

याम्य-चित्रोत्तरापाढा, वासवार्यमशाक्रभैः ।
रेवती सहितैर्वज्र-मुसलोऽर्कादिवारगैः ॥४४५॥

भा०टी०—भरणी, चित्रा, उत्तरापाढा धनिष्ठा उत्तराफाल्गुनी ज्येष्ठा रेवती आ सात नक्षत्रो अनुक्रमे रवि सोम मंगल बुध गुरु शुक्र शनिवारे आवे तो वज्रमुसल योग उपजे छे, आ योगनु बीजु नाम ग्रहजन्मनक्षत्र योग छे

क्रकच योग—

यत्र सङ्ख्यायुती वार-तिथ्योर्जातास्त्रयोदश ।
ज्ञेयः क्रकचयोगोऽयं, हेयश्च शुभकर्मसु ॥४४६॥

भा०टी०—ज्यां वार तिथिना अंकने जोडतां जो १३ नी संख्या थाय तो जाणवु के ते दिवसे क्रकच योग छे, रवि बारस, सोम अग्यारस, मंगल दशम, बुध नवमी, गुरु अष्टमी, शुक्र सप्तमी अने शनि षष्ठीना आंकोनी संख्या १३ आवे छे एटले आ वार अने तिथिओना योगे क्रकच योग बने छे आ क्रकचयोग शुभ कार्योमां वर्जवो जोइये.

वज्रपातयोग—

वज्रपातं त्यजेद् द्वित्रि-पञ्चषट्सप्तमे तिथौ ।
मैत्रेऽथ त्र्युत्तरे पैत्र्ये, ब्राह्मे मूलकरे क्रमात् ॥४४७॥

भा०टी०—बीज त्रीज पांचम छठ सातम तिथिए अनुक्रमे अनुराधा, त्रण उत्तरा, मघा, रोहिणी अने मूल तथा हस्त नक्षत्र आवतां वज्रपातनामक योग बने छे जे वर्ज्य छे.

संवर्तकयोग—

प्रतिपत्त्रितये सौम्ये, सप्तम्यां शनि-जीवयोः ।
षष्ठयां गुरौ द्वितीयायां, शुक्रे संवर्तको भवेत् ॥४४८॥

भा०टी०—प्रतिपदा द्वितीया तृतीया आ तिथिओए बुधवार होय, सप्तमीए शनि अथवा गुरुवार होय, षष्ठीए गुरुवार होय अथवा द्वितीयातिथिए शुक्रवार होय तो संवर्तक योग उपजे छे ते वर्जित करवो.

कालमुखी तिथि—

चउत्थिउत्तर पंचमीमघा, कित्तियनवमीइ तइयअणुराहा ।
पंचमी रोहिणीसहिया, कालमुही जीवनाशयरी ॥४४९॥

भा०टी०—चतुर्थी उत्तराफाल्गुनी उत्तराषाढा अने उत्तराभाद्रपदा सहित होय, पंचमी मघा सहित, नवमी कृत्तिका सहित, तृतीया अनुराधा सहित अने पंचमी रोहिणी सहित होय तो ते कालमुखी तिथि गणाय छे. जे जीव नाश करी छे.

ज्वालामुख तथा दग्धयोग—

चतुर्थी चोत्तरायुक्ता, मघायुक्ता तु पञ्चमी ।
तृतीययाऽनुराधा च, नवम्या सह कृत्तिका ॥४५०॥

---

१ आरंभसिद्धिवार्तिकमां पाठान्तर नीचे मुजब छे—अट्ठमि रोहिणी सहिया, कालमुही जोगिमास छगिमच्चू ॥

अष्टम्या रोहिणीयुक्ता, योगो ज्वालामुखाभिधः ।
त्याज्योऽयं शुभकार्येषु, गृह्यते त्वशुभे पुनः ॥४५१॥

एकादश्यामिन्दुवारो, द्वादश्यामर्कवासरः ।
षष्ठयां बृहस्पतेर्वारस्तृतीया बुधवासरे ॥४५२॥

अष्टमी शुक्रवारे तु, नवमी शनिवासरे ।
पञ्चमी भौमवारे च, दग्धयोगाः प्रकीर्तिताः ॥४५३॥

भा०टी०—उत्तरात्रय सहित चतुर्थी, मघा युक्ता पचमी, अनुराधा सहित तृतीया, कृत्तिका युक्त नवमी, रोहिणी युक्त अष्टमी होय तो 'ज्वालामुख' नामक योग उत्पन्न थाय छे. आ योग शुभ कार्योमां वर्जवो अने अशुभमां लेवो. एकादशीए सोमवार, द्वादशीए रविवार, षष्ठीए गुरुवार, तृतीयाए बुधवार, अष्टमीए शुक्रवार, नवमीए शनिवार अने पचमीए मगलवार आवता दग्ध योग बने छे एम शास्त्र कहे छे.

शुभयोग-कोष्टक

सूर्यनक्षत्रात् ४।६।९।१०।१३।२० तमे चन्द्रनक्षत्रे-रवियोग
सो मं बु शु वारे १।५।६।१०।११। अ रो-पुन म-ह-चि-मू श्र पूभा-कुमार०
सू मबुशुवारे २।३।७।१२।१५ तिथि भ मृपुपूफाचि अनु पूषा धउभा-राज०
रवि हस्त, सो-मृ, मं-अश्वि, बु अनु, गु-पु, शु-रे, श रो, अमृत सिद्धि
र-मू, च-श्र, मं उभा, बु-कृ, गु-पुन, शु-रे, शनि रो, सिद्धियोग
गु-शवारे, ४-८-९-१३-१४ तिथि, कृ आ आश्लेउफास्वा ज्ये उपाश रे स्थिरयोग

अशुभयोग कोष्ठक—

वार	सू	सो	मं	बु	गु	शु	श	योग
नक्षत्र	वि	पूपा	ध	रे	रो	पुष्य	उफा	उत्पात
नक्षत्र	अनु	उपा	श	अ	मृ	आश्ले	ह	मृत्यु
नक्षत्र	ज्ये	अभि	पूभा	भ	आर्द्रा	म	चि	काण
नक्षत्र	म	वि	आर्द्रा	मृ	कृ	रो	ह	यमघण्ट
नक्षत्र	भ	चि	उपा	ध	उफा	ज्ये	रे	वज्र-मुसल
तिथि	१२	११	१०	९	८	७	६	क्रकच

अशुभयोगोनो परिहार

मृत्यु-क्रकच-दग्धादी-निन्द्यौ शस्ते शुभाऽब्जगुः ।
केचिद्यामोत्तरं चान्ये, यात्रायामेव निन्दितान् ॥४५४॥

भा०टी०—मृत्यु, क्रकच, दग्ध आदि अशुभयोगो चन्द्र शुभ होय तो अशुभ नथी एम केटलाक विद्वानो कहे छे ज्यारे बीजाओ कहे छे के मृत्यु क्रकचादि योगो (दक्षिण उत्तर दिशाए) यात्रामां ज अशुभ गणाय छे.

अयोगे सुयोगोपि चेत्स्यात्तदानीं,
कुयोगं निहत्यैष सिद्धिं तनोति ।
परे लग्नशुद्ध्या कुयोगादिनाशं,
दिनार्द्धोत्तरं विष्टिपूर्वं च शस्तम् ॥४५५॥

भा०टी०—कुयोगमां शुभयोगो भेगा होय तो कुयोगनो नाश करी सुयोग कार्य सिद्धि करे छे, अन्य आचार्यो कहे छे के लग्नशुद्धिथी

कुयोगादिनो नाश थाय छे अने विष्टि आदि अपयोगो मध्याह्न पछी अशुभ फल आपता नथी.

अथ वसिष्ठोक्ताः शुभयोगाः—

तिथि-नक्षत्रजन्य शुभयोग—

नन्दास्वंबुप-चित्राग्नि-रौद्रविष्णूत्तरात्रय१।
वारयोगा भवन्त्येते, सर्वकार्ये शुभप्रदाः। ४५६॥

भा०टी०— १।६।११ आ नन्दातिथिओ तथा शतभिषा, चित्रा, कृत्तिका, आर्द्रा, श्रवण, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तरा भाद्रपदा, आ नक्षत्रोना योगथी 'वारयोगो' बने छे आ वारयोगो सर्वकामोमा शुभ फल आपनारा छे

भद्रास्वदितिदैत्येज्ये, कमलासन तारकाः।
श्रेष्ठयोगा भवन्त्येते, सर्वदा मगलप्रदाः ॥४५७॥

भा०टी०—भद्रातिथिओ (२।७।१२) मां पुनर्वसु, मूल, पुष्य, रोहिणी आ नक्षत्रो होय तो 'श्रेष्ठयोग' नामक योगो बने छे जे सदा मंगल आपनारा होय छे

जयासु वसुसोमार्क-दस्रान्त्येज्यभत्र्युत्तराः ॥
शुभयोगास्त्वमी नृणां, मगले मगलप्रदाः ॥४५८॥

भा०टी०— जया (३।८।१३) तिथिओमां धनिष्ठा, मृगशिरा, हस्त, अश्विनी, रेवती, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा उत्तराभाद्र पदा आ नक्षत्रो आवे छे त्यारे शुभयोगो बने छे आ योगो मंगल कार्योमां मगल आपनारा छे,

रिक्तास्वीज्यद्विदेवेन्द्र-सार्पवायव्यतारकाः ॥
तदा कल्याणयोगाः स्युः, सर्वकार्येषु शोभनाः ॥४५९॥

भा०टी०—रिक्ता (४।९।१४) तिथिओमां पुष्य, विशाखा, ज्येष्ठा, आश्लेषा, स्वाति आ नक्षत्रो आवे त्यारे सर्वकार्योमां शुभफल-

दायक 'कल्याण योग' नामक योगो उपजे छे.

उत्तरात्रयमैत्रेज्य-दस्रान्त्येन्द्वग्नितारकाः ।
भौमवारेण संयुक्ताः पूर्णयोगाः प्रकीर्तिताः ॥४६०॥

भा०टी०—उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, अनुराधा, पुष्य, अश्विनी, रेवती, मृगशिरा, कृत्तिका आ नक्षत्रो मंगलवार साथे होय त्यारे पूर्णयोगो उत्पन्न थाय छे.

बुधवारे सुरेज्येन्दु-धातृवह्नित्रिरुत्तराः ।
हस्तत्रयानलास्ताराः, शंखयोगाः प्रकीर्तिताः। ॥४६१॥

भा०टी०—बुधवारे पुष्य, मृगशिरा, रोहिणी, कृत्तिका, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, हस्त, चित्रा, स्वाति, आ नक्षत्रो आवे त्यारे शंखयोगो उपजे छे.

गुरुवारेऽदितीज्यार्क-त्रयमित्रान्त्यतारकाः ।
श्रवणत्रयमित्येते, योगाश्चामृतसंज्ञकाः ॥४६२॥

भा०टी०—गुरुवारे पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, चित्रा, स्वाति, अनुराधा रेवती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा आ नक्षत्रो होय त्यारे 'अमृतयोग' उपजे छे.

रेवतीद्वयहस्तेन्दु-धातृ-मित्रत्रिरुत्तराः ।
शुक्रवारेण संयुक्ताः पद्मयोगाः प्रकीर्तिताः ॥४६३॥

भा०टी०—रेवती, अश्विनी, हस्त, मृगशिरा, रोहिणी, अनुराधा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा आ नक्षत्रो सहित शुक्रवार होय त्यारे पद्मयोगो उत्पन्न थाय छे.

पूर्णासु पुष्यपौष्णाद्य-वसुवारीशतारकाः ।
वर्धमानाह्वया योगाः, शुभकार्यप्रवृद्धिदाः ॥४६४॥

भा०टी०—पूर्णा (५।१०।१५) तिथिओमां पुष्य, रेवती.

अश्विनी, धनिष्ठा शतभिषा ए नक्षत्रो आवे त्यारे शुभकार्यनी वृद्धि करनारा 'वर्धमान' नामक योगो उत्पन्न थाय छे

वार-नक्षत्रजन्य शुभयोग

उत्तरात्रयपौष्णेज्य-मूलार्कहरितारकाः ।
चित्रेन्द्वदितयः सौम्या, योगाः स्युर्भानुवासरे ॥४६५॥

भा०टी०—उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती, पुष्य, मूल, हस्त, श्रवण, चित्रा, मृगशिरा, पुनर्वसु आ नक्षत्रो रविवारे होय तो 'सौम्ययोगो' उत्पन्न थाय छे

सोमवारेऽदितिमरुद्वैष्णववस्त्रयतारकाः ।
रोहिणीद्वयशाक्रेज्या, महायोगाः प्रकीर्तिताः ॥४६६॥

भा०टी–सोमवारे पुनर्वसु, स्वाति, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा रोहिणी, मृगशिरा, ज्येष्ठा, पुष्य आ नक्षत्रो होय त्यारे 'महायोग' सञ्ज्ञक योगो उपजे छे

रोहिणीद्वयपुष्यैन्द्र-विष्णुत्रयमघोत्तराः ।
शनिवारेण संयुक्ता, योगाश्चानन्दसञ्ज्ञकाः ॥४६७॥

भा०टी०––रोहिणी मृगशिरा, पुष्य, ज्येष्ठा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मघा, उत्तराफाल्गुनी उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा आ नक्षत्रो शनिवार सहित होय त्यारे आनन्द संज्ञक योगो उपजे छे.

हस्तेन्दुदस्रमित्रेज्य-पौष्णपद्मजतारकाः ।
आदित्यादिषु वारेषु, सिद्धियोगाः प्रकीर्तिताः ॥४६८॥

भा०टी०—आदित्य सोम, मगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनिवारे अनुक्रमे हस्त मृगशिरा अश्विनी अनुराधा पुष्य रेवती रोहिणी आ नक्षत्र आवे त्यारे 'सिद्धियोग' उपजे छे, पाछलना ग्रन्थकारो आ 'सिद्धियोग' ने अमृतसिद्धि' ना नामथी वर्णवे छे.

मूलहर्युत्तराभाद्र-कृत्तिकादितयः क्रमात् ।
भाग्यानिलाख्याः पीयूष-योगा वारेष्विनादिषु ॥४६९॥

भा०टी०— सूर्यवारे मूल, सोमे श्रवण, भोमे उत्तराभाद्रपदा, बुधे कृत्तिका, गुरुवारे पुनर्वसु, शुक्रवारे पूर्वाफाल्गुनी, शनिवारे स्वाति नक्षत्र होय त्यारे 'पीयूषयोग' नामक योगो उत्पन्न थाय छे.

आ 'पीयूषयोगो' आजकाल सिद्धियोगो रूपे ओलखाय छे.

तिथि-वारजन्य शुभयोग

नन्दाभौमार्कयोर्भद्रा, शुक्रेन्द्वोश्च जया बुधे ।
शुभयोगा गुरौ रिक्ता, पूर्णा मन्देऽमृताह्वया ॥४७०॥

भा०टी०—मंगल तथा रविवारने दिवसे नंदा (१।६।११) तिथिओ, शुक्र तथा सोमवारे भद्रा (२।७।१२) तिथिओ, बुधवारे जया (३।८।१३) तिथिओ, गुरुवारे रिक्ता (४।९।१४) तिथिओ अने शनिवारे पूर्णा (५।१०।१५) तिथिओ शुभयोगात्मक बनी 'अमृतातिथिओ' ए नाम प्राप्त करे छे.[1]

शुक्रज्ञकुजमन्देज्य-वारा नन्दादिषु क्रमात् ।
सिद्धातिथिः सिद्धिदा स्यात्, सर्वकालेषु सर्वदा ॥४७१॥

भा०टी०—शुक्रवारे नन्दा (१।६।११), बुधवारे भद्रा (२।७।१२), मंगलवारे जया (३।८।१३), शनिवारे रिक्ता (४।९।१४), अने गुरुवारे पूर्णा (५।१०।१५) तिथिओ होय त्यारे ते 'सिद्धा तिथि' ए नामथी ओलखाय छे अने सदाकाल ते सिद्धिदायक होय छे.

---

१ वसिष्ठ नारदादिको पोतानी संहिताओमां अमृता ज लखी गया छे, पण नारदसंहिताना कोइ अशुद्ध पुस्तकना 'मृतिप्रदा' आवा पाठथी व्यामोहित थइ अर्वाचीन ग्रन्थकारोए आ वार-तिथिओने 'मृतिप्रदा' वा 'मृत्युयोगा' आवो सिद्धान्त नक्की करीने वर्ज्य कर्या छे, वसिष्ठ गुणनिरूपणाध्यायमां आ योगोनु निरूपण कर्युं होवाथी आ योगो शुभ छे अेज सत्य वस्तु समजवी.

तिथि-नक्षत्रजन्य शुभयोग कोष्ठक—

तिथयः-	नक्षत्राणि—	योगनामानि
नन्दा-१।६।११	कृ।आ।उफा।चि।उपा। श्रा। श। उभा।	वारयोग
भद्रा-२।७।१२	रो। पुन। पुष्य। मूल।	श्रेष्ठयोग
जया-३।८।१३	अश्वि। मृ। पु।उफा।ह।उपा।ध।उभा।रे।	शुभयोग
रिक्ता-४।९।१४	पु। अ। श्ले। स्वा। वि। ज्ये।	कल्याणयोग
पूर्णा।५।१०।१५	अश्वि। पु। ध। श। रे।	वर्धमानयोग

वार-नक्षत्र जन्य शुभयोग कोष्ठक—

वाराः-	नक्षत्राणि—	योगनाम
रविवारे	मृ।पुन।पु।उफा।ह।चि।उपा।मू।श्र।उभा।रे।	सौम्ययोग
सोमवारे	रो।मृ।पुन।पु।स्वा।ज्ये।श्रा।ध।श।	महायोग
मंगलवारे	अश्वि।कृ।मृ।पु।उफा।अनु।उपा।उभा।रे।	पूर्णयोग
बुधवारे	कृ।रो।मृ।पु।उफा।ह।चि।स्वा।उपा।उभा।	शक्यवोग
गुरुवारे	पुन।पु।ह।चि।स्वा।अनु।श्र।ध।श।रे।	अमृतयोग
शुक्रवारे	अश्वि।रो।मृ।उफा।ह।अनु।उपा।उभा।रे।	पद्मयोग
शनिवारे	रो।मृ।पु।म।उफा।ज्ये।उपा।श्रा।ध।श।उभा।	आनंदयोग

वारेषु	नक्षत्राणि	योगनाम
र चं मं बु गु शु श	ह।मृ।अश्वि।अनु।पु।रे।रो।	सिद्धियोग
र चं मं बु गु शु श	मू।श्र।उभा।कृ।पुन।पूफा।स्वा।	पीयूषयोग

तिथि-वारजन्य शुभयोग कोष्टक—

सू	सो	मं	बु	गु	शु	श	योगनाम
नन्दा १।६।११	भद्रा २।७।१२	नंदा १।६।११	जया ३।८।१३	रिक्ता ४।९।१४	भद्रा २।७।१२	पूर्णा ५।१०।१५	अमृतातिथि
०	०	जया ३।८।१३	भद्रा २।७।१२	पूर्णा ५।१०।१५	नन्दा १।६।११	रिक्ता ४।९।१४	सिद्धातिथि

ग्रह-कृत शुभयोग

लग्नमालोकयेज्जीवस्त्वथवा लग्नगो बली।
वापीयोगः स विज्ञेय-स्त्वधिमित्रगृहस्थितः ॥४७२॥
गुरुर्बली स्वलग्नस्थो, वीक्षयेद्वा विलग्नगः
पुण्डरीको महायोगः, सर्वदा योगनायकः ॥४७३॥
शुभवर्गस्थितो जीवः, सुबली सौम्य वीक्षितः ॥
गुणशेखरसंज्ञोऽयं, योगो वा केवलं बली ॥४७४॥
एवं शुक्रोऽपि सौम्योऽपि, गुरुवद्योगकारकौ।
ग्रन्थविस्तरभीत्याऽथ, त्वेवं संक्षिप्य चोदितम् ॥४७५॥
वर्गोत्तमगतो जीवः, शुक्रो वा चन्द्रजोऽपि वा।
गुणधूर्जटिसंज्ञोऽयं, यदा ते बलिनस्तदा ॥४७६॥

भा०टी० गुरु बलवान् थइने लग्नने जोतो होय अथवा ते लग्न-स्थित होय अने अधिमित्रना घरनो होय तो वापीयोग थाय छे, गुरु

स्वगृही होइ लग्नस्थित होय अथवा लग्नने जोतो होय तो पुण्डरीक-नामक महायोग बने छे जे सर्वदा योगनायक होय छे गुरू बलवान थइ शुभवर्गनो होय, सौम्यदृष्ट होय, वा केवल बली होय तो पण गुणशेखरयोग कारक थाय छे. एज प्रकारे शुक्र तथा बुध पण उक्तयोग कारक थाय छे, पण ग्रंथ वधवाना भयथी लख्युं नथी. गुरू शुक्र के बुध बलवान थइ वर्गोत्तमांशमा रह्या होय तो प्रत्येक गुणधुर्जटियोग कारक थाय छे.

बलिनः केन्द्रगाः सौम्या, भवन्ति च यदा तदा।
गुणभास्कर संज्ञोऽयं, यदि वा लाभसंस्थिताः ॥४७६॥
वर्गोत्तमगतश्चन्द्रो, बलवाञ्छुभवीक्षितः।
लग्नमेवंविध चेद्वा, गुणानां चन्द्रशेखरः ॥४७७॥
त्रि-षष्ठ-लाभगाः पापाः, बलिनः शुभवीक्षिताः।
भवन्ति यदि योगोऽय, श्रीवत्सो योगराट् प्रभुः ॥४७८॥
उच्चैस्थो लाभगः सूर्यः, षष्ठगो वा तृतीयगः।
यदि स्यात् सिंहयोगोऽय, तुगांशस्थोऽपि वा यदि ॥४७९॥
लाभस्थितो यदा सूर्यश्चन्द्रो वाप्येक एव सः।
गुणसागर योगोऽयं, यदा भवति चेद् बली ॥४८०॥

भा०टी०—बलवान् थइ सौम्यग्रहो केन्द्रमां रह्या होय अथवा लाभ स्थित होय तो गुणभास्कर योग उत्पन्न थाय छे. चन्द्र वर्गो-त्तमांशमा होय, बलवान होय अने सौम्यदृष्ट होय अथवा लग्न ए प्रकारनु होय तो चन्द्रशेखर योग बने छे. पापग्रहो शुभदृष्ट अने बल-वान थइ त्रीजे छट्ठे के अग्यारमे आ स्थानोमा रह्या होय तो योगोनो राजा श्रीवत्सयोग बने छे. उच्चस्थित सूर्य लाभस्थित होय, वा त्रीजे के छट्ठे होय अथवा उच्चांशस्थित होय तो सिंहयोग निष्पन्न थाय

छे. सूर्य वा चन्द्र बेमांथी एक बलवान थइने लाभ स्थानमां रह्या होय तो गुणसागर योग थाय छे.

पुष्यस्याऽथ द्वितीयांश-संस्थितौ चन्द्रवाक्पती ।
विजयो नाम योगोऽयं, समरे विजयप्रदः ॥४८१॥
परमोच्चगतोऽप्येको, जीवो वा ज्ञः सितोऽपि वा ।
ब्रह्मदण्डो महायोगः, सर्वदोषविनाशकृत् ॥४८२॥
मूलत्रिकोणगाः सौम्या, भवन्ति यदि वा शशी ।
प्रभंजनो महायोगस्त्वथवापि तदंशगाः ॥४८३॥
मूलत्रिकोणगाः पापा-स्त्रिषष्ठायगता यदि ।
इन्द्रदण्डो महायोगस्तदंशकगता अपि ॥४८४॥
मुहूर्तश्चाष्टमः शश्वदभिजिद्योगसंज्ञकः ।
गुणानामधिपः सोऽपि, मध्यंदिनगते रवौ ॥४८५॥

भा०टी०—पुष्य नक्षत्रना प्रथम चरणमां चंद्र अने द्वितीयमां बृहस्पति रहेला होय छे त्यारे युद्धमां विजय आपनारो विजययोग बने छे. गुरु बुध के शुक्र पैकीनो कोइ पण एक ग्रह परम उच्च अंशमां होय छे त्यारे सर्वदोषनाशक ब्रह्मदंड योग उत्पन्न थाय छे. सौम्य ग्रहो मूलत्रिकोणना होय अथवा चंद्र मूलत्रिकोणमां होय अथवा मूलत्रिकोणना अंशमां होय तो प्रभंजन महायोग बने छे. पापग्रहो मूलत्रिकोण अथवा मूलत्रिकोणना अंशोमां रहेला होय अथवा तो त्रीजे छट्ठे के अग्यारमे होय त्यारे इन्द्रदण्ड महायोग बने छे. दिवसनो आठमो मुहूर्त के जे सूर्य मध्याह्नमां आवे त्यारे आवे छे ते अभिजिद्योग सर्वगुणोनो नायक गणाय छे.

अथ वसिष्ठोक्ता अशुभयोगाः—

वार-नक्षत्रजन्य अशुभयोग

द्विदैव-जल-वस्वन्त्य-ब्रह्मेज्यार्यमतारकाः ।
उत्पातयोगा विज्ञेया, भानुवारादिषु क्रमात् ॥४८६॥

मैत्रविश्वाबुवाग्विन्दु-मार्पसूर्याख्यतारकाः ।
मृत्युयोगा मृत्युकराः, सूर्यवारादिषु क्रमात् ॥४८७॥

भा०टी०—रविवारे विशाखा, सोमे पूर्वाषाढा, मंगले धनिष्ठा, बुधे रेवती, गुरुवारे रोहीणी, शुक्रे पुष्य, शनिवारे उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र आवता उत्पात योगो उपजे छे, अने रविवारे अनुराधा, सोमे-उत्तराषाढा, मंगले पूर्वाषाढा, बुधे स्वाति, गुरुवारे मृगशिरा, शुक्रवारे आश्लेषा, शनिवारे हस्त, आ नक्षत्रो आवता मृत्युयोगो उपजेछे.

तिथिवारनक्षत्रजन्य अशुभयोग

ब्रह्मेज्यार्यमवैशाख-हरिवस्वन्त्यभेषु च ।
नन्दायामर्कवारादि-ष्वन्धयोगाः प्रकीर्त्तिताः ॥४८८॥

भा०टी०—रोहीणी पुष्य उत्तराफाल्गुनी विशाखा श्रवण धनिष्ठा रेवती आ ७ नक्षत्रो अनुक्रमे रवि सोम मंगल बुध गुरु शुक्र शनिवारना दिवसे होय अने साथे नन्दा (१-६-११) पैकीनी कोइ तिथि होय तो ते दिने अन्धयोग बने छे एम जाणवुं.

रुद्रसार्पाबुनैर्ऋत्य-पितृभाग्याग्निभेषु च ।
भद्रातिथौ काणयोगाः, सूर्यवारादिषु क्रमात् ॥४८९॥

भा०टी०—रवि सोम मंगल बुध गुरु शुक्र शनिवारना दिवसे अनुक्रमे आर्द्रा आश्लेषा पूर्वाषाढा मूल मघा पूर्वाफाल्गुनी कृत्तिका ए नक्षत्र होय अने भद्रा (२-७-१२) तिथि होय तो काणयोगो उपजे छे

द्विदैवरौद्रमूलेन्द्र-वारिविश्व-पितृद्रुषु ।
जयासु पङ्गुयोगाः स्यु-रर्कवारादिषु क्रमात् ॥४९०॥

भा०टी०—रवि सोम मंगल बुध गुरु शुक्र शनिवारना दिवसोमां अनुक्रमे विशाखा आर्द्रा मूल ज्येष्ठा पूर्वाषाढा उत्तराषाढा-

मघा आ नक्षत्रोनी साथे जया (३।८।१३) तिथि आवे तो पंगु-योगो उत्पन्न थाय छे.

अजपात् पितृवह्नीश-त्वाष्ट्रमित्रवसूडुपु ।
रिक्तासु बधिरा योगाः, सूर्यवारादिषु क्रमात् ॥४९१॥

भा०टी०—रवि सोम मंगल बुध गुरु शुक्र शनिवारे अनुक्रमे पूर्वाभाद्रपदा मघा कृत्तिका आर्द्रा चित्रा अनुराधा धनिष्ठा आ नक्षत्रो तथा रिक्ता (४।९।१४) तिथि होय तो बधिरयोगो उपजे छे.

उद्वाहादिषु सर्वेषु, मंगलेष्वपि निन्दिताः
एते स्युः षड्विधा योगाः, स्वनामफलदायकाः ॥४९२॥

भा०टी०—विवाह आदिमां अने अन्य पण सर्व मंगल-कामोमां आ योगो निंदित गणाय छे, उत्पात, मृत्यु, अंध, काण बधिर, पंगु, आ ६ प्रकारना योगो पोतपोताना नाम प्रमाणे फल देनारा छे.

तिथि-वार-जन्य अशुभयोग

द्वादश्येकादशीनाग-गौरी-स्कन्द-वसुष्वपि ।
नवम्यां दग्धयोगाख्या, भानुवारादितः क्रमात् ॥४९३॥

भा०टी०—रविवारे द्वादशी, सोमवारे एकादशी, मंगलवारे पंचमी, बुधवारे तृतीया, गुरुवारे षष्ठी, शुक्रवारे अष्टमी, शनिवारे नवमी, आ तिथिओ दग्धयोगा गणाया छे.

ग्रहजन्मनक्षत्र-अशुभयोग-

भरणी चित्रा विश्वाख्य-वस्वार्यमनगारिषु ।
पौष्णभेष्वर्कवारादि-ष्वर्कादिग्रहजन्मभम् ॥४९४॥

भा०टी०—भरणी चित्रा उत्तराषाढा धनिष्ठा उत्तराफाल्गुनी ज्येष्ठा रेवती आ ७ नक्षत्रो सूर्यादि ७ ग्रहोनां जन्मनक्षत्रो छे

तेथी रविवारे भरणी, सोमे चित्रा, मंगले उत्तराषाढा, बुधे धनिष्ठा, गुरुवारे उत्तराफाल्गुनी, शुक्रे ज्येष्ठा, तथा शनिवारे रेवती नक्षत्र होय तो ग्रहजन्मनक्षत्र नामक अशुभ योग (ग्रन्थान्तरना मते वज्रमुसल योग) बने छे.

उक्त बन्ने योगोनुं वसिष्ठ फल कहे छे—

अस्मिन् योगद्वये यत् तत्, कृतं कर्म विनश्यति।
तस्माद् योगद्वयं त्याज्यं, मंगलेष्वपि सर्वदा ॥४९४॥

भा०टी०—दग्धायोग तथा ग्रहजन्मनक्षत्रयोगमां करेल जे ते कार्य विनाश पामे छे माटे उक्त बने योगोने सर्वदा शुभ कार्योमां पण त्याग करवा जोइये.

अचिकित्स्य-गदयोग-

कुजार्क्योः सप्तमी षष्ठी, चन्द्रे भानौ चतुर्थिका।
द्वितीया ज्ञेऽष्टमी जीवे, नवमी शुक्रवासरे ॥४९५॥
अचिकित्स्या गदायोगा, मंगलेष्वपि निन्दिता. ॥
भगदराश्मरीकुष्ठ-क्षयरोगप्रदायकाः ॥४९६॥

भा०टी०—मंगल अने शनिवारे सप्तमी, सोमवारे षष्ठी रविवारे चतुर्थी, बुधवारे द्वितीया, गुरुवारे अष्टमी, अने शुक्रवारे नवमी होय त्यारे 'गद' बने छे आ योग मंगल कार्योमां निन्द्य गणाय छे, आ योगमां शुभ कार्य करनारने असाध्य भगंदर, पथरी कोढ, क्षय आदि रोगो उत्पन्न थाय छे.

ग्रहकृत मृत्युयोग

लग्नात् षष्ठाष्टसंस्थे शशिनि सुरगुरौ चापि मन्दे सुतस्थे,
भौमे रन्ध्रस्थितेऽर्के व्ययभवनगते मृत्युगे चन्द्रसूनौ।

द्यूनस्थे दैत्यपूज्ये सति निखिलनृणां मृत्युयोगा भवन्ति ।
त्याज्या दावाग्निरूपाः सततमवितथं मृत्युदा मंगलेषु ॥४९७॥

भा०टी—लग्न थकी चन्द्र तथा गुरु छट्ठे अथवा आठमे स्थाने रह्या होय, लग्नथी पांचमा भवनमां शनि होय, मंगल आठमा स्थानमां होय, सूर्य बारमा भवनमां होय, बुध आठमे होय, शुक्र सातमे होय तो सर्व मनुष्योने माटे दावानल जेवा मृत्युयोगो बने छे. जे खरेखर मंगल कार्योमां मृत्युदायक होय छे, माटे शुभ कार्योमां त्याज्य छे. प्रतिष्ठामां छट्ठ सातमे गुरु अने छट्ठे चन्द्र लीधेल छे, पण विवाहादिक घणा मंगल कार्योमां छट्ठे चन्द्र-गुरु वर्जित छे अने सातमे गुरुने मध्यमबली गण्यो छे. उक्त सर्वग्रहो एक साथे ज उक्त स्थानोमां पडया होय त्यारे ज मृत्युयोग खरो दावानलरूप तो बने छे, छतां ए पैकीना एक बे ग्रहो पण उक्त स्थानोमां होय तो पण अनिष्ठकारक तो छे ज, आ मृत्युयोगनो अपवादक 'अमृतयोग' छे.

अग्निजिह्व-विष-महाशूलयोगाः

सप्त-षष्ठ्यादितिथयः, सोमवारादिभिर्युताः ।
अग्निजिह्वाः सप्तयोगा, मंगले कुलनाशदाः ॥४९८॥
भानुवारादिर्युक्तास्त्वेताः स्युस्तिथयो यदा ।
विषयोगास्त्वमी सप्त, कालकूटविषोपमाः ॥४९९॥
प्रतिपद् बुधवारे च, सूर्यवारे च सप्तमी ।
महाशूलाह्वयो योगो, वर्जनीयो शुभे सदा ॥५००॥

भा०टी०-सोम मंगल बुध गुरु शुक्र शनिना दिवसे अनुक्रमे सप्तमी षष्ठी पंचमी चतुर्थी तृतीया द्वितीया प्रतिपदा ए तिथिओ होय तो आ तिथिवारोना योगथी ७ अग्निजिह्व नामक योगो बने छे, जे मंगलमां होय तो कुलनाशक थाय छे अने उक्त तिथिओ

जो रविवारादिनी साथे होय जेमके रविवारे सप्तमी, सोमवारे षष्ठी, मंगले पंचमी, बुधे चतुर्थी, गुरुअे तृतीया, शुक्रे द्वितीया, शनिवारे प्रतिपदा आवतां सात विषयोगो बने छे जे कालकूट विष जेवा होय छे. बुधवारे पडिवा अने रविवारे सप्तमी होय तो महाशूल योग थाय छे जे शुभकार्यमां वर्जनीय छे

अशनि योग—

यम-मैत्रादितिभाज-पाद्रुद्रत्वाष्ट्र विष्णुषु ।
सत्स्वर्कादिषु वारेषु, मृत्युदस्त्वशनिः शुभे ॥५०१॥

भा०टी०—रविवारे भरणी, सोमवारे अनुराधा, मंगले पुनर्वसु, बुधे पूर्वाभाद्रपदा, गुरुवारे आर्द्रा, शुक्रे चित्रा, शनिवारे श्रवण, नक्षत्र होय तो मृत्युदायक अशनियोग बने छे

हालाहलयोगो—

अर्कवारेऽग्निपंचम्यो', सोमे चित्रा-द्वितीययोः ।
कुजेपूर्णेन्दुरोहिण्योः, सप्तमीयाम्ययोर्बुधे ॥५०२॥
गुरौ मित्रत्रयोदश्योः, षष्ठीश्रवणयोः सिते ।
पौष्णाष्टम्यो शनियुते, योगा हालाहलाभिधाः ॥५०३॥
एषु योगेषु कर्त्तव्य, मारणं शत्रुसंज्ञके ।
विवाहादिषु कार्येषु, नियतं निधनप्रदम् ॥५०४॥

नक्षत्रलाञ्छितयोग-तिथिनक्षत्रोत्थ—

प्रतिपद्वसुनक्षत्रे, पचम्या वह्निभे सति ।
अष्टम्यामजपाद्धिष्ण्ये, दशम्यां ब्रह्मभे यदि ॥५०५॥
द्वादश्या सार्पनक्षत्रे, त्रयोदश्यर्यमर्क्षयोः ।
नक्षत्रलाञ्छितो योगो, देवानामपि नाशदः ॥५०६॥

भा०टी०—रविवारे कृतिका पांचम, सोमे चित्रा बीज, मंगले पूनम रोहिणी, बुधे भरणी सातम, गुरुवारे रोहिणी तेरस, शुक्रे श्रवण छठ, शनिवारे रेवती आठमनो योग थतां तिथिवारनक्षत्रजन्य, 'हालाहल' योगो उपजे छे. आ योगोमां क्रूर कर्म सफल थाय, विवाहादि शुभ कार्योमां आ योगो मृत्युदायक निवडे छे.

प्रतिपदाए पूर्वाषाढा, पंचमीए कृत्तिका, अष्टमीए पूर्वाभाद्रपदा, दशमीए रोहिणी, बारसे आश्लेषा, तेरसे उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र होय तो नक्षत्रलांछित नामा अशुभ योग उत्पन्न थाय छे जे देवोनो पण नाशक छे.

वार-नक्षत्रसमुत्थ अशुभयोग—

द्विदैवमित्रचान्द्रेन्द्र वह्निसार्पभतारकाः ।
रविवारेण संयुक्ता, वर्जनीयाः प्रयत्नतः ॥५०७॥
आषाढद्वयवह्नीज्य-द्विदैवपितृतारकाः ।
सोमवारेण संयुक्ताः, शुभकर्मविनाशदाः ॥५०८॥
ज्येष्ठाजपादश्रवण-धनिष्ठार्द्राहि तोयपाः ।
भौमवारेण संयुक्ताः, सर्वमंगलनाशदाः ॥५०९॥
अश्विनीभरणीमूल-पौष्णवस्वार्द्र तारकाः ।
बुधवारेणसंयुक्ताः, सर्वशोभननाशदाः ॥५१०॥
अर्यमारोहिणीत्वाष्ट्र-धातृचन्द्राख्यतारकाः ।
गुरुवारेण संयुक्ताः, शोभने निधनप्रदाः ॥५११॥

भा०टी०—रविवारे विशाखा, अनुराधा, मृगशिरा, ज्येष्ठा कृत्तिका, आश्लेषा ए नक्षत्रो शुभ कार्यमां प्रयत्नपूर्वक वर्जवां. सोमवार सहित पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, कृत्तिका, पुष्य, विशाखा, मघा आ नक्षत्रो शुभ कार्यमां नाश देनारां थाय छे. मंगले ज्येष्ठा, पूर्वाभाद्र-

पदा, श्रवण, धनिष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, पूर्वाषाढा, ए नक्षत्रो सर्व-मंगल कामोनो नाश करनारा छे. बुधवार सहित जो अश्विनी, भरणी मूल, रेवती धनिष्ठा आ नक्षत्रो होय तो सर्व शुभ कामोने बगाडे छे, गुरुवारे उत्तराफाल्गुनी रोहिणी चित्रा अभिजित् मृगशिरा आ पैकीनु कोइ पण नक्षत्र होय तो शुभ कार्यमां मृत्युकारी निवडे छे.

सार्पद्विदैवमित्रेन्दुरोहिणीपितृतारकाः ।
शुक्रवारेण सयुक्ता, वर्जनीयाश्च मगले ॥५१२॥

उत्तराफाल्गुनीपौष्ण-भेज्यादित्यार्कवैष्णवाः ।
शनिवारेण सयुक्ताः, सर्वशोभनगर्हिताः ॥५१३॥

एपु योगेपु तत्सर्वं, कृत कर्म विनश्यति ।
विवाहे विधवा नारी, व्रती पातककृद् भवेत् ॥५१४॥

वारेशे बलसयुक्ते, योगास्त्वेते बलप्रदाः ।
न किंचिद् दोपदास्तस्मिन्, बलहीने न संशयः ॥५१५॥

भा०टी०—शुक्रवार साथे आश्लेषा विशाखा, अनुराधा, मृगशिरा, रोहिणी, मघा आ नक्षत्रो होय तो मंगलकार्यमां वर्जवां, शनिवारनी साथे उत्तराफाल्गुनी, रेवती, पुष्य पुनर्वसु हस्त श्रवण आ नक्षत्रो सर्व शुभ कार्योमा निन्दित गणाय छे

उक्त वार-नक्षत्र संबन्धी योगोमां करेल कार्य नाश पामे छे, विवाह करवाथी स्त्री विधवा थाय छे, प्रव्रज्या लेवाथी व्रतलेनार पाप कार्यमा पडे छे

उक्त वार नक्षत्रोत्थ अशुभ योगोमा जे अशुभ फल बताव्युं छे ते वारेश ग्रह बलयुक्त होय त्यारेज योगो पोतानु बल बतावे छे पण जो वारेश बलहीन होय तो उक्तयोगो कइ पण दोषकारक थता नथी.

प्रकारान्तरे वारनक्षत्रोत्थ अशुभ योगो—

द्विदैवधातृ वह्न्यर्क-वसुदेवतपैतृकाः ।
अर्कवारेण संयुक्ता, हालाहलविषोपमाः ॥५१६॥

उत्तरात्रयचित्राख्य-द्विदैवाह(ह्व)य तारकाः ।
सोमवारेण संयुक्ताः, कालकूटविषोपमाः ॥५१७॥

शततारा द्विदैवार्द्रा, उत्तराषाढतारकाः ।
भौमवारेण संयुक्ता, गुणघ्ना विषसंज्ञकाः ॥५१८॥

अश्विनीभरणीवह्नि-वसुमूलाख्यतारकाः ।
बुधवारेण संयुक्ता, दोषाः सर्वाह्वयास्त्वमी ॥५१९॥

भचतुष्कं वह्निधिष्ण्या-द्वरुणार्यमतारकाः ।
गुरुवारेण संयुक्ता, दोषा मंगलनाशदाः ॥५२०॥

भा०टी०—विशाखा, अभिजित्, कृत्तिका हस्त धनिष्ठा मघा आ नक्षत्रो रविवार युक्त होय तो हालाहल विषतुल्य थाय छे, उत्तराफाल्गुनी उत्तराषाढा उत्तराभाद्रपदा, चित्रा विशाखा ए सोमवार संयुक्त होय छे त्यारे कालकूट विष तुल्य बने छे, शतभिषा, विशाखा, आर्द्रा उत्तराषाढा नक्षत्रो मंगलवार साथे मले छे त्यारे गुणनाशक विषयोग बने छे. अश्विनी भरणी कृत्तिका धनिष्ठा, मूल नक्षत्रो बुधवार साथे मलीने 'सर्वदोष' नाम धारण करे छे, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा शतभिषा, उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रो गुरुवार साथे होय तो मंगलनाशक दोषो बने छे.

शक्रसार्पमघावह्नि-द्विदैवशततारकाः ।
शुक्रवारेण संयुक्ता, महादोषाह्वयास्त्वमी ॥५२१॥

अर्यमादितिपौष्णार्क-विश्वाषाढाख्यतारकाः ।
शनिवारेण संयुक्ता, दोषा गुणविमर्दकाः ॥५२२॥

भा० टी०—ज्येष्टा, आश्लेषा, मघा, कृत्तिका शतभिषा, शुक्र वार साथे मलता ' महादोष ' योग बने छे. उत्तराफाल्गुनी, पुनर्वसु रेवती, हस्त, उत्तराषाढा, पूर्वाषाढा आ नक्षत्रो शनिवारे होय तो गुणविमर्दक दोषो उत्पन्न थाय छे.

दिवामृत्युदायक तथा रोगदायक नक्षत्र चरणो—

हस्तवासवयोराद्य, विशाखार्द्राद्वितीयकम् ।
तृतीयकमहिर्बुध्न्ये, चान्त्यांशं यममूलयोः ।।५२३।।
दिवा मृत्युप्रदाः पादा, दोषास्त्वेते न रात्रिषु ।
शुभकार्ये प्रसूतौ च, सर्वदा परिवर्जयेत् ।।५२४।।
अश्विसार्पभयोराद्य, द्वितीय यममूलयोः ।
तृतीयं च्युत्तराहर्यो-चौर्थिवन्हेरन्त्यपादकः ।।५२५।।
दिवायोगा इति ख्याताः, शोभने रोगदाः सदा ।
दिवा रोगप्रदास्त्वेते, न तु रात्रौ कदाचन ।।५२६।।
तस्माद्दिवैव संत्याज्या, रोगमृत्युप्रदायकाः ।
दिवापि दोषदा नैव, रवीन्द्वोर्बलयुक्तयोः ।।५२७।।

भा०टी०—हस्त धनिष्ठानो प्रथम चरण, विशाखा आर्द्रानो बीजो चरण, आश्लेषा उत्तराभाद्रपदानो त्रीजो चरण अने भरणी तथा मूलनो चोथो चरण आ नक्षत्र चरणो दिवसे मृत्युदायक छे, रात्रिए दोषकारक नथी, शुभ कार्योमा तथा प्रसवमां आ चरणोनो त्याग करवो, अश्विनी आश्लेषानो प्रथम पायो, भरणी मूलनो बीजो, त्रण उत्तरा तथा श्रवणनो त्रीजो अने स्वाति तथा मृगशिरानो चोथो पायो, आ नक्षत्रोना पायाओ 'दिवारोगप्रद' छे रात्रिमा नहि, माटे दिवसे ज मृत्यु तथा रोगदायक चरणो वर्जवा, जो सूर्य चन्द्र बलयुक्त होय तो ए चरणो दिवसे पण दोषकारक थता नथी

वार नक्षत्रजन्य अशुभयोग कोष्ठक—

सू	सो	मं	बु	गु	शु	श	योगनाम
वि	पूषा	ध	रे	रो	पु	उफा	उत्पातयोग
अनु	उषा	पूषा	स्वा	मृ	आश्ले	ह	मृत्युयोग

तिथि वार नक्षत्रजन्य अशुभयोग कोष्ठक—

सू	सो	मं	बु	गु	शु	श	योगनाम
नन्दा रो	नन्दा पु	नन्दा उफा	नंदा वि	नंदा श्र	नंदा ध	नंदा रे	अंधयोग
भद्रा आ.	भद्रा आश्ले	भद्रा पूषा	भद्रा मू	भद्रा म	भद्रा पूफा	भद्रा कृ	काणयोग
जया वि	जया आ	जया मू	जया ज्ये	जया पूषा	जया उषा	जया भ	पंगुयोग
रिक्ता पूभा	रिक्ता म	रिक्ता कृ	रिक्ता आ	रिक्ता चि	रिक्ता अनु	रिक्ता ध	वधिरयोग

तिथि वार जन्य अशुभयोग—

वार	सू	सो	मं	बु	गु	शु	श	योगनाम
ति	१२	११	५	३	६	८	९	दग्धयोगा
नक्ष.	भ.	चित्रा	उषा	ध	उफा	ज्ये	रे	ग्रहजन्मनक्षत्र

तिथिवार जन्य अशुभयोग—

सू	च	म	बु	गु	शु	श	योगनाम
४	६	७	२	८	९	७	अचिकित्स्यगदयोग
१०	६	७	८	९	१०	११	अग्निजिह्वयोग
६	७	८	९	१०	११	१२	विषयोग
७	०	०	१	०	०	०	महाशूलयोग

अशनियोग—

सू	च	म	बु	गु	शु	श	योगनाम
भ	अनु	पुन	पूभा	आर्द्रा	चि	श्र	अशनियोग

वार-तिथि-नक्षत्र-हालाहलयोगाः—

सू	चं	म	बु	गु	शु	श	योगनाम
कृ ५	चि २	रो १५	भ ७	अनु १३	श्र ६	रे ८	हालाहल

नक्षत्रलांछित योग—

१	५	८	१०	१२	१३	नक्षत्रलांछितयोग
पूषा	कृ	पूभा	रो	आश्ले	उफा	

वारनक्षत्रसमुत्थ अशुभयोगाः—

वारा	नक्षत्राणि
रवि	वि। अनु। मृ। ज्ये। कृ। आश्ले।
सोम	पूषा। उषा। कृ। पु। वि। म।
मंगल	ज्ये। पूभा। श्र। ध। आ। आश्ले। पुषा।
बुध	अश्वि। भर। मू। ध। आर्द्रा। रे।
गुरु	उफा। रो। चि। अभि। मृ।
शुक्र	आश्ले। वि। अनु। मृ। रो। मघा।
शनि	उफा। रे। पु। पुन। ह। श्र।

प्रकारान्तरेण वार-नक्षत्रसमुत्थ अशुभयोगा—

वाराः	नक्षत्राणि
रवि	वि। अभि। ध। ह। कृ। म।
सोम	उफा। उषा। उभा। चि। वि।
मंगल	शत। वि। आर्द्रा। उषा।
बुध	अश्वि। भर। कृ। ध। मू।
गुरु	कृ। रो। मृ। आ। शत। उफा।
शुक्र	ज्ये। आश्ले। म। कृ। वि। श।
शनि	उफा। पुन। रे। ह। उषा। पूषा।

गुणापवाद

वारयोगगुणं हन्ति, योगश्चोत्पातसंज्ञितः।
श्रेष्टयोगं यथा हन्ति, मृत्युयोगो महाबलः ॥५२८॥

शुभयोगं निहन्त्याशु, त्वन्धयोगो महाबलः।
हन्ति कल्याणयोगाख्यं, काणयोगो महाबलः ॥५२९॥

वर्धमानाह्वय योगं, पंगुयोगो निहन्ति वै।
सुधायोगान् निहन्त्येव, बधिरो योगचञ्चलः ॥५३०॥

बलिनं च महायोगं, दग्धयोगो निहन्ति वै।
ग्रहजन्मभयोगोऽयं, पूर्णयोग निहन्ति हि ॥५३१॥

अचिकित्स्यगदयोगः, शंखयोगं निहन्ति वै।
ग्रहैः कृतो मृत्युयोगो, निहन्त्यमृतसज्ञकम् ॥५३२॥

अग्निजिह्वाह्वयो योगः, पद्मयोग निहन्ति हि।
विषयोगो निहन्त्याशु, योगं त्वानन्दसंज्ञकम् ॥५३३॥

भा०टी०—वारयोगना गुणने उत्पातयोग अने श्रेष्ठयोगने महाबल मृत्युयोग हणी नाखे छे. शुभयोगने अंधयोग, कल्याणयोगने काणयोग अने वर्धमानयोगने पंगुयोग नष्ट करे छे सुधायोगने बधिरयोग, बलवान् महायोगने दग्धयोग, पूर्णयोगने ग्रहजन्मनक्षत्रयोग, शंखयोगने अचिकित्स्य गदयोग, अमृतयोगने ग्रहकृत मृत्युयोग, पद्मयोगने अग्निजिह्वयोग अने आनंदयोगने विषयोग निष्फल करी दे छे

महाशूलाह्वयोयोगः, सिद्धियोग निहन्ति वै।
हन्ति पीयूषयोगाख्य, दुष्टयोगो बलाधिकः ॥५३४॥

समसप्तकयोर्जीव–शुक्रयोश्च परस्परम्।
तदा मूढसमो दोषो, शुभकार्यविनाशकृः ॥५३५॥

तुंगमित्रस्वर्क्षगयोस्तयोर्वा तत्तदंशयोः ।
तदा मूढसमो दोषो, नाशं याति न संशयः ॥५३६॥
महाकुलिक योगश्च, वापीयोगं निहन्ति हि ।
नक्षत्रलाञ्छितोयोगः, स्वयोगं हन्ति सर्वदा ॥५३७॥
हन्ति योगं पुण्डरीकं, पक्षछिद्रोन्यनाडिका ।
गुणशेखरयोगं च, योगाः सूर्यादिवारजाः ॥५३८॥
दिवामृत्युप्रदोयोगो, हन्ति धूर्जटिसंज्ञकम् ।
गुणभास्करयोगं तु, दिवारोगप्रदः पुनः ॥५३९॥

भा०टी०–महाशूल्योग सिद्धियोगने अने दुष्टयोग पीयूषयोगने हणे छे. गुरु शुक्रना परस्पर समसप्तक योगनो अस्त समान दोष छे जे शुभकार्यनो नाशक छे, छतां ते जो उच्चना होय, मित्रगृही होय, स्वगृही होय अथवा तो उच्चांश मित्रराश्यंश स्वराश्यंशना होय, तो मूढ समान दोषनो नाश थाय छे. महाकुलिकयोग वापीयोगनो, नक्षत्र लाञ्छितयोग स्वयोगनो अने बलवान् पुण्डरीकयोगने पक्षछिद्रा तिथि घडी, गुणशेखरयोगने सूर्यादिवारोत्थयोगो, धूर्जटीयोगने दिवामृत्यु प्रदनक्षत्रचरणयोग अने गुणभास्करयोगने दिवारोगप्रदयोग निष्फल बनावे छे.

तं चन्द्रशेखरं घ्नन्ति, महाकाणान्धबाधिराः ।
गुणमर्दनयोगोऽयं, हन्ति श्रीवत्ससंज्ञकम् ॥५४०॥
अर्कादिवारसंभूताः, कालकूटविषाह्वयाः ।
घ्नन्ति योगाः सिंहयोगं, गुरुनिन्देव जीवितम् ॥५४१॥
गुणसागरयोगाख्यं, हन्ति कुलिकसंज्ञकः ।
सिद्धांतिथिं हन्ति सम्यक्, पातश्चण्डीशसंभवः ॥५४२॥
विजयाख्यं महायोगं, लत्तादोषो निहन्त्यलम् ।
प्रभंजनं महायोगं, हन्ति संवर्तसंज्ञकः ॥५४३॥

इन्द्रदण्डं महायोगं, कालदण्डो निहन्त्यलम् ।
इन्द्रदण्ड महायोगं, योगस्त्वेकार्गलाह्वयः ॥५४४॥

अभिजित्संज्ञक योगं, हन्ति गण्डान्तसंज्ञकः ।
क्रूरग्रहैर्विद्धदोषो, हन्ति गोधूलिसञ्ज्ञकम् ॥५४५॥

भा०टी०—ते चन्द्रशेखर योगने महाकाण-अध-बधिर-योगो, श्रीवत्सयोगने गुणमर्दनयोग, सिद्धयोगने सूर्यादिवार-सभूत महाकालकूटविषयोगो हणे छे गुरुनिन्दा जेम जीवितने हणे छे गुणसागरयोग ने कुलिकयोग, सिद्धातिथिने चण्डीश-चण्डायुध-पात, विजयमहायोग ने लत्तादोष, प्रभंजनयोगले सवर्त-कयोग, इन्द्रदंडयोगने कालदड योग तथा एकार्गल योग हणे छे अभिजित्योगने गण्डान्तदोषने अने गोधूलिकयोगने पापग्रहविद्ध नक्षत्रदोष हणे छे.

अवमाख्या तिथिर्हन्ति, सौम्यग्रहकृतं शुभम् ।
ग्रहजन्मकृतो दोषो, गुरुं लग्नस्थित शुभम् ॥५४६॥

अकालगर्जितो दोषो, निहन्ति गुणसञ्चयम् ।
अकालवृष्टिदोषोऽपि, तथैव गुणसञ्चयम् ॥५४७॥

भा०टी०—सौम्यग्रहकृत शुभ योगने अवमातिथि हणे छे, ग्रहजन्मनक्षत्रदोष लग्नस्थित शुभगुरुना गुणने हणे छे अने अकालगर्जित तथा अकालवृष्टिना दोषो घणा शुभ गुणोनो नाश करे छे.

दोषापवादा वसिष्ठोक्ता —

उत्पादोयोगज दोष, च(वा)रयोगो निहन्ति च ।
निहन्ति मृत्युयोगं तु, श्रेष्ठयोगो महाबलः ॥५४८॥

अन्धयोगकृतं दोषं, शुभयोगो निहन्ति वै।
काणयोगकृतं दोषं, हन्ति कल्याणसंज्ञकः ॥५४९॥

पंगुयोगं निहन्त्याशु, योगो वै वर्धमानकः।
सुधायोगो निहन्त्याशु, योगं बधिरसंज्ञकम् ॥५५०॥

महायोगो निहन्त्याशु, योगं तु राक्षसाह्वयम्।
दग्धयोगं निहन्त्याशु, महायोगो महाबलः ॥५५१॥

ग्रहजन्मकृतं दोषं, पूर्णयोगो निहन्ति वै।
गदायोगं निहन्त्याशु, शंखयोगो महाबलः ॥५५२॥

भा०टी०—उत्पातयोगना दोषने वारयोग हणे छे, मृत्युयोगने महाबली श्रेष्ठयोग हणे छे, अंधयोगना दोषने शुभयोग हणे छे, काणयोगना दोषने कल्याणयोग हणे छे, पंगुयोगना दोषने वर्धमानयोग दूर करे छे, बधिरयोगने सुधा (पीयूष) योग दूर करे छे, राक्षसने महायोग हणे छे, दग्धयोगने पण महायोग प्रभावहीन करे छे, ग्रहजन्मनक्षत्रना दोषने पूर्णयोग दूर करे छे अने गदायोगकृत दोषने शंखयोग मटाडी दे छे.

अग्निजिह्वाह्वयं योगं, पद्मयोगो निहन्ति वै।
विषयोगं निहन्त्याशु, योगश्चानन्दसंज्ञकः ॥५५३॥

भान्तरालकृतं दोषं, सिद्धियोगो निहन्ति वै।
योगान्तरालकं दोषं, हन्ति सिद्धातिथिः स्वयम् ॥५५४॥

महाशूलाह्वयं दोषं, सिद्धियोगो निहन्ति वै।
दुष्टयोगं निहन्त्याशु, योगः पीयूषसंज्ञक ॥५५५॥

महाकुलिकयोगं तु, वापीयोगो निहन्ति वै।
हालाहलाह्वयं नामा-ऽमृतयोगो निहन्ति वै ॥५५६॥

पक्षछिद्रोक्तनाडीनां, दोष हन्ति सदा तथा।
पुण्डरीकाह्वयो योगः, पिनाकी त्रिपुरं यथा ॥५५७॥
भानुवारादिसम्भूतान्, पापयोगान् निहन्ति वै।
गुणशेखरयोगोऽयं, राघवो रावण यथा ॥५५८॥

भा०टी०—अग्निजिह्व तथा त्रिपयोगने पद्मयोग हणे छे, त्रिपयोगने आनंदयोग हणे छे, नक्षत्रसंधिकृत दोषने सिद्धियोग अने योग सधिदोषने सिद्धा तिथि पोते हणे छे, महाशूल दोषने सिद्धियोग दूर करे छे, दुष्टयोगने पीयूषयोग, महाकुलिकयोगने तापीयोग अने हालाहलयोगने अमृतयोग दूर करी दे छे, पक्षछिद्रातिथिओनी त्रिपघटीओना दोषनो पुडरीकयोग नाश करे छे जेम शिव त्रिपुरनो, रविवारादिजन्यपापयोगोने[१] गुणशेखरयोग हणे छे जेम रामचन्द्र रावणने.

दिवामृत्युप्रद योग, हन्ति धूर्जटिसज्ञकः।
दिवैव रोगद हन्ति, गुणभास्करयोगराट् ॥५५९॥
महाहालाहल हन्ति, गुणभास्कर एव च।
चन्द्रशेखरयोगश्च, महाकाणान्धवाधिरान् ॥५६०॥
गुणमर्दनयोग च, हन्ति श्रीवत्ससज्ञकः।
सिंहयोगो निहन्त्याशु, वारजान् कालकूटकान् ॥५६१॥
उपग्रहाह्वय दोषं, सिद्धियोगो निहन्ति वै।
गुणसागरयोगोऽय, हन्ति कुलिकसज्ञकम् ॥५६२॥
शुभयोगो निहन्त्याशु, विधुदोषं महानलम्।
चण्डायुद्ध सचण्डीश, हन्ति सिद्धातिथिर्यथा ॥५६३॥
विजयाख्यो महायोगो, लत्तादोष निहन्ति वै।
यमदण्डाह्वयो योगो, हन्ति ककचसज्ञकम् ॥५६४॥

---

१ वारनक्षत्रसमुत्थ अशुभयोगोने

प्रभंजनो महायोगो, हन्ति संवर्तसंज्ञकम् ।
इन्द्रदण्डो बली हन्ति, कालदण्डं महाबलम् ॥५६५॥

भा०टी० दिवामृत्युदयोगने धूर्जटी, दिवारोगदयोगने गुणभास्कर, महाहालाहलने गुणभास्कर, महाकाणअंधबधिरयोगोने चन्द्रशेखर, गुणमर्दनयोगने श्रीवत्स, वारजन्यकालकूटयोगोने सिंहयोग, उपग्रहयोगने सिद्धियोग, कुलिकने गुणसागर, चन्द्रमहादोपने शुभयोग, चण्डीश-चण्डायुधने सिद्धातिथि, लत्तादोपने विजययोग, क्रकचयोगने ब्रह्मदण्डयोग अने बलवान् कालदंडयोगने इंद्रदण्ड हणे छे.

एकार्गलं महादोषं, इन्द्रदण्डो निहन्ति वै ।
गण्डान्तदोषमखिल-मभिजियोगसंज्ञकः ॥५६६॥
हन्ति गोधूलिको योगो, विद्धभं पापखेचरैः ।
अवमाख्यातिथेर्दोषं, हन्ति केन्द्रगतो गुरुः ॥५६७॥
ग्रहजन्माह्वयं योगं, हन्ति केन्द्रगतः शुभः ।
त्रिद्युस्पृग्यामदोषं स हन्ति केन्द्रगतः शुभः ॥५६८॥
अकाल गर्जितं दोषं, हन्ति केन्द्रगतः शुभः ।
अकाल वृष्टिजं दोषं, गुरुर्हन्ति महाबलः ॥५६९॥
दग्धलग्नोद्भवं दोषं हन्ति लाभगतः कुजः ।
शून्यधिष्ण्योद्भवंदोषं, स हन्ति शत्रुसंस्थितः ॥५७०॥
दोषं शून्यतिथेर्हन्ति, लाभगः सौम्यखेचरः ।
त्रिद्युस्पृगाख्यदोषं च, हन्ति सिद्धा तिथिः स्वयम् ॥५७१॥

भा०टी—एकार्गल महादोपने इन्द्रदण्ड योग हणे छे, सर्वप्रकारना गंडांतने अभिजिद्‌योग, पापविद्धनक्षत्रने गोधूलिकयोग, अवम (क्षय) तिथिना दोषने केन्द्रगतगुरू, ग्रहजन्म नक्षत्रयोगने केन्द्रगत शुभग्रह, तिथिवृद्धिना दोपने केन्द्रस्थित शुभग्रह, अकाल

गर्जित दोपने केन्द्रगत शुभ ग्रह, अकाल वृष्टि दोपने बलवान गुरू, दग्ध लग्नना दोपने लाभगत मगल, शून्य नक्षत्र सम्बन्धी दोपने छट्ठा स्थाने रहेल मंगल, शून्यतिथिना दोपने लाभस्थित सौम्यग्रह अने वृद्ध तिथिना दोपने सिद्धातिथि पोते दूर करे छे.

करण

करणो बे प्रकारना होय छे चर करण अने स्थिर करण। बव बालवादि विष्टि पर्यन्त ७ करणो चर छे, आ करणोनो आरंभ शुक्ल प्रतिपदाना उत्तरार्धथी थाय छे अने अेक मासमां आ करणो ८–८ वार आवे छे, शकुनि आदि ४ करणो स्थिर कहेवाय छे, अे करणो तिथि प्रतिबद्ध होइ मासमां अेक वार ज आवे छे, कृष्णाचतुर्दशीना उत्तरार्धमा शकुनी १, अमावास्याना पूर्वाधमा चतुष्पद २, तथा अेना उत्तरार्धमा नाग ३ अने शुक्ल प्रतिपदाना पूर्वार्धमां किंस्तुघ्न ४, आ प्रमाणे च्यार करणो नियत स्थान स्थित होइ स्थिर वा ध्रुव कहेवाय छे बवादि करणो पण वास्तवमा तो तिथिप्रतिबद्ध ज छे, बव शुक्ल प्रतिपदाना उत्तरार्धमां, बालव द्वितीयाना लव पूर्वार्धमा, कौलव द्विती-याना उत्तरार्धमा, तैतिल तृतीयाना पूर्वाधमा, गर तृतीयाना उत्तरा धमा, वणिज चतुर्थीना पूर्वार्धमां अने विष्टि चतुर्थीना उत्तरार्धमा पूर्ण थइ शुक्लपचमीना पूर्वार्धथी फरि बवादिनी आवृत्ति थाय छे, आम आ सात करणोनी कृष्ण चतुर्दशीना पूर्वार्ध पर्यन्त आठ आ-वृत्तिओ होवाथी आ ७ करणोने चरसंज्ञा अपाइ छे, बवादि ६ करणो सर्व कार्योमां शुभ गणाय छे, विष्टि अशुभ छे ज्यारे शकुनि प्रमुख ४ स्थिर करणो मध्यम छे, मध्यम पैकीना नाग-चतुष्पद अशुभ जेवांज नेष्ठ छे.

करणसम्बन्धी वसिष्ठनु निरूपण आ प्रमाणे छे–

आद्य ववं बालवकौलवाख्ये,
ततैतिल तद् गरसंज्ञकं च।

वणिक् च विष्टिः करणानि सप्त,
चराणि यानि क्रमशो भवन्ति ॥५७२॥

भा०टी०— पहेलुं बव ते पछी बालव, कौलव, तैतिल गर वणिज अने विष्टि-भद्रा ए ७ करणो छे जे चर होय छे.

तिथ्यर्द्धमाद्यं शकुनिर्द्वितीयं, चतुष्पदं नागकसंज्ञितं च।
किंस्तुघ्नमेतान्यचराणि कृष्ण-चतुर्दशीपश्चिमभागतः स्युः ॥५७३॥

भा०टी०— अचर करणोमां प्रथम शकुनि, बीजुं चतुष्पद, त्रीजुं नाग अने चोथुं किंस्तुघ्न आ स्थिर करणोनी प्रवृत्ति कृष्णचतुर्दशीना उत्तरार्धथी थाय छे.

करणेश—

इन्द्रो विधाता मित्राख्य-स्त्वर्यमा भूर्हरिप्रिया।
कीनाशश्चेति तिथ्यर्द्ध-नाथाः स्युः क्रमतस्त्वमी ॥५७४॥

कलिश्च रक्षो भुजगः, पवनश्च स्थिरेश्वराः॥
विज्ञेयाः सर्वकार्येषु, तिथ्यर्धेशबवादिषु ॥५७५॥

भा०टी०— इंद्र विधाता मित्र अर्यमा भूमि लक्ष्मी अने यम ए अनुक्रमे बवादि ७ चर करणोना स्वामी छे, अने कलि, राक्षस, सर्प अने पवन ए ४ स्थिर करणोना स्वामी जाणवा, विहित नक्षत्रना अभावे ते नक्षत्रना स्वामीवाला करणमां ते कार्य करवुं. उदाहरण-अनुराधा विधेय कार्य करवुं छे पण ते दिवसे अनुराधा नथी, आवी स्थितिमां ते दिवसे जो मित्रस्वामिक कौलव करण होय तो ते अनुराधानुं कार्य करे छे, करणोना स्वामिओ बतावबानुं एज प्रयोजन छे.

करणविधेय कार्यों—

चरस्थिरद्विजहित-पशुधान्याकरादि यत्।
धातुवादवणिग्धान्य-कर्म सर्वं बवे हितम् ॥५७६॥
मांगल्योत्सवपानादि-वास्तुकर्माखिलं च यत्।
नृपाभिषेक-संग्राम-कर्मसिद्ध्यति बालवे ॥५७७॥
गजोष्ट्राश्वायुधोद्यान-विपिनाद्यखिलं च यत्।
बालवोक्ताखिलंकर्म, कौलवे सिध्यति ध्रुवम् ॥५७८॥
सन्धिविग्रहयात्रादि, क्रयविक्रयकर्म यत्।
तडागकूपखनन, कार्यं तैतिलसञ्ज्ञके ॥५७९॥
प्राकारोद्धरण सर्वं, जलकर्माखिलं च यत्।
सर्वतिथ्यर्धकथित, कर्म सर्वं गरे हितम् ॥५८०॥

भा०टी०— चर, स्थिर, ब्राह्मण हितकर्म, पशुकर्म, धान्यकर्म, आकर कर्मादि, धातुवाद, वाणिज्य, धान्यकर्म अे सर्व कार्यो बवमा करवा हितकर छे, मांगल्य, उत्सव, पानादि, सर्व वास्तुकर्म, राज्याभिषेक, युद्धकर्म, अे बालवमां करवाथी सिद्ध थाय छे, हाथी, ऊंट, अश्व, आयुध, उद्यान, उपवन संबन्धी कार्यो अने बालवमां कहेल सर्व कार्यो कौलवमा सिद्ध थाय छे, संधि, विग्रह, यात्रादि, क्रय विक्रय कर्म, तलाव कूवा खोदवा अे सर्व तैतिलमां करवा, प्राकारनो उद्धार आदि, सर्व जलकर्म, अने सर्व करणोमा करवानां कार्यो गरमां करवा हितकर छे

मूलकर्माखिल धातु-जीवकर्माखिलं च यत्।
उक्तानुक्ताखिल कर्म, ध्रुवं वणिजि सिध्यति ॥५८१॥
वधबन्धविषाग्न्यस्त्र, छेदनोच्चाटनादि यत्।
तुरङ्गमहिषोष्ट्रादि-कर्म विष्ट्यां च सिद्ध्यति ॥५८२॥

न कुर्यात्मंगलं विष्ट्यां, जीवितार्थी कदाचन।
कुर्वन्नज्ञस्तदा क्षिप्रं, तत् सर्वं नाशतां व्रजेत् ॥५८३॥
तस्मात्त्याज्या परीता वा, विपरीतापि मङ्गले।
तन्माहात्म्यमजानन्यो, भद्रायां यदि मंगलम् ॥५८४॥
कुर्याद्वंशक्षयं तस्य, स भवेन्नष्टमंगलः।
तस्मात् तत्र शुभं कर्म, मनसापि न कारयेत ॥५८५॥

भा०टी०—मूल-धातु-जीव संबन्धी सर्व कार्यो, कहेल अने नहि कहेल सर्वकार्यो वणिज करणमां करवाथी सिद्ध थाय छे. वध, बंधन, विषप्रयोग, अग्नि, अस्त्र, छेदन, उच्चाटनकर्म अश्व-महिष-कर्म अने उष्ट्रादिकर्म भद्रामां करवाथी सिद्ध थाय छे, जीवनना अभिलाषीए भद्रामां कोइ पण मंगलकर्म न करवुं, जे अज्ञानी भद्रामां मंगलकार्य करे छे ते नाश पामे छे. माटे भद्रा परीत होय के विपरीत पण मंगलमां एनो त्याग करवो, भद्रानुं माहात्म्य न जाणतो जे माणस भद्रामां मंगल करे छे तेना वंशनो क्षय थाय छे अने तेना मंगलकार्यो नाश थाय छे, माटे भद्रामां शुभ कर्म करवानुं मनथी पण न चिन्तववुं.

भद्राना अंग विभागो

नाड्यः पञ्च मुखे चैका, गले रुद्राश्च वक्षसि।
नाभौ तद्‌घटिका वेदाः, षण्नाडिकाश्च तत्कटिः ॥५८६॥
पुच्छं तन्नाडिकास्तिस्रः, पुच्छान्तं मुखतः क्रमात्।
विष्टेरङ्गविभागोऽयं, फलं वक्ष्ये पृथक् पृथक् ॥५८७॥

कार्यस्य नाशो वदने गले तु,
मृत्युः सदा वक्षसि चार्थहानि।
नाभौ च विघ्नं त्वथ बुद्धिनाशः,
कट्यां जयः संयति पुच्छभागे ॥५८८॥

भा०टी०—भद्रानी आद्य घडीओ तेनु मुख अने १ घडी गलु जाणवुं, ए पछीनी ११ घडीओ छाती, ४ घडीओ तेनी नाभि, ६ घटिकाओ भद्रानो कटिभाग अने ३ घडीओ भद्रानुं पुच्छ छे, आम मुखथी पुच्छ पर्यन्त अनुक्रमे भद्रानो ए अगविभाग छे, हवे आ अगविभागोनु भिन्न भिन्न फल कहीश, मुखविभागनी पाच घडीओमा कार्य करता ते कार्यनो नाश थाय छे, गलानी घडीमां कार्य कर्तानुं मरण थाय छे, हृदयविभागनी ११ घडीओमां धनहानि थाय छे, नाभिविभागनी ४ घडीओ विघ्न करनारी छे, कटिविभागनी ६ घडीओमां कार्य करता बुद्धिभ्रंश थाय छे, ज्यारे पुच्छ विभागनी त्रण घडीओमा युद्धमा विजय प्राप्त थाय छे.

भद्राना तिथिसंबन्ध विषे आरंभसिद्धि-

रात्रौ चतुर्थ्येकादश्यो-रष्टमीराकयोर्दिवा।
भद्रा शुक्ले तिथौ कृष्णे, त्वेकैकोने यथाक्रमात् ॥५८९॥

भा०टी०—शुक्लपक्षनी चतुर्थी तथा एकादशीए भद्रा तिथिना उत्तरार्धमा एटले रात्रिविभागमा अने शुक्ल अष्टमी तथा पूर्णिमाए भद्रा दिवसे होय छे, कृष्णपक्षमा उक्त तिथिओना अकमाथी एकडो ओछो करता जे सख्या रहे तेटलामी तिथिमा पूर्वोक्त प्रकारे अनुक्रमे भद्रा रात्रिदिवसना विभागे जाणवी. जेम के कृष्ण तृतीया दशमीए रात्रिमा अने कृष्ण सप्तमी चतुर्दशीए दिवसभागे भद्रा होय छे.

दिशा कालपरत्वे भद्रानुं संमुखत्व-

भद्रेन्द्रा१४ऽष्टा८ऽश्व७तिथ्याग्नि१५-४,
दशेशाग्नि १०-११-३ मिते तिथौ।
दिग्-यामाष्टकयोर्नेष्टा,
संमुखी पृष्ठतः शुभा ॥५९०॥

भा०टी०—चतुर्दशी अष्टमी सप्तमी पूर्णिमा चतुर्थी दशमी एकादशी तृतीया आ तिथिओमां भद्रा पूर्वादिदिशाओमां प्रथमादि

प्रहरोमां संमुख होय छे जे नेष्ट होय छे, एथी विपरीत दिशामां भद्रानी पूठ होइ ते दिशामां प्रयाणादि करवामां ते अशुभ गणाती नथी, उदाहरण रूपे चतुर्दशीना प्रथम पहरमां भद्रानुं मुख पूर्वदिशामां, अष्टमीए द्वितीय प्रहरे भद्रानुं मुख अग्निकोणमां, सप्तमीए त्रीजा पहोरमां भद्रानुं मुख दक्षिण दिशामां, पूर्णिमाए दिवसना चोथा पहोरमां भद्रानुं मुख नैऋत्यकोणे, चतुर्थीए पांचमा पहोरे भद्रानुं मुख पश्चिममां, दशमीए छठा पहोरमां भद्रानुं मुख वायव्यकोणमां, एकादशीए सातमा पहोरे भद्रानुं मुख उत्तरमां अने तृतीयाए आठमा पहोरे भद्रानुं मुख ईशानकोणमां होय छे. जे दिशामां जे प्रहरमां भद्रानुं मुख होय छे तेथी पांचमी दिशामां ते पहोरथी पांचमा पहोरे भद्रानुं पुच्छ होय छे, ए फलितार्थ छे.

तिथिपरत्वे भद्राना पुच्छभागनो समय

व्यवहारसमुच्चये-

दशम्यामष्टम्यां प्रथमघटिकापञ्चकपरं।
हरिद्युः सप्तम्यां द्विदशघटिकान्ते त्रिघटिकं।
तृतीया-राकायां खयम (२०) घटिकाभ्यः परभवं ।
शुभं विष्टेः पुच्छं शिवतिथि चतुर्थ्योस्तु विरमे ॥५९१॥

भा०टी०—दशमी अने अष्टमीए प्रथमनी पांच घडीओ पछीनी त्रण घडीओ भद्रानुं पुच्छ, एकादशी सप्तमीए बार घडीओ[1] पछीनी ३, तृतीया पूर्णिमाए २० घडीओ[2] पछीनी ३ घडीओ भद्रानुं पुच्छ होय छे अने चतुर्दशी-चतुर्थीए समाप्तिनी ३ घडीओ भद्रानुं पुच्छ गणाय छे.

---

१ आरंभसिद्धिमां १३ घडीओ छे, २ आरंभसिद्धिमां २१ घडी लखेल छे.

आचार्य लल्ल भद्राना पुच्छनु महत्त्व जणावे छे

शुभाऽशुभानि कार्याणि, यान्यसाध्यानि भूतले।
नाडीत्रयमिते पुच्छे, भद्रायास्तानि साधयेत् ॥५९२॥

भा०टी०— भूमंडल उपर शुभ अगर अशुभ जे जे असाध्य कार्यो छे ते त्रिघटी परिमित भद्रापुच्छमां करवाथी सिद्ध थाय छे.

भद्रामां सिद्ध थयेल कार्य अंते नाश पामे छे–

यदि भद्राकृत कार्यं, प्रमादेनापि सिध्यति।
मासे तु षोडशे मासे, समूलं तद्विनश्यति ॥५९३॥

भा०टी०—जो भद्रामा करेल कार्य भद्राना प्रमादवशे सिद्ध थइ जाय तो पण सोलमो महिनो लागता ते समूल नष्ट थइ जाय छे.

भद्रामा करवाना कार्यो विषे नारचंद्र टिप्पणक

दाने चाऽनशने चैव, घात-पातादिकर्मणि।
खराऽश्वप्रसवे श्रेष्ठा, भद्राऽन्यत्र न शस्यते ॥५९४॥

भा०टी०— दान आपवु, अनशन करवु, घात-पातादि कार्य करवु, गधेडी-घोडीनो प्रसव थवो, आ बधा कार्योमा भद्रा शुभ छे, बीजा कामोमा शुभ गणाती नथी.

भद्राना परिहारना अनेक प्रकारो-लल्लनोमत

दिवा परार्धजा विष्टिः, पूर्वार्धोत्था यदा निशि।
तदाविष्टिः शुभायेति, कमलासनभाषितम् ॥५९५॥

भा०टी०—तिथिना उत्तरार्धमा आवती भद्रा दिवसे अने तिथिना पूर्वार्धमा आवती भद्रा जो रात्रिए आवती होय तो ते भद्रा शुभने माटे छे एम ब्रह्माजीनुं कथन छे.

सुरभे वत्स! या भद्रा, सोमे सौम्ये सिते गुरौ।
कल्याणी नाम सा प्रोक्ता, सर्वकार्याणि साधयेत् ॥५९६॥

भा०टी०—हे वत्स ! देवगणा नक्षत्रमां अने सोम बुध, गुरू शुक्रवारे जे भद्रा होय तेने 'कल्याणी भद्रा' कही छे तेमां सर्व कामो करवां.

स्वर्गेऽजोक्षैणकर्केष्वधः स्त्रीयुग्मधनुस्तुले ।
कुंभमीनालिसिंहेषु, विष्टिर्मर्त्येषु खेलति ॥५९७॥

भा०टी०-मेष, वृषम, मकर, कर्कना चंद्रमां भद्रा स्वर्गमां, कन्या मिथुन धन तुलाना चंद्रमां भद्रा पातालमां अने कुंभ मीन वृश्चिक सिंहना चंद्रमां भद्रा मनुष्य लोक खेले छे, तात्पर्य ए छे के जे काले भद्रा जे लोकमां वसती होय छे ते काले ते लोकमां ज भद्रा पोतानुं शुभाशुभ फल आपे छे, आथी फलित थयुं के मनुष्य लोकमां सिंह वृश्चिक, कुंभ, मीनना चन्द्रमां ज भद्रानो विचार करवो रह्यो, स्वर्ग पातालमां भद्रावास होय त्यारे मनुष्य लोकमां ए पोतानो प्रभाव बतावी शकती नथी.

कालपरक भद्रानां बे स्वरूपो—

सर्पिणी वृश्चिकी भद्रा, दिवारात्र्योः स्मृताः क्रमात् ।
सर्पिण्या वदनं त्याज्यं, वृश्चिक्याः पुच्छमेव च ॥५९८॥

भा०टी०—दिवस रात्रिनी भद्रा अनुक्रमे सर्पिणी (सापण) अने वृश्चिकी (विछुडी) कहेल छे, माटे सापणनुं मुख वर्जवुं अने विंछुडीनुं पुंछडुं वर्जवुं, आनो तात्पर्यार्थ अे छे दिवसमां भद्रा क्रमागत होय के अक्रमागत होय पण तेना मुख विभागनी घडीओ तो अवश्य वर्जवी ज जोइये, अेज प्रमाणे रात्रिमां भद्राना पुछडानो त्याग अवश्य करवो, भले ते तिथिना पूर्वार्ध प्रतिबद्ध होय के परार्ध प्रतिबद्ध.

करणो विषे आरंभसिद्धिकारनो उपसंहार—

दशाऽमूनि विचिष्टीनि, दिष्टान्यखिलकर्मसु ।
रात्र्यहर्व्यत्ययाद् भद्रा, ऽप्यदुष्टैवेति तद्विदः ॥५९९॥

भा०टी०— भद्राविनानां आ दश करणो सर्वकार्योमा विहित छे, अने रात्रि दिवसना विपर्यासथी भद्रा पण निर्दोष छे अेम ज्योतिषशास्त्रना वेत्ताओ कहे छे.

लग्नबल प्रकरण–

लग्नविधेय कार्यों–

अभिषेको नृपतीनां, साहसकर्मादिवैरोधम् ।
आकरधातुवादाद्यखिलं मेषोदये कार्यम् ॥६००॥
स्थिरचरकार्यं त्वखिलं, विवाहवास्त्वादि कन्यकावरणम् ।
क्षेत्रारम्भणमखिलं, भूषणशिल्पादि कारण वृषभे ॥६०१॥
मेषवृषोक्तं कर्म, गजतुरगोष्ट्रादिक च गोकर्म ।
अविकलमाहिषमेष–क्षितिपतिसेवादिक मिथुने ॥६०२॥
शान्तिकपौष्टिकमाङ्गल–जलबन्धनमोक्षमखिलजलकर्म ।
दैविककूपतडागशिल्पोद्वाहादि कर्कटे कार्यम् ॥६०३॥
परयोगो नृपसेवा, कृषिकर्मवणिग् महाहवाद्यखिलम् ।
स्थिर कर्माखिलवास्तु-निवेश शिल्पादि सिंहभे कार्यम् । ६०४॥

भा०टी०—राजाओनो अभिषेक, साहस कर्म आदि, विरोधकार्य, खाण, धातुवाद, आदि सर्व मेष लग्नमा करवुं. सर्वस्थिर चरकार्य, विवाह, वास्तु आदि, कन्यावरण, क्षेत्रारंभ, सर्वभूषण तथा शिल्पादिकार्य वृषभ लग्नमा करवु मेष वृषमा करवानुं कार्य, हाथी घोडा उंट गाय बलद सम्बन्धी, संपूर्ण माहिषकर्म, मेषकर्म, राजसेवादिकार्य मिथुन लग्नमा करवु, शांतिक पौष्टिक मांगल्यकर्म जलबन्धन अने जलमोक्षण आदि सपूर्ण जलकर्म, दैविक, कूप, तलाव, शिल्प, विवाह आदि कर्कमा करवुं. विरोधी मिलन, राजसेवा, कृषिकर्म, वाणिज्य, युद्ध आदि तथा सर्व स्थिरकर्म, सर्व वास्तुनिवेश, शिल्पादि कर्म, सिंह लग्नमां करवु,

भूषणमङ्गलकार्यं-मौषधविज्ञानपुण्यशिल्पादि।
उद्वाहशान्तिपौष्टिक-गजतुरगोष्ट्रादि कन्यायाम् ॥६०५॥
कन्योक्ताखिलकार्यं, तुलादिमानानि भाण्डकर्माणि।
यात्रावास्तुविधानं, तौलिनि कृषिकर्मवाणिज्यम् ॥६०६॥
साहसदारुणचित्रक-लेखकवास्तूग्रशास्त्रकर्माद्यम्।
आहवकृषिवाणिज्यं, क्षितिपतिवादश्च वृश्चिके कार्यम्॥
॥६०७॥
शान्तिक पौष्टिक शिल्पिक-सन्धानाश्वादिनृत्यगीताद्यम्।
राजोपकरणमखिलं, भूषणवास्त्वादि चापभे सेवा ॥६०८॥
शंबरमोचनबन्धन-भूषणरत्नादि शिल्पधान्यादि।
क्रयविक्रयमखिलं यद्, रिपुहनोद्योगमाहवं मकरे ॥६०९॥

भा०टी०—आभूषण मंगल औषध विज्ञान पुण्य शिल्प आदिनां कार्यो, विवाह शांतिक पौष्टिक कर्मो, हाथी घोडा उंट संबंधी कार्य कन्यामां करवुं. कन्या लग्नमां करवानां सर्व कार्यो, तुलादिमानो, भांडकर्मो, यात्रा, वास्तुनिर्माण, कृषिकर्म, वाणिज्यकर्म ए तुलालग्नमां करवां. साहसनां कामो, दारूणकर्म, चित्रकार लेखक वास्तु संबन्धी कामो, उग्र शास्त्रकर्म आदि, युद्ध कृषि वाणिज्य अने राजकीय विवाद वृश्चिकमां करवां. शान्तिक पौष्टिककर्म, शिल्पिकार्य, संधान, अश्वादिनृत्य, गीत आदि, सर्व राजोपकरणो, भूषणकर्म, वास्त्वादि कर्मो धनुलग्नमां करवां. जल छोडवुं, जल रोकवुं, भूषण रत्नादिधारण, शिल्प, धान्यादिकार्यो, क्रय विक्रय संबन्धी सर्वकार्यो, शत्रु उपर घावो करवानो उद्यम, युद्ध इत्यादि कार्यो मकर लग्नमां करवां.

युद्धोपकरणभूषण-जलधान्यशिल्पाश्च गोधनाद्यं यत्।
पण्यासवपुर नगर-प्रवेशनं कर्म घटलग्ने ॥६१०॥

यज्ञलबन्धन-मोचन-जलयात्रारत्नभूषण कर्म ।
रथतुरगेभपशूनां, कार्यं मीनोदये शिल्पम् ॥६११॥

भा०टी०—युद्धोपकरण, आभूषण, जल, धान्य, शिल्प, गोधनादिकार्य क्रयाणक मदिरासंधान नगर पुरप्रवेशकर्म कुंभलग्नमा करवु. जलने बांधवु छोडवुं, जलयात्रा, रत्नभूषणकर्म, रथकार्य, घोडा हाथी आदि पशुओ सबन्धी कार्य अने शिल्पकार्य मीन लग्नमां करवु.

पापयुतेक्षितरहिता, मेषाद्याश्चोक्तफलदाः स्युः ।
नो चेदुक्तफल वै, दातुं शक्ता भवन्ति न कदाचित् ॥६१२॥
सपूर्णफलदमादौ, विलग्नमध्येऽथ मध्यफलम् ।
अन्ते तुच्छफल सर्वं त्रैव विचिन्तयेद्धीमान् ॥६१३॥

भा०टी०—उपर्युक्त मेषादि लग्नो जो पापयुक्त न होय, पापदृष्ट न होय तो ज उक्त फल आपी शके छे, पण पापयुक्त-दृष्ट होय तो कहेल फल आपवा कदापि समर्थ थइ शकतां नथी, लग्न पोताना प्रथम द्रेष्काणमा पूर्ण फल आपनार होय छे, द्वितीय द्रेष्काणमा मध्यफल अने तृतीय द्रेष्काणमां ते ज लग्न तुच्छफल अल्पफल आपे छे मारे पश्च वर्ग के षड्वर्ग शुद्धनवमांश मलतो होय तो ज लग्ननो तृतीय द्रेष्काण लेवो अने लग्ननो अन्त्य नवमांश तो वर्गोत्तम होय तो ज लेवो अेवु शास्त्र विधान छे.

लग्न-प्रकृति-

चर स्थिर द्विस्वभावा, मेषाद्या राशयः क्रमात् ।
क्रूरकर्मणि सक्रूराः, शुभे ग्राह्याः शुभान्विताः ॥६१४॥

भा०टी०—मेषादि बार राशिओ अनुक्रमे चर १ स्थिर २ द्विस्वभाव ३ चर ४ स्थिर ५ द्विस्वभाव ६ चर ७ स्थिर ८ द्विस्वभाव ९ चर १० स्थिर ११ द्विस्वभाव १२ छे, क्रूर कार्यमा क्रूरग्रहा

ध्यासित अने शुभ कर्ममां शुभ ग्रहाध्यासित राशिओ ग्रहण करवी जोइये.

लग्नराशिपतिओ—

मेषादीशाः कुजः १ शुक्रो २.
बुध ३ श्चन्द्रो ४ रवि ५ र्बुधः ६।
शुक्रः ७ कुजो ८ गुरु ९ र्मन्दो,
मन्दो ११ जीव १२ इति क्रमात् ॥ ६१५ ॥

भा०टी०—मेषादिराशिना लग्नोना स्वामी अनुक्रमे आ प्रमाणे छे-मेष १ मंगल, वृषभ २ शुक्र, मिथुन ३-बुध, कर्क ४ चन्द्र, सिंह ५ सूर्य, कन्या ६-बुध, तुला ७-शुक्र, वृश्चिक ८ मंगल. धनु ९ गुरू, मकर १० शनि, कुंभ ११ शनि, मीन १२-गुरू.

राशिपतिओना शत्रुओ अने मित्रो—

कुजस्य ज्ञो रिपुर्मध्यौ, शनिशुक्रौ परेऽन्यथा।
कवेरमित्रौ मित्रेन्दू, मित्रे ज्ञार्कौ समावुभौ ॥ ६१६ ॥
बुधस्य मित्रे शुक्रार्कौ, शत्रुरिन्दुः समाः परे ॥
चन्द्रस्यार्कबुधौ मित्रे, कुजगुर्वादयः समाः ॥ ६१७ ॥
रवेः शुक्रशनी शत्रू, ज्ञः समः सुहृदः परे।
जीवस्यार्कात्त्रयो मित्रा-ण्यार्किर्मध्यः परावरी ॥६१८॥
मन्दस्य ज्ञसितौ मित्रे, गुरुर्मध्यः परेऽरयः।
तत्कालसुहृदो द्वि २ त्रि ३,
सुख ४ लाभा ११ न्त्य १२ कर्म १० गाः ॥६१९॥

भा०टी०—मंगलनो शत्रु बुध, सम शनि शुक्र अने शेष मित्रो. शुक्रना शत्रुओ सूर्य चंद्र, मित्र बुध शनि, शेष सम. बुधना मित्रो शुक्र शनि, शत्रु चंद्र अने शेष समा. चंद्रना मित्रो-सूर्य बुध,

अने शेष सम, शत्रु नथी. सूर्यना शुक्र शनि शत्रु, बुध सम अने शेष मित्रो. गुरुना सूर्य चद्र मंगल मित्रो, शनि मध्य, बुध शुक्र शत्रु. शनिना बुध शुक्र मित्रो, गुरु मध्य, सूर्य चद्र मंगल शत्रु, आ निसर्गे शत्रुता अने मित्रता छे, स्वस्थानथी बीजे त्रीजे चोथे दशमें अग्यारमे बारमे स्थाने रहेला ग्रहो तत्काल मित्रो अने पहेले पांचमें छठे सातमे आठमे नवमे स्थाने रहेला ग्रहो तत्काल शत्रु गणाय छे.

मित्र मध्यारयो येऽत्र, निसर्गेणोदिताः क्रमात् ।
अधिमित्रसुहृन्मध्या स्ते स्युस्तत्कालमैत्र्यतः ॥६२०॥
येत्राऽरिमध्यमित्राणि, निसर्गेणोदिताः क्रमात् ।
अधिशत्रुद्विषन्मध्यास्ते स्युस्तत्कालवैरतः ॥६२१॥

भा०टी०—अहिया जे मित्र मध्य शत्रुओ निसर्गथी कह्या छे ते अनुक्रमे तत्काल मैत्रीथी अधिमित्र, मित्र अने मध्य बने छे, अहिया जे निसर्ग शत्रु मध्य अने मित्र छे ते तत्काल शत्रुभावथी अधिशत्रु, शत्रु अने मध्य बने छे,

अतिवैर तथा अतिमैत्री—

राहुरव्यो परं वैरं, गुरुभार्गवयोरपि ।
हिमांशुबुधयोर्वैरं, विवस्वन्मन्दयोरपि ॥६२२॥
अतिमैत्री राहुशन्यो-रिन्दुगुर्वोः कुजार्कयोः ॥
सितज्ञयोरतिमैत्री, ग्रहमैत्री ह्यनेकधा ॥६२३॥

भा०टी०—सूर्य राहु वच्चे अतिवैरभाव छे, गुरु शुक्र वच्चे अतिवैर छे अने चद्र बुध वच्चे अतिवैर छे (बुध चन्द्र तो वैरी नथी, पण चंद्र बुधनो अतिवैरी छे) अने सूर्य शनि वच्चे पण अतिवैर छे. राहु शनिने, चंद्र-गुरुने, मगळ-सूर्यने; चद्र बुधने अतिमैत्री छे. एम ग्रहोनी मैत्री अनेक प्रकारे छे.

ग्रहोनी निसर्गमैत्री-मध्यस्थ-शत्रुता ज्ञापक कोष्टक—

ग्रहो	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
मित्र	चं मं गु	सू बु	सू चं गु	शु	सू चं मं	बु श	बु शु
मध्यस्थ	बु	मं गु शु श	शु श	मं गु श	श	मं गु	गु
शत्रु	शु श	०	बु	चं	बु शु	सू चं	सू चं गु

ग्रहमैत्री-शत्रुता विषयक प्राचीन मत—

जीवो बुधेज्यौ शुक्रज्ञौ, ज्यर्का ज्यारा विविद्‌धिनाः।
वीन्द्विनारा इनादीनां, मित्राण्यन्ये तु शत्रवः ॥६२४॥
स्फुटो मित्रारिभावोऽयं, सर्वैरुक्तो महर्षिभिः।
नवो लोकप्रसिद्धस्तु, न प्रत्यक्षफलो यतः ॥६२५॥

भा०टी०—सूर्यादि ग्रहोना मित्रो अने शत्रुओ आ प्रमाणे छे-सूर्यनो मित्र गुरु, शत्रु चंद्र मंगल बुध शुक्र शनि. चंद्रना मित्रो बुध गुरु, शत्रु-सूर्य मंगल शुक्र शनि. मंगलना मित्रो-बुध शुक्र, शत्रुओ-सूर्य चंद्र गुरु शनि. बुधना मित्रो-चंद्र मंगल गुरु शुक्र शनि, शत्रु-सूर्य. गुरुना मित्रो-सूर्य चंद्र बुध गुरु शुक्र शनि, शत्रु-मंगल. शनिना मित्रो-बुध गुरु शुक्र, शत्रुओ- सूर्य चंद्र मंगल. आ प्रकट मित्र-शत्रुभाव स्पष्ट छे अने सर्व महर्षिओए कह्यो छे, लोक प्रसिद्ध मित्र-शत्रुभाव नवो छे अने प्रत्यक्ष फल आपतो नथी.

प्राचीन मतानुसारि मैत्री-शात्रवकोष्टक—

ग्रहा	सू	चं	मं	बु	गु	शु	श
मित्र	गु	बु गु	बु शु	चं मं गु शु श	स चं बु शु श	बु गु मं श	बु गु शु
शत्रु	चं मं बु शु श	सू मं शु श	सू चं गु श	सू	मं	सू चं	सू चं मं

ग्रहोनी दृष्टिमर्यादा—

पश्यन्ति पादतो वृद्ध्या,
भ्रातृ ३ व्योम्नी १० त्रिकोणके।
चतुरस्र ४–९ स्त्रिय ७ स्त्रीवन्,
मतेनाया ११ दिमा १ वपि ५–९ ॥६२६॥
पश्येत्पूर्णं शनिर्भ्रातृ ३,
व्योम्नी, १० घर्मं ९ घियौ ५ गुरुः।
चतुरस्रे कुजोऽर्केन्दु-
बुधशुकास्तु सप्तमम् ॥६२७॥

भा०टी०–ग्रहो पाद, द्विपाद, त्रिपाद, पूर्ण इत्यादि क्रमे जुदा जुदा स्थानोने जुए छे, पोते जे स्थानमा रहेल होय तेथी त्राजा दशमा स्थाने ते पावदृष्टिथी जुए छे, पाचमा नवमा स्थाने अर्धदृष्टिथी, चोथा आठमा स्थाने पोणी दृष्टिथी अने सातमा स्थाने पूर्ण दृष्टिथी सर्व ग्रहो देखे छे, कोइ आचार्यना मते अग्यारमा अने पहेला स्थाने ग्रहोनी पूर्णदृष्टि होय छे शनि त्रीजे दशमे, गुरु पाचमे नवमे अने मगल चोथे आठमे स्थाने पूर्ण दृष्टिए देखे छे. ज्यारे रवि सोम बुध शुक्र एक सातमाने ज पूर्ण दृष्टिए देखे छे.

ताजिकोक्ता ग्रहदृष्टि—

तृतीयैकादशे तुर्य-दशमे नवपञ्चमे।
पादवृद्ध्या पिबन्त्येषु, पूर्णं चाऽन्ये्यरिसूरयः ॥६२८॥
युक्ताः परस्परं पूर्णं, तद्वत्पश्यन्ति खेचराः।
सर्वेऽपि सप्तम चेति, पूर्णदृक् ताजिकोदिता ॥६२९॥

भा०टी—ताजिकमा कहेल ग्रहदृष्टि केटलेक अंशे जुदी पडे छे, ताजिकना मते त्रीजे अग्यारमे, चोथे दशमे, अने नवमे पांचमे,

अनुक्रमे एकपाद द्विपाद त्रिपाद दृष्टि मानेली छे अने एज स्थानोमां अनुक्रमे शनि मंगल गुरु पूर्णदृष्टिवाला होय छे एज रीते एक स्थानमां मलेला ग्रहो एक बीजाने पूर्णपणे देखे छे अने सातमा स्थानने पण सर्वग्रहो पूर्णदृष्टिए देखे छे आ ताजिक दृष्टि कही छे.

ग्रहोनुं बलाऽबल—

ते स्थानबलिनोमित्र-स्वगृहोच्चनवांशगाः ।
स्त्रीराशिष्विन्दुभृगुजौ, पुंराशिषु पुनः परे ॥६३०॥
लग्नाद्युत्क्रमकेन्द्राख्य-दिक्षु प्राच्यादिषूद्बलाः ।
जीवज्ञौ १ भास्करक्ष्माजौ २ शनिः३ सितसितद्युती४॥६३१॥
बलिनोऽह्नि गुरुसितार्काः, सदा बुधो निशि तु चन्द्रकुजमन्दाः।
स्वदिनादिषु च सितासित-पक्षद्वितयेषु शुभक्रूराः ॥६३२॥
रविचन्द्रावुदगयने, विपुलस्निग्धाश्च वक्रगाश्चान्ये ।
बलिनो युधि चात्तरगा, व्यर्केन्दुयुताश्च चेष्टाभिः ॥६३३॥
सोम्यैर्दिग्बलिनो दृष्टा, बले नैसर्गिके पुनः ।
मन्दारज्ञेज्यशुक्रेन्दु-भास्कराः स्युर्बलोत्तराः ॥६३४॥

भा०टी०—ग्रहो मित्र-स्वगृह-उच्च-स्वनवांशकमां होय त्यारे स्थानबली होय छे, चंद्र शुक्र स्त्रीराशिओमां अने बीजा सर्वे पुरुषराशिओमां होय त्यारे पण स्थानबली होय छे, लग्नथी सृष्टिक्रमे केंद्र स्थानोमां रहेला गुरु बुध १, सूर्य मंगल २, शनि ३, चंद्र शुक्र ४, आ ग्रहो उत्कटबली होय छे, दिवसे सूर्य गुरु शुक्र बली, बुध सदा बली अने चंद्र मंगल शनि रात्रिए बली होय छे, पोताना वार होरादिमां सर्व ग्रहो बली होय छे, शुक्लपक्षमां सौम्य ग्रहो अने कृष्णपक्षमां क्रूर ग्रहो विशेष बलवान् होय छे. सूर्य चंद्र उत्तरचारी अने विपुलस्निग्धकिरणधारी होय त्यारे

बलवान् होय छे ज्यारे मंगलादि ग्रहो विपुल स्निग्ध किरण-वाला अने वक्रगामी होय त्यारे बलिष्ठ होय छे. ग्रहयुद्धमां जे ग्रहो उत्तर तरफ थइने आवे छे ते विजेता होइ बलवान् गणाय छे, सूर्यने छोडी शेष ग्रहो चंद्रनी साथे होय छे त्यारे ते चेष्टाबली होइ बलवान् होय छे, सौम्य ग्रहो वडे दृष्ट ग्रहो दृष्टिबली होय छे, नैसर्गिक बलमां शनि मंगल बुध गुरु शुक्र चंद्र सूर्य ए एक बीजाथी यथोत्तर बलवान् होय छे

बलिनः कण्टकस्था, वर्षाधिपमासदिवसहोरेशाः ।
द्विगुणशुभाऽशुभफलदा, यथोत्तर ते परिज्ञेयाः ॥६३५॥
रूप ग्रहस्य दिवसे, द्विगुण वर्गे स्वकालहोरायाम् ।
त्रिगुणमरिवर्गयोगे, फलस्य प्रान्त्यस्तृतीयांशः ॥६३६॥

भा०टी०—बलवान् थइ केन्द्रमां रहेल वर्षपति, मासपति, दिवसपति अने होरापति ओ ओक बीजाथी बमणुं बमणुं शुभ अशुभ फल आपे छे ओम जाणवु, ग्रह पोताना वारे ओक गणुं, पोताना वर्गमां बमणु अने पोतानी पोतानी कालहोरामा त्रणगणु फल आपे छे, अने शत्रुना वर्गमां रहेलो ग्रह मात्र ओकतृतीयांश जेटलु ज फल आपे छे

चन्द्रबलनी श्रेष्ठता—

शशिबलमादौ कल्प्य, पश्चादितरग्रहबलं कर्तुः ।
बलयुक्ते हिमकिरणे, बलिनो भवन्ति निखिलखगाः ॥६३७॥
हिमकिरणबलमाधारं, स्वाधेयंत्वन्यखेटजं वीर्यम् ।
आधारस्थान्यखिला न्याधेयान्येव जृम्भन्ते ॥६३८॥

भा०टी०—प्रथम कर्ताना चन्द्रबलने कल्पवुं, पछीथी बीजा ग्रहोना बलने जोवु, चन्द्र बलवान् होय तो सर्व ग्रहो बलवान् बने छे, केमके चन्द्रबल सर्वबलोनो आधार छे अने अन्य बलो आधेय छे. आधार मजबूत होय तो ज आधेयो वृद्धिगत थाय छे.

लग्नषड्वर्गः—

त्रिंशद्भागं लग्न-मितं तदर्धतुलिता तु होराख्या।
लग्नतृतीयो भागो, द्रेष्काणः स्यान्नवांशको नवमः॥६३९॥
द्वादशभागो द्वादशांश-स्त्रिंशत्तमस्त्रिंशदंशः स्यात्।
षड्वर्गो भवति सदा, शुभखचरसमुद्भवः शुभदः ॥६४०॥
पापसमुत्थस्त्वशुभ-स्तस्माद् ग्राह्यस्तु सौम्यषड्वर्गः ॥
शुभकर्मणि सततं संत्याज्यः पापाह्वयो वर्गः ॥६४१॥
चापनृयुग्घटवृषभाः, कर्कटकन्यान्त्यराशयः शुभदाः।
शुभभवनत्वादन्ये, त्वशुभगृहत्वादशोभनाः पञ्च॥६४२॥

भा०टी०—लग्न ३० भाग परिमित होय छे, तेना अर्धभाग (१५ अंश)नुं नाम होरा, लग्नना तृतीयांश (१०अंश)नु नाम 'द्रेष्काण' नवमा भागनुं नाम नवमांश, बारमा भागनुं नाम द्वादशांश अने त्रिशमा भागनुं नाम 'त्रिंशांश' होय छे. शुभग्रह संबन्धी षड्वर्ग' हमेशां शुभ फलदायक होय छे अने पाप ग्रहनो षड्वर्ग अशुभ होय छे तेथी शुभ कार्यमां सदा शुभ षड्वर्ग ग्रहण करवो अने पापषड्वर्गनो त्याग करवो. धनु, मिथुन, तुला, वृषभ, कर्क, कन्या, अने मीन राशिओ शुभग्रहोनां घर होइ शुभदायक होय छे अने शेष—मेष सिंह वृश्चिक मकर कुंभ, अे ५ राशिओ अशुभ ग्रहोनां घर होवाथी अशुभ होय छे.

षड्वर्गमां नवमांशनो विशिष्टता—दैवज्ञवल्लभे—

लग्नेशुभेऽपि यद्यंशः, क्रूरः स्यान्नेष्टसिद्धिदः।
लग्ने क्रूरेऽपि सौम्योंऽशः, शुभदोंऽशो बली यतः॥६४३॥
सचन्द्रराशेरशुभो नवांशः,
प्रोक्तः सपापस्थ च लग्नसंस्थः।
त्रिकोणकेन्द्रेषु गुरुः सितोवा,
भवेत्तदाऽसावशुभोऽपि शस्तः ॥६४४॥

भा०टी०—लग्नशुभ होवा छता जो अंश क्रूर होय तो ते इष्ट फल आपतो नथी अने लग्न क्रूर होता छतां अंश सौम्य होय तो शुभदायक थाय छे केमके लग्न करतां अंश बलिष्ठ होय छे. चन्द्रयुक्त राशिनो तथा पापग्रहाधिष्ठित राशिओ लग्नस्थित नवमांश अशुभ कह्यो छे छता त्रिकोण के केन्द्रमां गुरु अथवा शुक्र रहेल होय तो ते अशुभ पण शुभ थइ जाय छे

विवाहपटलमां कह्युं छे—

सचन्द्रसक्रूरनवांशक य-
ल्लग्न हरत्यायुरिति ब्रुवन्ति ।
धीधर्मकेन्द्रो भृगुजोऽथवेज्यो,
लग्नं तदेवायुरतीव धत्ते ॥ ६४५ ॥

भा०टी०—जे लग्न चन्द्रयुक्त होय अथवा क्रूर नवमांशयुक्त होय ते आयुष्यनो नाश करे छे एम विद्वानो कहे छे छतां पांचमे नवमे के केन्द्रस्थानमा शुक्र अथवा गुरु होय तो ते ज लग्न आयुष्यनी अतिशय वृद्धि करे छे.

ज्योतिष्प्रकाशमां कह्युं छे—

प्रोच्यते लग्नसस्थोऽसौ, ग्रहो य उदितांशगः ।
द्वितीयोऽनुदितांशस्थः, सर्वराशिष्वय क्रम. ॥६४६॥

भा०टी०—लग्नना उदित नवमाशमा रहेल ग्रह लग्नस्थित कहेवाय छे तें आगेना अनुदित नवमाशस्थित द्वितीयभावस्थित इत्यादि क्रम सर्वराशिओमा जाणवो.

लग्नबल—

अधिपयुतो दृष्टो वा, बुधजीवनिरीक्षितश्च यो राशिः ।
स भवति बलवान्न यदा, दृष्टो युक्तोऽपि वा शेषैः ॥६४७॥

लग्नाधिपः केन्द्रगतो बलिष्ठः,
स्वोच्चादिवर्गे शुभवर्गसंस्थः ।
करोति कर्तुर्बहुलार्थसिद्धिं,
विपर्ययेनैव विपर्ययं च ॥६४८॥

गृहादिवर्गगः खेटो, मित्रषड्वर्गगोथवा ।
लग्नेशः कार्यसिद्ध्यै स्यादेतत् सर्वं मुनेर्मतम् ॥६४९॥

पापोपि लग्नाधिपतिस्त्रिषष्ठ-
लाभस्थितः स्थानबलाधिकश्च ।
लग्नोत्थदोषान्निखिलान्निहन्ति,
पापानि यद्वत्परमाक्षरज्ञः ॥ ६५० ॥

भा०टी०—जे राशि अधिपतिथी युक्त वा दृष्ट होय अथवा तो बुध या गुरु वडे दृष्ट होय अने बीजा ग्रहोथी युक्त के दृष्ट न होय ते बलवान् होय छे. लग्नेश बलवान् थइ केन्द्रमां रह्यो होय, स्वोच्चनो के स्वगृहादिषड्वर्गस्थित होय, सौम्यग्रहोना वर्गनो होय तो कर्त्तांना घणा कार्योनी सिद्धि करे छे अने ऐथी विपरीत होय तो विपरीत फल आपे छे. गृहादि स्ववर्ग अथवा मित्रषड्वर्गनो लग्नपति ग्रह कार्यसिद्धि करे छे ए सर्व मुनिने मान्य छे. लग्नेश पापग्रह छतां त्रीजे छट्ठे अग्यारसे रहेल अने स्थानबली होय तो लग्नसंबन्धी सर्वदोषोनो नाश करे छे जेम तत्त्वज्ञानी दोषोने हणे छे,

पञ्चभिः शस्यते लग्नं, ग्रहैर्बलसमन्वितैः ।
चतुर्भिरपि चेत् केन्द्रे, त्रिकोणे वा गुरुर्भृगुः ॥६५१॥

भा०टी०—जे लग्नकुंडलीमां पांच ग्रहो बलयुक्त होय ते लग्न प्रशस्त गणाय छे, अने केन्द्र वा त्रिकोणमां गुरु अथवा शुक्र रहेल होय तो चारग्रहोना बलवालुं लग्न पण शुभ छे.

षड्वर्गं पञ्चवर्गं च चतुर्वर्गं शुभावहम्।
त्रिवर्गं वापि सद्योगे, द्वयेकवर्गं तत्तु त्यजेत् ॥६५२॥

भा०टी०—जे लग्नमा षडवर्ग पंचवर्ग अथवा चारवर्ग सौम्यग्रहसंबन्धी होय ते शुभकारक छे अने लग्नमा कोइ बलवान् सौम्यग्रह पडेलो होय तो शुभत्रिवर्गवालु लग्न पण लेवुं, पण द्विवर्ग अथवा एकवर्गवाला लग्ननो तो त्याग ज करवो जोइये.

वसिष्ठ लग्नबलनो सारांश कहे छे—

शुभकार्याण्यखिलानि तु, त्रिकोणकेन्द्रस्थितेषु सौम्येषु।
व्ययनैधनरिपुलग्ने-रसंयुते यत्र तुहिनकरे ॥६५३॥

भा०टी—जे लग्नकुंडलीमा सौम्य ग्रहो पहेले चोथे पाचमे सातमे नवमे के दशमे स्थाने रहेला होय, चन्द्रमा लग्नमा छट्ठे आठमे के बारमे स्थाने न होय तेवा लग्नमा सर्व शुभकार्यो करवाथी सिद्ध थाय छे

उदयास्तशुद्धि नारदमते—

लग्नलग्नांशको स्वस्व-पतिना वीक्षितौ युतौ।
न चेद्वाऽन्योन्यपतिना, शुभमित्रेण वा तथा ॥६५४॥
वरस्य मृत्युः स्यात्ताभ्यां, सप्तसप्तोदयांशकौ।
एवं तौ न युतौ दृष्टौ, मृत्युर्वध्वाः करग्रहे ॥६५५॥

कश्यप कहे छे—

त्रिप्रकारेण सा शुद्धि-र्नचेल्लग्न च निन्दितम्।
अपि पश्चेष्टिक लग्न-मनेकगुणसंयुतम्।
त्यजेयथा शुनाघ्रातं, तथा हव्य घृतप्लुतम्॥६५६॥

भा०टी०—लग्न तथा तेनो उदित नवमांशक पोतपोताना स्वामिवडे दृष्ट अथवा युक्त न होय १, लग्नेश वडे नवमांश आ नव-

मांशपति वडे लग्नदृष्ट के युक्त न होय २, अथवा तो लग्नेशना शुभ-मित्र वडे लग्न अने नवमांशपतिना शुभमित्र वडे नवमांश दृष्ट-युक्त न होय ३, तो लग्ननवमांशाऽशुद्धि वडे पुरुषनुं मृत्यु थाय अने सप्तम तथा सप्तमना नवमांशनी अशुद्धि वडे स्त्रीनुं मृत्यु थाय छे.

कश्यप कहे छे के-त्रण प्रकारे लग्न नवमांशनी शुद्धि न थाय तो ते लग्न पंचवर्ग शुद्ध होय अनेक गुण सहित होय छतां ते वर्जवुं जोइये जेम श्वान वडे सुंघायेल घीझरतुं हव्य पदार्थ त्यजाय छे.

उदयास्तशुद्धौ आरंभसिद्धिः—

पश्यन्नंशाधिपो लग्नं, भवेदुदय शुद्धये ।
अंशास्तेशस्तु लग्नास्त-मस्तशुद्ध्यै विलोकयन् ॥६५७॥

भा०टी०—नवमांश पति लग्नने जोतो उदय शुद्धिने माटे अने सप्तमस्थानना नवमांशनो पति लग्नथी सप्तम स्थानने जोतो छतो अस्तशुद्धिने माटे थाय छे.

उदयास्तशुद्धि विषे व्यवहारप्रकाश—

अंशाधिपतेर्दृष्टि-र्यदांशकेऽशास्तपस्य भागास्ते ।
भागपतेर्लग्ने वा-ऽप्यंशास्तपतेर्विलग्नास्ते ॥६५८॥
उदयास्तस्य च यदा, दृष्टेः शुद्धिर्भवेद् विलग्नेऽत्र ।
कान्ताया मङ्गलान्य-तनूनि तनौ प्रजायन्ते ॥६५९॥

भा०टी०—ज्यारे नवमांश पतिनी दृष्टि नवमांश उपर अने सप्तम नवमांशपतिनी दृष्टि सप्तम नवमांश उपर होय अथवा नवमांशपतिनी दृष्टि लग्न उपर अथवा सप्तम नवमांशपतिनी दृष्टि सप्तम उपर पडती होय त्यारे उदयास्त शुद्धि गणाय छे. लग्न तथा सातमनी ज्यारे दृष्टि शुद्धि होय छे त्यारे ते लग्नमां परिणीत स्त्रीना शरीर उपर अखंड मंगला उपजे-रहे छे. अर्थात् पतिपत्नी बंने चिर काल जीवित रही मंगलोपभोग करे छे.

उदयास्तशुद्धि विषे यतिवल्लभोक्त अनुं मत—
उदयास्तांशतुल्याख्य-राश्योरपि ।शुद्धिने ।
योगेऽथवा परे प्राहु-रुदयास्तविशुद्धताम् ॥६६०॥

भा०टी०—लग्नमां ग्रहण करेल नवमांश अने तेथी सातमो नवमांश जे राशिना होय ते राशिओ जो, स्वस्वस्वामियुक्त होय या दृष्ट होय तो उदयास्त शुद्धि होय छे आम बीजाओ कहे छे.-

निर्बल अने त्याज्य लग्न—

अपि षड्वर्गसंशुद्धं, न ग्राह्यं शकुनैर्विना ।
लग्नं यस्मान्निमित्तानां, शकुनो दण्डनायकः ॥६६१॥

भा०टी०-भले लग्न षड्वर्ग शुद्ध होय छतां शकुन विना न लेवुं, केम के 'शकुन' ए सर्व निमित्तोनो सेनापति छे

लग्न षड्वर्गसंशुद्ध, कुलिकेन विहन्यते ।
अपि पञ्चचतुर्वर्गे, दूष्यते क्रूरहोरया ॥६६२॥

भा०टी०—षड्वर्ग शुद्ध लग्नने पण कुलिक हणी नाखे छे, वली पंचवर्ग वा चतुर्वर्ग शुद्ध लग्न होय तोये क्रूर वारनी होरा तेने दूषित करी नांखे छे.

क्रूरैर्लग्नं युतं त्याज्यं, मंगलेष्वखिलेष्वपि ।
जन्माङ्गादष्टमक्रूर, लग्नगं सत्यजेच्छुभे ॥६६३॥
भृगुषष्ठाह्वयो दोषो, लग्नात् षष्ठगते सिते ।
उच्चगे शुभ संयुक्ते, तल्लग्नं सर्वदा त्यजेत् ॥६६४॥
कुजाष्टमो महादोषो, लग्नादष्टमगे कुजे ।
शुभत्रययुत लग्नं, त्यजेत्तुगगतं यदि ॥६६५॥

भा०टी०—क्रूरो वडे युक्त लग्नने सर्व मंगल कार्योमां त्याग करवो. वली जन्मलग्नथी अष्टम स्थाने रहेल क्रूर ग्रह जो लग्नमां

आवतो होय ते लग्न शुभ कार्यमां वर्जवुं, भृगुषष्ठाख्य दोष एटले जे लग्नमां [illegible] छठे स्थाने पडतो होय पछी भले ते उच्चनो के शुभयुक्त होय छतां ते लग्न सदा त्याज्य करवुं, लग्नथी मंगल आठमो होय, ते कुजाष्टम महादोष, भले पछी लग्न त्रण सौम्यग्रहयुक्त होय के उच्चगत होय छतां तेनो त्याग करवो.

षडष्टेन्दुर्महादोषो, लग्नादष्टमषष्ठगे ।
चन्द्रस्योच्चेऽथवा पूर्णे, मृत्युकारी स मङ्गले ॥६६६॥

भा०टी०—चंद्रमा लग्नथी छट्ठा अथवा आठमा स्थानमां होय त्यारे 'षडष्टेन्दु' नामक महादोष उपजे छे, भले चंद्र उच्चनो होय के पूर्ण होय छतां ते मंगलकार्यमां मृत्युकारी निवडे छे.

लग्नाधीशे नीचगे शत्रुगे वा,
रंध्रे चास्तं संगते वक्रगे वा ।
तद्लग्नं वै संत्यजेत्सर्वकार्ये,
कुर्यात्कार्यं चेत्तदा मृत्युभीतिः ॥

भा०टी०—लग्नेश नीचनो होय, शत्रुक्षेत्री होय, अष्टम स्थानगत होय, अस्तगत होय अथवा वक्री होय तो ते लग्न सर्व कार्योमां वर्जवुं, जो तेवा लग्नमां कोइ पण कार्य करे तो करनारने मरणनो भय रहे छे.

जन्मस्थोऽरि गृहाधिपोऽथ मरणाधीशोऽथवा मृत्युदः,
लग्नस्याधिपतिस्तथारिगृहगो वा मृत्युदो मृत्युगः ।
जन्मर्क्षोदयलग्नतोष्टमगृहं वा द्वादशर्क्षोदयं,
यात्राद्येष्वखिलं धिया किल बुधैश्चिन्त्या भशुद्धिः सदा ॥६६७॥

भा०टी०—षष्ठेश वा अष्टमेश लग्नमां मृत्युदायक होय छे, लग्नेश छठे अथवा आठमे होय तोये मृत्युदायक छे, जन्मराशि

अथवा जन्मलग्नथी अष्टमराशिनु के बारमीराशिनुं लग्न यात्रादि सर्व कार्योमा वर्जवु, पंडितजनोए आ प्रमाणे राशिशुद्धि बुद्धिवडे अवश्य विचारवी.

कया ग्रहो कया स्थानोमां न जोइये ?

त्याज्या लग्नेऽब्धयो मन्दात्, षष्ठे शुक्रेन्दुलग्नपाः ।
रन्ध्रे चन्द्रादयः पञ्च, सर्वेऽस्तेऽब्जगुरू समौ ॥६६८॥
प्रायः शुभा न शुभदानिधनव्ययस्था,
धीधर्मरिष्फधनकेन्द्रगताश्च पापाः ।
सर्वार्थसिद्धिषु शशी न शुभो विलग्ने,
सौम्यान्वितोऽपि निधन न शिवाय लग्नम् ॥६६९॥

भा०टी०—लग्नमां शनिथी ४ ग्रहो वर्जवा, एटले शनि रवि सोम मंगल आ ४ ग्रहो लग्नमा त्यागवा, छठ्ठा स्थानमा शुक्र चंद्र लग्नपति वर्जवा, आठमे चद्र आदि ५ अर्थात् चद्र मंगल बुध गुरु शुक्र ए वर्जवा, सातमे सर्वे वर्जवा छतां चंद्र के गुरु अस्तमा होय तो सम गणाय छे अशुभ नथी. प्राये करीने आठमे बारमे रहेला शुभग्रहो शुभफल आपता नथी अने पांचमे नवमे बारमे बीजे पहेले चोथे सातमे अने दशमे स्थाने रहेल पापग्रहो शुभदायक नथी, चद्रमा सर्वे कार्योमा लग्नमा रहेल सारो नथी, भले ते सौम्य-ग्रहयुक्त पण होय छतां लग्नमा वर्जवो अने लग्न अथवा राशिथी आठमी राशिनुं लग्न कदापि शान्तिदायक होतु नथी.

क्रूरकर्तरीदोष

लग्नेऽस्यपृष्ठाग्रगयोरसाध्वो,
सा कर्तरीस्यादृजुवक्रगत्योः ।
तावेव शीघ्रो यदि वक्रचारौ,
न कर्तरी चेति पितामहोक्तिः ॥६७०॥

यः कर्तरी नाम महान् हि दोषो,
लग्नोद्भवान्नैकशुभग्रहोत्थान्।
गुणान् निहन्ति प्रबलानशेषान्,
व्याघ्रो यथा गोसमितिं समस्ताम् ॥६७१॥

भा०टी०—लग्नमां तेनी पाछल आगल चालनारा पापग्रहो अनुक्रमे मार्गी अने वक्री होतां क्रूर कर्तरी दोष उत्पन्न थाय छे पण तेज बंने क्रूर ग्रहो जो शीघ्रगतिक होय वा बंने वक्रगतिक होय तो कर्तरी दोष गणातो नथी एम पितामहनुं कथन छे. आ क्रूर कर्तरी महान् दोष छे अनेक शुभग्रहजनित प्रबल सर्व गुणोनो नाश करे छे जेम वाघ समस्त गोसमुदायनो नाश करे छे.

फलप्रदीपकार कहे छे—

क्रूरयोः कर्तरीनेष्टा, महाविघ्नप्रदा ध्रुवम्।
सौम्ययोर्नातिदुष्टास्यान्मध्यमा पापसौम्ययोः ॥६७२॥

भा०टी०—क्रूर ग्रहोनी कर्तरी नेष्ट निश्चयथी महाविघ्न देनारी छे, सौम्य कर्तरी विशेष खराब नथी तथा क्रूर-सौम्य कर्तरी मध्यम प्रकारनी होय छे.

क्रूरकर्तरीस्थित लग्न तथा चंद्र अने एनो परिहार—

क्रूरग्रहस्यान्तरगा तनुर्भवेद्,
मृतिप्रदा शीतकरश्च रोगः।
शुभैर्धनस्थै रथयान्त्यगे गुरौ,
न कर्तरी स्यादिह भार्गवा विदुः ॥६७३॥

त्रिकोणकेन्द्रगो गुरु-स्त्रिलाभगो रविर्यदा।
तदा न कर्तरी भवेज्जगाद बादरायणः ॥६७४॥

पूर्वं पश्चात् पापा-त्तिथ्यंशा घातमध्यगश्चन्द्रः।
वर्जयितव्यो योगे, यस्माद् राश्यंशरश्मियुतिः ॥६७५॥

भा०टी०—क्रूर ग्रहोना मध्ये रहेल लग्न मृत्युकारक अने चन्द्र रोगकारक थाय छे, पण भार्गवो (भृगुना अनुयायियो) कहे छे के धनस्थाने सौम्य ग्रह होय अथवा बारमा स्थानमां गुरु रहेल होय तो कर्तरी नथी एम जाणवु. बादरायणे कह्यु छे के जे कुंडलीमां गुरु त्रिकोण (५-९) केन्द्र (१-४-७-१०) नो होय, रवि त्रीजे अग्यारमे होय त्यारे कर्तरी दोषकारक होती नथी चंद्रनी आगल पाछल १५-१५ अंशोना अथवा तेथी ओछा अंशोना आंतरे पापग्रहो होय अने ते संदंशनी वच्चे चंद्र अथवा लग्न आवतुं होय तो ते लग्न अगर चंद्रनो त्याग करवो, केम के बन्ने ग्रहोनी युति थतां राशि अने अंशनी किरणयुति थाय छे जे लग्न अने चन्द्रने हानि थाय छे. तात्पर्यार्थ ए छे के आगल पाछलना बंने ग्रहोनुं अंतर लग्न के चंद्रथी १५-१५ अंशनु अथवा तेथी ओछुं होय, आगलनो पापग्रह वक्री होइ सामेथी नजीक आवतो होय, पाछलनो ग्रह पण मार्गी होइ लग्न के चंद्रनी निकट आवतो होय, तो ते कर्तरी अवश्य वर्जनी जोइये, पहेला पछीना ग्रहो वक्री मार्गी होवा छतां १५-१५ अंशथी अधिक दूर स्थित होय, अथवा पहेला पछीना बंने ग्रहो मार्गी होय, अथवा तो पछीनो ग्रह वक्री होय तो ते स्थितिमां १५-१५ अंशथी ओछे आंतरे पापग्रहो होय तोये ते कर्तरी विशेष हानिकर होती नथी.

सापवाद क्रूरयुति—

सति दर्शने यदि स्या-दशद्वादशक मध्यगः क्रूरः।
इन्दोर्लग्नस्य तथा, न शुभो राहुस्तु सप्तमः ॥६७६॥

भा०टी०—चंद्र तथा लग्नना वर्तमान त्रिंशांशथी बार त्रिंशांशमां क्रूर ग्रह रहेल होय अने ते चंद्र वा लग्नने पूर्ण दृष्टिथी

देखतो होय तो ते शुभदायक नथी अने लग्न चंद्रथी राहु सातमो शुभ नथी. उदाहरण रूपे शनि राशिना वीसमा त्रिंशांशमां छे अने लग्न अथवा चंद्र राशिना अष्टमांशमां वर्ते छे, एटले शनि अने चंद्र वा लग्ननुं अंतर १२ अंशोनुं छे, राशिनी नवमांश कुंडली लग्न वा चंद्र त्रीजा नवमांशमां छे अने शनि छट्ठामां, छट्ठा नवमांशमां रहेल शनि चोथा केंद्रथी दशमा प्रथम स्थानस्थित लग्न वा चंद्रने पूर्ण दृष्टिथी देखे छे, तेथी आवी क्रूरयुति अवश्य वर्जनीय छे, आथी विपरीत शनि राशिना २२ मा त्रिंशांशमां छे अने लग्न २४ मा त्रिंशांशमां अंशान्तर बारथी ओछुं छे, छतां शनि उदितांश कुंडलीमां लग्नने जोतो नथी तेथी आ क्रूरयुति बहुहानिकर नथी. एज प्रमाणे चन्द्र साथेनी क्रूरयुतिने अंगे पण जाणवुं.

जामित्रनामक लग्नदोष—

लग्नथी ७ मुं स्थान 'जामित्र' कहेवाय छे, ते जामित्र ग्रहरहित होवुं सारुं गणाय छे, छतां चंद्र के गुरु सातमे होय तो ए दोष घातक गणातो नथी, बुध शुक्र अने सूर्यादि पापग्रहो जामित्रमां होय तो ते बधु खराब गणाय छे, जामित्र दोष विवाहमां अवश्य वर्जनीय छे ज पण अन्य शुभ कार्योमां पण ए दोष शक्य होय त्यां सुधी वर्जवो जोइये, आ संबन्धमां आरंभसिद्धिकार कहे छे—

विवाह-दीक्षयोर्लग्ने द्यूतेन्दू ग्रहवर्जितौ ।
शुभौ केचित्तु जीवज्ञ-युक्तमिन्दुं शुभं विदुः ॥६७७॥
पञ्चपञ्चाशमे वांशं, जामित्रं परमं परे ।
अंशादुज्झन्ति लग्नेन्द्वो-र्गर्हितग्रहदूषितम् ॥६७८॥

भा०टी०—विवाह-दीक्षाना लग्नोमां सप्तम स्थान अने चंद्र ए बे ग्रहरहित होवा जोइये, केटलाको गुरु बुध युक्त चंद्रने शुभ

छे एम कहे छे ज्यारे अन्य ज्योतिषाचार्यो लग्न तथा चद्रना नवमांशथी पचावनमो नवमांश जो वर्जितग्रहदूषित होय तो तेने ज 'परमजामित्र' गणीने लग्नमा वर्जे छे. दैवज्ञवल्लभकार पण ए वातनुं समर्थन करे छे

लग्नेन्दुसंयुतादंशात् पञ्चपञ्चाशदंशके ।
ग्रहोन्यो यद्यसौ दोषो, गुणैरपि न हन्यते ॥६७९॥

भा०टी०—लग्नना तथा चद्रना नवमांशथी पंचावनमा नवमांशमा जो कोइ ग्रह होय तो ए दोष गुणो वडे पण नष्ट थतो नथी.

शुभग्रहकृत लग्नगतदोषभंग—

तिथिवासरनक्षत्र-योगलग्नक्षणादिजान् ।
सबलान् हरतो दोषान्, गुरुशुक्रौ विलग्नगौ ॥६८०॥
त्रिकोणकेन्द्रगा वापि, भङ्गं दोषस्य कुर्वते ।
वक्रारिनीचगा वापि, ज्ञजीवभृगवः शुभाः ॥६८१॥

भा०टी०—तिथि वार नक्षत्र-योग लग्न मुहूर्त आदिना बलवान् दोषोने लग्नमा रहेला गुरु शुक्र दूर करे छे, वली त्रिकोण (५-९) अने केंद्र (१।४।७।१०) मा रहेला वक्री, शत्रुक्षेत्री के नीचना शुभ बुध गुरु अने शुक्र लग्नदोषोनो भग करे छे.

आरभसिद्धिकार कहे छे—

लग्नात् क्रूरो न दोषाय, निन्द्यस्थानस्थितोपि सन् ।
दृष्टःकेन्द्रत्रिकोणस्थैः, सौम्यजीवसितैर्यदि ॥६८२॥

भा०टी—लग्नथी वर्जित स्थानमा होवा छता क्रूरग्रह जो त्रिकोण के केन्द्रमा रहेल बुध गुरु के शुक्रवडे पूर्ण दृष्टिए दृष्ट होय तो दोषकारक थतो नथी.

लग्नजातान् नवांशोत्थान्, क्रूरदृष्टिकृतानपि ।
हन्याज्जीवस्तनौ दोषान्, व्याधीन् धन्वन्तरिर्यथा॥ ६८३॥

सौम्यवाक्पति शुक्राणां, य एकोपि बलोत्कटः ।
क्रूरैरयुक्तः केन्द्रस्थः, सद्योऽरिष्टं पिनष्टि सः ॥६८४॥

भा०टी०—लग्नजनित नवमांशथी उत्पन्न थयेल के क्रूर-ग्रहोनी दृष्टिथी उत्पन्न थयेल दोषोने लग्नस्थित गुरु धन्वन्तरि रोगोने हणे तेम हणे छे. बुध गुरु के शुक्र एक पण बलवान् थइ केन्द्रमां रह्यो होय, कोइ पण क्रूरथी युक्त के दृष्ट न होय, तो तत्काल अशुभ योगोने पीसी नाखे छे.

बलिष्ठः स्वोच्चगो दोषा-नशीतिं शीतरश्मिजः ।
वाक्पतिस्तु शतं हन्ति, सहस्रं चा सुरार्चितः ॥६८५॥
बुधो विनार्केण चतुष्टयेषु,
स्थितः शतं हन्ति विलग्नदोषान् ।
शुक्रः सहस्रं विमनोभवेषु,
सर्वत्र गीर्वाणगुरुस्तुलक्षम् ॥६८६॥

भा०टी०—बलवान् अने उच्चनो बुध ८० अंशी दोषोने दूर करे छे, तेज प्रकारनो गुरु सो अने शुक्र लाख दोषोने हणे छे. सूर्य विनानो बुध केंद्र स्थानोमां रहीने सो लग्नदोषोने हणे छे, तेज प्रकारनो शुक्र सप्तमा सिवायना केन्द्रोमां रहे तो हजार अने सर्व-केन्द्र स्थित गुरु लाख दोषोने हणे छे.

चन्द्र–तारा बल—

मनुष्य ज नहिं, पदार्थ मात्र उपर चन्द्रबल तथा तारावलनो प्रभाव काम करे छे, कोइ पण भलाभूंडा प्रसंगे पोताना ग्रहगोचरनुं फल पूछे छे, पण कोइ पण ग्रहना उपर चन्द्रना बलाबलनी छाप तो होय ज, जे वर्ष, अयन, ऋतु, मास या पक्षमां चन्द्र शुभ फलदायक होय छे ते वर्ष, अयन, ऋतु, मास या पक्षमां बीजोग्रह अशुभ फल आपवाने पूर्ण समर्थ थतो नथी, एनुं कारण सर्वग्रहबलमां चन्द्रबलनी

प्रधानता छे, जे समयमा चन्द्रक्षीणबली होय छे त्यारे तेनु प्रति निधित्व तारा करे छे, एटले कृष्णपक्षमां ज्यारे चन्द्रबल नथी होतुं त्यारे ताराबल जोइने कार्य करवानुं ज्योतिषशास्त्रमा विधान छे, ए वस्तु आ चद्रताराबल प्रकरणथी समजाशे

आ विषयनुं वसिष्ठ नीचे प्रमाणे विधान करे छे.—

प्रथमदिने वत्सरतः, शुभदे चन्द्रे च यस्य पुरुषस्य।
तद्वर्षे शिशिरकरः, शुभफलदस्तस्य बुधयुक्तोऽपि ॥६८७॥
अयनादौ ऋतुसमये, मासेऽप्येवमेव विजानीयात्।
ताराबलासितस्तच्छुभ-तारा चेत्तथैव शुभदा स्यात् ॥६८८॥
सितपक्षस्याद्यदिने, शुभदस्तत्पक्षमतिशुभः।
असितस्यादावशुभः, शुभफलदः पक्षमखिलं तत् ॥६८९॥

जन्मत्रिकलत्ररिपु-
द्वितीयनवमायसुतदशभे।
सितपक्षे हिमकिरणः,
शुभदः कृष्णे विपञ्चधन नवमे ॥ ६९० ॥

भा०टी०—वर्षना पहेला दिवसे जे पुरुषने चन्द्र शुभफल-दायक होय ते वर्षमा तेने चन्द्र शुभदायक ज होय छे, एज प्रमाणे बुधने विषे पण जाणवुं, अयननी आदिमां, ऋतु लागे ते समयमां, अने मासनी आदिमा पण एज प्रमाणे जाणवुं, वर्ष, अयन, ऋतु मासनी आदिमा शुभ ताराबलनी प्राप्ति होय तो आखा वर्ष, अयन, ऋतु अगर मासमा तारा पण शुभ फल आपनारी होय छे. शुक्लपक्षना पहेला दिवसे जो चन्द्र शुभदायक होय तो संपूर्ण पक्ष पर्यन्त शुभफल आपे छे. कृष्णपक्षना प्रारभ दिवसे जेने चन्द्र गोचरथी अशुभ होय तेने ते आखो पक्ष शुभ फल आपे छे, पहेलो

त्रीजो सातमो छट्ठो बीजो नवमो अग्यारमो पांचमो दशमो (१।२-।३।५।६।७।९।१०।११) मो चन्द्र शुक्लपक्षमां शुभदायक छे, अने कृष्णपक्षमां २।५।९ मा सिवाय उक्त स्थानीय चन्द्र गोचरथी शुभ होय छे.

जन्मभमनुजन्मर्क्षं, त्रिजन्मं नेष्टमखिलकार्येषु ।
संपत्तारा शुभदा, विपदाख्या विपत्प्रदा तारा ॥६९१॥
क्षेमाख्या क्षेमकरी, प्रतिकूला प्रत्यरिस्तारा ।
साधनभं साधनदं, नैधनभं नैधनं नृणाम् ॥६९२॥
मैत्रीकरणं मित्रभ-मतिमैत्रं परममैत्रर्क्षम् ।
एवं विचार्य सततं, बलाबलं दैववित् कथयेत् ॥६९३॥

भा०टी०—जेमां जेनो जन्म थयो होय ते तेनुं जन्म नक्षत्र, जन्म नक्षत्र तारामां त्रण आवे छे, १ लुं १० मुं १९ मुं, आ त्रणेय जन्म ताराओ सर्व कार्योमां अनिष्ट होय छे, जन्म नक्षत्रथी बीजुं नक्षत्र संपत्तारा जे शुभ छे, जन्मथी त्रीजुं विपत्तारा विपत्तिदायक छे. जन्मथी चोथुं नक्षत्र क्षेमातारा छे ते कल्याणकरी छे, पांचमी प्रत्यरितारा प्रतिकूलता आपनारी, छट्ठी साधना तारा अनुकूल साधन आपनारी, सातमी तारा नैधना अथवा यमा छे जे मनुष्यने मरण आपनारी छे, आठमी मैत्रीतारा जे मित्रता करावनारी अने नवमी अतिमैत्री जे परममित्रताकारक छे, एज प्रमाणे दशथी अढार सुधी अने ओगणीशथी सत्तावीश सुधीना ९।९ नक्षत्रोमां जन्मादि नव नव ताराओ समजवी. आम बधो विचार करी ज्योतिषीए ताराओनुं बलाबल कहेवुं.

सितपक्षे हिमकिरणो, बलवान् कृष्णेऽपि बलवती तारा ।
शशिबलवत् प्राधान्यं, शुक्ले कृष्णे च तारकायाश्च ॥६९४॥

अमृतकिरणस्त्वमृत-भवस्तद्बलमखिलं च तद्वत्स्यात् ।
अमृतमयं तत्तस्मादभ्यधिकं त्वन्यखेटबलात् ॥६९५॥

तुहिनकरो जगतां यद्वत् तद्वच्च तद्बलं त्वखिलम् ।
तन्महिमानं व्याचष्टे गुणरूपं निखिलजन्तूनाम् ॥६९६॥

बलवानखिलमृगाणां,
हरिरिव खचरबलानां च चन्द्रबलम् ।
हिमकिरणे बलिनि सति,
सर्वे बलिनो वियच्चरा नित्यम् ॥ ६९७ ॥

अभ्यधिकं चन्द्रबलं, त्वबलं ताराग्रहोद्भवं निखिलम् ।
हिमकिरणबलार्धादपि, नो तुल्यं ग्रहबलं सर्वम् ॥६९८॥

भा०टी०—शुक्लपक्षमां चन्द्र बलवान् होय छे अने कृष्ण-पक्षमां तारा बलवती होय छे, शुक्लपक्षमां चन्द्र बलनी प्रधानता होय छे तेज प्रमाणे कृष्णपक्षमां तारा बलनु प्राधान्य जाणवु. चन्द्र अमृतजन्मा छे तेनु सर्व बल पण तेने अनुरूप ज होय छे, चन्द्रबल गुणरूप चन्द्रना महिमाने सर्व प्राणिओ आगल प्रकट करे छे, जेम सर्व वनचर पशुगणोमां सिंह बलवान् होय छे तेम सर्वग्रहबलमां चन्द्रबल जाणवु, चन्द्र बलवान् होय छे त्यारे ग्रहो हमेशा बलवान् होय छे. ताराबल अने सर्व ग्रहबल करतां चन्द्रबल अधिक होय छे, वास्तवमां बलीचन्द्रना अर्धबल तुल्य पण सर्वग्रहोनु बल होतु नथी,

चन्द्रबल-ताराबलनो समय विभाग ज्योतिर्निबन्धे—

तिथयः पञ्च शुक्लाद्या-श्चन्द्रस्तारायुतो बली ।
तनुत्वाद्वर्तमानोऽपि, प्रौढस्त्रीको यथा पतिः ॥६९९॥

परतश्चन्द्रमा एव, यावत्कृष्णाष्टमीदलम् ।
प्रौढत्वान्पुरुषो यद्वत् ,स्वतन्त्रः स्याद्विना स्त्रियम् ॥७००॥

कृष्णाष्टम्यूर्ध्वतो यावद्दिनं पैत्रं निशाकरः ।
क्षीणत्वाद् दुर्बलत्वेन, प्रधानं तारकाबलम् ॥७०१॥
विकलाङ्गे यथा पत्यौ, कार्येषु प्रभवः स्त्रियः ।
एवं चन्द्रे च विकले, तारा बलवती भवेत् ॥७०२॥

भा०टी०—शुक्लपक्षनी प्रतिपदादि तिथिओमां तारा बलनी साथे चन्द्र बलवान् होय छे, जेम प्रौढस्त्रीनो दुर्बल पति. ते पछी कृष्ण पक्षनी अष्टमीना पूर्वार्ध सुधी चन्द्र स्वतन्त्र बली होय छे जेम प्रौढ पुरुष स्त्रीना बल विना कार्य करे छे. कृष्णाष्टमीना उत्तरार्धथी अमावास्या सुधी चंद्र क्षीण होइ दुर्बल होय छे एटले ताराबलनी प्रधानता होय छे, जेम पतिनी विकल अवस्थामां स्त्रियो सर्व कार्योमां स्वतंत्र होय छे, एज रीते चन्द्रनी विकलतामां ताराबलवती होय छे.

अशुभ तारानो परिहार-ज्योतिःसागरे—

शशिनि परिस्फुटकिरणे, स्वतुङ्गभवने स्वकीयवर्गे वा ।
क्षौरादिकेपि कार्ये, तारादोषो न दोषाय ॥७०३॥
शुभदः स्वशुभोच्चगृहे, भवति यदेन्दुः कलावशेषोऽपि ।
ताराऽप्यशुभा शुभदा, भवति तदानीं न संदेहः ॥७०४॥

भा०टी०—चन्द्र स्पष्ट किरणो वडे प्रकाशतो होय, स्वगृही स्वउच्चनो अथवा स्ववर्गस्थित होय तो क्षौरादि कार्य जे खास तारा बलमां करवानुं छे, ते विरुद्धतारामां करे तो पण तारानी दुष्टता नडती नथी, चन्द्र भले कलामात्र शेष होय छतां गोचरथी शुभ होय स्वगृही होय सौम्यगृही होय अथवा उच्चनो होय तो तारा अशुभ होय तोये शुभ फल आपे छे एमां संदेह नथी.

दुष्टताराना अपवादमां गर्ग कहे छे—

विपदि प्रत्यरे चैव, नैधने च यथाक्रमम् ।
प्रथमान्त्यतृतीयाः स्युर्वर्जनीया यथाक्रमम् ॥७०५॥

भा०टी०—विपद्, प्रत्यरि अने नैधन तारानो अनुक्रमे प्रथम चतुर्थ अने तृतीय चरणनो त्याग करीने आवश्यक कार्य करे तो दुष्ट तारानो दोष बाधक होतो नथी.

घातचन्द्र ए शुं छे ?

आजना केटलाक ग्रामीण ज्योतिषीओ 'घातचन्द्र'ना नामथी भडकी उठे छे, एथी सारामां सारी दिनशुद्धि होय लग्न गमे तेटलु बलवान् होय छतां वर के कन्याने घात चंद्रनी बला वलगी एटले लग्न नापास ! कोइ पण शुभ कार्यने अंगे मुहूर्त गमे तेवु शुभ होय पण कार्यकारक के बीजा कोइ तत्संबंधी व्यक्तिना नामनो घात चन्द्र थयो एटले ते मुहूर्तने अंगे विरुद्ध चर्चाओ थवा माडे, परिणाम ए आवे छे के अबोध जनता सारो टाइम खोवे छे अने आवा अर्ध-दग्ध ज्योतिषीओनी वातोमा आवीने पोताना शुभ कार्यो केटलीक वार सात साधारण समयमा करी तेनुं विपरीत फल भोगवे छे. आवा कारणोने लक्ष्यमा लेइने अमो आ प्रसगे घातचन्द्रने अंगे च्यार शब्दो लखवानु प्रासंगिक मानीये छीये.

'घातचद्र' घाततिथि, घातवार, घातलग्नादि के जेना उपर आजना टिप्पणीया ज्योतिषीओ आटलुं बधुं भार मूके छे ते 'घातो, खरी रीते ज्योतिषनी वस्तु नथी पण ए यामलादि स्वर शास्त्रोमाथी उतरी आवेल निर्मूल वस्तु छे. वसिष्ठ, नारद, वराहमिहिर, लल्ल आदि प्राचीन ऋषिओए के आचार्योए आ घातना सिद्धान्तने स्वीकार्यो नथी, रत्नमाला, पाकश्री, नारचन्द्र, आरंभसिद्धि, आदि १३ मी शताब्दी सुधीना प्रामाणिक ज्योतिषशास्त्रमाये आ चन्द्र-घातनो सिद्धान्त कोइए उल्लेख्यो नथी, सर्व प्रथम आ घातनो सिद्धान्त सत्तरमा सैकामां रचायेल रामदैवज्ञना मुहूर्तचिन्तामणिमा सग्रहायेलो दृष्टिगोचर थाय छे, ते आ प्रमाणे—

भूपश्चाङ्कद्वयङ्गदिग्वह्निसप्त-
वेदाऽष्टेशार्काश्च घाताख्यचन्द्रः ।
मेषादीनां राजसेवाविवादे,
यात्रायुद्धाद्ये च नान्यत्र वर्ज्यः ॥७०६॥

भा०टी०—पहेलो पांचमो नवमो बीजो छट्ठो दशमो त्रीजो सातमो चोथो आठमो अग्यारमो अने बारमो (१-५-९-२-६-१०-३-७-४-८-११-१२) ए मेष आदि राशिओनो घात-चंद्र छे, जे राजसेवा, विवाद, यात्रा, युद्ध आदि कार्योमां वर्जवो. बीजा कामोमां नहिं.

उक्त पद्यनी पीयूषधारा टीकामां गोविन्द दैवज्ञ कहे छे—

" अन्यत्र विवाहान्नप्राशनादिमंगलकृत्ये न वर्ज्यः ।"

भा०टी०—अन्यत्र एटले विवाह अन्नप्राशन आदि मांग-लिक कामोमां घातचंद्र न वर्जवो.' पोताना कथनना समर्थनमां ते 'उक्तं च' कहीने नीचे प्रमाणे ग्रन्थान्तरनुं पद्य आपे छे.

अजाज्जन्मधीधर्मवित्तारिखत्रि-
स्मराऽब्ध्यष्टलाभान्त्यगो घातचन्द्रः ।
नृपद्वारयात्रावरोधाऽऽगमादौ,
विचिन्त्यो विवाहादिके नैवचिन्त्यः ॥७०७॥

भा०टी०—मेष राशिथी अनुक्रमे पहेली पांचमी नवमी बीजी छट्ठी दशमी त्रीजी सातमी चोथी आठमी अग्यारमी बारमी राशिमां रहेलो चन्द्र आ राशिओनो घातचंद्र होय छे राजद्वारे जतां यात्रामां अने सेनानो अवरोध उपस्थित थतां के ए प्रकारना बीजा कार्योमां घातचंद्रनो विचार करवो, विवाहादि शुभ कार्योमां एनो विचार करवो नहि.

ए पछी टीकाकार दैवज्ञ गोविंद 'अन्यत्रापि' आवा उल्लेख साथे कोइ त्रीजा ग्रन्थना "भूपञ्चनन्दा" इत्यादि त्रण पद्यो उद्धरे छे जे पैकीना प्रथम पद्यना ३ चरणोमा मेषादि १२ राशिओना घातचंद्रनो उल्लेख छे अने चोथा चरणमा—

"यात्रासु युद्धेषु च घातचन्द्रः"

—आ प्रमाणे घातचन्द्रनो विषय निर्देश्यो छे के-घातचंद्र यात्राओ अने युद्धोमा जोवानो छे, टीकाकारे आपेला ए त्रण पद्यो पैकीना छेल्ला बे श्लोको नीचे प्रमाणे छे–

युद्धे चैव विवादे च, कुमारीपूजने तथा ।
राजसेवावाहनादौ, घातचन्द्रं विवर्जयेत् ॥७०८॥
तीर्थयात्रा-विवाहान्न-प्राशनोपनयादिषु ।
सर्वमांगल्यकार्येषु, घातचन्द्रं न चिन्तयेत् ॥७०९॥

भा०टी०—युद्ध, विवाद कुमारिकापूजन राजसेवा अने वाहनारोहण आदिमा घातचद्र वर्जवो, तीर्थयात्रा, विवाह, अन्नप्राशन, उपनयन आदिकमा तथा सर्वप्रकारना मागलिक कार्योमा घातचन्द्र जोवानी जरूरत नथी.

ए पछी गोविंद ज्योतिर्विद् घातचन्द्र विषयक पोताना एक पद्यनु अवतरण आपी टीकाना अतमा कहे छे–" एतदपि निर्मूलम् ।" अर्थात् आ घातचन्द्र प्रकरण पण निर्मूल एटले आधार विनानु छे, अर्थात् आने कोइ मौलिक सिद्धान्त ग्रन्थनो आधार नथी

घातचंन्द्र, घाततिथि, घातवार, घातनक्षत्रनुं निरूपण करीने टीकाकार गोविंद घातनक्षत्र विषयक श्लोकनी टीकाना अन्तमा लखे छे–" तदेते दोषा दाक्षिणात्यप्रसिद्धा निर्मूलाः॥ " अर्थात् उपर कहेल चंद्र, तिथि, वार, नक्षत्रघातना दोषो दाक्षिणात्यदेशमां प्रसिद्ध छे अने निर्मूल–निराधार छे.

विद्वान् टीकाकारनी उपर्युक्त स्पष्ट घोषणाथी जाणी शकाय छे के आ घातप्रकरण वास्तवमां कोइ सैद्धान्तिक वस्तु नथी पण देशविशेष प्रसिद्ध एक परम्परागत रूढि छे अने तेनो संबन्ध मात्र युद्ध, यात्रा, विवादादि के जेमां प्राणहानिनो भय होय तेवा कार्योंनी साथे छे, तीर्थयात्रा, विवाह, प्रतिष्ठा अने अेज प्रकारना सर्वमांगलिक कार्योनी साथे, घात प्रकरणनो कोइ संबन्ध नथी.

आ स्पष्ट वस्तुस्थिति वांचवा छतां पण जेमना मनमांथी घातचंद्रनी भ्रांति न निकलती होय अने 'घातचंद्र'ना परिहारने माटे फांफां मारता होय तेवा रूढिप्रिय ज्योतिषीओने अमो निम्नलिखित घातचंद्रना परिहार विषयक बे श्लोको अर्पण करीये छीये के जे घातचंद्र विषयक श्लोकनी पीयूषधारा टीकानी समाप्ति पछी आ प्रमाणे छपायेल छे.

आग्नेयत्वाष्ट्रजलप-पित्र्यवासवरौद्रभे ।
मूलब्राम्हाजपादर्क्षे, पित्र्यमूलाजभे क्रमात् ॥७१०॥
रूपद्वयग्न्यग्निभूराम-द्वयब्ध्यग्न्यब्धियुगाग्नयः ।
घातचन्द्रे धिष्ण्यपादा, मेषाद् वर्ज्या मनीषिभिः ॥७११॥

भा०टी०—मेषादि १२ राशिना घातचंद्रमां नीचे प्रमाणे नक्षत्रोना पाया वर्जित करवाथी घातचंद्रनो परिहार थाय छे-मेषना घातमां कृत्तिकानो १, वृषमां चित्राना २, मिथुनमां शतभिषाना ३, कर्कमां मघाना ३, सिंहमां धनिष्ठानो १, कन्यामां आर्द्राना २, तुलामां मूलना २, वृश्चिकमां रोहिणीना ४, धनुमां पूर्वाभाद्रपदाथी ३; मकरमां मघाना ४. कुंभमां मूलना ४, अने मीनना घातचंद्रमां पूर्वाभाद्रपदाना ३ चरणो बुद्धिमानोए वर्जित करवा.

घातचन्द्र विषयक उपर्युक्त निर्णय वांचीने बुद्धिमान् ज्योतिषीओए ज्योतिर्विदाभरण जेवा कूट तथा अप्रामाणिक ग्रन्थोना आधारे बनेला संग्रह-संदर्भोनी वातो उपर केटलो आधार राखवो ए तेमने पोताने विचारवानो विषय छे.

प्रासादादि-वास्तु मुहूर्तो—

(१) गृहारम्भ मुहूर्त

भूम्यारम्भे तथा कूर्मे-सूत्रपाते शिलासु च ।
क्षुरे द्वारोच्छ्रये स्तम्भे, पट्ट-पद्मशिलासु च ॥७१२॥
शुकाग्रे पुरुषे चैव, घण्टाया कलशोच्छ्रये ।
ध्वजारोपे प्रतिष्ठायां, मुहूर्तांनि निरूपयेत् ॥७१३॥

भा०टी०—प्रासादादि निर्माणार्थे भूमिखनन १, कूर्म अथवा कूर्मशिलान्यास २, सूत्रपातनुं सूत्रथी प्रासादनी भूमि मापी तल कायम करवानुं ३, शिलान्यास ४, पीठउपर खुरकनो थर माडवानु ५, द्वारारोपण ६, स्तंभउभो करवानुं ७, पाटचढावनानुं ८, पद्मशिलाढोंकवानुं ९, शुकनास ढाकवानुं १०, प्रासाद पुरुष स्थापवानु ११, आमलसारो चढाववानुं १२, कलशचढाववानुं १३, ध्वजारोप करवानुं १४ अने प्रतिष्ठानु १५, आ प्रासाद वास्तु सर्वं मुहूर्तोना कार्योमा जोवानो होय छे अर्थात् आ सर्व कामो शुभ समयमा करवा जोइये. प्रासाद तथा गृहारंभादिना मुहूर्तोमा शेषचक्र १ तथा भूम्यारममां वृषवास्तुचक्र २, प्रासादचयनमा कूर्मचक्र ३, द्वारारोपणे द्वारचक्र ४, राहुनिवासचक्र ५, वत्सनिवासचक्र ६, स्तभोच्छ्रयमां स्तभचक्र ७, पट्टकारोपणे भौमचक्र ८, आमलसारारोपण घटाचक्र ९, प्रवेशे कलशचक्र १०, आदिचक्रो जोवाना होय छे. तेथी आ चक्रो अमोए दिनशुद्धिना निरुपण प्रसंगे आप्यां छे, जे त्याथी जोइने मुहूर्त आपवु

भूम्यारंभ मुहूर्त—

गृहवास्तु अथवा प्रासादवास्तुना आरभ करवामा प्रथममास शुद्धि जोवी, वास्त्वारममां मासशुद्धि नीचे प्रमाणे छे—

वैशाखे श्रावणे मार्गे, पौषे फाल्गुन एव च ।
कुर्वीत वास्तु प्रारम्भं, न तु शेषेषु सप्तसु ॥७१४॥

भा०टी०—वैशाख श्रावण मार्गशीर्ष पौष अने फाल्गुन ए पांच-चान्द्रमासोमां वास्तुकर्मनो आरंभ करवो, बाकीना सात महीनाओ-मां न करवो।

वास्त्वारंभना सौरमासो—

घरमारभेन्नोत्तरदक्षिणास्यं,
तुलालिमेषर्षभभाजि भानौ ।
प्राक्पश्चिमास्यं मृग कुंभ कर्क-
सिंह स्थिते द्व्यंगगते न किञ्चित् ॥७१५॥

भा०टी०—मेष वृषभ तुला वृश्चिक राशिना सूर्यमां उत्तर द्वार तथा दक्षिण द्वारना घर अथवा प्रासादनो कार्यारंभ न करवो, अेज रीते मकर कुंभ कर्क सिंह राशिनो सूर्य होय त्यारे पूर्व-पश्चिममुख घरके प्रासादनो आरंभ न करवो, अने मिथुन कन्या धन मीन आ ४ द्विस्वभावराशिना सूर्यमां कोइ वास्तुनो आरंभ करवो नहि.

ए विषे ज्योतिस्तत्त्वकार कहे छे—

पूर्वापरास्यं तु नभोऽन्त्यपौषे,
याम्योत्तरास्यं सहसि द्वितीये ।
कार्यं गृहं जीवबुधर्क्षगार्के,
नीचास्तगौ जीवसितौच हित्वा ॥७१६॥

भा०टी०—पूर्व मुख पश्चिममुख गृह श्रावण पौषमें अथवा फा-ल्गुनमासमां आरंभवुं अने दक्षिण-उत्तर मुख गृह मार्गशीर्ष वा वै-शाखमां करवुं, धन मीन मिथुन कन्याना सूर्यमां गृहारंभ करवो नहीं, गुरू-शुक्र नीचना होय वा अस्त होय तो गृहारंभमां वर्जवा.

नारदजीना मते गृहनिर्माणना महीना—

सौम्यफाल्गुन वैशाख-माघ श्रावण कार्तिकाः ।
मासाःस्युर्गृहनिर्माणे, पुत्रपौत्रधनप्रदाः ॥७१७॥

भा०टी०—मार्गशीर्ष फाल्गुण वैशाख माघ श्रावण कार्तिक आ महीना गृह निर्माणमा पुत्र पौत्र धनने आपनारा छे

नारदजीना मते गृहनिर्माणमां सौरमासो—

गृहसस्थापनं सूर्ये, मेपस्थे शुभदं भवेत् ।
वृपस्थे धनवृद्धिः स्यात्, मिथुने मरण ध्रुवम् ॥७१८॥
कर्कटे शुभद प्रोक्त, सिंहे भृत्यविवर्धनम् ।
कन्या रोग तुला सौख्यं, वृश्चिके धनवृद्धिदम् ॥७१९॥
कार्मुके तु महाहानि-र्मकरे स्याद्धनागमः ।
कुंभे तु रत्नलाभः स्याद्, मीने सद्म महाभयम् ॥७२०॥

भा०टी०—मेपना सूर्यमा गृहारंभ शुभदायक थाय छे, वृपभनासूर्यमां धन वृद्धि, मिथुनना सूर्यमा मरण दायक, कर्कमां शुभद, सिंहमा भृत्यवृद्धि, कन्यामा रोग, तुलामा सुख, वृश्चिकमां धनवृद्धि, धनुमां महाहानि, मकरमा धननु आगमन, कुंभमां रत्नलाभ, अने मीनना सूर्यमां आरंभेल गृह महाभय अने शोकदायक थाय छे.

वास्त्वारंभना नक्षत्रो गर्ग कहे छे—

श्युत्तरामृगरोहिण्यां, पुष्ये मैत्रे करत्रये ।
धनिष्ठा द्वितये पौष्णे, गृहारंभः प्रशस्यते ॥७२१॥

भा०टी०—उत्तरा फाल्गुनि, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, मृगशीर्ष रोहिणी, पुष्य, अनुराधा, हस्त, चित्रा, स्वाति, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती, ए नक्षत्रोमां गृहारम करवो शुभ गणाय छे,

देवालयना आरंभमां मासोनो अतिदेश-वास्तुमंडने—

देवालयं तडागं च, वाटिकोद्धरणं गृहम् ।
गृहमासोदितं शस्तं, माघे पि मुनिसंमतम् ॥७२२॥

भा०टी०—देवमंदिर तलाव वावडी जीर्णगृह उद्धार अे सर्व कार्यो गृहनिर्माणना महीनाओमां करवां शुभ छे. अे कार्योमां माघ मास पण शुभ मानेलो छे.

गृहारंभना वारो—

गृहारंभना मुहूर्तमां रविवार अने मंगलवार वर्जित छे, शेष सर्व वारो लीधेला छे. छतां अेटलुं ध्यानमां राखवानुं के जे ग्रहनो वार लेवो होय ते ग्रह नीचनो के अस्तगत न होवो जोइये कारण के बलहीनग्रहना वारे करायेल कार्य प्रायः सफल थतुं नथी.

गृहारंभनी तिथिओ—

गृहारंभमां प्रतिपदा, चतुर्थी, अष्टमी, नवमी, चतुर्दशी सिवायनी शुक्लपक्षनी बधी तिथिओ शुभ छे. कृष्ण पक्षमां पण रिक्ता अष्टमी अमावास्या विनानी सर्वतिथिओ गृहारंभमां लइ शकाय छे.

तिथि वारने अंगे भृगुनो मत—

रिक्ताष्टमी दर्श रवीन्दु भौमा, विवर्जनीया विदुषा प्रयत्नतः।

अर्थात्—बन्ने पक्षनी रिक्ता (४-९-१४) अष्टमी अमावास्या अे तिथिओ अने रवि सोम मंगल अे वारो विद्वाने यत्नपूर्वक गृहारंभमां वर्जवा.[१]

दिनशुद्धि विषे नारद—

मृदु-ध्रुव-क्षिप्रभेषु, रिक्तामार्कारवर्जिते ।
दिनेशुद्धेऽष्टमे लग्ने, शुभे शंकुं विनिक्षिपेत् ॥७२३॥

१-बीजा ग्रन्थकारोअे सोमवार विहित गण्यो छे.

सूर्याङ्गारकवारांशा, वैश्वानरभयप्रदाः ।
इतरग्रहवारांशाः, सर्वकामार्थसिद्धिदाः ॥७२४॥

भा०टी०—मृदु (मृगशिर, चित्रा, अनुराधा, रेवती) ध्रुव (रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा,) क्षिप्र (अश्विनी, पुष्य, हस्त, अभिजित्,) नक्षत्रोमां रिक्ता (चोथ नोम-चौदश) अमावास्या तिथि अने रवि-मंगल वर्जित दिवसे अष्टम शुद्धिमा अने शुभलग्नमा वास्तुभूमिमां शङ्कु गाडवो. रविवार मंगलवार अने आ वन्नेना अंशो अग्निभय उत्पन्न करनारा छे, बीजा ग्रहोना वारो तेमज अंशो सर्व कार्योनी सिद्धि आपनारा छे

ए विषे ज्योतिष्प्रकाशकार लखे छेः—

पातादिकान् महादोषान्, हित्वा प्रोक्तेऽत्र भादिके ।
कर्तव्यं शिल्पनिर्माण, योगैरायुष्प्रदैः शुभैः ॥७२५॥

भा०टी०—पातादि महादोषो टालीने विहित नक्षत्रादिकमां आयुर्दायक शुभयोगोवाला लग्नमां गृह प्रासादादि शिल्पकार्यनुं निर्माण करवुं

गृह-निर्माणमां चन्द्रनी दिशा—

चक्रे सप्तशलाकाख्ये, कृत्तिकाद्यानि विन्यसेत् ।
ऋक्षं चन्द्रस्य वास्तोश्च, पुरः पृष्ठे च नो शुभम् ॥७२६॥

भा०टी०—सात शलाकाना चक्रमा कृत्तिकादि २८ नक्षत्रो पोतपोतानी दिशामा लखी मुहूर्तना दिवसनुं चन्द्र नक्षत्र तथा घरनुं नक्षत्र नोवु, जो घरना द्वारनी सम्मुख दिशामा के पाछली दिशामां ए नक्षत्रो आवता होय तो मुहूर्त न करवु, तात्पर्य ए छे-के गृहनिर्माण-मुहूर्तमा चन्द्रनो वासो गृहमुख या पाछलनो न होवो जोइये अने गृहनक्षत्र पण ते वखते सामे या पाछलनी दिशामा न रहेवु जोइये. आ विधान केवल गृहने माटे छे

प्रासाद, देवालय श्रीगृहने माटे चन्द्रनक्षत्र तेम प्रासादि नक्षत्र संमुख होय तो शुभ गणाय छे.

गृहनिर्माणमां चन्द्रदिशाना फल विषे ब्रह्मशंभु—

धनलाभः प्रवासः स्यात्, आयुश्चौरभयं क्रमात् ।
दक्षाग्रवामपृष्ठस्थे, गृहकर्तुर्निशाकरे ॥७२७॥

भा०टी०—जमणा, आगेना, डाबा अने पाछलना चन्द्रमां गृहस्वामीने अनुक्रमे धनप्राप्ति, प्रवास, आयुष्यवृद्धि, अने चौरभय थाय छे.

ऋक्षोच्चये गृहारंभ नक्षत्रो—

चित्रा शतभिषा स्वाती, हस्तः पुष्यः पुनर्वसू ।
रोहिणी रेवती मूलं, श्रवणोत्तरफाल्गुनी ॥ ७२८ ॥

धनिष्ठा चोत्तराषाढा, तथा भाद्रोत्तरान्विता ।
अश्विनी मृगशीर्षं च, अनुराधा तथैव च ॥७२९॥

वास्तुपूजनमेतेषु, नक्षत्रेषु करोति यः ।
स प्राप्नोति नरो लक्ष्मी-मिति प्राह पराशरः ॥७३०॥

भा०टी०—अश्विनी रोहिणी मृगशिर पुनर्वसु पुष्य उत्तराफाल्गुनी हस्त चित्रा स्वाति अनुराधा. मूल उत्तराषाढा श्रवण धनिष्ठा शतभिषा उत्तराभाद्रपदा रेवती आ नक्षत्रोमां जे पुरुष वास्तुपूजन एटले गृहनिर्माण अने गृहप्रवेश करे छे ते लक्ष्मीने पामे छे आम पराशर ऋषि कहे छे.

भूमिशयन—

प्रद्योतनात्पञ्च नगाङ्कसूर्य-नवेन्दुषड्विंशमितानि भानि ।
शेते मही नैव गृहं विधेयं, तडाग वापी खननं न शस्तम् ॥

भा०टी०—सूर्यनक्षत्रथी ५।७।९।१२।१९।२६ मा नक्षत्रे चंद्र

होय त्यारे भूमि सूती होय छे, भूमि शयनमां गृहारंभ, के वावडी तलावनुं खोदवु शुभ नथी.

वास्तुभूषणना मते भूमिशयन—
स्याद्धात्रीशयनं शशीमिततिथौ १,
तुर्ये ४ तथार्कमिते १२ ।
ऋक्षे २७ भूपतिभि १५ र्नगैः परिमिते ७
शेषे भवेज्जागृतिः ॥ ७३१ ॥

भा०टी०—सूर्यसंक्रान्तिथी १।४।७।१२।१५।२७ आटलामी तिथिए भूमि शयनावस्थामा होय छे, बाकीना दिवसोमा भूमि जागती होय छे,

-वराहना मते गृहारंभमा पचाग शुद्धि—

वास्तोः कर्मणि धिष्ण्यवारतिथयो ऽश्विन्युत्तरारेवती,
हस्तादित्रय मैत्र तोयवसुभे पुष्यो मृगो रोहिणी ।
निन्द्यौ भूसुतभास्करौ च शुभदा पूर्णा च नन्दातिथि-
र्नेष्टा वैधृति गण्डशूलपरिघव्याघातवज्रावपि ॥७३२॥

विष्कम्भ–व्यतिपातकौ च न शुभौ योगाः परे शोभनाः,
शस्तं नागववाख्यतैतिलगरं युग्मां तिथिं वर्जयेत् ।
मौहूर्तं त्वथ विभ्वमष्टनवमं पञ्चत्रिरागाद्रिकं,
श्रेष्ठ च क्षितीर्यं तुलावृषघटौ युग्म धनुः कन्यके ।
द्वयगे वा स्थिरभे च सौम्यसहिते लग्ने शुभैर्वीक्षिते,
सौम्यैर्वीर्यसमन्वितैश्च दशमे निर्माणमाहुर्बुधाः ॥७३३॥

भा०टी०—वास्तुकर्ममां नक्षत्र वार तिथिओ आ प्रमाणे लेवां, नक्षत्रो–

अश्विनी, ३ उत्तरा, रेवती, हस्त, चित्रा, स्वाति, अनुराधा, पूर्वाषाढा, शतभिषा, धनिष्ठा, पुष्य, मृगशिर, रोहिणी ए लेवां.

वारो-मंगल रविने छोडीने बीजा सर्व लेवा.

तिथिओ-पूर्णा (५।१०।१५) नन्दा (१।६।११) ए शुभदायक छे. 'युग्मतिथि वर्जवी' एटले २।४।६।८।१०।१२।१४ तिथिओ सामान्य रीते वर्ज्य छे, ए वचनथी ३।७।१३ ए तिथिओ पण वास्तुकर्ममां शुभ समजवी, १० मी युग्म छतां पूर्णा तरीके शुभ छे, २ युग्म छतां शुभ गणाय छे शेष युग्म तिथिओ वर्ज्य समजवी.

योगा-वैधृति गंड शूल परिघ व्याघात वज्र विष्कंभ व्यतिपात ए अशुभ छे, शेषयोगा वास्तुकर्ममां शुभ छे, अशुभयोगो पैकीना व्यतीपात वैधृति संपूर्ण वर्जवा, परिघनुं पूर्वार्ध वर्जवुं, शेष अशुभ योगोनुं शक्य होय तो प्रथम चरण, अन्यथा वर्ज्य घटिकाओ वर्जवी.

करणो-नाग तैतिल बव गर ए शुभ छे शेश सामान्य छे अने विष्टि वर्जित छे.

मुहूर्तो-बीजुं त्रीजुं पांचमु छट्ठुं सातमुं आठमुं नवमुं तेरमुं ए गृहकर्ममां शुभ छे.

वास्तुनिर्माणना लग्न विषे दैवज्ञ वल्लभ--

राशौ द्व्यंगे स्थिरे लग्ने, शुभयुक्ते विलोकिते।
निर्माणं भवनस्याहुः, शस्तं कर्मगतैः शुभैः ॥७३४॥

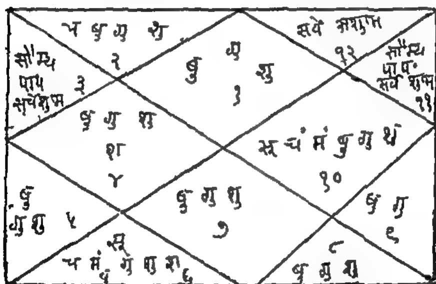
त्रिषडायगतैः क्रूरैः, शुभैः केन्द्रत्रिकोणगैः।
शुभदं गृहनिर्माणं, क्रूरो मृत्युकरोऽष्टमः ॥७३५॥

भा०टी०—द्विस्वभाव अने स्थिर राशिना लग्नमां, लग्नमां शुभग्रह स्थित होय अथवा लग्नपर शुभग्रहनी दृष्टि होय, दशमे शुभ ग्रह होय, तेवा लग्नमां गृहनिर्माण करवुं, शुभ कह्युं छे क्रूर ग्रहो त्रीजा छट्ठा स्थानमां गया होय, शुभग्रहो केन्द्र अने त्रिकोण (१।४।७।१०।५।९, स्थानोमां) गया होय तेवा समयमां गृहनिर्माणनो

आरम करवो शुभफलदायक छे गृहनिर्माणमा आठमे क्रूर ग्रहनी स्थिति मृत्युकारक होय छे.

लग्नो-तुला, वृषभ, कुंभ, मिथुन, धनु, कन्या अे शुभ छे अथवा द्विस्वभाव अने स्थिर लग्न सौम्यग्रह सहित होय अथवा शुभ ग्रहोनी दृष्टिमा होय, बलिष्ठ सौम्यग्रहो दशम स्थानमा होय तेवा समयमा निवानो गृहनिर्माण करवानुं कहे छे.

वास्तुकार्यारम्भनो उत्तम लग्न कुंडली-वास्तुतत्त्वप्रदीपे-



स्थान १।२।४।५।६।७।८।९।१०। मा जे जे ग्रहो जणाव्या छे, ए सिवायना ग्रहो ए स्थानोमां होय तो अशुभ फल आपे छे. ३।११ आ वे स्थानोमां पडेला सौम्य के पाप सर्वे शुभदायक होय छे ज्यारे १२ मा स्थानमां रहेल सौम्य क्रूर कोइ पण ग्रह शुभ फल आपतो नथी.

गृहारंभलग्ने आयुर्दायक योगाः--

गुरु र्लग्ने जले शुक्रः, स्मरे ज्ञः सहजे कुजः ।
रिपौ भानुर्यदा वर्ष-शतायुः स्याद् गृहं तदा ॥७३६॥

सितो लग्ने गुरुः केन्द्रे, खे बुधो रविरायगः ।
निवेशो यस्य तस्यायु-र्वेश्मनः शरदां शतम् ॥७३७॥

त्रिशत्रुसुतलग्नस्थैः, सूर्यारेज्यसितैर्भवेत् ।
प्रारम्भः सद्मनो यस्य, स्यायुर्वै समाशते ॥७३८॥

व्योम्नि चन्द्रः सुखे जीवो, लाभे भौमशनैश्चरौ ।
यस्य धाम्नः समाशीतिः, स्थितिस्तस्य श्रियायुता॥७३९॥

स्वोच्चस्थे लग्नगे शुक्रे, हिबुकस्थेऽथवा गुरौ ।
स्वोच्चे मन्देऽथवा लाभे, धाम्नः सश्रीः स्थितिश्चिरम्
॥ ७४० ॥

भा०टी०—जे गृहना आरंभमां गुरु लग्नमां, शुक्र चोथे भवने, बुध सातमे, मंगल त्रीजे अने सूर्य छट्ठे होय ते गृहनुं आयुष्य १०० वर्षनुं होय, जे घरना प्रारंभमां शुक्र लग्नमां, गुरु केन्द्रमां, बुध दशमे अने सूर्य अग्यारमे होय ते गृहनी स्थिति १०० वर्षनी होय. जे गृहना प्रारंभकाले सूर्य ३ जे, मंगल ६ ठे, गुरु ५ मे, शुक्र लग्नमां होय ते घर २०० वर्ष पर्यन्त टकी रहे छे, चंद्र १० मे, गुरु ४ थे, मंगल शनि ११ मे जे घरना प्रारंभ लग्नमां पड्या होय ते घर ८० वर्ष सुधी समृद्ध दशामां रहे, जे घरना प्रारंभ लग्नमां शुक्र उच्चनो थइने लग्नमां बेठो होय अथवा गुरु उच्चनो थइ ४ थे बेठो होय अथवा तो शनि उच्चनो थइ ११ मे बेठो होय ते घर अपरिमित काल पर्यन्त लक्ष्मीथी समृद्ध रहे छे.

स्वर्क्षे चन्द्रे विलग्नस्थे, जीवे कण्टकवर्तिनि ।
भवेल्लक्ष्मीयुते धाम्नि, भूरिकालमवस्थितिः ॥७४१॥

स्वमित्रोच्चगृहीशस्थै-स्तद्वंश्याश्चिरमासते ।
खगैरन्यगतैरन्ये, नीचगैश्चापि निर्धनाः ॥७४२॥

अनस्तगैः सितेज्येन्दु–जन्मराशि विलग्नपैः ।
स्वोच्चस्वक्षेत्रभागस्थैर्भवे-च्छ्री सौख्यद गृहम् ॥७४३॥
गृहिणीन्दौ गृहस्थोऽर्के, गुरौ सौख्यं सिते धनम् ।
विबले नाशमायाति, नीचगेऽस्तगतेऽपि च ॥७४४॥

भा०टी०—जे गृहना आरंभकाले चन्द्र स्वगृही होय अथवा लग्नस्थित होय गुरु केन्द्रमां होय ते गृहमा तेनो स्वामी घणा काल पर्यन्त समृद्ध दशामां निवास करे छे, जे गृहनिर्माणमा ग्रहो स्वगृही, मित्रगृही, उच्चस्थानीय अने स्वनवांश स्थित होय ते घर तेना वंशजो घणा काल सुधी भोगवे, एथी विपरीत जो ग्रहो शत्रुगृही होय अगर शत्रु नवमांशमां होय तो ते घर बीजाओ भोगवे, नीचना ग्रहो होय तो तेमा निर्धनोनो वास थाय. शुक्र गुरु चंद्र जन्मराशिपति अने लग्नेश ए बधा उदित होय, उच्चना होय, स्वगृही होय, अगर स्वनवांश स्थित होय, तेना समयमा प्रारंभेल गृह लक्ष्मी तथा सुखथी संपन्न होय छे. गृहनिर्माण समयमा चंद्र निर्बल होय तो निर्मापकनी स्त्रीनो, सूर्य निर्बल होय तो गृहपतिनो, गुरु निर्बल होय तो सुखनो अने शुक्र निर्बल होय तो धननो नाश थाय, उक्त ग्रहो नीचना अथवा अस्त होय तो पण एज प्रमाणे फल जाणवु.

गृहारंभमां उत्तम–मध्यम–अधमग्रहस्थिति—

कूरा ति–छगारसगा, सोमा किंदे तिकोणगे सुहया ।
कूरट्ठम अइअसुहा, सेसा मज्झिम गिहारंभे ॥७४५॥

भा०टी०—गृहारंभ लग्नमा क्रूर ग्रहो ३–६–११ ए स्थानोमां होय अने सौम्यग्रहो १–४–७–१०–५–९ आ केंद्र–त्रिकोण स्थानोमा होय तो शुभफल आपनारा छे, आठमा भवनमा क्रूर ग्रहो अति अशुभ छे, शेष स्थानोमा क्रूर–सौम्योनी स्थिति मध्यम प्रकारनी जाणवी

गृह अने देवालयना निर्माण मुहूर्तमां भेद नथी.

उपर गृह निर्माणने अंगे जे जे वातो कहेवाइ छे ते बधी देवालयना आरंभ मुहुर्तमां पण जोवानी छे, खातमां मात्र गृह अने देवालयना खातमां दिशा जुदी पडे छे के कूर्मशिलान्यास समयमां देवालयमां कूर्मचक्र जोवानुं अधिक छे, बीजु कंइ विशेषपणुं नथी, ए विषे व्यवहारप्रकाश लखे छे—

गृहेषु यो विधिः कार्यो, निवेशन-प्रवेशयोः ।
स एव विदुषा कार्यो, देवतायतनेष्वपि ॥७४६॥

भा०टी०—गृह संबन्धी निवेशन-प्रारंभकार्यमां अने प्रवेश कार्यमां जे विधि-मुहूर्त संबन्धी जे विधान कर्युं छे, तेज विधान विद्वाने देवालयना प्रारंभ अने प्रवेशना मुहूर्तोमां पण करवुं.

(२) कूर्मन्यास मुहूर्त—

खातमुहूर्त पछी गृहमां पायारोपनुं मुहूर्त करावे छे, पण देवालयमां भूम्यारंभ पछी कूर्मन्यासनुं मुहूर्त आवे छे, पूर्वकालमां खात पछी प्रासादना मध्यभागे नीचे केवल कूर्मन्यास करातो हतो पण मध्यकालीन शिल्पग्रन्थोमां कूर्मयुक्त शिलास्थापननुं विधान करेल होइ आजकाल कूर्माङ्कित शिलास्थापननी प्रवृत्ति चाले छे अने कूर्मशिला स्थापननुं मुहूर्त जोवाय छे.

कूर्मन्यास अथवा कूर्मशिलान्यासना मुहूर्तमां चन्द्रबल उपरान्त गृहारंभमां जणावी तेवी पंचांग शुद्धि होवी जोइये, अने कूर्मचक्र-द्वारा कूर्मनो निवास जलमां जाणी मुहूर्त आपवुं जोइये—आ मुहूर्तमां वृषवास्तुचक्र, के भूमि सूती जागती, आदि आरंभना समयनी बीजी वातो जोवानी आवश्यकता नथी, मात्र कूर्मचक्र जोइने कूर्मन्यास करवा जोइये.

(३-४-५) सूत्रपात-शिलान्यास-खुरानां मुहूर्तो—

प्रासादनी जगाती जेटली उंची लेवानी होय तेटली लेइ ते उपर सूत्र छाटी प्रासादनुं आधार स्थल चिन्हित करवु प्रथम दिक्शुद्धि करवी अने पछी शुभ समयमा सूत्र पात करवो, सूत्र-पातना नक्षत्रो नीचे प्रमाणे लेवा

> सूत्रस्य सिद्धिर्वसुनाथ हस्त-
> मैत्र स्थिर स्वाति शतर्क्ष पुष्यैः ।
> न्यासः शिलायाः कर पुष्य मार्ग-
> पौष्ण ध्रुवेषु श्रवणे च शस्तः ॥ ७४७॥

भा०टी०—धनिष्ठा, हस्त, अनुराधा, रोहिणि, उत्तराफाल्गुनि, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, स्वाति, शतभिषा अने पुष्य, आ नक्षत्रोमा सूत्रपात करवाथी कार्य सफल थाय छे अने हस्त पुष्य मार्गशीर्ष रेवती रोहिणी उत्तरा त्रणे अने श्रवणमां शिलान्यास करवाथी ते वास्तु निर्विघ्नपणे पूर्ण थाय छे खुरो स्थापनामा पण शिलान्यासोक्त नक्षत्रो लेवा, सूत्रपात, शिलान्यास, खुरस्थापनमां अशुभ योगो, क्षीणचन्द्र, मगलवार, वर्ज्य तिथिओ अने भद्रा करणनो त्याग करवो, शुभलग्नमा, लग्नना अभावमा कुलिकादि वार दोषरहित शुभ चोघडियामां पण सूत्रपातादि करी शकाय छे.

ए उपरात सूत्रपात शिलान्यासादिना मुहूर्तोमां पञ्चांग शुद्धि जोवी, कारकनानामथी चन्द्रबल जोवु. मलमास, गुरु-शुक्र-चन्द्रास्त, भद्राकरण, व्यतीपात वैधृतादि दुष्ट योगो, आदि अशुभ निमित्तो अवश्य टालवा, लग्नशुद्धि मले तो विशेष श्रेष्ठ अन्यथा भूम्यारम मुहूर्तोक्त वार दोष टाली शुभ समयमा आ सर्वे कार्यो करी लेवा.

शिलान्यास मुहूर्तमा उक्तश्लोकमा जणावेल हस्तादि ९ नक्षत्रो लेवां, तेना अभावमा गृहनिर्माणमा जणावेल मृदु लघु आदि गणोक्त

अन्य नक्षत्रो लेवां, सर्व कार्योमां सौम्य वारो लेवा, कारणे मंगलवार सिवायना बीजा वारो पण लेवा. तेवा वारोमां ते वारोनी होरा अवश्य टालवी, शास्त्र कहे छे के–

होराफल–वारफले, द्वे अपि निन्द्ये न जातु गृह्णीत ।
एकस्मिन् शुभफलदे, तयोश्च कार्यं शुभं कुर्यात् ॥७४८॥

भा०टी०—क्रूर वार अने क्रूर वारनी होरा ए बंने क्रूर न लेवां बेमांथी एक पण शुभ होय तो शुभ कार्य करवुं.

(६) द्वारारोपण मुहूर्त—

द्वारारोपण मुहूर्तमां पञ्चाङ्ग शुद्धि उपरांत केटलीक वातो जोवानी छे. मलमास गुर्वाद्यस्त अने व्यतीपातादि मोटा अपयोगो टालीने शुभ समयमां द्वारारोपण करवुं. मली शके त्यां सुधी लग्ननो समय लेवो पण तेम न बनी शके अगर लग्नशुद्धि न मलती होय तो कुलिक–अर्धप्रहरादि वार दोषो अने दुर्मुहूर्तो टालीने ज द्वार चढाववुं जोइये, वली द्वारारोपणमां वत्स तथा राहुनो वासो अवश्य जोवो, वत्स सामे तथा पाछल अने राहु संमुख आवतो होय ते मासमां द्वारारोपणनुं मुहूर्त न करवुं, मास विषयक उक्त योगो जोवा उपरांत द्वार चक्र पण जोवुं अने चक्रमां चन्द्र नक्षत्र शुभस्थाने आवतुं होय तो द्वार मुहूर्त आपवुं.

(७) स्तंभोच्छ्राय मुहूर्त—

घर या प्रासादनो प्रथम थांभलो अग्निकोणमां शुभमुहूर्ते उभो करवो ए विषयमां ब्रह्मशंभु कहे छे.—

सूत्र भित्ति शिलान्यासं, स्तंभस्यारोपणं सदा ।
पूर्वदक्षिणयोर्मध्ये, कुर्यादित्याह कश्यपः ॥७५०॥

भा०टी०—सूत्रपात, भितिचयन, शिलान्यास, अने स्तंभो-

च्छ्राय, आ सर्व कार्यो हमेशा आग्नेयकोणथी शरु करवां आम कश्यप ऋषि कहे छे

शार्ङ्गधर पण कहे छे—

प्रासादेषु च हर्म्येषु, गेहेष्वन्येषु सर्वदा।
आग्नेयां प्रथमस्तम्भं-स्थापयेद् विधिना ततः ॥७५१॥

भा०टी०—प्रासादो, हवेलियो अने बीजा घरोमा हमेशा प्रथमस्तंभ आग्नेयी दिशामा स्थापन करवो.

स्तंभारोपण सामान्य दिनशुद्धि, चन्द्रबल अने स्तंभचक्र जोइने करवुं जोइये.

(८) पट्टकारोपण मुहूर्त—

प्रासाद अथवा घरमा पाटडो अथवा मोभ स्थापवानु मुहूर्त पञ्चांगशुद्धि जोइने आपवु, कर्ताने चन्द्रबल जोवु अने मोभचक्रमा दिननक्षत्र शुभ स्थाने आवतुं होय ते दिवसे आपवु, पट्टकारोपण शुभ चोघडियामां करी शकाय छे.

(९-१०-११) पद्मशिला शुकनास-पुरुष निवेशन मुहूर्तो—

पद्मशिला शुकनास अने प्रासादपुरुष स्थापवाना मुहूर्तो सूत्र पातादिना मुहूर्तोमां जणावेल दोषो टाली पञ्चांगशुद्धिमां करवा, लग्न जो सारुं मली शकतुं होय तो लग्नमा, अन्यथा शुभ चोघडियामा अथवा विजयमुहूर्तमां पण ए मुहूर्तो करी शकाय छे

(१२) आमलसारक स्थापनमुहूर्त—

आमलसारो चढाववामा पञ्चांग शुद्धि उपरांत चन्द्रबल जोवु अने घंटाचक्र जोइ जो दिननक्षत्र चक्रना शुभस्थानमां आवतु होय तो शुभ चोघडियामां आमलसारो ढांकी लेवो, क्षीणचटमां उतर-वानी जरूर नथी

(१३-१४) कलश अने ध्वजारोपनां मुहूर्तो--

प्रासाद उपर कलश तथा ध्वजारोपनां मुहूर्तो सारी दिनशुद्धि लग्नशुद्धिमां करवां जोइये, प्रतिष्ठा मुहूर्तमां जे अशुभ योगो त्यजाय अने शुभ योगो लेवाय छे तेज प्रकारना अशुभ शुभयोगो आ मुहूर्तोमां त्यागवा अने लेवा. मात्र प्रवेशने अंगे जोवातां राहु, वत्स अने कलशचक्रो आमां जोवातां नथी, वीजु वधुं जोवाय छे.

(१५) प्रतिष्ठामुहूर्त--

पञ्चाङ्गशुद्धि--

'प्रतिष्ठा' शब्दना अत्र बे अर्थ लेवाना छे, एक नवीन देव-प्रतिमाने अधिवासना-अञ्जनशलाका करी पूजनीय बनाववा ते अने बीजो तेवी पूजनीय प्रतिमाने प्रासाद-चैत्यमां स्थापन करवा ते. अमो आ बंने प्रतिष्ठाओना मुर्हूतोनो विचार करी संक्षेपमां मुहूर्त निरूपण करशुं.

बंने प्रकारना प्रतिष्ठा-मुहूर्तोमां कारक गृहस्थादिने चन्द्र-तारादिबल अनुकूल होय त्यारे प्रतिष्ठा करवी. ए विषे नारद कहे छे-

श्रीप्रदं सर्वगीर्वाण-स्थापनं चोत्तरायणे ।
गीर्वाणरिपु गीर्वाण-मन्त्रिणोर्दृश्यमानयोः ॥७५२॥
विचैत्रेष्वेव मासेषु, माघादिषु च पञ्चसु ।
शुक्लपक्षेषु कृष्णेषु, तदादिष्वष्टसु स्मृतम् ॥ ७५३ ॥

भा०टी०—उत्तरायणकालमां सर्व देवोनी स्थापना करवी ते संपत्तिनी आपनारी छे, पण शरत ए छे के ए समय दर्मियान शुक्र तथा गुरु उदित होवा जोइये, अने उत्तरायणना माघादि ५ मासोमां चैत्र मास न होवो जोइये, पक्षोमां शुक्लपक्ष संपूर्ण अने कृष्णपक्षना आदिना ८ दिवसो प्रतिष्ठा माटे शुभ जाणवा.

आ विषयमां वसिष्ठनु कथन—

मासे तपस्ये तपसि प्रतिष्ठा, धनायुरारोग्यकरी च कर्तुः।
चैत्रे महारुग्भयदा च शुचौ, समाधये पुत्र धनप्रदा सा ॥७५४॥

आषाढमासादिचतुष्टये च,
कलत्र-संतानविनाशदा च।
ऊर्जे च कर्तुर्निधनप्रदा च,
सौम्ये सपौपेऽखिलदुःखदा च ॥ ७५५ ॥

वलक्षपक्षः शुभदः समस्तः,
सदैव तत्राद्यदिन विहाय।
अन्त्यत्रिभाग परिहृत्य कृष्ण-
पक्षोऽपि शस्तः खलु पक्षयोश्च ॥ ७५६ ॥

रिक्तावमात्यक्तदिनेष्वनिन्द्य-योगेषु वै नाशिकवर्जितेषु।
दिने महादोषविवर्जिते च, शशाङ्कताराबल संयुतेऽपि॥७५७॥
देवस्य यस्योक्ततिथौप्रशस्ते, संस्थापने कर्मणि वासरश्च।
कर्तुर्दिनेशस्य बलं सदैव, ग्रामाधिप ग्रामबलं विचार्यम्॥७५८॥

भा०टी०—माघ फाल्गुन मासमां करातो प्रतिष्ठा धन आयुष्य आरोग्य करनारी थाय छे, चैत्रमा करेल प्रतिष्ठा महारोग अने भय आपे छे, वैशाख ज्येष्टमां करेल प्रतिष्ठा पुत्र अने धनने आपनारी थाय छे, आषाढादि ४ मासमा प्रतिष्ठा पुत्र स्त्री संताननो विनाश करे छे, कार्तिकनी प्रतिष्ठाथी कारकनुं मरण थाय छे अने मार्गशीर्ष तथा पोषमां करेली प्रतिष्ठा दुःखदात्री थाय छे, शुक्ल-पक्षनो प्रथम दिन वर्जीने शेष संपूर्ण पक्ष शुभ छे अने छेल्ला त्रीजा भाग सिवायनो कृष्णपक्ष पण प्रतिष्ठामा शुभ छे. बने पक्षनी रिक्ता-तिथिओ क्षय तिथिओने छोडी त्रीजा शुभ दिनोमा शुभ योगोमां वैनाशिक नक्षत्र रहित तथा महादोष रहित चन्द्रताराबलयुक्त शुभ

दिवसे, जे देवनी स्थापना करवी होय तेनुं नक्षत्र तथा तिथि शुभ होय स्थापना कार्यमां दिवस ग्राह्य होय ते दिवसे प्रतिष्ठा करवी, प्रतिष्ठा कारकने रविबल अने ग्राम तथा ग्रामाधिपतिने चन्द्रबल छे के नहि ए विचारीने प्रतिष्ठा मुहूर्त देवुं.

उपरना विधानमां देवप्रतिष्ठामां प्रधानपणे उत्तरायण ग्राह्य कर्युं छे तेथी मार्गशीर्ष पोष प्रतिष्ठामां लीधा नथी एम छतां देवविशेष अने कारक विशेषने माटे दक्षिणायन पण ग्राह्य छे.

ए विषयमां गणपतिनुं प्रतिपादन--

यास्यायनेपि वाराह-मातृ-भैरववामनान् ।
महिषासुरहंत्रीं च, नृसिंहं स्थापयेद् बुधः ॥७५९॥

भा०टी०—विद्वाने वाराह, मातृओ, भैरव, वामन चंडिका अने नृसिंह आ सर्वेने दक्षिणायनमां पण प्रतिष्ठित करवा.

प्रतिष्ठा कर्तृपरक उत्तरायण दक्षिणायननो विवेक—

शैवसिद्धान्तशेखरे--

श्रेष्ठोत्तरे प्रतिष्ठा स्या-दयने मु(भु)क्तिमिच्छताम् ।
दक्षिणे तु मुमुक्षूणां, मलमासे न सा द्वयोः ॥७६०॥

भा०टी०–मु(भु)क्तिने इच्छनाराओ (गृहस्थो) माटे उत्तरायणमां प्रतिष्ठा करवी श्रेष्ठ छे पण मुमुक्षु (साधु)ओने माटे दक्षिणायनमां पण श्रेष्ठ छे, मलमासमां बंनेने माटे प्रतिष्ठा वर्जित छे.

तिथि विषे नारद मत—

द्वितीयादिद्वयोः पंच-म्यादितस्तिसृषु क्रमात् ।
दशम्यादेश्चतसृषु, पौर्णमास्यां विशेषतः ॥७६१॥

भा०टी०—द्वितीया, तृतीया, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी अने पूर्णिमा आ तिथिओमां प्रतिष्ठादि कार्यो करवां.

प्रतिष्ठामां वार–नारदसंहिता––

कुजवर्जितवारेषु, कर्तुः सूर्यबलप्रदे।
चन्द्रताराबलोपेते, पूर्वाण्हे शोभने दिने।
शुभे लग्ने शुभांशे च, कर्तुर्न निधनोदये ॥७६२॥

भा०टी०—मंगलवार सिवायना वारोमां, कर्ताने सूर्यबल आपतो होय त्यारे, चन्द्र तथा ताराबलवाला शुभ दिवसे, दिवसना पूर्वार्धमां कर्तानी जन्मराशि वा जन्मलग्नथी आठमी राशिनुं लग्न छोडीने शुभ लग्न तथा शुभ नवमांशमां प्रतिष्ठा करवी.

वसिष्ठना मते प्रतिष्ठामां वारफल––

कीर्तिप्रदं क्षेमकरं कृशानोर्भ-
यप्रदं वृद्धिकरं नराणाम्।
लक्ष्मीकरं सुस्थिरदं त्विनादि-
वारेषु संस्थापनमामनन्ति ॥ ७६३ ॥

भा०टी०—सूर्यादि सात वारोमां थयेली देवोनी स्थापना अनुक्रमे कीर्ति आपनारी, कल्याण करनारी, अग्निभय करनारी, कारकजनानी वृद्धि करनारी, लक्ष्मी करनारी अने दीर्घकाल स्थायी रहेनारी होय छे.

उपरना निरूपणथी जणाय छे के एक मंगलवारने छोडी बीजा बधा वारो प्रतिष्ठामां लइ शकाय छे, पण तेमां वारगत दोषो–अर्धयाम, कुलिक, कालवेला, दुर्मुहूर्त आदि अवश्य टालवा.

प्रतिष्ठामां नक्षत्र–वसिष्ठसंहिता––

हस्तत्रये मित्रहरित्रये च, पौष्णद्वयादित्यसुरेज्यभेषु।
तिस्रोत्तराधातृमृगाङ्कभेषु, सर्वामरस्थापनमुत्तमं स्तत् ॥७६४॥

भा०टी०—हस्त, चित्रा, स्वाति, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती, अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, उत्तरा-

पाढा, उत्तराभाद्रपदा, रोहिणी, मृगशीर्ष आ नक्षत्रोमां सर्व देवोनी स्थापना-प्रतिष्ठा उत्तम छे.

जैन प्रतिष्ठामां नक्षत्रो, आरंभसिद्धौ--

उद्वाहे मृगपैत्रर्क्षे, प्रतिष्ठायां तु ते उभे ।
आदित्यपुष्यश्रवण-धनिष्ठाभिः समं शुभे ॥
त्रिषु मैत्रंकरः स्वाति-मूलः पौष्ण ध्रुवाणि च ॥७६५॥

भा०टी०--विवाहमां मृगशिरा तथा मघा अने प्रतिष्ठामां ते बे सहित पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, अनुराधा, हस्त, स्वाति, मूल, रेवती रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा आ सर्व नक्षत्रो शुभ छे, छेल्लां नव नक्षत्रो विवाह तथा दीक्षामां पण शुभ छे, अने एज नक्षत्रा नारचंद्रमां लखेल छे, वसिष्ठे अश्विनी चित्रा शतभिषा अधिक लीधां छे अने मघा तथा मूल नथी लीधां.

प्रतिष्ठायां वर्जित नक्षत्रो--

जन्मर्क्षे दशमे चैव, षोऽशेऽष्टादशे तथा ।
पञ्चविंशे त्रयोविंशे, प्रतिष्ठां नैव कारयेत् ॥७६६॥
ग्रहणस्थं ग्रहैर्भिन्न-मुदितास्तमितग्रहम् ।
क्रूर भुक्ताग्रमाक्रान्तं, नक्षत्रं परिवर्जयेत् ॥७६७॥

भा०टी०—जन्म नक्षत्रमां, तेथी दशमा सोलमा अढारमा त्रेवीशमा तथा पच्चीसमा नक्षत्रमां प्रतिष्ठा न कराववी. वली ग्रहणना नक्षत्रमां, ग्रहो वडे भेद करायेल नक्षत्रमां, जे उपर ग्रह उग्यो अथवा आथम्यो होय ते नक्षत्र, क्रूर ग्रह वडे भोगवायेल भोगवातुं के अनन्तर भोगवाशे ते नक्षत्र, आ बधां नक्षत्रो प्रतिष्ठादि शुभ कार्योमां वर्जवां.

प्रतिष्ठामां योगो-वसिष्ठः--

प्रतिष्ठा देवतानां च, गृहाणि नगराणि च ।
प्राकारतोरणादीनि, सिद्धियोगे प्रकारयेत् ॥७६८॥

ભા૦ટી૦—દેવતાઓની પ્રતિષ્ઠા, ઘરનિર્માણિ, નગરનિવેશ, કોટ કઢાવવો, તોરણો ઉભા કરવા, ઇત્યાદિ કાર્યો સિદ્ધિ યોગમાં કરાવવાં. એ સિવાયના પણ શુભકાર્યોક્ત યોગો પ્રતિષ્ઠામાં લેઇ શકાય છે, અશુભ યોગો પૈકીના વ્યતીપાત વૈધૃતિ એ બે યોગો સંપૂર્ણ ત્યજવા, પરિઘયોગની પ્રથમની ૩૦ ઘડીઓ અને બાકીના દુષ્ટયોગોની પ્રથમની ૧૫ ઘડીઓ ત્યજવી. ત્રિશૂલ અને એકાર્ગલ યોગ બનતો હોય તો તે પણ અવશ્ય વર્જવો

નક્ષત્રક્ષણાની જેમ જ શાસ્ત્રમાં યોગક્ષણો પણ બતાવ્યા છે, તે લેઇને કામ કરવું, ઉદાહરણરૂપે કોઇ મુહૂર્તમાં 'વિષ્કંભ' યોગ છે એ સૂર્યોદયથી લાગ્યો છે અને એની આદિની ૩ ઘડી વર્જિત છે, પણ તે દિવસે ગ્રાહ્ય નવમાંશ ૨ ઘડી ૧૫ પલે જ ચાલુ થઇ જાય છે અને ૨ ઘડી ૩૦ પલે ઉતરી જાય છે, આવા સંયોગમાં ૩ ઘડી ત્યજવાને ખાતર નવમાંશ જતો કરવો, કે શુભ નવમાંશને ખાતર વર્જ્ય ઘડીમાં કામ કરવું ? ઉત્તર એ છે કે આવી પરિસ્થિતિમાં ક્ષણયોગનો આશ્રય લેવો, ૨ ઘડી ૧૩ પલે વિષ્કંભનો ક્ષણ ઉતરી 'પ્રીતિ'નો ક્ષણ લાગી જાય છે, તેમાં કાર્ય કરવામાં વાધો નથી.

એ સિવાય રવિયોગ, કુમારયોગ, રાજયોગ કે અમૃતસિદ્ધિયોગો પૈકીના બે વા એક શુભયોગ મુહૂર્તના દિવસે આવતા હોય તો તે મુહૂર્ત દિનશુદ્ધિના હિસાબે મહત્ત્વવાળું ગણાય છે

પ્રતિષ્ઠામાં કરણ. કરણોને અંગે આરમ્ભસિદ્ધિકાર કહે છે—

દશાઽમૂનિ વિવિષ્ટીનિ, દિષ્ટાન્યખિલકર્મસુ ।
રાત્ર્યહર્વ્યત્યયાદ્ ભદ્રા–ऽप्यदुष्टैवेति तद्विदः ॥७६८॥

ભા૦ટી૦—વિષ્ટિ વિનાના બવાદિ ૧૦ કરણો સર્વ કાર્યોમાં ગ્રાહ્ય કહ્યા છે અને રાત્રિભદ્રા દિવસમાં અને દિવસભદ્રા રાત્રિમાં હોય તો ભદ્રા પણ દુષ્ટ નથી એમ જ્યોતિર્વિદો કહે છે.

उपरना कथन प्रमाणे एक भद्रा सिवाय सर्व करणो सर्व कार्योमां विहित छे अने रात्रिदिवसना भेदे भद्रा पण अदुष्ट छे, पण केटलाक ज्योतिषीओ क्रमागत के अक्रमागत भद्रा होय छतां सर्वथा भद्राने त्याज्य कहे छे तेथी शक्य होय त्यां सुधी भद्राने वर्जवी. वली नाग अने चतुष्पद आ बे करणो पण क्रूर होइ बनतां सुधी प्रतिष्ठामां वर्जवां, एम छतांये बीजां सर्व अंगो बलिष्ट होय तो करणना कारणे ज ते समयने त्याज्य गणवो न जोइये, मात्र दिनविभागनी भद्रा दिवसे अने रात्रि विभागनी भद्रा रात्रिए अवश्य वर्जवी.

प्रतिष्ठामां लग्नशुद्धि--

प्रतिष्ठा मुहूर्तमां दिनशुद्धि प्रमाणे ज लग्नशुद्धि पण जोवी, लग्नशुद्धिमां लग्नमां ग्रहस्थिति बराबर न होवानी दशामां लग्नमां उत्तम नवमांश लेवो जोइये, शास्त्रमां कह्युं छे—

भार्धे नक्षत्रफलं, तिथ्यर्धे तिथिफलं समादेश्यम् ।
वारफलं होरायां, लग्नफलं त्वंशके स्पष्टम् ॥७६९॥

भा०टी०—नक्षत्रनुं फल नक्षत्रना (पूर्व) अर्धमां, तिथिनुं फल तिथिना (पूर्व) अर्धमां, वारनुं फल तेनी होरामां अने लग्ननुं फल तेना नवमांशमां संपूर्णपणे मले छे.

प्रतिष्ठाना लग्नने अंगे वसिष्ठ कहे छे--

पञ्चेष्टिके जीवशशाङ्क सूर्य-
मुख्यैर्ग्रहैः सौम्यनवांशयुक्तैः ।
लग्ने स्थिरे चोभयराशिलग्ने,
नवांशके चोभयभे स्थिरे वा ॥ ७७० ॥

चरोदये लग्नगते न कार्यं,
संस्थापनं नैव चरांशकेपि ।
चरोपिमुख्यः सतुलांशकश्च,
सदा मृदुत्वात्सुरसंनिवेशे ॥ ७७१ ॥

भा०टी०—लग्न पंचवर्ग शुद्ध होय, गुरु चंद्र सूर्य प्रमुख ग्रहो राशिना सौम्य नवमांश युक्त होय तेवा समयमां, स्थिर वा द्विस्वभाव लग्नमां अने द्विस्वभाव वा स्थिर नवमांशमां देव प्रतिष्ठा करवी, चर लग्न अने चर नवमांशमां देवनी स्थापना करवी नहि, परंतु तुला-शुक्र मृदुस्वभावनो होवाथी चर होवा छतांये देवोना स्थापनमां मुख्य गणाय छे.

प्रतिष्ठानी लग्नशुद्धिविषे नारदजी—

राशयः सकला श्रेष्ठाः, शुभग्रहयुतेक्षिताः ।
शुभग्रहयुते लग्ने, शुभग्रहनिरीक्षिते ॥७७२॥
राशिस्वभावजं हित्वा, फलं ग्रहजमाश्रयेत् ।
अनिष्टफलदः सोऽपि, यदास्त. फलद शशी ॥७७३॥
सौम्यर्क्षगोऽधिमित्रेण, गुरुणा वा विलोकितः ।
पञ्चेष्टिके शुभे लग्ने, नैधने शुद्धिसंश्रिते ॥७७४॥

भा०टी०—प्रतिष्ठामां सर्व राशिओ श्रेष्ठ छे जो ते शुभ ग्रह सहित होय, अथवा शुभ दृष्ट होय, शुभ ग्रहयुक्त अथवा शुभग्र दृष्ट लग्न राशिस्वभावज फलने छोडी ग्रहस्वभावज फलने आपे छे. एज रीते अनिष्ट फल आपनारो चंद्र पण शुभक्षेत्री होय अथवा अधिमित्रवडे के गुरु वडे दृष्ट होय तो शुभ फलदायक बनी जाय छे, पण लग्न पञ्चवर्ग शुद्ध अने अष्टम स्थान शुद्धिवाळुं जोईये.

प्रतिष्ठामां लग्न व्यवस्था. आरंभ सिद्धी—

लग्नं श्रेष्ठं प्रतिष्ठायां, क्रमान्मध्यमथावरम् ।
द्व्यङ्गं स्थिरं च भूयोभि-र्गुणैराढ्यं चरं तथा ॥७७५॥

भा०टी०—प्रतिष्ठामां द्विस्वभाव, स्थिर अने गुणाधिक चर ए लग्नो अनुक्रमे श्रेष्ठ, मध्यम अने जघन्य कोटिनां गणाय छे.

लग्नकुंडलीमां ग्रहव्यवस्था, नारदमते—

लग्नस्थाः सूर्यचन्द्राऽऽर–राहुकेत्वर्कसूनवः ।
कर्तुर्मृत्युप्रदाश्चान्ये, धनधान्यसुखप्रदाः ॥७७६॥

द्वितीये नेष्टदाः पापाः, शुभाश्चन्द्रश्च वित्तदाः ।
तृतीये निखिलाः खेटाः, पुत्रपौत्रसुखप्रदाः ॥७७७॥

चतुर्थे सुखदाः सौम्याः, क्रूराश्चन्द्रश्च दुःखदाः ।
ग्लानिदाः पञ्चमे क्रूराः, सौम्याः पुत्रसुखप्रदाः ॥७७८॥

पूर्णः क्षीणः शशी तत्र, पुत्रदः पुत्रनाशदः ।
षष्ठे शुभाः शत्रुदाः स्युः, पापाः शत्रुक्षयप्रदाः ॥७७९॥

पूर्णः क्षीणोऽपि वा चन्द्रः, षष्ठेऽखिलरिपुक्षयम् ।
करोति कर्तुरचिरा–दायुष्पुत्रधनप्रदः ॥७८०॥

व्याधिदाः सप्तमे पापाः, सौम्याः सौम्यफलप्रदाः ।
अष्टमस्थानगाः सर्वे, कर्तुर्मृत्युप्रदा ग्रहाः ॥७८१॥

धर्मे पापा घ्नन्ति सौम्याः, शुभदाः शुभदः शशी ।
भङ्गदाः कर्मगाः पापाः, सौम्याश्चन्द्रश्च कीर्तिदाः ॥७८२॥

लाभस्थानगताः सर्वे, भूरिलाभप्रदा ग्रहाः ।
व्ययस्थानगताः शश्वद्–द्रव्यव्ययकराग्रहाः ॥७८३॥

गुणाधिकतरे लग्ने, दोषात्यल्पतरे यदि ।
सुराणां स्थापनं तत्र, कर्तुरिष्टार्थसिद्धिदम् ॥७८४॥

भा०टी०—लग्नमां पडेला सूर्य, चन्द्र, मंगल, राहु, केतु, शनि ए ग्रहो प्रतिष्ठाकारकने मृत्युदायक होय छे ज्यारे शेष–बुध, गुरु, शुक्र ए धनधान्य अने सुखना आपनारा छे.

बीजा भवनमां रहेल पापग्रहो अशुभ फल आपे छे, ज्यारे शुभग्रहो तथा चन्द्र धननी वृद्धि करनारा छे.

तृतीय भवने रहेला सर्वग्रहो पुत्रपौत्र अने सुखने आपनारा होय छे

चोथा स्थानमा रहेला सौम्यग्रहो सुखदायक अने क्रूर ग्रहो तथा चन्द्र दुःखदेनारा थाय छे.

पांचमे रहेला क्रूग्रहो ग्लानिदायक थाय छे ज्यारे सौम्यग्रहो पाचमे पुत्र सुख आपे छे, पाचमे रहेल पूर्ण चद्र पुत्रदायक अने क्षीणचंद्र पुत्रनाशक थाय छे.

छट्ठा भवनमा रहेला शुभ ग्रहो शत्रुओनी वृद्धि करे छे अने पापग्रहो छट्ठे रहीने शत्रुओनो. नाश करनारा थाय छे, चन्द्र पूर्ण होय चाहे क्षी छट्ठे रहेलो सर्व शत्रुओनो नाश करे छे अने प्रतिष्ठाकारकने थोडाज समयमां आयुष्य पुत्र धनदायक बने छे.

सातमा भवने रहेला पापग्रहो रोग करे छे अने सौम्यग्रहो सातमे शुभफलदायी होय छे

आठमे रहेला सर्वग्रहो कर्ताने मरण आपनारा थाय छे

नवमे रहेला पापग्रहो धर्मनी हानि करे छे अने सौम्यग्रहो तथा चन्द्र नवमे शुभफलदायक होय छे

दशमा स्थाने पापग्रहो भग देनारा होय छे अने चन्द्र तथा सौम्यग्रहो कीर्तिदायक होय छे.

लाभ स्थाने रहेला सर्व ग्रहो घणो लाभ आपनारा थाय छे ज्यारे बारमा स्थाने पडेला ग्रहो हमेशा द्रव्यव्यय करावे छे.

अधिकतर गुण अने अल्पतर दोषवाला लग्नमा देवप्रतिष्ठा कर्ताने इष्टपदार्थनी सिद्धिदेनारी निवडे छे.

आरम्भसिद्धिना मते-प्रतिष्ठा लग्ननी ग्रहव्यवस्था-

" प्रतिष्ठायां अर्को रविकुपचये शीतकिरणः,
स्वधर्माद्ये तत्र क्षितिज-रविजौ आयरिपुगौ ।

बुध-स्वर्गाचार्यौ, व्ययनिधनवर्जौ भृगुसुतः,
सुतं यावल्लग्नान्नवमदशमायेष्वपि तथा ॥७८५॥"

भा०टी०—प्रतिष्ठामां सूर्य उपचयमां (३-६-१०-११ स्थानोमां) श्रेष्ठ छे, चन्द्र २-३-६-९-१०-११ आ स्थानोमां आवेल होय तो श्रेष्ठ छे, मंगल अने शनि ३-६-११ आ स्थानोमां श्रेष्ठ गणाय छे, बुध तथा गुरु आठमा बारमा सिवाय बीजा सर्व स्थानोमां रहेला शुभ फल आपनारा होय छे, अने शुक्र १-२-३-४-५-९-१०-११ आ स्थानोमां होय तो शुभ छे.

नारचन्द्रना मते उत्तम-मध्यम-विमध्यमग्रहस्थिति—

"सौरार्कक्षितिसूनवस्त्रिरिपुगा द्वित्रिस्थितश्चन्द्रमा-
एकद्वित्रिखपञ्चबन्धुषु बुधः शस्तः प्रतिष्ठाविधौ ।
जोवः केन्द्रनवस्वधीषु भृगुजो व्योमत्रिकोणे तथा,
पातालोदययोः सराहुशिखिनः सर्वेऽप्युपान्त्ये शुभाः॥७८६॥"

भा०टी०—शनि, सूर्य, मंगल ३-६ स्थाने, चंद्र २-३ स्थाने, बुध १-२-३-४-५-१० आ स्थानोमां, गुरु १-४-७-१०-९-२-५ आ स्थानोमां, शुक्र १०-५-९-४-१ आ स्थानोमां अने राहु केतु सहित सर्व ग्रहो ११ मा स्थाने होय तो उत्तम गणाय छे.

खेऽर्कः केन्द्रनवारिगः शशधरः सौम्यो नवास्तारिगः,
षष्ठो देवगुरुः सितस्त्रिधनगो मध्याः प्रतिष्ठाक्षणे ।
अर्केन्दुक्षितिजाः सुते सहजगो जीवोऽव्ययास्तारिगः,
शुक्रो व्योमसुते विमध्यमफलः शौरिश्च सद्भिर्मतः ॥७८७॥
सर्वेऽपरत्र वर्ज्या, जन्मस्मरगः शिखी शशियुतश्च ।
शुभदस्त्रिशत्रुसंस्थोऽपरत्र मध्यो विधुन्तुदस्तद्वत् ॥७८८॥

भा०टी०—१० मां भवने सूर्य, १-४-७-१०-९-६ आ स्थानोमां चंद्रमा; ९-७-६ आ भवनोमां बुध, ६ ट्ठे गुरु; ३-२

स्थाने शुक्र, प्रतिष्ठामां मध्यम गणाय छे. ज्यारे ५ मे सूर्य, चन्द्र, मंगल, ३ जे गुरु, १२-७-६ मां शुक्र अने १०-५ मे शनि, आ ग्रहस्थितिने विद्वानोए प्रतिष्ठामा विमध्यम रूपे स्वीकारी छे. शेष सर्वस्थानोमां ग्रहोनी स्थिति वर्ज्य गणाय छे, 'प्रथम तथा सप्तम भवनमां केतु चंद्रयुक्त होय तो पण वर्जित छे, ३-६ ठ्ठे केतु शुभ छे अने अन्य स्थानोमा मध्यम छे, एज प्रमाणे राहुने अंगे पण जाणवुं

पूर्णभद्रज्योतिषानुसारिप्रतिष्ठालग्नग्रहस्थितिफल-

प्रासादभंग १ हानी २
धन ३, स्वजन ४ पुत्रपीड ५ रिपुघाताः ६ ।
स्त्रीमृति ७ मृति ८ धर्मगमाः ९
सुख १० र्द्धि ११ शोका १२ स्तनोः प्रभृति सूर्यात् ॥७८९॥

भा०टी०—पहेलाथी बारमा भवन सुधीमां रहेला सूर्यनु फल अनुक्रमे-प्रासादभग १ हानि (धनहानि) २ धनप्राप्ति ३ कुटुम्बपीडा ४ पुत्रपीडा ५, शत्रुनाश ६, स्त्रीमरण ७ मरण (कर्तृमरण) ८, धर्महानि ९, सुखप्राप्ति १०, ऋद्धिलाभ ११ अने शोक १२ आ प्रमाणे थाय छे

कर्तृविनाश १ धनागम २,
सौभाग्य ३ बन्द्व ४ दैन्य ५ रिपुविजयाः ६ ।
शशिनोऽसुख ७ मृति ८ विघ्ना ९,
नृपपूजा १० विजय ११ वसुहानी १२ ॥७९०॥

भा०टी०—कर्तृमृत्यु १, धनलाभ २, सौभाग्यप्राप्ति ३, क्लेश ४, दीनता ५, शत्रुविजय ६, दुःख ७, मृत्यु ८, विघ्न ९, राजपूजा १०, देशलाभ ११, अने धनहानि १२ ए लग्नादि १२ स्थानोमां रहेला चंद्रनुं फल छे.

दहनं १ सुरगृहभंगो २,
भूलाभो ३ रोग ४ पुत्रशस्त्रमृती ५ ।
रिपु ६ नारी ७ स्वजन ८ गुणभ्रंशा ९,
रोगा १० ऽर्थ ११ हानयो भौमात् ॥७९१॥

भा०टी०—अग्निदाह १, देवगृहभंग २ भूमिलाभ ३ रोग ४ शस्त्रद्वारा पुत्रमरण ५ शत्रुनाश ६ स्त्रीनाश ७ स्वजनमरण ८ गुणनाश ९ रोग १० धनप्राप्ति ११ हानि १२. लग्नादि १२ स्थानगत मंगलनुं आ प्रमाणे फल होय छे.

चिरमहिम १ धन २ रिपुक्षय ३-
सुख ४ सुत ५ परिपन्थिमरण ६ वरकन्याः ७ ।
शशिजेन सूरिमृत्यु ८-
र्वसु ९ कर्म १० भरण ११ रैनाशाः ॥७९२॥

भा०टी०—चिरकाल सुधी महिमा १, धन २, शत्रुक्षय ३, सुख ४, पुत्रलाभ ५, शत्रुमरण ६, श्रेष्ठ कन्याप्राप्ति ७, प्रतिष्ठाकर्तृ आचार्यमरण ८, धन ९, कार्यसिद्धि १०, आभूषण प्राप्ति ११, धननाश १२, आ प्रमाणे लग्नादि द्वादश स्थानास्थित बुध फल आपे छे.

कीर्ति १ र्वृद्धिः २ सौख्यं ३,
रिपुनाशः ४ सुतसुखं ५ स्वजनशोकः ६ ।
स्त्रीसुख ७ गुरुमृति ८ धन ९ लाभ १०
ऋद्धयो ११ हानि १२ रमरगुरौ ॥७९३॥

भा०टी०—कीर्ति १, वृद्धिः २, सुख ३, शत्रुनाश ४, पुत्रसुख ५, कुटुम्बशोक ६, स्त्री सुख ७, गुरुमृत्यु ८, धन ९, लाभ १०, ऋद्धि ११, हानि १२, लग्नादि द्वादशभवनमां गुरु रहेतां उक्त प्रकारनुं फल आपे छे.

सिद्धि १ धन २ मान ३ तेजः,
स्त्रीसुख दुष्कीर्तयः सुताप्तियुताः ।
चैत्यादिसर्वहानि ७
श्वासुख ८ मितरेषु ९।१०।११।१२ पूज्यता शुक्रात् ॥७९४॥

भा०टी०—कार्यसिद्धि १, धन २, मानप्राप्ति ३, तेजोवृद्धि ४, स्त्रीसुख ५, अपकीर्तियुत पुत्रप्राप्ति ६, चैत्यादिकार्योंने हानि ७, दुःख ८, अने ए पछीनां ९।१०।११।१२ आ स्थानोमां रहेल शुक्र पूज्यत्वनी वृद्धि करे छे.

पूजा १ कर्तृविघात २ भूरिविभव ३ प्रासादबन्धुक्षयाः ४,
पुत्राक्षेम ५ विपक्षरोगविलय ६ ज्ञातिप्रियाव्यापदः ।
गोत्रप्राणिविपत्ति ८ पातकपरिष्वंगो च ९ कार्यक्षतिः १०,
कान्ताकाञ्चनरत्नजीवितधनं ११ मन्देन मान्द्योदयः १२॥७९५॥

भा०टी०—१ लग्नमां शनि पूजानी हानि करे, धनमां कारकनो विघात २, त्रीजा भवनमां अतिधनप्राप्ति ३, चोथे प्रासाद तथा बन्धुक्षय ४, पांचमे पुत्रने अकुशल ५, छठ्ठे शत्रु तथा रोगनो नाश ६, सातमे ज्ञातीय स्त्रीजनोने चिन्ता अने आपत्ति ७, आठमे गोत्रियो उपर विपत्ति ८, नवमे पापवृत्ति ९, दशमे कार्यहानि १०, अग्यारमे स्त्री सुवर्ण रत्न जीवित अने धन तथा बारमे शनि मांदगी आपनारो थाय छे.

उदयप्रभ-पूर्णभद्र-नारद-वसिष्ठसंमत प्रतिष्ठालग्न-कुंडली ग्रहस्थिति—

सू-३-६-१०-११। नारद-वसिष्ठे १० मे सूर्य लीधो नथी।
चं-२-३-६-९-१०-११। नारदे पूर्णचंद्र ५ मो लीधो छे. पूर्णभद्रे ९मो वर्ज्यो छे
मं-३-६-११।
बु-१-२-३-४-५-६-७-९-१०-११। उदयप्रभदेवे ६ ट्ठो लीधो छे.
गु-१-२-३-४-५-६-७-९-१०-११। उद० ६ट्ठो लीधो छे, पूर्ण०आदिए नहिं.
शु-१-२-३-४-५-९-१०-११। नारद वसिष्ठे ७, पूर्णभद्रे १२मो लीधो छे.
श-३-६-११।
रा-के-३-६-११।

नारचंद्रोक्त उत्तम-मध्यम-विमध्यम प्रतिष्ठालग्न-कुंडलीग्रह स्थिति—

सू-उत्तम ३-६-११। मध्यम-१०। विमध्यम ५।
चंद्र-उत्तम २-३-११। मध्यः १-४-६-७-९-१०। विमध्य० ५।
मं-उत्तम ३-६-११। मध्यम ०। विमध्यम-५।
बु-उत्तम १-२-३-४-५-१०-११। म०-६-७-९। विमध्यम०।
गुरु-उत्तम १-२-४-५-७-९-१०-११। मध्यम ६। विमध्यम ३।
शु-उत्तम १-४-५-९-१०-११। मध्यम २-३। विमध्यम ६-७-१२।
श-उत्तम -३-६-११। मध्यम०। विमध्यम ५-१०।
रा-के-उत्तम-३-६-११। मध्यम २-४-५-८-९-१०-१२। विमध्यम०।

प्रतिष्ठा लग्नमां उत्तम-मध्यम नवमांशो—

अंशास्तु मिथुनकन्या-धन्वाद्यर्धं च शोभनाः।
प्रतिष्ठायां वृषः सिंहो, वणिग् मीनश्च मध्यमाः ॥७९६॥

भा०टी०—प्रतिष्ठामां मिथुन कन्या धनुनो पूर्वार्ध आ अढी द्विपद नवमांशो उत्तम अने वृषभ, सिंह, तुला, मीन, अेना नवमांशो मध्यम गणाय छे.

लग्नकुंडलीनी उत्तम मध्यम ग्रहस्थिति ज नवमांशनी पण जाणवी जोइये, ए उपरान्त नवमांशमां वर्गशुद्धि पण अवश्य जोवी अने जे नवमांशमा षड्वर्ग, पंचवर्ग अथवा चतुर्वर्ग शुद्धि अने पृथ्वी अथवा जल तत्त्व चालतुं होय एवो नवमांश अगर तेनो भाग जोइने तेवा समयमा अधिवासना अने प्रतिष्ठा करवी. ए सबन्धमां कह्युं छे-

द्वयोर्नवांशयोः शुद्धिः, प्रतिष्ठायां विलोकयेत् ।
आद्येऽधिवासना बिम्बे, द्वितीये च शलाकिका ॥७९७॥

भा०टी०—प्रतिष्ठामां बे नवमांशोनी शुद्धि जोवाय छे, प्रथमशुद्धनवमांशमां बिम्बनी अधिवासना अने बीजामां प्रतिमाने अंजनशलाका कराय छे

कया लग्नमा कयो नवमांश अथवा नवमांशो, षड्वर्ग, पञ्चवर्ग या चतुर्वर्ग शुद्ध होय छे ते नीचेनी गाथाओथी जाणी शकाशे-

सत्तमनवमा मेसे १, पंचमतइयाविसे २ मिहुणि छठो ३ ।
पढमतइआ य कक्के ४, सिंहे छट्ठो ५ कन्नित इओ ६पी ॥७९८॥
अट्ठम नवमा य तुले ७, विच्छियलग्गे चउत्थयनवंसो ८ ।
धणुलग्गि छट्ठ सत्तम-नवमा मयरमि पचमओ ॥७९०॥
छट्ठट्ठमा य कुंभे, ११, पढमो तइयो अ मीणलग्गमि ।
चउपणवग्ग छवग्गे, एएसु नवंस एसु सुहो ॥८००॥

भा०टी०—मेष लग्नमा सातमो नवमो, वृषमां त्रीजो पांचमो, मिथुनमां छट्ठो, कर्कमा पहेलो त्रीजो, सिंहमां छट्ठो, कन्यामां त्रीजो, तुलामां आठमो नवमो, वृश्चिकमा चोथो, धनुमा छट्ठो सातमो नवमो, मकरमां पांचमो, कुंभमा छट्ठो आठमो अने मीनमा पहेलो त्रीजो नवमांश शुभ होय छे, उक्त नवमांशोमां कोइ चतुर्वर्ग, कोइ पचवर्ग अने कोइ षड्वर्ग शुद्ध होय छे.

अहीयां अमो पञ्चवर्ग तथा षड्वर्ग शुद्ध नवमांशोनुं तत्त्वोनी साथे समयपूर्वक स्पष्टीकरण आपशुं के जे कोष्टक उपरथी ज्योतिषीओ विना कष्टे शुद्ध नवमांश जाणी शके-

लग्नेषु	सौम्यनवांशे.	वर्गशुद्धिः	कियत्पलेषु	तत्त्वं	अशुद्धांगं	नवमांशपलादिमानं
मेषे	७ तुलांशे	५ पंचभिः	आद्य १८	पृथ्वी	लग्नं	२५ पलाः
मेषे	९ धनुरंशे	५ ,,	अन्त्य १८	पृथ्वी	लग्नं	,, ,,
वृषे	३ मीनांशे	६ षड्वर्गे	आद्य ७ पलेषु	पृथ्वी	०	२८-२६-४०
वृषे	९ वृषांशे	६ ,,	आद्य १४ ,,	जलं	०	,, ,, ,,
मिथुने	६ मीनांशे	६ ,,	आद्य ८ ,,	जलं	०	३३-५३-२०
मिथुने	६ मीनांशे	५ ,,	संपूर्णे	जलं	द्वादशांश	,, ,,
कर्के	१ कर्कांशे	६ ,,	आद्य २८ ,,	पृथ्वी	०	३७-५३-२०
कर्के	३ कन्यांशे	६ ,,	संपूर्णे	पृथ्वी	०	,, ,, ,,
सिंहे	६ कन्यांशे	५ ,,	अन्त्य २८ ,,	जलं	लग्नं	३८
कन्यायां	३ मीनांशे	६ ,,	अन्त्य २७ ,,	पृथ्वी	०	३६-४६-४०
तुलायां	८ वृषांशे	६ ,,	आद्य १८ ,,	पृथ्वी	०	३६-४६-४०

तुलाया	९ मिथुनांशे	६ ,,	अन्त्य २७	पृथ्वी	०	२६-४६-४०
वृश्चिके	४ तुलांशे	५ ,,	आद्य २८	जल	लग्न	३८
धनुषि	६ कन्यांशे	५ ,,	सपूर्ण	जल	द्रेष्काण	२७-४३-२०
धनुषि	७ तुलांशे	५ ,,	अन्त्य ९	पृथ्वी	द्रेष्काण	,, ,,
धनुषि	९ धनुरंशे	५ ,,	आद्य ९	पृथ्वी	द्रेष्काण.	,, ,,
मकरे	५ वृषांशे	५ ,,	आद्य १६	जल	लग्न	३३-५३-२०
कुंभे	६ मीनांशे	५ ,,	अन्त्य २०	जल	लग्न	२८-२६-४०
कुंभे	८ वृषांशे	५ ,,	अन्त्य १४	पृथ्वी	लग्न	,, ,,
कुंभे	९ मिथुनांशे	५ ,,	आद्य ७	पृथ्वी	लग्न	,, ,,
मीने	१ कर्कांशे	६ ,,	आद्य १८	पृथ्वी	०	२५
मीने	३ कन्यांशे	६ ,,	सपूर्ण	पृथ्वी	०	२५

नोट:—कोष्टकमा आपेल नवमांशोनु मान पाटण (गुजरात)ना लग्नमानने अनुसारे छे तेथी गुजरात मार याड आदिना स्थानोमा सैंकडो सिवाय अंतर पडतु नथी पण अतिदूर वर्ती स्थानोमा कइक अंतर पडशे. माटे तेवा प्रदेशोमा त्याना लग्नमानथी नवमांशोनु पलादिमान निश्चित करवु

१८—मुद्रा लक्षण—

प्रतिष्ठादिविधानेषु, यासां पूर्णोपयोगिता ।
ता मुद्राः कथिता ह्यत्र, विधिकारहितेच्छया ॥१८॥

भा०टी०—प्रतिष्ठा आदि विधिना कामोमां जेओनो विशेष उपयोग कराय छे, ते मुद्राओ विधिकारोना हितार्थे आ परिच्छेदमां कही छे.

मुद्राओनुं महत्त्व—

पूर्वकालमां मुद्राओनुं विशेष महत्त्व हतुं, कोइ पण देवनुं आराधन करतां तेनुं आह्वान करी तेनी प्रियमुद्रा देखाडवा पूर्वक जाप–पूजन करातुं हतुं, विद्यादेवीओ, दिशापालो, क्षेत्रपालो आदिनी मुद्राओ हती अने आजे पण प्राचीन प्रतिष्ठाविधिओमां संरक्षायेल छे, छतां आजे बधी ते मुद्राओ प्रचलित नथी, ते पैकीनी जे जे आजे प्रतिष्ठादिनां विधि–विधानोमां अथवा जापा–नुष्ठानोमां प्रयुक्त थाय छे ते घणी खरी अहियां आपी छे.

आ मुद्राओना निरूपणमां अमोए मुख्य आधारग्रन्थ निर्वाण कलिकाने मान्यो छे, छतां जे मुद्रानुं निरूपण निर्वाण कलिकामां न मल्युं त्यां बीजा प्रतिष्ठाकल्पोना आधारे ते मुद्रानुं वर्णन आप्युं छे.

मुद्गर मुद्रा आजे विधिकारो जे रीते देखाडे छे ते पौराणिक पद्धतिनी छे, जैन पद्धतिनुं वर्णन भिन्न छे, अमोए जैन पद्धति प्रमाणे मुद्गर मुद्रानुं स्वरूप लख्युं छे.

मत्स्यमुद्रा खरी रीते पौराणिक छे, प्राचीन कोइ पण जैन ग्रन्थमां एनो उल्लेख नथी छतां आधुनिक विधिओमां एनो स्वीकार थयो छे अने विधिकारो जलानयनमां आ मुद्रानो प्रयोग करे छे तेथी अमोए पण एनुं निरूपण पौराणिक श्लोकना आधारे आप्युं छे.

आधुनिक विधिओमां एक बीजी पौराणिक मुद्रानो पण उल्लेख छे जेनुं नाम कच्छप मुद्रा छे. विधिकारो आनो पण जलयात्रामां उपयोग करे छे छता अमोए आ मुद्रा छोडी दीधी छे, केम के एना मूल आधारग्रन्थ प्रमाणे आ मुद्रा जलानयनमां नहि पण देवताना ध्यान-कर्ममा प्रयुक्त करवानु त्या सूचव्यु छे. जेम के " कूर्ममुद्रेयमाख्याता, देवताध्यानकर्मणि ।" आ उपरथी जणाशे के कच्छपमुद्रानो जलयात्रामा उपयोग करवानी कशी आवश्यकता नथी.

कइ मुद्रानो क्या उपयोग थाय छे ए विषयमां अमोए ते ते मुद्रानां निरूपणने अंते सूचवेल छे छतां ए सूचनने ज पकडीने बेसवुं न जोइये, केइ मुद्राओ एवी पण छे के तेओ सूचवेल प्रसंग सिवायना प्रसंगोमां पण प्रयुक्त थाय छे, माटे ए विषय गुरुगमथी हृदयगत करी विधिओमा ज्यां ज्यां जेनो प्रयोग करवानी सूचना होय त्या त्यां ते मुद्रानो उपयोग करवो.

मुद्रावस्तु तांत्रिकोनी छे—

मुद्राओ आपणा सिद्धान्तनी वस्तु नथी पण एनो प्रादुर्भाव तान्त्रिकोए कर्यो छे विक्रमना पाचमा सैकाथी तांत्रिकोना प्राबल्य कालमां अने ते पछीना कालमां बनेला उपासना अने अनुष्ठान विषयक दरेक ग्रन्थमा आ मुद्राओनुं थोडु घणु वर्णन मले छे, निर्वाणकलिकामा आपणामां प्रचलित अने अप्रचलित अनेक मुद्राओनुं वर्णन छे, आ उपरथी समजाय छे के मुद्राओ तांत्रिक छताये आपणा पूर्वाचार्योए ए वस्तु स्वीकारी छे एटले आपणे पण ए वस्तुने यथार्थ समजीने एनो विधि-आम्नाय पूर्वक ज प्रयोग करवो जोइये के जेथी अनुष्ठानन्नी सफलता थाय, मुद्राविषयक विधि विवेकनी नामतमा विष्णुसंहिताकारे नीचेना शब्दोमां निरूपण कर्युं छे.

मानसो रूपसंकल्पो, मुद्रा मोक्षार्थिनां स्मृता ।
इतरेषां तु हस्ताभ्यां, प्रयोगः शस्यते बुधैः ॥
नाऽन्यसंदर्शने मुद्रा, नाऽनिमित्तं च बन्धयेत् ।
गुह्यमेतद्धि तन्त्रेषु, तस्माद् रहसि योजयेत् ॥

भा०टी०—मोक्षार्थि पुरुषोना जापानुष्ठानमां पोताना इष्ट दैवतना मानसिकरूप-संकल्प तेज मुद्रा छे, ज्यारे बीजाओने माटे हस्त प्रयोगात्मक मुद्रा वखाणाय छे, बीजाओने जोतां अथवा विना कारणे मुद्रा बन्ध न करवो, केम के तंत्रशास्त्रमां ए गुह्य तत्व गणाय छे, तेथी एकान्तमां मुद्राप्रयोग करवो.

मुदं कुर्वन्ति देवानां, राक्षसान् द्रावयन्ति च ।
इत्येवं सर्वमुद्राणां, मुद्रात्वं तान्त्रिका विदुः ॥
अलाभे सर्वमुद्राणा मञ्जलिर्हृदि मूर्ध्नि वा ।
सामान्यमुद्रा विज्ञेया, सर्वेषां च दिवौकसाम् ॥
वृथान्यदर्शने वापि, प्रत्युक्ता विफलास्तथा ।
कुप्यन्ति देवताश्चास्य, सिद्धिमाशु हरन्ति च ॥
गुप्तं मुद्रागणं यस्तु, यथाकालं प्रदर्शयेत् ।
कामाः सर्वेऽस्य सिध्यन्ति, प्रीयन्ते चास्य देवताः ॥

भा०टी०—देवोने प्रमोद आपे अने राक्षसोने द्रवित (ढीला) करे छे एथी आ सर्व मुद्राओनुं मुद्रापणुं छे आम तान्त्रिको कहे छे, सर्व मुद्राओना अभावे हृदयमां अथवा मस्तके अंजलि करवी ए पण सर्वदेवोनी सामान्य मुद्रा जाणवी जोइये, जे निरर्थक अथवा बीजानी दृष्टिमां मुद्राओनो प्रयोग करे छे ते फोकट जाय छे एटलुंज नहि पण तेना पर देवताओ कोपे छे अने अनुष्ठेय कार्यनी सिद्धिने हरी ले छे. जे यथासमय सर्व मुद्राओ देखाडे छे तेनी सर्व कामनाओ सिद्ध थाय छे अने ए उपर देवताओ खुशी थाय छे.

तान्त्रिकोमां मुद्राओनुं केटलुं महत्त्व छे ते वांचको उपरना वर्णनथी समजी शकशे.

१-प्रतिष्ठोपयोगी मुद्राओ—

(१) जिनमुद्रा—

" चतुरङ्गुलमग्रतः पादयोरन्तर, किञ्चिन्न्यूनं च पृष्ठतः कृत्वा समपादकायोत्सर्गेण जिनमुद्रा।" भा०टी०—
बे पगो वच्चे आगल चार आगल अने पाछल कांइक ओछुं अतर राखीने कायोत्सर्ग करवो ते 'जिनमुद्रा' कहेवाय छे कलशस्थापन अने स्थिरीकरणमां आ मुद्रा कराय छे.

(२) कुम्भमुद्रा

" किञ्चिदाकुञ्चिताङ्गुलीकस्य वामहस्तस्योपरिशिथि-लमुष्ठिदक्षिणकरस्थापनेन कुम्भमुद्रा।" भा०टी०—
कांइक वालेल आगलीवाला डाबा हाथ उपर ढीली मुठिवालो जमणो हाथ स्थापवाथी कुंभमुद्रा थाय छे. जल कलशो वडे स्नपन करावता आ मुद्राशुद्धि करवी

(३) नमस्कारमुद्रा

"संलग्नौ दक्षिणाङ्गुष्ठाक्रान्तवामाङ्गुष्ठौ पाणी नमस्कृति मुद्रा"

भा०टी०—जमणा हाथना अंगुठावडे डाबा हाथना अगुठाने दबावीने बे हाथो जोडवा ते नमस्कार मुद्रा कहेवाय.

(४) प्रणिपातमुद्रा

" जानु-हस्तोत्तमाङ्गादिसंप्रणिपातेन प्रणिपातमुद्रा "

भा०टी०—बे ढींचण बे हाथ अने मस्तक ए पाच अगोने एक काले नमावीने भूमिए अडकाडवा ते प्रणिपातमुद्रा।

(५) भृंगारमुद्रा

पराङ्मुखहस्ताभ्यामङ्गुलीर्विदर्भ्य मुष्टिं बध्वा तर्जन्यौ समीकृत्य प्रसारयेदिति भृङ्गारमुद्रा।" भा०टी०—हाथो एक बीजाथी उलटा राखी आंगलीओ परस्पर गुंथीने तर्जनीओ सरखी करीने फेलाववी ते भृंगारमुद्रा।

(६) अभयमुद्रा

"दक्षिणहस्तेनोर्ध्वाङ्गुलिना पताकाकारेणाभयमुद्रा।"

भा०टी०—ध्वजाना आकारे उंची करेल आंगलीओ वाला जमणा हाथने सामे उभो राखवो ते अभयमुद्रा छे.

(७) त्रासनीमुद्रा

"बद्धमुष्टेर्दक्षिणहस्तस्य प्रसारिततर्जन्या वामहस्ततलताडनेन त्रासनी मुद्रा।" भा०टी०—मुठिवालेल जमणा हाथनी लंबावेल तर्जनी वडे डाबा हाथनी हथेलीमां ताडन करवुं ते त्रासनी मुद्रा, आ मुद्रा विघ्नत्रासनार्थे कराय छे.

(८) वज्रमुद्रा

"वामहस्तस्योपरि दक्षिणकरं कृत्वा कनिष्ठिकाऽङ्गुष्ठाभ्यां मणिबन्धं संवेष्ट्य शेषाङ्गुलीनां विस्फारित प्रसारणेन वज्रमुद्रा।" भा०टी०—डाबा हाथ उपर जमणो हाथ मूकी कनिष्ठा आंगलीने अंगुठाओ वडे हाथना कांडाओने वींटीने बाकीनी आंगलीओ फेलावीने छोडी देवी ते वज्रमुद्रा। आ मुद्रा वडे जिनबिंब आदिनुं दुष्टरक्षा निमित्ते सकलीकरण कराय छे.

(९) पद्ममुद्रा—

"पद्माकारौ करौ कृत्वा मध्येङ्गुष्ठौ कर्णिकाकारौ विन्यसेदिति पद्ममुद्रा।" भा०टी०—अणखीलेला कमलपुष्पना आकारे बंने हाथ भेगा करी वच्चे कर्णिकाना आकारे बंने अंगुठा स्थापवा तेनुं नाम पद्ममुद्रा छे, प्रतिष्ठामां आ मुद्रा कराय छे.

(१०) चक्रमुद्रा

"वामहस्ततले दक्षिणहस्तमूलं सन्निवेश्य करशाखा विरलीकृत्य प्रसारयेदिति चक्रमुद्रा।"

भा०टी०—डाबा हाथनी हथेलीमां जमणा हाथनो कांडो स्थापीने आगलीओ छुटी पाडीने फेलाववी ते 'चक्रमुद्रा' आ मुद्रावडे अधिवासनाना प्रसंगे बिंबना पचांगोनो स्पर्श कराय छे.

(११) परमेष्ठिमुद्रा

"उत्तानहस्तद्वयेन वेणीबन्धं विधायाङ्गुष्ठाभ्यां कनिष्ठिके तर्जनीभ्यां च मध्यमे संगृह्यानामिके समीकुर्यादिति परमेष्ठिमुद्रा।"

भा०टी०—चत्ता राखेल बे हाथोनी आगलीओनो वेणीबंध करीने (एक बीजामां भरावीने) बे आगुठाओ वडे बे टचलीओ अने बे तर्जनीओ वडे बे मध्यमाओ पकडी अनामिकाओने जोडे उभी करवी ते परमेष्ठि मुद्रा। जिननु मंत्र द्वारा आह्वान करता आ मुद्रा कराय छे.

(१२) अंगमुद्रा

पोताना डाबा हाथे जमणो हाथ पकडवो ते 'अगमुद्रा' आ मुद्रा वडे प्रतिमाने चदनादिकनुं विलेपन करवु, एवु विधान छे.

(१३) अञ्जलिमुद्रा

"उत्तानौ किञ्चिदाकुञ्चितकरशाखौ पाणी विधारयेदिति अञ्जलिमुद्रा।" भा०टी०—चत्ता बे हाथोनी आंगलीओ कांइक वालीने बे हाथो जोडवा तेनुं नाम 'अंजलिमुद्रा' आ मुद्रावडे प्रतिष्ठाप्य बिंबादि उपर पुष्पारोपणादि कराय छे.

(१४) सौभाग्यमुद्रा

"परस्पराभिमुखौ ग्रथिताङ्गुलीकौ करौ कृत्वा तर्जनीभ्यामनामिके गृहीत्वा मध्यमे प्रसार्य तन्मध्येऽङ्गुष्ठद्वयं निक्षिपेदिति सौभाग्यमुद्रा।" भा०टी०—बंने हाथो एक बीजा संमुख उभा राखी आंगलीओ परस्पर गुंथवी, पछी बे तर्जनीओ वडे बे अनामिकाओ पकडी मध्यमाओ उभी करी तेओना मूलमां बे अंगुठा नाखवा एटले 'सौभाग्यमुद्रा' थशे. आ मुद्रावडे प्रतिमामां सौभाग्य मंत्रनो न्यास कराय छे.

(१५) गरुडमुद्रा—

"आत्मनोऽभिमुखदक्षिणहस्तकनिष्ठिकया वामकनिष्ठिकां संगृह्याधः परावर्तित हस्ताभ्यां गरुडमुद्रा।"

भा०टी०—पोतानी सामे जमणो हाथ उभो करी तेनी टचली आंगली वडे डावा हाथनी टचली आंगली पकडीने बंने हाथो निचली तरफ उलटावी देवा एटले गरुडमुद्रा निष्पन्न थशे. दुष्टरक्षा निमित्ते आ मुद्रावडे प्रतिमाने मंत्र कवच कराय छे.

(१६) मुक्ताशुक्तिमुद्रा—

"किञ्चिद्गर्भितौ हस्तौ समौ विधाय ललाट देशयोजनेन मुक्ताशुक्तिमुद्रा।" भा०टी०—वच्चे थोडाक पोकल

राखी बे हाथो सरखा जोडी ललाट प्रदेशे अडकाडवाथी मुक्ताशुक्तिमुद्रा निष्पन्न थाय छे, आ मुद्रावडे प्रतिष्ठाप्य देवनुं आह्वान कराय छे.

(१७) मुद्गरमुद्रा—

" मिथः पराङ्मुखौ करौ संयोज्याङ्गुलीर्विदर्भ्यात्मसंमुखकरद्वयपरावर्तनेन मुद्गरमुद्रा ।" भा०टी०—बंने हाथो एक बीजाथी उलटा जोडीने आंगलीओ गुंथवी अने हाथो पोतानी संमुख सुलटाववा एटले मुद्गरमुद्रा निष्पन्न थशे, विघ्नविघातनार्थ प्रतिष्ठामा आ मुद्रा कराय छे.

(१८) तर्जनीमुद्रा—

" वामकर संहताङ्गुलिं हृदयाग्रे निवेश्योपरि दक्षिणकरेण मुष्टिंबध्वा तर्जनीमूर्ध्वीकुर्यादिति तर्जनीमुद्रा ।"

भा०टी०—जेनी आंगलीओ एक बीजीने अडकेली छे एवो डाबो हाथ हृदय आगल स्थापीने ते उपर मुठिवालीने जमणो हाथ राखवो अने तेनी तर्जनी आगली उची करवी एटले तर्जनी मुद्रा थशे, आ मुद्रा प्रतिष्ठामां विघ्ननिवारणार्थ कराय छे

(१९) प्रवचनमुद्रा

- " अङ्गुलित्रिकं सरलीकृत्य तर्जन्यङ्गुष्टौ मीलयित्वा हृदयाग्रे धारयेदिति प्रवचनमुद्रा ।"

भा०टी०—जमणा हाथनी त्रण आंगलीओ सरखी लांबी करीने तर्जनीने अंगुठा साथे जोडी ते हाथ हृदयनी आगल राखवो ते 'प्रवचनमुद्रा,' आ मुद्रा वडे प्रतिमानुं उद्बोधन कराय छे.

(२०) धेनुमुद्रा—

" अन्योन्य ग्रथिताङ्गुलीषु कनिष्ठिकानामिकयोर्मध्यमातर्जन्योश्च सयोजनेन गोस्तनाकारा धेनुमुद्रा ॥" भा०टी०—

परस्पर गुंथायेल आंगलीओमां कनिष्ठिकाओ अनामिकाओथी अने मध्यमाओ तर्जनीओथी जोडवाथी गायना स्तनाकारे धेनुमुद्रा थाय छे आ मुद्रावडे अमृत झरावाय छे.

(२१) आसनमुद्रा—

" अञ्जलिकोपरि अञ्जलीं कुर्यादिति आसनमुद्रा । "

भा०टी०—डावा हाथनी अंजलि उपर जमणा हाथनी अंजलि करवी ते आसनमुद्रा । नन्द्यावर्तना पाटला आदिनुं वासवडे पूजन करवामां आ मुद्रानो उपयोग कराय छे.

(२२) अंकुशमुद्रा—

" बद्धमुष्टेर्वामहस्तस्य तर्जनीं प्रसार्य किञ्चिदाकुञ्चये-दित्यङ्कुशमुद्रा।" भा०टी०—मुठिवालेल डावा हाथनी तर्जनी लंबावीने कांइक वांकी वालवी ते अंकुश मुद्रा[1] ।

(२३) मत्स्यमुद्रा—

" दक्षपाणिपृष्टष्ठदेशे, वामपाणितलं न्यसेत् ।
अङ्गुष्ठौ चालयेत् सम्यङ्, मुद्रेयं मत्स्यरूपिणी ॥"

भा०टी०—जमणा हाथना पृष्ठभाग उपर डावा हाथनुं तल स्थापवुं अने बे अंगुठा फरकाववा एटले माछलाना आकारनी मत्स्यमुद्रा थशे.

(२४) कवचमुद्रा—

" पूर्ववन्मुष्ठी बध्वा कनीयस्यङ्गुष्ठौ प्रसारयेदिति कवचमुद्रा।" भा०टी०—बंने हाथनी मुठिओ बांधीने टचली आंगलीओ अने आंगुठाओने फेलाववा ते कवच मुद्रा। मंत्र वडे कवच करवामां आ मुद्रानो विन्यास कराय छे.

---

१. अंकुशमुद्रानुं स्वरूप निर्वाणकलिकामां आपेल छे, पण त्यां आ मुद्रा जयादेवीना पूजनमां प्रयुक्त करवानो निर्देश छे, छतां आधुनिक जलयात्राविधिओमां आ मुद्रानो उल्लेख छे, आधुनिक विधिकारो कूपमांथी जल काढतां आ मुद्रानो प्रयोग पण करे छे तेथी प्रतिष्ठोपयोगी मुद्राओमां आनो समावेश कर्यो छे.

(२५) अस्त्रमुद्रा—

" दक्षिणकरेण मुष्टिं बध्वा तर्जनीमध्यमे प्रसारये-दिति अस्त्रमुद्रा ।"

भा०टी०—जमणा हाथनी मुठि बाधी तर्जनी अने मध्यमा आंगळीओने लंबावती ते अस्त्रमुद्रा । आ विन्यसन मुद्रा मंत्राक्षनो विन्यास करता कराय छे.

(२६) क्षुरप्रमुद्राओ—

" कनिष्ठिकामङ्गुष्ठेन सपीडय शेषाङ्गुलीः प्रसारये-दिति क्षुरप्रमुद्रा ।"

भा०टी०—कनिष्ठिका आंगळीने अंगुठाथी दबावीने बाकीनी आंगळीओ लंबाववाथी क्षुरप्रमुद्रा थाय छे.

२—जाप-अनुष्ठानोपयोगी मुद्राओ—

(१) आवाहनी मुद्रा—

" हस्ताभ्यामञ्जलिं कृत्वा अनामामूलपर्वाङ्गुष्ठसंयो-जनेनावाहनी ।"

भा०टी०—बे हाथो वडे अंजलि करीने कनिष्ठाना मूळ-पर्वमां अंगुठो जोडवाथी आवाहनी मुद्रा निष्पन्न थाय छे, आ मुद्रा वडे गणाधिष्ठायक देवनुं अथवा तो जयादेवीनुं आह्वान कराय छे

(२) स्थापनी मुद्रा—

" इयमेवाधोमुखी स्थापनी ।"

भा०टी०—आवाहनी मुद्राने ज उलटावी नीचा मुखे करी अंगुठा तर्जनीना मूलमां स्थापवाथी स्थापनी मुद्रा निष्पन्न थाय छे, आ मुद्रावडे आराध्य देवतनु स्थापन कराय छे.

(३) संनिधानी मुद्रा--

" संलग्नमुष्ट्युच्छ्रिताङ्गुष्ठौ करौ संनिधानी ।"

भा०टी०--मुठिवालेला बे हाथो जोडी अंगुठा उभा करवाथी संनिधानी मुद्रा निष्पन्न थाय छे. आ मुद्राद्वारा आराध्य दैवतनुं संनिधान कराय छे.

(४) निष्ठुरा अथवा संनिरोधिनी

" तावेव गर्भगाङ्गुष्ठौ निष्ठुरा ।"

भा०टी०--संनिधानी मुद्रामां जे अंगुठा उभा राखवामां आवे छे ते मुठिओनी अंदर भरावी देवाथी निष्ठुरा वा संनिरोधनी मुद्रा निष्पन्न थाय छे, आ मुद्रा वडे आराध्य दैवतनुं अवरोधन कराय छे.

(५) संमुखीकरणमुद्रा--

" इयमेवोत्तानरूपा संमुखीकरणाभिधाना ।"

भा०टी०--निष्ठुरा मुद्रानी बंने मुष्टिओ चत्ती करवी तेनुं नाम संमुखीकरण मुद्रा छे.

(६) अवगुंठनी मुद्रा--

सव्यहस्तकृता मुष्टि-र्दीर्घासंमुखतर्जनी ।
अवगुण्ठनमुद्रेयमभितो भ्रामिता मता ॥१॥

भा०टी०--जमणा हाथनी मुष्टि बांधी तर्जनी संमुख लांबी राखी मुष्टि भमाववी ते अवगुंठिनी मुद्रा कहेवाय छे.

(७) संहारमुद्रा--

"अधोमुखस्योपरि हस्तं प्रसार्य कनिष्ठिकादितर्जन्यन्ता-

नामङ्गुलीनां क्रमसङ्कोचनेनाङ्गुष्ठमूलानयनात् संहार-मुद्रा। विसर्जनमुद्रेयम् ।"

भा०टी०—ग्राह्य वस्तु उपर हाथ फेलावीने कनिष्ठिकाथी मांडीने तर्जनी सुधीनी आंगलीओने अनुक्रमे वाली अंगुठाना मूल तरफ लाववाथी संहारमुद्रा निष्पन्न थाय छे, आ विसर्जनमुद्रा छे, मंत्रपट्ट आदि उपर जाप कर्या पछी आ मुद्रावडे जापविषयक देवतानुं विसर्जन कराय छे.

परशुराम कल्पसूत्रमां संहारमुद्रा आ प्रमाणे छे-

" क्षिप्ताङ्गुलीरङ्गुलिभिः, सग्रथ्य परिवर्तयेत् ।
एषा संहारमुद्रा स्याद्, विसर्जनविधौ स्मृता ॥"

भा०टी०—अंदर नाखेल आंगलीओ आंगलीओ वडे गुंथीने फेरववी ते संहारमुद्रा. विसर्जनविधिमां ए मुद्रा करवी.

इति कल्याणकलिका-प्रतिष्ठापद्धतावयम् ।
लक्षणाख्योऽगमत् खण्डः, प्रथमः परिपूर्णताम् ॥

भा०टी०—आ प्रमाणे कल्याणकलिका-प्रतिष्ठापद्धतिमां लक्षणखण्ड नामनो प्रथमखण्ड समाप्त थयो.

इति तपागच्छाचार्य श्री विजयसिद्धिसूरिनि-
गदानुसारि संविग्नश्रमणावतंस श्री केसर-
विजय शिष्य पं० कल्याणविजय-
गणि विरचितायां कल्याण-
कलिका-प्रतिष्ठापद्धतौ
लक्षणाख्यः प्रथमखण्डः
समाप्तः
卐

शुद्धिपत्रक

पृ० पं०	अशुद्ध-शुद्ध
४-१	मम-मर्म
८-२१	भृमि-भूमि
१८-१५	मंगल-मगलथी
,,-१६	शनिथी-शनि
२०-१३	दत्तको-दन्तको
२४-१६	याग-योग
३२-१६	बमणा-बमणो
३४-१९	ज्जेष्ठ-ज्ज्येष्ठं
४७-७	शिरायाः-शिरा याः
४८-५	कीतिताः-कीर्तिताः
५७-११	। १०-११
७०-२०	हिंडाला-हिंडोला
९५-१३	कीतिताः-कीर्तिताः
,,-२०	कीतिताः-कीर्तिताः
१००-१७	प्रोत्तानि-प्रोतानि
१०२-५	न्युनेत्तर-न्यूनेतर
१०४-६	तादिन् तादीन्
१०५-१८	भक्ते-भंक्ते
११५-१	। १०८ भागनो मंडोवरो-०
११५-२५	ईष्टका-इष्टका
१२२-४	पदि-पट्टि
१३०-१३	कृटोदयं-कूटोदयं
१३२-१९	मंडावरो-मंडोवरो
१३८-२६	द्वय-द्वयं
१४६-१	षंडशेन-षडंशेन
,,-१५	देवीना देवोना
१४७-२१	मंडपमां-मंडलमां
१५३-२०	हिठाउ-हिट्ठाउ
,,-२०	दिठो-दिट्ठी
१५४-११	विय०-वीय०
१६१-११	भार्गेषु-मार्गेषु
१६२-४०	रोग्दमः-रोद्गमः
१६४-१७	वीजा-बीजी
१६८-१५	गधर्वः-गन्धर्वः
१६८-१७	रूद्र-रुद्र
१७६-८	दारूजे-दारुजे
१८८-२४	कृत्तिकां-कृतिकां
१८९-१५	तेना-तेनो
,,-२४	तव्ये-तव्यो
१९३-१८	शांप्रतम्-सांप्रतम्
१९७-२	दण्डे-दण्डो
२०७-१८	शृंग-शृंगं
२१२-१८	ह्वत-ह्यत
२१८-२३	भित्यन्त-भित्त्यन्त
२२०-८	अर्घनाथ-अर्घनाथ
,,-१४	पतिभद्रे-प्रतिभद्रे
२३२-२	समुदिष्टं-समुद्दिष्टं

पृ० पं०	अशुद्ध	शुद्ध
२३७–८	ङिति	च्छ्रितिः
२४७–९	ग्रीवा	ग्रीवा च
२५३–	मग्यश्चैव	मध्यश्चैव
२५६–१९–	रुपं	रूप
,,—,,	रुपं	रूप
,,—,,	रुप	रूप
२५९–१८–	५–६	५६
२८२–१८–	नश्यन्ति	मिहन्ति
२९५–२२	रत्नोद्भवा	रत्नोद्भवा
२९६–१२	कप्प	फणा
,,—२४	विधाय	विधान
२९७–१४	रुपकैः	रूपकैः
,,—१७	घर्मोघ	घर्मोद्भव
२९८–१४	गरुडीका	गरुडीका
,,—१७	रुपक	रूपक
२९९–२०	मध्यत	मध्यतः
३००–३	सुनेन्द्रा	सुरेन्द्रा
३०२–१३	रुपकम्	रूपकम्
३०३–७	पार्श्व	पार्श्वं
३०४–१५	तृतायं	तृतीयं
३१२–१४	आकार	आकार
३३०–८	शव	शिव
३३२—	पाडश	षोडश
३५४–२	मानुं	मान
,,—१	धिष्ण्यं	धिष्ण्यं
३५५–६	मुहूर्ता	मुहूर्तो
,,—२६	ऽभिजच	ऽभिजिच्च
३५७–१३	पूपो	पूणा
३६१–२१	०मम्	०मम्
३६७–१५	त्यजेद्द०	त्यजेद्वृ०
३६८–१०	सक्ता	सक्ता
३६९–१३	मुनिन्द्रै	मुनीन्द्रै
,, ,,	रखिलेषु	रखिलेषु
३७२–५	इशानतः	ईशानत०
३७५–२	वक्र	वक्त्र
,,—१३	वेद्वास्तोः	मवेद्वास्तौ
३७६–१७	क्षत्वास्तु	क्षरोक्त
३७७–२	धिष्टय	धिष्ण्ये
,,—२५	पश्चिमांघ्रोः	पश्चिमाघ्रयोः
३७८–१८	रम्ये	रमे
३८०–८	७ रूपगास्तु	०
३८१–२	वृक्ष	वृक्ष
३८४–१६	पञ्चम	पञ्च ५
३८७–१	पिपाणुं	पिपाणुं
,,—२	कौमठ	कैमठ
३८८–३	धिषणानि	धिष्ण्यानि
,,—२५	सुधे	सुभ्रे
३८९–९	सुग्यपान्	सुरपान्
३९०–१५	रामा.	रामाः

पृ० पं० अशुद्ध–शुद्ध
३९८–२० शापू–शर ५
,,—२९ नाडिका–नाडिकाः
,,—,, शुभज्ञः–शुभदाः
४०४–८ गाऽधयः–गाऽधयः१११
,,—९ ध्यग्नि–म्यग्नि
४०६–२ ०शान्वित–०शान्वितः
,,—१६ लक्ष्यम्–लक्षम्
४२४–४ शूरमहाशिव०–शूरम-
हाठशिव०
४२८–२० मितै–मितैः
४३२–२ वधन–बन्धन
,,—३ ग्राम्यम्–याम्यम्
४३२–४ भारण–मारण
,,—९ ग्रिभं–ग्निभं
४३४–१७ कर्मोद्वाहक
कर्मोद्वाह
४३५–४–५ श्लोक नहीं है
--भूषणवास्तुविधानं. वाहन
कृषिकर्म सप्तमे धिष्ण्ये ।
स्थिर चर शान्तिक पौ-
ष्टिकं, भूषण शिल्प व्रतो-
त्सवाद्यखिलम्
बे श्लोकार्धो रहीगयाछे
,,--१० अर्थ नथी–राजयुद्धादि
सर्व० युद्धादि सर्व भूषण,
वास्तुविधि, वाहन, कृ-
षिकर्म, ए सर्व पुनर्वसु

पृ० पं० अशुद्ध–शुद्ध
नक्षत्रमा करवां, स्थिर,
चर, शान्तिक, पौष्टिक,
भूषण, शिल्प, व्रत, उत्स-
व आदि सर्व०
,,—१९ मर्क्षेपु–मर्क्षेपु
४३८–१५ धातु–धाव
,,—१९ पि–पर
४६८–१३ धिष्ण्यै–धिष्ण्यै
४४०–२६ कोशो–कीशो
४३१–२२ मन्त्रा–मन्त्र
४४९–७ व्याम–व्योम
४५१–१६ धिष्ण्यम्–धिष्ण्यं
,,—२३ कारक–कार
४५५–३ धिरूद्धं–धिरुद्धं
४५६–१३ केतु–केतू
४५९–२ धिष्णा–धिष्ण्या
,,—१६–नाडी–नाडि
,,—१७–सहिता–सहितो
४६१–१८ तनः–ततः
४६२–२२ आदमां--आदिमां
४६३--८ ग्रह–ग्रहा
,,—१० दशमहिना–
दशमदिना
४६५–८ राज्ञा–राज्ञां
,,—१४ हृदयभं–हृदयभयं
४६९–१४ लत्तिय–लत्तित
,,—१५ सुतानसु सुतानसु
४७६–९ मशुभं–मखिलं
४८०–१ श्चन्द्र–चन्द्र

पृ० पं०	अशुद्ध-शुद्ध
४८२-२२	दोपो-दोपा
४९१-६	वाक्पते-वाक्पते
,,—१	दक्ष-दक्ष
,,—२०	शुक्ले-शुक्लो
४९२-६	योगा-योगो
५००-१९	शत्रुभानो-शत्रुभौनो
,,—२४	अश्राद्य-अश्व्याद्यै
५०१-१६	व्याद्रौ-व्याद्रै
,,—१६	व्याद्रौद्दय-व्याद्यैर्द्वय
५९२-८	फल्गुनी-फाल्गुनी
,,—१४-	जीवयाः-जीवयोः
,,—२१	पुनःकरण-अपुन करणं
५०४-२४	पाताद्-पातादि
५०७-६	प्रकीतता-प्रकीर्तिता
५११-५	यागा -यागाः
५१४-७	वला-वली
५१५-१३	यागो-योगो
५१६-८	याग-योग
५२०-१६	पष्ठया-षष्ठ्या
,,—१८	वारादि-वारादिभि
५२१-२१	अष्ठ-अष्ट
५२४-५	पभा-पमा
५२९-३	श्रेष्ट-श्रेष्ठ
५३०-५	छिद्रोन्य-छिद्रोत्थ
५३१-२१	उत्पादो-उत्पात
५३३-१६	न्यमाधिरान्-न्धवाधिरान्
५३७-५	वालवे-वालवे
५३८-१९	तद्घटिका-तद्घटिका
५४०-१७	श्यौंस्तुविरमे-श्यौं-श्वविगलत्
५४१-१८	पूरा-पूर्वा
५४४-९	धान्यादि-धान्यादि
५४७-१७	मदया-मंदयो
५४८-३	विनिद्विता-विनिन्दिता
५५०-१३	चात्तरगा-चोत्तरगा
५५१-२१	माधार-माधार
५५३-१०	केन्द्रो-केन्द्रे
५५९ ८	धी धर्म-धी धर्म
५६१-२१	दश-दृश
,,—२२	सप्तम-सप्तमगः
५६१-७	युक्ताऽपि-युक्तोऽपि
५६८-२३	ताद्वाराना-ताराना
५७४-७	धरमा-धरमा
५८२-४	स्यायुर्न-तस्यायुर्वे
५९१-२२	पौष्णाद्वया-पौष्णद्वया
५९२-१४	पोऽशे-पोडशे
५९७-२५	आय-न्याय
५९८-१	स्वर्गा-स्वर्ग्या
६०३-१७	लग्नमि-लग्नम्मि
६०७-१०	बहुजः-बाहुजः
६०८-१	१८—१७
६१२-२	भ्यां-भ्या
६१४-८	मध्यमे-माध्यमे
६१६-१४	पृप्टष्ठ -पृष्ठ